भरतेश-वैभव

द्वितीय भाग

दिग्विजय

संपादक व अनुवादक,

वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री

विद्यावाचस्पति-न्याय-काव्यतीर्थ

संपादक-जैनबोधक व वीरवाणी सोलापुर.

प्रकाशक,

गोविंदजी रावजी दोशी

सोलापुर.

प्रथमावृत्ति	वीर संवत् २४६७	मूल्य
५००	सन् १९४१	दो रुपये

देवपूजा, गुरूपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और दानरूपी षट्खंडविजय
कर धर्म-दिग्विजय के साथ सुयश संपादन करनेवाले
स्वर्गीय **धर्मवीर रावजी सखाराम दोशीके**
पुनीत परोक्ष करकमलो में
यह "**दिग्विजय**" भाग सादर समर्पित है।

विनयावनत

संपादक.

संपादकीय

आजसे करीब चार वर्षके पहिले हम पाठकोंकी सेवामें भरतेश-वैभवके प्रथम भागको रख चुके हैं । आज इस द्वितीय भागको लेकर उपस्थित हैं। प्रथम भागके प्रकाशनके बाद हमारे पास आये हुए पत्रोंसे ज्ञात होता है कि हमारे प्रेमी पाठकोंनें इस कृतिको बहुत आदर-पूर्वक अपनाया है और उनके हृदयमें आगेके भागोंके अवलोकनकी बढी हुई आकाक्षा है।

ग्रंथकर्ताने इस ग्रंथको भोगविजय, दिग्विजय, योगविजय, मोक्ष-विजय, और अर्ककीर्ति विजयके रूपमें विभक्तकर पंचकल्याण अभि-धान किया है। प्रथम कल्याण भोगविजय था, जिसका पाठक अवलो-कन कर चुके हैं । अब यह दिग्विजय द्वितीयकल्याण है । शेष तीन कल्याण भी पाठकोंके समक्ष उपस्थित करनेका हमारा विचार है।

ग्रंथ व ग्रंथकर्ताके संबंधमें हम प्रथम भागके साथ विस्तृत विवे-चन कर चुके हैं, अतएव इस भागमें अधिक नहीं लिखा है । स्त्रीरत्न संभोगसंधिके बादका एक प्रकरण अत्यधिक वर्णनात्मक होनेसे एवं बहुत ज्यादा उपयोगी न होनेसे नहीं लिया गया है। अत्यधिक श्रृंगार विषयक वर्णन भी हमने नहीं लिया है ।

प्रथम कल्याणके समान ही इस कल्याणपर भी भव्योंने अपनी भक्तिको व्यक्त किया तो शेष कल्याणोंका भी दर्शन यथाशीघ्र होकर पुण्यसंचय होगा। इसमें यदि कोई त्रुटि रही हो तो उसे विद्वद्गण सुधार लेवे व वह हमारा दोष समझें व कोई इसमें अच्छापना नजर आवे तो उसका श्रेय ग्रंथकर्ताको देवें यही निवेदन है। इति.

सोलापुर
१-३-४१

विनीत
वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री
(विद्यावाचस्पति)

अनुक्रमणिका.

दिग्विजय.

संधि	पृष्ठ	संधि	पृष्ठ
१ नवरात्रिसंधि	१	१८ मंगलयानसंधि	१७
२ पत्तनप्रयाणसंधि	१३	१९ मुद्रिकोपहारसंधि	१८
३ दशामिप्रस्थानसंधि	२६	२० नमिराजविनयसंधि	१९९
४ पूर्वसागरदर्शनसंधि	३२	२१ विवाहसंभ्रमसंधि	२०८
५ राजविनोदसंधि	३९	२२ स्त्रीरत्नसंभोगसंधि	२१५
६ आदिराजोदयसंधि	५०	२३ पुत्रवैवाहसंधि	२१९
७ वरतनुसाध्यसंधि	६१	२४ जिनदर्शनसंधि	२३१
८ प्रभासामराचिन्हसंधि	७२	२५ तीर्थागमनसंधि	२४०
९ विजयार्धदर्शनसंधि	८४	२६ अंबिकादर्शनसंधि	२५६
१० कपाटविस्फोटनसंधि	९३	२७ कामदेवास्थानसंधि	२६९
११ कुमारविनोदसंधि	१०१	२८ संधानभंगसंधि	२७७
१२ खेचरीविवाहसंधि	११३	२९ कटकविनोदसंधि	२९०
१३ भूचरीविवाहसंधि	१२४	३० मदनसन्नाहसंधि	३०२
१४ विनमिवार्तालापसंधि	१३३	३१ राजेंद्रगुणवाक्यसंधि	३१४
१५ वृष्टिनिवारणसंधि	१४३	३२ चित्तजनिर्वेगसंधि	३३२
१६ सिंधुदेवियाशिर्वादसंधि	१५३	३३ नगरीप्रवेशसंधि	३४९
१७ अंकमालासंधि	१६३		

भरतेश-वैभव।

द्वितीय-भाग।

दिग्विजय।

नवरात्रि संधि।

करोडों सूर्य और चंद्रके किरण के समान प्रकाशमान उज्वल ज्ञानको धारण करनेवाले देवेंद्र चक्रवर्ति आदिसे पूज्य भगवान् आदिनाथ स्वामी हमारी रक्षा करें।

सज्जनोंके अधिपति सुज्ञान सूर्य, तीन लोकको आश्चर्यदायक एवं अष्टकर्म रूपी अष्ट दिशावोंको जीतकर (दिग्विजय) अखण्ड साम्राज्य को प्राप्त करनेवाले भगवान् सिद्ध परमात्मा हमें सुबुद्धी-प्रदान करें।

कृतयुग के आदि मे आदि तीर्थकरके आदिपुत्र आदि [प्रथम] चक्रवर्ती भरत बहुत आनंदके साथ राज्यका पालन कर रहे हैं। उनके राज्य मे किसी भी प्रजाको दुःख नहीं, चिंता नहीं, प्रजा अत्यंत सुखी है। रात्रिंदिन चक्रवर्ती भरतकी शुभ कामना करती है कि हमारे दयालु राजा भरत चिरकालतक राज्य करें। उनको पूर्ण सुख मिले।

भरतजीके मनमे भी कोई प्रमाद नहीं, बडे भारी राज्यभारको अपने शिरपर धारण किया है इस बातकी जरा भी उन्हे चिंता नही। किसी बातकी अभिलषा नहीं। प्रजाहित मे आलस्य नही। सुत्राम [देवेंद्र] जिस प्रकार क्षेमके साथ स्वर्गका पालन करते है भरतेश उसी प्रकार प्रेम व क्षेमके साथ इस पृथ्वीको पालन कर रहे है। इस प्रकार बहुत आनंद व उल्लास के साथ भरत राज्यको पालन करते हुए आनंद से कालव्यतीत कर रहे है।

एक दिनकी बात है कि भरतजी आनंद में अपने भवन में विराजे हुए हैं। इतने में अकस्मात् बुद्धिसागर मंत्री उनके पास आये। उन्होंने निम्न लिखित प्रार्थना भरतेश से की जिससे भरतजी का आनंद द्विगुणित हुआ।

स्वामिन्! अब वर्षाकाल की समाप्ति होगई है, अब सेनाप्रयाणके लिए योग्य समय है। इस लिए आलस्य के परिहार के लिए दिग्विजय का विचार करना अच्छा होगा।

हे अरितिमिरसूर्य! शरत्कालमें बाल सूर्यके समान चक्ररत्नका उदय हुआ है। अब आप प्रस्थानका विचार करें।

राजन्! आप दुष्टोंको मर्दन करने में समर्थ हैं। शिष्ट ब्राह्मण, तपस्वी, व सदाचार पोषक धर्मकी रक्षा भी आपके द्वारा ही होती है। ऐसी अवस्थामें अब इस भूमिकी प्रदक्षिणा देकर सर्व राजाओंको वशमें करें।

स्वामिन्! आप जम्बूद्वीपके दक्षिणभाग में सूर्य के समान हैं। अनेक द्वीपोंमें मदोन्मत्त होकर रहनेवाले राजसमूहोंको अपने चरण रज-स्पर्श से पवित्र करें।

राजन्! गिरिदुर्ग, जलदुर्ग और वनदुर्ग में जो अहंकारी राजा हैं उनके अभिमानको मर्दनकर भरतषट्खण्डको वशमें करें जिससे आपकी भरत नाम सार्थक हो जायगा।

जहां जहां उत्तम पदार्थ हैं वह सब आपको भेंट करनेके लिये लोग प्रतीक्षा देखरहे हैं। उन सबकी इच्छाको पूर्ति करते हुए आप देश देशकी शोभा देखें।

दूर दूर देशके जो राजा हैं उनके घरमें उत्पन्न कन्यारत्नोंकी भेटको ग्रहणकर लीलाके साथ विहार करनेका विचार करें। अब देरी क्यों करते हैं।

राजन् ! छहखण्डकी प्रजा आपके दर्शनके लिये तरस रही है। उनको आपके रूपको दिखाकर कृतार्थ करें।

जिस प्रकार वनमे संचार करके वसंत शोभाको बढाता है उसी प्रकार आप अपने विहारसे इस भूतलकी शोभाको बढावें।

बुद्धिसागर मंत्रीके समयोचित निवेदनपर राजाको बडा हर्ष हुआ। मंत्रीके कर्तव्यपालन के प्रति प्रसन्न होकर भरतजीने बुद्धिसागरको अनेक वस्त्र व आभूषणोंको भेटमे दिये। और यह भी आज्ञा दी कि दिग्विजय प्रयाणकी तैयारी करो। सब लोगोंको इसकी सूचना दो। बुद्धिसागरने प्रार्थना की स्वामिन्! नौ दिनतक जिनेंद्र भगवंतकी पूजा वगैरह उत्सव बडे आनंदके साथ कराकर दशमीके रोज यहांसे प्रस्थानका प्रबंध करूंगा।

इस प्रकार निवेदनकर मंत्री वहासे अपने कार्य में चला गया।

अयोध्यानगरके जिनमंदिरों की मंत्रीकी आज्ञासे सजावट होनेलगी। बजारोमे भी यत्र तत्र उत्सवकी तैयारी होरही है। सबजगह अब दिग्विजय प्रयाण की चर्चा चलरही है।

मंदिरोकी ध्वजपताका आकाश प्रदेशको भी चुंबन कररही थी तब उस नगरका नाम साकेतपुर सार्थक बन गया।

अयोध्यानगरके बडे २ राजमार्ग अत्यंत स्वच्छ किये गये थे एवं सुगंधित गुलाबजल आदिसे उनपर छिडकाव होनेसे सर्वत्र सुगंध ही सुगंध फैला था, उस सुगंध के मारे भ्रमर गुंजार कर रहे थे।

अयोध्या नगरीमे अगणित जिनमंदिर थे, उनमें कहीं होम चल रहा है। कही महाभिषेक चल रहा है। कहीं मुनिदान चल रहा है। इस प्रकार उस समय वह पुण्यनगर बन गया था।

किसी मंदिरमे वज्रपंजराराधना कर रहे हैं। कहीं कलिकुण्ड यत्राराधना हो रही है। कहीं गणधरवलययज्ञ और मृत्यंजय यज्ञ चल रहा है।

इतना ही क्यों ? कितने ही मंदिरोंमें बलसिद्धि जयसिद्धि व सर्व रक्षा नामक अनेक यज्ञ बहुत विधिपूर्वक हो रहे हैं।

नित्य ही अनेक धर्मप्रभावनाके कार्य व नित्य ही रथयात्रा महोत्सव महाभिषेक, पूजा, चतुरवसतर्पण आदि कार्य बुद्धिसागर मंत्री की प्रेरणासे हो रहे हैं।

जिनपूजापूर्वक नौ दिन तक बराबर चक्ररत्नकी भी पूजा हुई। साथमें सेनाके अन्य योद्धावोंने भी अपने२ शस्त्र अस्त्रोंकी अनुरागसे पूजा की।

गोमुख यक्ष व चक्रेश्वरीयक्षिणीकी पूजा कर घोडेको रक्षक यत्र का बंधन किया। घोडेको यक्षदेवनोंके नामसे कहनेकी पद्धति है। वह इसलिये कि उस समय बुद्धिसागरने यक्ष व यक्षिणी की पूजा कर उसको रक्षित किया था। इसी प्रकार हाथी, रथ वगैरहका शृंगार कर बहुत वैभव किया। सारांशतः महानवमीके नौ दिनके उत्सवको मंत्रीने जिस प्रकार मनाया उससे नरलोकको आश्चर्य हुआ।

नवमी के दिन की बात है। दिनमें भरतजी नगरके बीचके जिनमंदिरमें जाकर पूजा महोत्सव देख आये हैं। रात्रिके समय दरबारमें आकर विराजमान हुए।

भरतजी मस्तकपर रत्नकिरीट को धारण किये हुए हैं। उसके प्रकाशसे रात्रि भी दिनके समान मालुम होरहा है!

भरतजी बीचमें सिंहासनपर विराजे हुए हैं! इधर उधर से मंत्री, सेनापती, सामंत वगैरे बैठे हुए हैं। सामने अगणित प्रजा बैठी हुई है; इनके बीचमें अनेक विद्वान्, कवि, गायक वगैरे भी उपस्थित हैं।

राजा भरतको देखनेके लिये ही लोग तरसते है। इसलिये झुंड के झुंड आकर वहां जम रहे है।

काकिनी रत्नको एक खंभेके सहारे खडा कर दिया। एक कोस तक बराबर अंधकार दूर होकर प्रकाश होगया। इतना ही क्यों ?

अयोध्या नगरीका विस्तार १२ कोशका है। अयोध्या नगरीमें सब जगह प्रकाश ही प्रकाश हुआ।

उस विशाल दरबारमे कही डोंवरलोग, कही गानेवाले, कहीं ऐंद्रजाली लोग, कही महेंद्रजाली, इत्यादि अनेक तरह के लोग अपनी २ कला प्रदर्शन करनेकी इच्छासे वहांपर एकत्रित हुए थे।

जिसप्रकार सूर्यका किरण जिधर भी पडे उधर ही कमल खिल जाता है उसी प्रकार राजा जिधर भी देखे उसी तरफ विनोद, खेल व कलाको लोग बता रहे है।

कितने ही पहिलवान सामनेसे कुस्ती खेल रहे है।

एक विस्मयकारने राजाके चित्तको आकर्षण करते हुए एक बीजको वहापर बोया। तत्क्षण ही वह बीज भूज (वृक्ष) होगया, उसमे कच्चे फल लग गये। इतना ही नही, उसी समय वे पक भी गये। सब दरबारियोको उसे देखकर आश्चर्य हुआ।

एक मंत्रकार और सामने आया, आकर एक घासके टुकडे को मंत्रितकर रखा। बहुतसे सर्प उस घाससे निकलकर इधर उधर भागने लगे, एक इंद्रजाली सामने आकर प्रार्थना करने लगा कि दयानिधान! इंद्रावतारको आप देखें। उसी समय उसने अपनी कलाके द्वारा देवेंद्रके अवतारको बतलाया!

एक महेंद्रजालीने समुद्रका दृश्य बतलाया, इसी प्रकार गंधर्व लोग अपनी नृत्यकलाको बतला रहे थे।

उस दिन अयोध्यानगरके प्रत्येक गलीमे जिधर देखे उधर आनंद ही आनंद हो रहा है। हाथी घोडा व रथोंका शृंगार कर राज मार्गोंमे बडे ठाठबाटके साथ जुलुस निकाली जारही है।

पट्टके हाथीपर भगवान् जिनेंद्रकी प्रतिमा विराजमान कर विहारोत्सव मनाया जारहा है।

उस हाथीका नाम विजयपर्वत है। उसपर जिनेंद्र भगवंतकी प्रतिमा अत्यंत शोभाको प्राप्त होरही है।

राजाने दूरसे ही हाथीपर जिनेंद्रबिंबको देखा। उसी क्षण भक्तीसे उठकर खडे हुए।

जब सब हाथियोंने भरतका दर्शन किया तब कुछ झुककर व अपनी सोंडको उठाकर चक्रवर्तीको प्रणाम किया।

सम्राटके राणियोंने भी दरवाजेके अंदरसे ही त्रिलोकीनाथ भगवंतका दर्शन किया एवं बहुत भक्तिसे आरती उतारी।

रथ आगे चला। चंद्रमार्ग, सूर्य मार्ग आदिपर भी भगवान्का रथ विहार होरहा था। इस प्रकार प्रतिपदासे लेकर नवमीतक अनेक प्रकारसे धर्मप्रभावना होरही थी।

प्रतिदिन भिन्न भिन्न प्रकारके शृंगार, शोभा, प्रभावना व रथयात्रा आदि लोगोंको देखनेमें आते थे।

कहीं शांतिक्रिया, कहीं दान, कहीं त्याग, कहीं वैयावृत्य आदि शुभकार्योंसे सब अपना समय व्यतीत कर रहे हैं।

कहीं राजाओंका सन्मान होरहा है। कहीं विद्वानोंका आदर हो रहा है। इस प्रकार नौ दिनतक सम्राट्ने बहुत आनंदके साथ काल व्यतीत किया।

नवमीके दिन दरबार बरखास्त करनेके लिए अब कुछ ही समय अवशेष है इतने में एक सुंदर व दीर्घकाय भद्रपुरुषने दरबार में पदार्पण किया। सबसे पहिले चक्रवर्तीके सामने कुछ भेट समर्पणकर उसने साष्टांग प्रणाम किया। भरतजीने भी उसे योग्य स्थान में बैठनेके लिए अनुमति दी।

यह अभ्यागत कौन है? भरतजी के लघुभ्राता युवराज बाहुबली के हितैषी मंत्री प्रणयचंद्र है। जैसा उसका नाम है वैसा ही गुण है, अतिविवेकी है, दूरदर्शी है।

भरतजी कुछ समय इधर उधर की बातचीतकर उससे पूछने लगे कि प्रणयचंद्र ! मेरे भाई बाहुबलि कैसा है ? और किसप्रकार आनंदसे अपने समयको व्यतीत करता है ! उसकी दिनचर्या क्या है ? एवं हमारे दिग्विजय प्रयाणके समाचारको सुननेके बाद क्या बोला ? वह कुशल तो है ?

भरतजीके प्रश्नको सुनते ही प्रणयचंद्र उठकर खडा हुआ और बहुत विनयके साथ हाथ जोडकर कहने लगा कि राजन् ! आपकी कृपासे आपके सहोदर कुशल है। उन्हे कोई चिंता नहीं और कोई बाधा भी नहीं। सदा वे सुखसे ही अपना काल व्यतीत कर रहे है। क्यों कि वे भी तो भगवान् आदिनाथके पुत्र है न ?

स्वामिन् ! कभी २ काव्य, नाटक का श्रवण व अवलोकन कर आनंद करते है, कभी नृत्य देखते है, और कभी कामिनियोंके दरबारमें कालव्ययकर हर्ष प्राप्त करते है।

कभी २ वे शृंगार वनमे क्रीडा करनेके लिये जाते है। कभी २ महलमे अपनी प्रिय राणियोंके साथ २ बैठकर ठण्ड हवा खाते हुए कोकिल पक्षी, भ्रमर, तोता आदिके विनोदको देखकर आनंदित होते है। भोगोंको सदा भोगते है परंतु उसमे एकदम मग्न न होकर योग का भी अभ्यास करते है। राजन् ! वे भी तो आपके सहोदर है न ? यह हमारे राजाकी दिनचर्या है। अस्तु. आपके दिग्विजय प्रयाणकी वार्ता उन्होने सुनी है। उसे सुनकर उन्हे बडी प्रसन्नता हुई है।

इस संबंधमे बोलते हुए उन्होंने हमसे कहा है कि " मेरे बडे भाईने जो दिग्विजयका विचार किया है वह स्तुत्य है। उनकी वीरताके लिये यह योग्य कार्य है। उनका सामना करनेवाले इस पृथ्वीमे कौन है ? "

साथमे अभिमान के साथ उन्होने यह भी कहा कि " इस पृथ्वीमें देवोंमें पिताजी, राजाओंमे मेरे भ्राताजी की बराबरी करनेवाले

कौन है ! हम लोग तो उन दोनो को स्मरण करते हुए जीते है " इस प्रकार प्रणयचंद्र मंत्रीने कहा। और यह भी कहनेलगा कि स्वामिन् ! आपके सहोदर इस अवसरपर स्वयं आशिर्वाद लेनेकेलिये आनेवाले थे। परंतु वे अनिवार्य कारणसे आ नहीं सके। कारण कि वे एक शास्त्रको सुनने मे दत्तचित्त हैं। आचार्य महाराज आत्मप्रवाद नामक शास्त्रका प्रवचन कर रहे हैं। उसे आपका सहोदर सुन रहे है। बहुत सभव है कि कल परसो तक वह ग्रंथ पूर्ण हो जायगा।

स्वामिन् ! और एक गूढार्थ आपसे निवेदन करनेका है। उसे भी सुनने की कृपा करे।

" गूढार्थ " शब्दको सुनते ही बुद्धिमान् लोग वहासे उठकर चले गये। वहा एकात होगया।

प्रजा, परिवार, सामंत, माण्डलीक, मित्र, विद्वान्, नृत्यकार आदि सबके सब क्षणमात्र मे जब वहासे चले गये तब प्रणयचंद्र बहुत धीरे धीरे कुछ कहने लगा। बुद्धिसागर मंत्री पास मे ही बैठा है।

स्वामिन् ! " विशेष कोई बात नहीं आपकी मातुश्री जगन्माता यशस्वती महादेवी को पौदनापुर मे ले जानेकी इच्छा आपके सहोदरने प्रदर्शित की है। बहुत देरी नहीं है, कल या परसो तक शास्त्रकी समाप्ति हो जायगी। उसके बाद वे स्वयं ही यहा पधारकर मातुश्रीको पौदनापुरमें ले जायेंगे, इस बातकी सूचना देनेके लिए उन्होने मुझे यहा भेजा है।

राजन् ! जब तक आप दिग्विजय कर वापिस लौटेंगे तबतक माता यशस्वती देवीको अपने नगर मे ले जाने का उन्होने विचार किया है, मातासे पुत्र वियुक्त रह सकता है क्या ?

प्रणय चद्रके इस प्रकार के वचनको सुनकर चक्रवर्तीने कहा कि पुत्र के घरमें माताका जाना, माताको पुत्र बुला ले जाना कोई नई बात है क्या ? ऐसी अवस्था मे इस संबंध मे मुझे पूछने की जरूरत क्या है? मैं भी मातुश्री के लिये पुत्र हूं। वह भी पुत्र है

इसलिये उसे मातार्जा को लेजाने का अधिकार है। मैं माताकी आज्ञाके अनुवर्ती हूं। मातुश्रीकी आज्ञाका सदा पालन करना मैं अपना धर्म समझता हूं। पूज्य माता ही मुझे हमेशा सन्मार्गका उपदेश देती रहती है। शिक्षा देती है, मैं माताजीको कुछ भी कह नहीं सकता। भाई की इच्छा हो तो वह लेजावे। मैं इनपर क्या कहूं?

इसे सुनकर प्रणयचंद्रने फिर कहा कि स्वामिन्! आपने जैसा विचार प्रकट किया उसी प्रकार आपके सहोदरने भी कहा था कि इस कामके लिये पूछने की क्या जरूरत है? परतु उनसे मैंने निवेदन किया कि यह ठीक नहीं है। सूचना तो जरूर देनी ही चाहिये। इसलिये खासकर आपको सूचित करनेके लिये मैं आया हूं।

भरतजी प्रणयचंद्रकी बात सुनकर मन मनमें ही कुछ हंसे व कहने लगे कि प्रणयचन्द्र! तुम बहुत बुद्धिमान् हो। तुम्हारे कर्तव्यपर मुझे बडी प्रसन्नता हुई। तुम बाहुबली के पासमे रहो ऐसा कहकर उसको उत्तम वस्त्र आभूषणोंको दिया। प्रणयचन्द्र भी भरतजी को प्रणाम कर वहांसे निकल गया।

प्रणयचन्द्र के बाहर जानेके बाद राजा भरत बाहुबलीकी वृत्तीपर मन मनमे ही कुछ हंसे। फिर प्रकटरूपसे बुद्धिसागरसे कहने लगे कि बुद्धिसागर! देखा? मेरे भाईकी उद्दण्डता को तुमने देखली न? मनमें कुछ मायाचार रखकर यहां आना नहीं चाहता है। इसीलिये बहाना-बाजी बनाकर इसे भेजा है, वह भी शास्त्र सुनने का बहाना है। क्या ही अच्छा उपाय है। उसे मैं कामदेव हूं इस बातका अभिमान है। वह यह समझता है कि उसके बराबरी करनेवाले कोई नहीं है। इसीको हुण्डावसर्पिणी का प्रभाव कहते है।

प्रणयचंद्रने असली बातको छिपाकर रंग चढाते हुए बातचीत की। मैं इस बातको अच्छी तरह जानता हूं कि भाई बाहुबली मेरे प्रति भाईके नाते भक्ति नहीं करेगा, उसकी मर्जी. मैं क्या करूं?

बाहुबली तो युवराज है। इसलिये उसे इतना अभिमान है। परंतु उससे छोटे भाई क्या कम है। जिसप्रकार सूर्यको देखनेपर नीलकमल अपने मुखको छिपालेता है उसीप्रकार मेरे साथ उनका व्यवहार है।

पूज्य पिताजी व माताजीके प्रति मेरे भाईयोको अत्यधिक भक्ति है। परंतु मुझे देखनेपर नाक मुंह सिकोडलेते है। क्या परब्रम्ह श्री आदिनाथके पुत्रोंका यह व्यवहार उचित है ?

मैं हमेशा इन लोगोके साथ अच्छा व्यवहार करता हूं। उनके चित्तको दुखानेके लिये मैने कभी भी प्रयत्न नहीं किया। परंतु ये मात्र मुझमे भेद रखते है। न मालुम मैने इनको क्या किया ? ये इस प्रकार मनमे मेरे प्रति विरोध क्यो रखते है। मंत्री ! क्या तुम नहीं जानते हो ! बोलो तो सही !

बुद्धिसागर ! जिनेंद्रका शपथ है ! मैने तुमसे ही मेरे भाईयोके व्यवहार को कहा है। और किसीसे भी आजतक नही कहा है। यहातक कि पूज्य मातुश्री भी अपने पुत्रोंकी हालत जानकर दुःखी होगी इस भयसे उन लोगोकी प्रसंशा ही करता आरहा हू।

छह भाई दीक्षा लेकर मुनि होगये। वे मेरे भाई होनेपर भी अब गुरु बनगये। परंतु इनको तो देखो ! इनको अनुज कहूं या दनुज कहू ? समझमे नहीं आता।

स्वामिन् ! बुद्धिसागर बोले। आप जरा सहन करें, वे आपसे छोटे है। आपके साथ उन्होने ऐसा व्यवहार किया तो आपका क्या बिगडा है ? वे मूर्ख है। आपके साथ प्रेमसे रहनेके लिये अत्यधिक पुण्यकी जरूरत है।

तीन लोकमे जितनेभर बुद्धिमान है, विवेकी है वे सब तुम्हारे चातुर्यको देखकर प्रसन्न होते है। यदि छह कम सौ मनुष्य तुम्हारे साथ नाक भौं सिकोडकर रहे तो क्या बिगडता है ?

राजन् ! सूर्यकी उन्नतिको देखकर जगत्को हर्ष होता है। यदि नीलकमल मुकुलित होवें तो उसमें सूर्यका क्या दोष है ?

यह भी जाने दो ! असली बात तो और ही है । तुम्हारे भाई उद्धत नहीं हैं । मैं उनको अच्छी तरह जानता हू । वे तुम्हारे पासमें आनेके लिये डरते हैं । क्या तुह्मारी गभीरता कोई सामान्य है ?

राजन् ! इस जवानीमें अगणित संपत्तिको पाकर न्यायनीतिकी मर्यादाको रक्षण करनेके लिये तुम ही समर्थ होगये हो । तुम्हारे भाईयोको यह कहांसे आसकता है ? अभीतक उन्होने उसको नही सीखा है । इसलिये वे तुम्हारे पासमें आनेके लिये शर्माते है ।

राजन् ! तुम्हारे जितने भी सहोदर है वे अभी छोटे है । उनकी उमर भी कुछ अधिक नही है । ऐसी अवस्थामे वे अभी बचपनको नही भूले है । इसीलिये ही वे बाहुबलिसे डरते नहीं, अपितु आपसे डरते है ।

बाहुबलिके साथ किसी भी प्रकार अविवेक व हंसी खुशीसे वर्ताव करें उससे बाहुबली तो प्रसन्न ही होता है । परंतु तुम पागलपनेको कभी पसंद नहीं करोगे यह वे अच्छीतरह जानते है । इसलिये तुम्हारे सामने नहीं आते है ।

वे अपने ही वर्तावसे स्वयं लज्जित है । इसलिये उस लज्जाके मारे तुम्हारे पास नही आते है । अभिमानसे तुम्हारे पास नहीं आते है यह बात नहीं । कल वे अपने आप आकर तुम्हारी सेवा करेंगे, आप चिंता क्यों करते हैं ?

मंत्रीके चातुर्यपूर्ण वचनको सुनकर चक्रवर्ती मन ही मन हंसे व ठीक है ! ठीक है ! मंत्री ! तुम बिलकुल ठीक कह रहे हो ! इस प्रकार कहते हुए बांधवोमे प्रेम संरक्षण करनेके मंत्रीके तंत्रके प्रति मनमें ही बहुत प्रसन्न हुए ।

इतनेमें मध्यरात्रिका समय होगया था । उस समय "जिनशरण" शब्द को उच्चारण करते हुए भरतजी वहांसे उठे व मंत्री और सेवकोंके साथ शस्त्रालयकी ओर चले ।

उस समय शस्त्रालयकी शोभा कुछ और थी । अनेक शस्त्र वहांपर व्यवस्थित रूपसे रखे हुए थे । उनकी बलि, पुष्प चंदन इत्यादिकी पूजाओंसे वहांपर वीर रस बराबर टपक रहा था ।

पंचवर्णके अनेक भक्ष्यविशेष व अनेक नैवेद्य विशेषोंसे शस्त्र पूजा होरही थी इसी प्रकार होम भी होरहा था जिसमें अनेक आज्य अन्न आदिकी आहुति भी दी जारही थी।

धूपसे धूम निर्गमन, दीपसे प्रज्वलित ज्वाला व अनेक वर्णके पुष्प अनेक फल आदि विषयोंसे वहा अनुपम शोभा होरही थी।

भाला, खड्ग, कठारी, गदा, आदि अनेक अस्त्र शस्त्रोंको देखने पर एकदम राक्षस या मारिके मंदिर का भयंकर स्मरण आता था। खड्ग, गदा व चंद्रहास आदिक दण्डरत्नोंको जिसप्रकार वहांपर रखा गया था उससे सर्पमण्डलका ही कभी कभी स्मरण होता था।

चंद्रहास आदि कितने ही आयुध वहापर अग्निको ही वमन कररहे थे।

सानंदक नामक एक खड्ग [असि] रत्न तो इसप्रकार मालुम हो रहा था कि कब तो चक्रवर्ती दिग्विजय के लिये प्रयाण करेंगे, कब तो हमें शत्रुवोंको भक्षण करनेके लिये अवसर मिलेगा, इसप्रकार जीभको बाहर निकालकर प्रतीक्षा ही कर रहा है।

कालकी डाढके समान अनेक खड्गोंके बीचमें सूर्यके समान तेजःपुंज चक्ररत्न वहापर प्रकाशित हो रहा है। चक्रवर्तीने खडा होकर उसे जरा देखा।

चक्रवर्तीसे मंत्रीने प्रार्थनाकी कि स्वामिन्! आजतक इस चक्ररत्नकी महाविभवसे पूजा होगई। कल वीरलग्न है, योग्य मुहूर्त है। इसलिये दिग्विजयके लिये आप प्रस्थान करें।

इस वचनको सुनकर चक्रवर्तीने उस चक्ररत्नपर एक कमल पुष्पको रखा। उसे देखकर मंत्रीने कहा कि राजन्! सूर्यको कमल मिलगया यही तुम्हारे लिये एक शुभ शकुन है।

चक्रवर्ती उस शस्त्रालयसे लौटे। मंत्रीको उन्होंने भेजकर अपनी महलमें प्रवेश किया।

इति शस्त्रपूजा संधिः

पत्तनप्रयाण संधि ।

आज दशमीका दिन है । राजोत्तम भरतजीने श्रृंगारकर योग्य मुहूर्त मे दिग्विजय के लिए प्रयाण किया ।

सबसे पहिले भरतजी मातुश्रीके दर्शनकेलिए यशस्वतीकी महलकी ओर चले । स्तुति पाठक भरतजीकी उच्च स्वर से स्तुति कर रहे है ।

दूरसे आते हुए पुत्रको माता यशस्वती हर्ष भरी आंखोंसे देखने लगी । जिसप्रकार पूर्णचद्र को देखकर समुद्र उमड आता है उसी प्रकार सत्पुत्रको देखकर माता यशस्वती अत्याधिक हर्षित हुई ।

बहुतसी स्त्रियोंके बीच मे माणिककी देवताके समान सुशोभित, अकलंक चारित्रको धारण करनेवाली माताकी सेवा में भेंट रखकर भरतजीने प्रणाम किया।

" बेटा ! समुद्रांत पृथ्वीको लीला मात्र से जीतने में तुम समर्थ होजावो ! जिनभक्ति व भोगमे तुम देवेंद्र हो जावो " इस प्रकार माताने पुत्रको आशिर्वाद दिया ।

साथ में माताने यह भी पूछा कि बेटा ! आज क्या तुह्मारा प्रस्थान है ?

भरतजीने उत्तर दिया कि माता ! आलस्य परिहार व विनोदके लिए जरा राज्य विहार कर आनेका विचार कर रहा हूं । शीघ्र ही लौटकर आपके पुनीत चरणोंका दर्शन करूंगा ;

माताजी ! बाहुबली कल या परसोतक यहांपर आनेवाला है एवं आपको मेरे दिग्विजयसे लौटनेतक पौदनपुरमे लेजायगा । देखिये तो सही मेरे भाईकी सज्जनता ? वह विवेकी है ! मैं यहांपर नहीं रहू तब अकेली आपको कष्ट होगा। इस विचारसे वह आपको लेजारहा है। वह मुझे छोटे भाई नहीं, बडे भाई है ।

माता ! मेरी अनुपस्थितिमें आपका यहापर रहना उचित नहीं है । इसलिये आप बाहुबलिकी महलमें जाकर आनदसे रहें । मैं जब दिग्विजय कर वापिस लौटूं तब यहांपर पधारें ।

अच्छा ! अब रहनेदीजिये ! मै अब दिग्विजयको लिये जारहा हू । मुझे मेरे योग्य उपदेश दीजियेगा, जिससे मुझे दिग्विजयमे सफलता मिले ।

भरतजीकी बात सुनकर यशस्वती देवीको जरा हंसी आई और कहनेलगी कि बेटा ! तुम्हे मेरे उपदेशकी क्या जरूरत है ? क्या तुम दुसरोंके उपदेशके अनुसार चलनेके योग्य हो ? सारी जगतको तुम उपदेश देते हो, व वह तुम्हारे उपदेशके अनुसार चलती है। ऐसी अवस्थामे तुम्हे उपदेश वगैरे की क्या जरूरत है। जाओ ! दिग्विजय कर आनंदसे वापिस आओ। बेटा ! माताके उपदेशकी पुत्रको जरूरत है । परंतु किस पुत्रको ? जो पुत्र दुर्मार्गगामी है उसे माताकी शिक्षाकी आवश्यकता है। दूधको लेकर पानीको छोडनेवाले हंसके समान जिस पुत्रका आचरण है माता उसे क्या शिक्षा दें ? तुम ही बोलो। बेटा ! मैं समझगई कि मैने तुमको जन्म दिया है, इसलिये तुमने मुझसे उपर्युक्त बात पूछी । यह तुम्हारी शालीनता है। बेटा ! क्या कहूं ! तुम्हारी वृत्तिसे तुम्हारे पिता भी अत्यंत संतुष्ट है। मेरा चित्त भी अत्यधिक प्रसन्न हुआ है। इसलिये प्रिय भरत ! मुझे मत पूछो। तुम आनंदसे पृथ्वीको वश कर आओ ! तुममे अखंड सामर्थ्य मौजूद है ।

माताके मिष्ट वचनो को सुनकर भरतजी बहुत प्रसन्न हुए। आनंदके वेगमे ही पूछने लगे कि क्या माता ! आपको विश्वास है कि मुझमे उस प्रकारकी बुद्धि व सामर्थ्य मौजूद है ?

यशस्वतीने तत्क्षण कहा कि हां ! हा ! विश्वास है। तुम जावो !

" तब तो कोई हर्ज नहीं " ऐसा कहकर भरतजीने माताका चरणस्पशर्श कर बहुत भक्तिसे प्रणाम किया। उसी समय माताने पुत्रको मोती का तिलक किया। साथमें पुत्रको आलिंगन देकर आशिर्वाद दिया कि बेटा ! मनमे कोई आकुलता नही रखना। तुम्हारे हाथी घोडोंके पैरमें भी कोई काटा नहीं चुभे। पड्खंड मे राज्य पालन करनेवाले समस्त राजागण तुम्हारे चरण में मस्तक रखेंगे। कोई संदेहकी बात नहीं है। जावो ! जल्दी दिग्विजयी होकर आवो। इस प्रकार बहुत प्रेमके साथ पुत्रकी विदाई की।

माताकी आज्ञा पाकर भरतजी वहासे चले। इतने में मातुश्री यशस्वतीके दर्शन के लिए भरतकी राणियां आई।

अनेक तरहके शृंगारोंको धारण कर राणियोंने झुण्डके झुण्ड आकर अपने पतिकी प्रसावित्रीके चरणको नमस्कार किया। यशस्वती देवीने भी आशिर्वाद दिया कि देवियो ! तुम लोग दुःखको स्वप्न में भी नहीं देखकर हमारे पुत्रके साथ आनंदसे वापिस लौटना। दिग्विजय प्रयाणमे आपलोगोंको कोई कष्ट नहीं होगा। आप लोग प्रसंन्न चित्तसे जावे।

तब उन बहुवोंने पूज्य सासूसे प्रश्न किया कि माता ! हमें इस समय योग्य सदुपदेश दीजियेगा। इस बातको सुनकर यशस्वती देवी कहने लगी कि विवेकी भरतकी स्त्रियोको मैं क्या उपदेश देसकती हूं। आपलोगोंके पतिकी बुद्धिमत्ता लोकने सर्वत्र विश्रुत है। हमें पूछनेकी क्या जरूरत है। अपने पतिकी आज्ञानुसार चलना यही कुलस्त्रियोंका धर्म है।

आप लोग अविवेकिनी नहीं हैं। और न एकमेकके प्रति आपलोगोंमें ईर्षा है। ऐसी अवस्थामें तुम लोगोंको अब उपदेश देने लायक बात कौनसी रही है यह समझमें नहीं आता इसलिये मुझे आप लोगोंके संबंधमें कोई चिंता नहीं है, आनंदसे आपलोग जावें व दिग्विजयकर पतिके साथ लौटें।

इतनेमें सभी सौतवतियोंने सामने प्रार्थनाकी कि आज हम सब पतिके साथ दिग्विजयविहारमें जारही हैं। ऐसी अवस्थामें हमें प्रतिनित्य आपके चरणोंका दर्शन नहीं मिल सकता। इसलिये पुनः जब आकर आपके पूज्यपादोंका दर्शन हमें हो तबतक कुछ न कुछ व्रत लेनेकी आज्ञा दीजियेगा।

तदनुसार सभी रानियोंने भिन्न २ प्रकारके व्रत लिये। किसीने भोजनके रसोंमें नियम किया। किसीने पुष्पोंमें अमुक पुष्पका सुंघ त्याग रहे इस प्रकारका व्रत लिया। किसीने ताम्बूलका त्याग किया किसीने वस्त्रोंका नियम किया। एक रानीने मल्लिका पुष्पका त्याग किया। एकने जाई पुष्पका त्याग किया। एक सतीने दूधका त्याग किया, एकने केलेका त्याग किया। एकने फणीका त्याग किया। किसीने गोरोचन और किसीने कस्तूरी का त्याग किया। एक रानीने रेशमी वस्त्रोंका त्याग किया। एकने मोतीके आभरणोंका त्याग किया। इसप्रकार अनेक स्त्रियोंने तरह तरहसे अनेक नियमोंको लिये। यह सब नियमव्रत है। यम नहीं। क्यों कि सासुके पुनर्दर्शनपर्यंत इनका कालनियम है। बहुओंकी भक्तिको देखकर माता यशस्वतीको बहुत हर्ष हुआ। और कहने लगी कि बहुओ! आप लोग परदेशको गमन करने जारही हो। इसलिये मुझे कुछ कहनेकी क्या आवश्यकता है? आप लोग [illegible] भरतराज्य (षट्खंड) हमारा ही है, यह परदेश नहीं है। इसलिये हम स्वदेश गमन ही कर रही हैं। सो उन व्रतोंकी हमें

आवश्यकता है" ऐसा आग्रह पूर्वक कहकर सब स्त्रियोने सासूके चरणमे भक्ति पूर्वक मस्तक रखा। सासूने भी "तथास्तु" कहकर आशिर्वाद दिया।

सासूकी आज्ञाको पाकर वे सब स्त्रियां बहुत आनंद व उल्लासके साथ वहांसे चली। उन लोगोका पारस्परिक प्रेम, लोकमे ईर्षा व मत्सरसे जीनेवाली एक पतिकी अनेक स्त्रियोके दुःखमय जीवनको तिरस्कृत कर रहा था।

सदा परस्पर झगडाकर एकमेकको गाली व शाप देकर, सवतमत्सरके साथ जीनेवाली स्त्रियोसे नारकियोंके जीवन कदाचित् अधिक सुखमय है। इस बातको स्वकृतिसे व्यक्त करते हुए वे बहुत आनंदके साथ जारही थी।

सोनेकी पल्लकिया तैयार थी उनपर आरूढ होकर राणियोने प्रस्थान किया। उनकी दासियोने चांदीकी पल्लकियो पर चढकर उनका अनुकरण किया।

रमाणियोंकी पल्लकियोकी बीच एक सोनेका रथ जारहा है। जिस मे अर्ककीर्तिकुमारका सुंदर झूला सुशोभित होरहा है।

राजा भरत अनुकूल नागरांक दक्षिणांक आदि मंत्री व मित्रोंके साथ सोनेके खडाऊ पहनकर जिनमंदिरकी ओर चले। रास्तेमे ज्योतिषी स्तुतिपाठक, गायक, आदि अनेक तरहके लोग भरतके दिग्विजय प्रस्थानके समय शुभकामना कर रहे है।

ज्योतिषी लोग पंचागशुद्धिको देखकर योग्य मुहूर्त व लग्नको निवेदन कर रहे है।

शास्त्र पाठक श्रीभरतजीको यश व जयकी सिद्धि हो, इस प्रकार उच्च स्वरसे घोषणा कर रहे है। गायन करनेवाले श्रीराग, मधुमाधवीराग आदि अनेक रागोमे आत्मविवेचन करनेवाले पदोंको गारहे है। इसके अलावा अनेक प्रकार के वाद्योके मधुर शब्द, और धवल शंखोके भी भोंकार हो रहे है। उन सबको सुनते हुए भरतजी जारहे हैं।

भरतजी माताकी महलसे जब बाहर निकले उस समय दो कौए देखनेमे आये । उसीप्रकार बायें ओरसे पाळ रुदन करने लगे । आकाश प्रदेशमे सामनेमे एक गरुड बराबर भागरहा था । अनुकूलनायकने समयकी अनुकूलता देखकर भरतजीको उसे इशारेसे बतलाया ।

आगे जानेपर एक पालत प्राणी भरतजीको देखकर अत्यधिक भयभीत होकर देखरहा था । उसे देखकर नागराकने कहा कि स्वामिन्! शत्रुवीर भी आपसे इसी प्रकार भयभीत होंगे, इसकी यह सूचना है।

सामनेसे एक साड धूल उडाते हुए आरहा है । मुंहसे शब्द भी कर रहा है । दक्षिणाकने उसे वीर सूचना कहकर भरतजीको दिखाये ।

इस प्रकार मित्रगण अनेक प्रकारके शुभशकुनोंको दिखाते हुए जारहे हैं । भरतजी भी अदर अदरसे ही हसते हुए एवं बहुत उत्साहके साथ परमात्माके स्मरण करते हुए नगरके मध्यस्थित जिनमंदिरमे आये ।

बाहरके परकोटेके बाहर ही उन्होने खडाऊ उतार दी । उसके बाद अप्रमादवृत्तिसे पाच सुवर्णके परकोटोको पार किया ।

सबसे पहिले उन्होने भद्रमण्डप मे प्रवेश किया । भगवान् आदिनाथ स्वामी की प्रतिकृतिका वहांपर दर्शन मिला । भरतजीने उस भद्रमण्डपमें योग्य द्रव्योंकी भेट चढाकर बहुत भद्रभावसे भगवान् के चरणोंमे साष्टाग प्रणति की । तदनतर चिद्रूपभावनाको धारण करनेवाले योगियोंको नमोस्तु किया ।

निरजन सिद्धभावनाको धारण करनेवाले योगियोनें भी आशिर्वाद दिया कि " सिद्धदिग्विजयकार्यो भव, हे भूप ! समृद्धसुखी भव " ।

तदनतर भरतजीने सिद्धपूजाकी शेषाको मस्तकपर व मृत्युजय, सिद्धचक्र आदि होमभस्मको कठमे लगाकर भक्तिको व्यक्त किया ।

बुद्धिसागरने प्रार्थना की कि स्वामिन् ! होम कर्मको बहुत विधिपूर्वक निष्पन्न किया गया । मुनियोको आहारदान नवधाभक्तिपूर्वक दिया गया । महास्वामी श्रीआदिनाथ भगवंतकी पूजन बहुत वैभवके साथ

किया गया है। प्रतिप्रदासे लेकर दशमी तक अद्वितीय उत्साहके साथ आपने जो पूजा की व कराई है वह अब इस लोकमें आपकी पूजा करायगी इसमे कोई संदेह नहीं।

स्वामिन्! धर्मपूर्वक राज्यपालन करनेकी पद्धति, धर्मांग भोगक्रम, इत्यादि बातोंके मर्मको तुम्हारे शिवाय और कौन जान सकता है? अब आप यहांपर किरीटधारण करें।

मंत्रीकी प्रार्थनाको स्वीकार कर भरतजीने अपने मस्तकपर रत्नमय किरीटको धारण किया।

तदनंतर किरीटी भरतने " भूयात्पुनदर्शनं " यह पद उच्चारण करते हुए जिनेंद्र भगवंतको नमस्कार किया। बादमें मुनियोंके चरणमें मस्तक रखकर वहांसे जयघोपणाके साथ वापिस लौटे।

रास्तेमे जाते समय बहुतसे कुलवृद्धजन भरतजी को आशिर्वाद देरहे हैं। विद्वान् लोग मंगलाष्टक का उच्चारण कर भरतजीके ऊपर अक्षतक्षेपण कररहे थे। बहुतसे लोग बीच बीचमें आकर फल, पुष्प आदिकी भेट रखकर नमस्कार करते थे। एवं राजन्! आपका भला हो। आपकी जय हो। इत्यादि शुभभावना करते थे।

जिससमय भरतजी अत्यंत आनंदके साथ जिन मंदिरसे बाहर निकले उस समय अकस्मात् ही उनके दाहिने भुज, जंघा व आंखमें स्फुरण होने लगा जो कि निकटभविष्यमें अद्वितीय संपत्तिकी सूचना थी।

बहुत वैभवके साथ आप पांचों परकोटोंसे बाहर आये। वहांपर पट्टके हाथी तैयार था। पर्वतके समान उस सुंदरहाथी पर "जिन शरण" शब्दकों उच्चारण करते हुए भरतजी आरूढ होगये। उसी समय मोतीके छत्रको ऊपर उठाया व इधर उधरसे चामर ढलने लगे। इतना ही नहीं, चारों ओरसे ध्वजपताकाये उठी व करोडो तरहके बाजे बजने लगे।

सामनेसे स्तुतिपाठक जारहे थे। वे अनेक प्रकारसे राजाकी स्तुति करते हुए शुभभावना करते थे।

स्वामिन्! आप अनेक वैरिराजाओंके पति हैं। शत्रुरूपी अंधकारके लिये सूर्यके समान हैं। जयलक्ष्मीके आप पति हैं। आपकी जय हो!

इत्यादि स्तुतियोंको सुनते हुए भरतजी नगर के विशाल मार्गोंमें जारहे हैं।

उस समय दूरसे भरतजीका किरीट सूर्यके समान मालुम होरहा था। शरीर सोनेके पुतलेके समान मालुम होरहा था। गजरत्न तो पर्वतके समान मालुम होरहा था।

भरतजीके ऊपर जो प्रकाशमान मोतीका छत्र रखा गया था उसके प्रकाशसे ऐसा मालुम होरहा था कि अनेक नक्षत्रोंके बीचमें चंद्रदेव आरहा हो।

बत्तीस चामर जो इधर उधरसे ढुलरहे हैं उनको देखने पर मालुम होता है कि राजा भरतजी क्षीरसमुद्रमे हाथी चलाते हुए आरहे हैं।

हाथी के आगे दो सुंदर व उज्वलध्वज मौजूद हैं जिनका नाम क्रमसे चंद्रध्वज व सूर्यध्वज हैं। उनकी शोभाको देखनेपर ऐसा मालुम होरहा है कि चंद्र व सूर्य ही भरतजीको आकर लेजारहे हैं। इस प्रकार अनेक वैभवोंके साथ आप दिग्विजय प्रस्थानके लिये जारहे है।

पुरुषोत्तम भरत आज अयोध्याको छोडकर दिग्विजय के लिये जारहे है यह सबको मालुम ही था। सब लोग उनकी विहार शोभाको देखनेके लिये भागे आये हैं। आरहे हैं। अपनी महलके ऊपर चढकर देखरहे है।

स्त्रियोंकी बात कहना ही क्या? वे उमड उमडकर भरतजीको देखनेके लिये उत्सुक हो रही हैं। किसी भी पुरुषके मनमें भी हमारी स्त्रियां भरतजीको नहीं देखे इस प्रकारका विचार उत्पन्न नहीं होता है, क्यों कि भरतजी उदार सहोदर हैं। भाईको बहिने देखें तो क्या बिगडता है?

कहीं कहीं पुरुष अपनी स्त्रियोंके साथ खडे होकर देख रहे हैं। कहीं स्त्रियां अकेली ही देख रही हैं। अनेकवेश्याये षट्खण्डाधिपतिकी शोभाको देखरही है।

कितनी ही स्त्रियां गडबडीसे दौडी आ रही है और भरतजीको देखनेके लिये उत्सुक हो रही है।

चूलेपर दूध गरम करनेके लिए रखा हुआ है। उसे उतारनेकी चिंता नहीं। सामनेसे बच्चा रो रहा है। उसकी ओर लक्ष्य नहीं। सबको वैसे ही छोडकर बाहर आरही है।

जो स्त्रियां अनेक विनोदलीला करती थी उन्हे अर्धमे ही छोडकर एवं संगीतको भी अर्धमें ही बंदकर भरतजीको देखनेकेलिये गई।

एक स्त्री तोतेको पढारही थी। अब तोतेको पिंजडेमें रखकर जानेमें देरी होगी इस गडबडीसे तोतेको भी साथ लेकर गई। और जुलुस की शोभा देखने लगी।

कितनी ही स्त्रियां हाथमे दर्पण लेकर कुंकुम लगारही थी। उधरसे बाजोंके शब्दको सुनते ही कुंकुम लगाना भूलकर दर्पणसहित ही बाहर आई और बहुत आनंदके साथ देखने लगी।

एक स्त्रीकी वेणी व साडी ढीली होगई थी। तो भी वेणीको तो दाहिने हाथसे व साडीको बाये हाथसे सम्हालती हुई बाहर दौड कर आई।

एक वेश्या विटके साथ क्रीडा के लिये स्वीकृति देकर अंदर जारही थी। उतनेमे बाजेके शब्दको सुनकर वह उस विटको आधेमें ही छोडकर बाहर भाग गई।

बहुत दिनसे अपेक्षित विट पुरुषको घरपर आनेपर बहुत बहुत हर्षित होनेवाली वेश्याये जुलुसके शब्दको सुनते ही विटके प्रति निस्पृह होकर भाग गई।

विशेष क्या ! पान खानेवाली स्त्रियें जो बैठी थीं वह पान खाना भूल गई। जिनका पदर खिसका था उसे भी ठीक करना भूलगई। एक दम परवश होकर बेचारी भरतजीको देखने लगीं।

भरतजीके सौंदर्यका क्या वर्णन करें ! जिन स्त्रियोंने भी बराबर उनको देखा तो वे सब अपनेको भूलगईं थीं, और बराबर स्तब्ध पुतली के समान खड़ी थीं।

अधिक क्या ! जिनके साठ सोलह आने पकगये हैं ऐसी बुड्ढियां भी भरतजीको देखकर स्तब्ध सा होगई एवं आंखें मुंह फाड़कर देखने लगीं एवं मोहित होकर विकारसे मनमें हिल गईं तो तरुणियों के हृदयमें किस प्रकारके विकारका संचार हुआ होगा यह पाठक ही कल्पना करें।

स्त्रियां भरतजीको देखकर भरतजीके प्रति मोहित होगईं, इसमें आश्चर्य ही क्या है ! वहांके नगरवासी पुरुष भी भरतजीके सौंदर्यसे मनहारकर भ्रान्त हुए। ऐसी हालतमें स्त्रियोंकी तो बात ही क्या है ! उनका तो हृदय स्वभावतः ही कोमल रहता है।

स्त्रियां सब भरतजीको बहुत ही चावसे देखरही हैं। परंतु भरतजी की दृष्टि गजराजके गण्डस्थलकी ओर है। वे इधर उधर देख नहीं रहे हैं। यह गंभीरता भरतजीने कहां सीखी होगी ?

जिस महापुरुषने तीनलोकमें सारभूत श्रीजिनेंद्रपुरुष परमात्माके अतुलवैभवका दर्शन किया है, उसका चित्त इस इधर उधर के क्षुद्र विषयोंसे क्षुब्ध होसकता है क्या ? कभी नहीं ! इसलिये भरतजी भी मदगजके ऊपर बहुत गंभीरतासे आरूढ होकर जारहे हैं।

करोडों पात्रोंका शृंगार होकर आगेसे ये नृत्य करते हुए जारहे हैं। एवं स्तुतिपाठक अनेक सुंदर शब्दोंसे स्तुति करते हुए जारहे हैं।

हे आदिजिनपुत्र ! कामदेवाग्रज ! भरतषट्खण्डअधिनाथ ! गुरुहंसनाथभावक ! तुह्मारी जय हो !

समस्त भूपतियोंके पति ! अहंकारी व विरोधी राजागणरूपी अटवी के लिये दावानल ! प्रतिस्पर्धा करनेवाले राजगिरिकोलेये वज्र-दण्डके रूपमे रहनेवाले हे राजन् ! आपकी जय हो !

राजन् ! लोकमे अनेक राजा ऐसे है जो अपने कर्तव्य को नहीं जानते है । उनकी वृत्ति उनको शोभित नहीं होती है । आत्मकला व विवेक उनमे नहीं है । फिर भी बाह्यरचनावोसे अपनी प्रसंशा करालेते है । ऐसे राजावोके ऊपर भी आप अपने आधिपत्य रखते हैं ।

संपत्ति, शील, तेज, आज्ञा, प्रभुत्व, वीरता, आदि गुणोमे, इतना ही क्यो त्याग और भोगमे आप इस नरलोकमे सुरपातेके समान है । आपकी जय हो ! इत्यादि अनेक प्रकारसे भरतजीकी स्तुति होरही है ।

सामनेसे वहुतसे खिलाडी तरह तरहके खेल वता रहे है । कितने ही पुष्पाजलिक्षेपण कर रहे है । वार वार लोग सामने आकर भरतजीकी आरती उतारकर शुभकामना कररहे हैं । अनेक तरहके सुगंधित पुष्पोको हाथीपर क्षेपण करके जयघोषणा कररहे हैं ।

एक तरफसे वीरावली है । दूसरी ओर दारावली हैं । एक तरफ वीरगुणावली है । दूसरी ओर शृंगारावली है । इन सबकी शोभासे सबको अपूर्व आनंद आरहा था ।

स्तुति पाठकोको, नर्तन करनेवालोको एवं खिलाडियोको अनेक प्रकारसे इनाम दिलाते हुए भरतजी इस प्रकारके तेजसे आरहे हैं कि जैसे मंदराद्रिके ऊपर चढकर सूर्य ही आरहा हो ।

दिग्विजयमे शुभकामना व भरतजीके स्वागत करनेके लिये नगरमे यत्र तत्र तोरण बंधन किया गया है । कहीं वस्त्रका तोरण, कहीं पुष्पका तोरण, कही कोमलपत्तोका तोरण । इन सब तोरणोको पार-

कर जब सम्राट् आगे वढ रहे है उस समय ऐसा मालुम होरहा है मानों सूर्य अनेक व्रणके आकारमें आगे वढ रहा है।

आगे जाकर कहीं कासेका तोरण है। कहीं सुवर्णका है। यही क्यों? कहीं रत्नसंनयका तोरण है। इन सबको पार करते हुए भरतजी ऐसे मालुम होरहे हैं जैसे चंद्रमा अनेक चमकीले नक्षत्र व विजलीको पार करते हुए जारहा हो।

उन तोरणोंकी रचनामें यह विशेपता थी कि कहीं २ उनमें पुष्पोंकी पोटलीको वाधकर रखी गई थी। भरतजी उनमें जब प्रवेश कर रहे थे तब दोनों ओरसे दो दीर्घ डोरोंको खींचनेपर भरतजीके ऊपर पुष्पवृष्टि होती थी। तब सवलोग जयजयाकार करते थे।

इस प्रकार पत्तनप्रयाणकी शोभा अपूर्व थी। जिस प्रकार श्रृंगार वनमें मन्मथराज वहुत वैभवके साथ प्रवेश करता है, उसीप्रकार भरत भी अयोध्यानगरके राजमार्गोमे वहुत वैभव के साथ जा रहे हैं।

इस प्रकार योग्य समय में भरतजी ने अयोध्याके परकोटेके वाहर पदार्पण किया।

नगर के वाहर वडे भारी मैदानमें प्रस्थान के लिये विशाल सेना तैयार होकर खडी है। सेनापतिरत्न सम्राटकी आज्ञा की प्रतिक्षामें है। भरतजी भी वहुत प्रसन्नता के साथ में गजरत्नपर आरूढ होकर उसी ओर जा रहे हैं। सेनाको देखकर उन्हें हर्ष हुआ।

पाठकोंको आश्चर्य होता होगा कि आदिसम्राट् भरतजी को इस प्रकार का वैभव क्योंकर प्राप्त हुआ! उन्होने पूर्वमे ऐसे कौनसे कर्तव्य का पालन किया है, जिससे उनको इस भवमें इस प्रकारके वैभव प्राप्त हुए। इसका एक मात्र उत्तर यह है कि उन्होंने अनेक भवोंसे इस सुकृतका संचय किया है। उन्होंने अनेक भवोमे इस प्रकारकी भावनाकी थी कि

हे परमात्मन्! तुम सुखनिधि हो। लोकमें जो पदार्थ श्रेष्ठ कहलाता है उससे भी तुम श्रेष्ठ हो! जो अत्यधिक निर्मल है उससे

तुम अधिक निर्मल हो ! जो मधुर है उससे अनंतगुण अधिक तुम मधुर हो ! इसलिये मधुर अमृत को सिंचन करते हुए मेरे हृदय में चिरकाल तक वास करो।

परमात्मन् ! भव्यकमल के लिये तुम सूर्य के समान हो ! शांत हो ! जो लोक में सत्यप्र तिके हैं उनको अत्यंतभोग व अधिक सौभाग्य को प्राप्त करानेमें तुम प्रधान सहायक है ! अतएव स्तुत्य है तुम मेरे हृदय में बने रहो । उसी भावना का यह मधुर फल है ।

इति पत्तनप्रयाण संधि ।

अथ दशमिप्रस्थानसंधि.

भरतजी गजारूढ होकर बहुत वैभवके साथ आगे बढ रहे हैं। आयोध्यानगर के बाहर ही कुछ दूरसे सामनेसे एक विजयवृक्षपर चक्ररत्नका प्रकाश दिखने लगा।

सिंहलग्नमें जब महलसे सिंहासनाधीशने प्रस्थान किया तब सेनापतिको आज्ञा दी कि चक्ररत्नको आगे चलावो। उनके संकेतसे ही उसका शृंगार किया गया था।

अनेक प्रकारकी झालरी, वस्त्र व भूषणोसे उस विजयवृक्षकी भी शोभा की गई थी।

विजय वृक्षको कनडीमें " वन्नी " कहते है। " वन्नी " शब्दका दूसरा अर्थ आवो ऐसा होता है। जिससमय उस वृक्षके सुंदर पत्ते हवासे हिलरहे थे, उससे ऐसा मालुम होरहा था कि शायद वह वन्नी वृक्ष लोगोंको अपनेपास वन्नी (आवो) ऐसा कह रहा हो।

उस विजय वृक्षकी वेदिकाके चारो तरफ अनेक चामर, इत्यादिकी शोभा है। और गाजे बाजोंका सुंदर शब्द होरहा है।

राजा भरत भी उस वृक्षके पास चले गये। एक दफे तो उन्होंने हाथीको ठहराकर अंकुशपर हाथ रखकर वीरदृष्टिसे चारों ओर देखा। जिधर देखते है उधर हाथी है, घोडे है, रथ हैं, अगणित सेनायें है। अपनी २ विशाल सेनावोंको लेकर छप्पन देशके राजागण उपस्थित हैं।

भरतजीके सेनापति जयराज हैं उसे अयोध्यांक भी कहते है। उसने सारीसेनाकी व्यवस्था की है। वह जयवंत है, अतिवीर है, विवेकी है, और असल क्षत्रिय है। वह सम्राट् के पासमें ही है।

दुपहरको तीसरे प्रहरमें राजदरबार हुआ। सेनापति जयराजके इशारे को पाकर वहा उपस्थित सब राजावोंने आकर सम्राट् भरतका दर्शन लिया।

अनेक श्रृंगारसे युक्त घोडेपर चढकर अंग देशके राजा आये और उन्होंने बहुत आदरके साथ राजाको नमस्कार किया। इसी प्रकार पल्लव, केरल, कान्नोज, करहाट, सौराष्ट्र, काशी, तिगुळदेश, तेलुगदेश, हुरमुजि, पारसी, चेर, सिंधु, कलहरि, ओड्डि, पाड्य, सिंहळ, गुर्जर, नेपाळ, विदर्भ, चीन, महाचीन, भोट्ट, महाभोट्ट, लाट, महालाट, काश्मीर, तुरुक, कर्णाट, कांभोज, वग, बृत्त, चित्रकूट, पांचाळ, गौळ, कालिंग, मालव, मक्का, बंगाल, साम्राणि, कुंतल, हम्मीर, गौड, कोकण, तुळु देश, बर्बर, मलय, मगध, हंव, महाराष्ट्र, दूपारी, मलेयाळ, कोडगु, वाल्हिक, मले, मधुर, चोळ, कुरु, जागल, मथुरा आदि अनेक देशोके राजा अपने २ अद्वितीय वैभवके साथ आये व भरतजीको बहुत आदरके साथ नमस्कार कर एक तरफ हुए।

विशेष क्या ? छह खण्डके राजावोंमे आर्याखण्डके समस्त राजा वहा उपस्थित थे। पांच म्लेच्छ खण्डके राजा वहांपर नहीं थे।

आर्याखण्डके अधिपति तो सम्राट्के आधीन हो चुके। अब म्लेच्छखण्डके राजावोंको वशमें करनेके लिये इस सेनाको एकत्रित किया है।

तीनो समुद्रोंके अधिपति तीन व्यंतरेंद्र है। उनको वशमे करनेके बाद पांच म्लेच्छ खंण्डोकी ओर भरतजी बढेंगे।

उनके साथ अगणित सेना मौजूद है। अपनी मदजलधाराको बहाते हुए जृंभण करनेवाले मंगलहाथी उस सेनामे चौरासी लाख है।

इसी प्रकार अपनी सुंदर चाल व चीत्कारसे बडे २ पर्वतोको भी शिथिल करनेवाले सुदर रथ चौरासी लाख है।

सामान्य घोडोंकी संख्या हमें मालुम नही। वह अगणित थे, परंतु उत्तम व सुंदर लक्षणोंसे युक्त घोडे अठारह करोड की संख्यामे थे।

सामान्य सेवकोंकी बात जाने दीजिये। परंतु उत्कृष्ट क्षत्रिय जातिमें उत्पन्न जातिवीरोंकी संख्या चौरासी करोड थी।

इसी प्रकार रणभूमि में शोभा देनेवाले व साम्राट् के अंगरक्षण के लिये सदा कटिबद्ध व्यंतर कुलोत्पन्न देव सोलह हजार थे।

इस प्रकार चतुरंग सेनासे युक्त होकर भरतजीने उस विजय वृक्षसे आगे बढनेकी तैयारी की। उनके इशारेको पाकर करडों बाजे बजने लगे। उस विजयवृक्षको अपनी दाहिनी ओर कर विजयपर्वत हाथीको चक्रवर्ती ने चलाया। उस हाथीके आगे से ध्वज सहित चक्ररत्न चमक रहा था।

दाहिने ओर, आगे और पीछे सब जगह सेना ही सेना है। बीचमें सुमेरू के समान सम्राट् बहुत शोभाको प्राप्त हो रहे है।

भरतजी के आश्रित राजागण अपनी २ सेना व वैभव के साथ भरतजीके अनुकरण कर रहे है। और सब लोग जय जयजयकार करते हुए उनकी शुभभावना कर रहे है।

इस प्रकार अचिंत्य वैभवके साथ अयोध्यानगरसे कुछ ही दूर गये है। वहापर मय (व्यंतर) के द्वारा रचित मुकामके स्थानको उन्होंने देखा। वहापर अपने दीर्घ हस्तमे सब सेनाओंको इशारा करदिया कि सब लोग यहींपर ठहरे।

सब राजावोंकी हैसियतके अनुसार विश्वकर्मा रत्नने सबको अलग २ महलोंको निर्माण कर रक्खा है। सब लोग बिना किसी प्रकारके कष्ट के उन महलोमे प्रवेश करगये।

पर्वत परसे उतरनेके समान सम्राट स्वय हाथीपरसे उतर गये। विद्वान् व वेश्यावोंको उन्होने भेजदिया। एव स्वयं अपनी महलकी ओर

चल । उनके साथ बहुतसे लोग थे । महलके बाहर खडे होकर सब साथियोको कहा कि अब शामके भोजनका समय होचुका है अब आप लोग चले जाईयेगा ।

इस प्रकार बुद्धिसागर, सेनापति व गणबद्ध देवोको वहासे विदा देकर भरतजी अपने लिये निर्मित सुंदर भद्रमुख नामक अपनी महलमे प्रवेश कर गये ।

उस महलमे प्रविष्ट होकर जब भरतजीने वहांपर श्रृंगारसे युक्त एक विवाह मण्डपको देखा तो उनके आश्चर्यका ठिकाना नही रहा । वे उसी दृष्टिसे उसे देखने लगे थे । वहापर पासमे ही राणी कुसुमाजी खडी थी । उसने कहा कि स्वामिन् ! यह आपके लिये भविष्यकी मंगल सूचना है । आज मेरी बहिनका विवाह इस मण्डपमे आपके साथ होगा । तब सम्राट्ने प्रश्न किया कि देवी ! नगरमे रहते हुए यह कार्य तुमने क्यो नही किया ? बाहर इसकी तैयारी क्यो की गई है ।

" स्वामिन् ! मैने पिताजीको पहिलेसे ही सूचना भेजी थी । परंतु उनके आनेमे कुछ देरी हुई । इसलिये विवाहका योग इस स्थानपर आया । आज ही रातको विवाहकेलिये योग्य मुहूर्त है, इस प्रकार ज्योतिषियोसे निर्णयकर पिताजी आये है । मेरी बहिन भी पूर्ण यौवन व सौंदर्यसे युक्त है । इस प्रकार कुसुमाजी बोलती हुई राजाके साथ ही अंदर गई । वहापर भरतजीने अपनी स्त्रियोको साथ लेकर एक पंक्तिमे निरंतराय भोजन किया । और कहने लगे कि यह हमारे लिये भविष्यमे होनेवाली विजयकी सूचना है । जयलक्ष्मी भी इस दिग्विजय प्रयाणमे इसीप्रकार मेरे गलेमे माला डालेगी जिस प्रकार आज कुसुमाजीकी बहिन डालेगी ।

इतनेमे सूर्य अस्ताचलपर चला गया । संध्याराग यत्र तत्र दिखने लगा । भरतजीने सायंकालके संध्यावंदन को किया । बाद मे अर्ककीर्ति कुमार के पास जाकर उसे प्यार किया । अनंतर विवाह योग्य वस्त्रादि-

कसे शृंगार कर स्त्रियोंके साथ विनोद वार्तालाप कर बैठे थे। विवाहका मुहूर्त अतिनिकट है इसकी सूचना पाकर भरतजी विवाह मण्डप मे दाखल हुए। वहापर अखण्ड अक्षतोकी पंक्ति शोभित होरही थी। उस पर आप खडे होगये।

पास मे ही श्वसुरके साथ कुसुमाजीके भाई कमलांक खडा था। उस के साथ विनोद करनेके विचार से भरतजी बोले कि कमलांक! तुम्हारी यह बहिन कुसुमाजीके समान नही है। इस ने बहुत क्रोधके साथ मेरा तिरस्कार किया था। यह लोकमे अपने को असमान समझती है अर्थात् उसकी बराबरी करनेवाले कोई नही ऐसा समझती है। ऐसी अवस्था मे फिर भी लाकर मेरे साथ ही उसका विवाह करना क्या यह बुद्धिमत्ता है? तब कमलांक बोला कि राजन्! लोक मे तुम भी असमान हो और मेरी बहिन् भी असमान है। असमान पुरुषको असमान स्त्रीकी जोड कर देना बुद्धिमत्ता नही तो और क्या है? राजा उसे सुनकर कुछ मुसकराये व कहनेलगे कि अब विवाह का समय हो गया है। तुम्हारे साथ बहुत विनोद वार्तालाप करनेके लिये यह समय नहीं है। इस प्रकार कहकर मंगलप्रसंगके मंगलाष्टक शोभनपद वगैरेह को सुनते हुए खडे थे। इतनेमे बीचका पर्दा हटा दिया गया। गजांकक राजाने गुरुमंत्रसाक्षिपूर्वक जलधाराको छोडनेपर श्री सम्राट्ने होमसाक्षी पूर्वक मकरदाजीको ग्रहण किया।

राजेंद्र भरत उस मकरदाजीको लेकर अपनी महलमे चले गये। कुसुमाजीने अपने पिताको विश्रांतिके लिये भेजदिया। राजा भरत सुखागमे मग्न होगये।

सेनामे इस आकस्मिक विवाह की चर्चा होने लगी। सबलोग कहनेलगे कि भरतजीका पुण्य अचिंत्य है। इनको निश्चयसे यह षट्-

---

१ प्रथम भागकी सरस संधिको देखें।

खण्ड पृथ्वी वशमें होगी। इसके लिये यह विवाह ही पूर्व सूचना है। कल एकादशी है। अपन आगे जायेंगे। इत्यादि अनेक प्रकारके विचारोंसे सेनाने भी विश्रांति ली।

पाठकोंको भी आश्चर्य होता होगा कि भरतजीका भाग्य इतना विशाल क्यो है। जहा जाते है उनको आनंद ही आनंद मिलता है। महलमे रहते है तो सुख, बाहर निकले तो वहापर भी सुख। इस प्रकार का भाग्य ससारमे अतिविरल मनुष्योका ही होसकता है। भरतजीने पूर्वमें ऐसा कौनसा कार्य किया होगा जिसके द्वारा उन्हे इस भवमे अनन्य दुर्लभ वैभवोंकी प्राप्ति होरही है। इसका एक मात्र उत्तर यह है कि पूर्वजन्म का संस्कार, पूर्वजन्मका धर्माचरण। भरतजीने पूर्वभवमे व वर्तमान भवमे इस प्रकार आत्मभावना की है कि:—

हे आत्मन्! ज्ञान व दर्शन ही तुम्हारा स्वरूप है। उस ज्ञान व दर्शनका प्रकाश तुम्हारे रूपमें उज्वल रूपसे प्रतिभासित होरहा है। वही संसारमें मोहांधकारमें पडे रहनेवाले प्राणियोंको भी मोक्षपथप्रदर्शक है। इसलिए हे परमात्मन्! तुम भव्योंके हितैषी हो। इसालिये छिपो मत! मेरे शरीरकी आडमें बराबर बने रहो।

उसी भावनाके मधुर फलको वे प्रति समय सुखस्वरूपमें अनुभव करते है।

इति दशमिप्रस्थानसंधि

अथ पूर्वसागरदर्शनसंधि.

आज एकादशीका दिन है। भरतजी प्रातःकाल अपनी नित्यक्रिया वोंसे निवृत्त होकर बाहर आये। माकाल नामक व्यंतर को बुलाकर आज्ञा दी कि हमारे लौटनेतक अयोध्यानगरीकी रक्षा करनेका कार्य तुम्हारा है। इसलिये इसकार्य मे संलग्न रहना। फिर सेनापतिको आज्ञा दीगई कि अब प्रस्थानभेरी बजाई जाय।

आज्ञा होनेकी देरी थी कि प्रस्थानभेरी की आवाजने आकाश प्रदेश को व्याप लिया। उसी समय सेनाने जो पहिलेसे प्रस्थान भेरीकी प्रतीक्षा कर रही थी प्रस्थान किया। चक्ररत्न भी सामनेसे प्रकाशमान होते हुए चलने लगा। सम्राट् भरत भी उत्तमरत्नोंसे निर्मित पल्लकिमें विराजमान होकर पधाररहे थे।

भरतजीके ऊपर श्वेत कमल के समान छत्र व चारो तरफसे राज-हसो के गमन के समान धीरे २ डुलनेवाले चामर अत्यंत शोभाको देरहे थे।

बहुतसे गायक लोग समयको जानकर योग्य रागोंमें गाते हुए वाद्य वगैरे बजा रहे है। उनमे परमात्मकलाका वर्णन है। उसे सुनकर सम्राट्का चित्त भी प्रफुल्लित होता है। सम्राट् मनमनमे ही हर्षित होकर उसका अनुमनन कर रहे हैं।

भरतजी की पल्लकी के चारो ओरसे अनेक वीरवस्त्राभूषणो से सुशोभित अगणित गणबद्ध देव आरहे हैं।

केवल सम्राट् के अंगरक्षकों के कार्य मे कटिबद्ध दो हजार गणबद्ध वीर है। साथमे राणीयो की पल्लकियो के पीछेसे उनकी रक्षाके लिये सात हजार गणबद्ध देव मौजूद है। हाथी घोडा, रथ, व पदातियों की

चतुरंग सेना मीलों क्यों कोसोतक फैली हुई है। इसके बीचमें अर्क-कीर्तिकुमारका सुंदर झूला आरहा है।

भरतजीकी सेना मे इस प्रकार प्रसिद्ध है कि आगेकी सेना भरतजी की है। और पीछे की सेना (अंतःपुरसेना) सब अर्ककीर्ति की है। क्यों कि स्त्रियां बच्चेके साथमे आरही है। अर्ककीर्तिकी सेनाके कुछ पीछे एक करोड वीरों के साथ भरतपादुक नामके दो गोपाल राजा आरहे हैं। जो अत्यंत वीर है। शत्रुवोंका बहुत तेजसि दमन करनेवाले है।

पूर्वाण्ह काल के समय मे पूर्व [आदि]तीर्थंकरके पूर्व [प्रथम] पुत्र पूर्वयुगके पूर्व (प्रथम) चक्रवर्ती पूर्वाभिमुख होकर अपनी अग-णित सेनाके साथ जारहे है। उस समयकी शोभा मात्र अपूर्व थी। वैभव व संभ्रम अपूर्व था। उसका वर्णन कहां तक करें।

इस प्रकार अत्यंत वैभवके साथ सम्राट्ने अपनी सेनाको बीच बीच में अनेक स्थानोंमें विश्रांति देकर गंगा नदीके सुंदर किनारे परसे प्रस्थान कराया, आगे अब पूर्व समुद्रकी ओर जा रहे हैं।

देवगंगाके दक्षिणमे उपलवण समुद्र मौजूद है। उसे दाहिने ओर कर भरतजी अपनी सेनाके साथ जारहे है। अनेक स्थानोंमें सेनापति श्री जयकुमार के इशारेसे मुकाम करते २ पूर्व समुद्रको गांठ लिया। पूर्वसागर के दर्शन करते ही सभी सेनावोंमे एक नवीन उल्हास उत्पन्न हुआ।

बुद्धिसागरने आकर समयोचित विनंति की कि राजन्! इस समु-द्रका अधिपति **मागधामर** नामक व्यंतर है। वह अत्यंत कोपी है और वीर है. उसको सबसे पहिले वशमे कर लेना चाहिए। बाद आगेके कार्यके संबंध मे विचार करेंगे।

बुद्धिसागरके वचनको सुननेके बाद सम्राट्ने कहा कि क्या माग-धामाग कोपी है? उसके क्रोधको मैं भस्म कर दूंगा। उसे शायद

समुद्रमे रहनेका अभिमान होगा। उसे मै क्षणभर मे वशमे कर लूंगा। रहने दो। उसे पहिले मै एक पत्र भेजकर देखूंगा। पत्र बांचकर भी वह यदि नही आवे तो फिर उसे योग्य बुद्धी सिखावूंगा, अभी उसे बोलने से क्या प्रयोजन ?

उसी समय आज्ञा दीगई कि वहींपर सेनाका मुक्काम होजाय। पूर्वसागरके तटमे सेनासागरने अपनी विशालताको व्यक्त किया।

३६ योजन चौडाई व ४० योजन लंबाई के उस विशाल प्रदेशको सेनाने अपना स्थान बनाया। विशेष क्या वहापर बाजार, अश्वालय, गजालय, वेश्यागली, आदि समस्त रचनाये विश्वकर्माके वैचित्र्यसे क्षणमात्रमे होगई। राजागण, राजपुत्र, राजमित्र, मंत्रि व मंत्रिपरिवार आदि सबको योग्य स्थानोका प्रबंध किया गया था।

उस नगरकी बीचमें राजमहल अनेक परकोटोसे वेष्टित निर्मित होगया था।

साथमे भरतकी राणियोंको अलग २ राणीवास, शयनगृह, जिनमंदिर आदि सब की सुंदर व्यवस्था की गई थी।

भरतजीने सबको अपने २ स्थानमे जानेके लिये आज्ञा दी व जयकुमारको सेनाको बहुत होशियारीके साथ सम्हालनेके लिये कह कर भेज दिया। इतनेमे अर्ककीर्तिकी सेना आगई और संतोषके साथ महलमे प्रवेश किया। सम्राट्ने भी पल्लकी से उतरकर अंदर प्रवेश किया।

अंदर जाते समय बुद्धिसागरसे कहा कि मंत्री! अभी तुम भी जाकर विश्रान्ति लो! आगेका विचार कल करेंगे। इस प्रकार कहते हुए सम्राट् अंदर गये व वहा नवभद्रशाला मण्डपमे जाकर एक सिंहासनपर विराजमान हुए।

सबसे पहिले अर्ककीर्ति कुमारको बुलाकर उसके साथ प्रेम व्यवहार विनोद किया। उसे विश्वस्त दासीके हाथ सोपने के बाद सामने खडी हुई

अपनी राणीयों के तरफ कुछ मुसकराते हुए देखा । पिछले मुक्कामोकी अपेक्षा उन देवियो की मुखचर्यामे थकावट अधिक दिख रही है । जहां जहां मुकाम करते है वहां सबसे पहिले राणियोसे सम्राट् पूछते रहते हैं कि आप लोगोंको कोई कष्ट तो नही है । आज राणियो का मुख म्लान हुआ हैं । पसीना आया हुआ है । इसलिये मनमे कुछ खिन्न होकर कहा कि देवी ! आपलोग बैठ जाये । आप लोगोको देखनेपर मालूम होता है कि आज बहुत २ थक गई । जरा विश्रांति लो ।

भरतजी की बातको सुनकर उन राणियो को भी हंसी आई, हंसती २ ही बैठ गई ।

फिर भरतजी कहने लगे कि क्या आपलोगोकी पल्लकियो को बहुत वेगसे लेकर आये ? उसीसे शरीर हिलकर आपलोगोको यह कष्ट हुआ होगा । आप लोगोका मुख म्लान होगया है धूपसे कष्ट हुआ मालुम होता है । मेरे साथमे आनेसे लोगो की अधिक भीड होनेसे आपलोगोको कष्ट होगा इस विचार से आपलोगो को पीछेसे अलग ही आनेकी व्यवस्था की गई थी । फिर भी कष्ट हुआ ही । हा ! आपलोगोको किसीने गुलाबजल वगैरे भी नही दिया क्या ?

मानलो ! आपलोग चुप रही । आपके साथ जो दासिया नियुक्त है वे चुप क्यो बैठी ? उनको तो विचार करनेका था । क्या प्राण जानेपर वे काममे आती ? क्या करें दुःख हुआ, इस प्रकार सम्राट् बहुत दुःखके साथ कहने लगे ।

तब राणियोने कहा कि स्वामिन् ! आप इन बेचारी दासियोंपर रुष्ट क्यो होते हैं ? उनका क्या दोष है ? आज पूर्वसागरको देखनेकी हमें उत्कट इच्छा होगई थी । हम लोगोने ही जल्दी चलनेकी आज्ञा दी थी । हमारी आज्ञाके अनुसार उन लोगोने कार्य किया । इसमे उनका क्या दोष है ?

इन दासियोंने व विश्वस्त लोगोने हमें कहा कि जरा धीरेसे चल-नेसे ही ठीक होगा । नहीं तो स्वामी भरतजी हमपर रुष्ट होंगे। तब हम लोगोने ही उनकी वातको न सुनकर जल्दी चलनेके लिये कहा। यह हमारा अपराध है । इसके लिये आप क्षमा करे । आपको मालुम होगा कि इसी मुक्कामके लिये ही हम लोग आतु-रताके साथ आई । आज तक इस प्रकार का अपराध हमलोगोसे नहीं हुआ था । इसलिये क्षमाकरे । प्राणनाथ ! आपके दर्शन करने मात्रसे हमलोगोकी थकावट दूर होगई है । इसलिये आप चिंता न करे । अब आगेका कार्य करे ।

भरतजीने कहा तब तो ठीक है। अभी अपन लोग स्नान देवार्चन वगैरह करके वादमे भोजनसे निवृत्त होकर दुपहरको समुद्रकी शोभा देखें तब वहांसे उठकर सभी ऊपरके महलमे चले गये ।

मय नामक व्यंतरने क्षणभरमे भरतजी व उनकी राणियोके लिये लाखो स्नान घरोका निर्माणकर रखा था । गृहपतिरत्नकी प्रेरणासे वहांपर उत्तम जलका भी निर्माण होगया। एक एक घरमें एक एक राणीने प्रवेशकर स्नान किया। भरतजीने भी उनके लिये निर्मित स्वतंत्र स्नानगृहमे प्रवेशकर स्नान किया।

देवोंके द्वारा निर्मित उन स्नानघरोंमें किसी भी प्रकारकी अडचन नही है। आग लगावो, लकडी लावो, उसे बुलावो, इसे बुलावो इत्यादि किसी भी प्रकारकी झंझट वहा नही है । सभी गृहपतिरत्नकी व्यवस्था से क्षणभरमे होजाते हैं ।

स्नान करनेके वाद धारण करनेके लिये उत्तमोत्तम वस्त्रोंको स्मरण करने मात्रसे पद्मनिधि नामक रत्न दे देता है। उसकी सहायतासे सब लोगोने दिव्य वस्त्रोको धारण किया। इसी प्रकार इच्छित आभूषणोंको पिंगलनिधिनामक रत्न देदेता है । उसके बलसे इच्छित आभूषणोंको धारण किया अर्थात् सब लोग स्नानकर वस्त्राभूषणोसे सुसज्जित हुए।

देवतंत्रसे स्नानकर देवतंत्रसे ही वस्त्रभूषणोंको धारण कर श्री. भरतजी देवालयको सपरिवार चले गये। वहांपर उन्होंने बहुत भक्तिसे देवपूजा की। उससे निवृत्त होकर अपनी राणियोको साथ लेकर दिव्य अन्नपानको ग्रहण किया। बादमे तांबूल व सुगंध द्रव्योको लेकर कुछ देरतक अपने श्रम परिहारके लिये सुखनिद्रा की। निद्रादेवीने अपनी कोमल गोदमे सबको स्थान दिया।

मध्यान्ह तीसरे प्रहरमे भरतजी अपनी स्त्रियोके साथ समुद्रकी शोभा देखनेके लिये ऊपरकी महलपर चढ गये।

भरतजीकी स्त्रियोने इससे पहिले समुद्रको कभी नहीं देखा था। बहुत उत्सुकताके साथ देखने लगी। और भरतजी भी बहुत समझाकर उन्हे दिखारहे थे। स्त्रियोने नाकपर उंगुली दबाकर समुद्रकी शोभा देखी।

समुद्रका अंत उनकी दृष्टीसे भी परे है। उसमे अगाध जल हैं; अनंत तरंग एकके बाद एक आरहे है। एक तरंग आ रहा है। वह नष्ट होता है इस प्रकार हजारो, लाखो, करोडों, क्या अगणित तरंग आरहे है, जारहे है। बीच बीचमे बहुतसे पर्वत है। कही २ नाव जहाज, लाँच वगैरे देखनेमे आते है।

इस प्रकार अनेक प्राकृतिक शोभावोंसे युक्त समुद्रको देखकर वे सब देवियां बहुत प्रसन्न हुईं। सम्राट्ने कहा कि आप लोग आजसे रोज समुद्रको देख सकती है। आज इतना ही बहुत है। अपन अब नीचे चले। ऐसा कहकर सब लोगोको साथ लेकर नीचेकी महलमें आये। वह दिन बहुत आनंदके साथ व्यतीत हुआ। राग व भोगके साथ चक्रवर्तिने पूर्वसागरके तट में निवास किया।

शायद हमारे प्रिय पाठकोको यह जानकर आश्चर्य होगा कि भरतजी को भी राणियोके समान ही उस समुद्रको देखकर अत्यधिक संतोष हुआ होगा। नहीं! नही! उनको समुद्रके दखेनसे

हर्ष नहीं हुआ। उनके पास ही समुद्र है । ज्ञानसमुद्रका दर्शन वे रोज करते है । उनको किस बातकी परवाह है ? उनको यदि संतोष हुआ तो केवल इस बातका कि पूर्वसागर सदृश सुंदर स्थानमें बैठकर उस ज्ञानसागर परमात्माका विशेष रूपसे निराकुलतासे दर्शन करेंगे । बाह्य सुंदरता पर वे मुग्ध नहीं हुआ करते है। बाह्य वैचित्र्य यदि अंतरंगके लिए सहायक हो तो उसी का अनुभव कर लेते हैं । इसलिए ही उनकी सदा भावना रहती है कि:—

हे परमात्मन् ! समुद्रको लोग गंभीर है ऐसा वर्णन करते हैं। तुम्हारी गंभीरताके सामने उसकी गंभीरता कोई चीज नहीं है। तुम्हारा गांभीर्य उसे तिरस्कृत कर देता है। समुद्रका जल अगाध है, वह अपार है उसी प्रकार तुम्हारी महिमा भी अगाध व अपार है। इसलिये परमात्मन् ! मेरे हृदय में तुम्हारा अध्यवसाय निरवच्छिन्न रूप में बना रहे।

सिद्धात्मन् ! आप भव्योंके संपूर्ण दुःखोंको दूर करनेवाले हैं। भव्योंके मन को प्रसन्न करने वाले हैं। संपूर्ण कर्मोंको दूर कर चुके हैं। अतएव अनंत सुखके पिण्ड में मग्न हैं। आप सर्व कल्याणकारी हैं। मुनि, महामुनियोंके हृदय में भी ज्ञानज्योतिको उत्पन्न करनेके लिये आप साधक हैं। इसलिये स्वामिन् ! हमें भी सुबुद्धि दीजिये ताकि हम मधुर वचन के द्वारा संसारका कल्याण कर सकें।

इति पूर्वसागरदर्शनसंधि.

अथ राजविनोदसंधि.

दूसरे दिन भरतजी, अपनी महलमे मंत्री, सेनापति आदि प्रमुख व्यक्तियोंको बुलाकर, आगेके कार्यको सोचकर बोलने लगे कि मागधामरको वश करनेमे क्या बडी बात है। सेनानायक ! व मंत्री ! तुम सुनो ! उस व्यंतर को वश करनेके लिये कोई चिंता करनेकी जरूरत नहीं है। परंतु मुझे इस समुद्रके तटपर एक दफे ध्यान करनेकी इच्छा हुई है। कल जबसे मैंने इस समुद्रको देखा है तभीसे मेरे हृदयमे ध्यान करनेकी उत्कट भावना बार २ उठ रही है। ऐसी अवस्थामे उस इच्छाकी पूर्ति करना मेरा धर्म है। ध्यान करनेके लिये जंगल, समुद्रतट, नदीतट, पर्वत प्रदेश आदि उत्तम स्थान है इस प्रकार अध्यात्मशास्त्रोमें वर्णित है। वही वचन मुझे स्मरण हो आया है। जबसे अयोध्या नगरसे हम आये है तबसे मनको तृप्त करने लायक कोई ध्यान हमने नहीं किया है। इसलिये समुद्रतटमे रहकर एकदफे ध्यान कर परमात्माका दर्शन कर लेना चाहिये।

भरतजीके इस वचनको सुनकर बुद्धिसागर मंत्रीने प्रार्थना की कि स्वामिन् ! हमारी विनंति है कि ध्यान करनेके लिये समुद्रतट उपयुक्त है यह मुझे स्वीकार है। परंतु पहिले अपने जिस कार्यके लिये यहांपर आये है वह कार्य पहिले करना अपना धर्म है। सबसे पहिले शत्रुको अपने वशमे करे। बादमे आप निराकुल होकर ध्यान करे इसमे हमें कोई आपत्ति नही है।

मंत्री ! भरतजी बोले ! तुम इतना डरते क्यो हो ? क्या मागध मेरे लिये शत्रु है ? सूर्यके लिये उल्लूकी क्या परवाह है ? मै ध्यान करनेके लिये बैठूं तो वह अपने आप आकर मेरे वशमे होगा। आप लोग तृणको पर्वत बनानेके सामान उसकी बढवारी कर रहे हैं। क्या गणबद्ध देवसेवकोको आज्ञा देकर उसे यहांपर बाधकर मंगावूं ? वह भी जानेदो ! वज्रखंड नामक धनुष्यको अग्निवर्षक बाणका संयोगकर उसके नगरमे भेजकर भस्म करावूं ? वह भी जाने दो ! मयदेवको आज्ञा देकर पर्वतको गिरावूगा एवं इस समुद्रके बीचमे पुल बंधवाकर अपनी सेनाको वहांपर भेजूंगा और उस भूतोके राजाको मेरे नौकरोंके हाथसे यहापर मंगावूगा। उसके लिये चक्रकी जरूरत नहीं, धनुषकी जरूरत नहीं, मेरे साथ जो राजपुत्र है उनको भेज कर उनकी वीरतासे उसे यहा खिचवा लावूगा, मत्री ! तुम विचार क्यों नहीं करते ? यदि आज हम इससे डरें तो आगे विजयार्द्ध गुफामे रहनेवाले दो बडे २ राजाओंको किस प्रकार जीतेंगे। फिर तो उस विजयार्द्धके उस पार तो अपन नहीं जासकेंगे। आप लोग इस प्रकार निरुत्साहित क्यों होते हो ? मेरे लिये यह कोई बडी बात नहीं है। एक दफे इस समुद्रतटमें परमात्मसंपत्तिका दर्शन कर लूंगा। बुद्धिसागर ! मेरेलिये तो उस मागधको जीतना डोंबरका खेलके समान है। तुम लोग इतनी चिंता क्यो करते हो ? मैं परमात्माके शपथपूर्वक कहता हू कि उसे मै अवश्य वशमे कर लूंगा, तुम लोग चिंता मत करो। जिस समय मै परमात्माका दर्शन करता हूं उस समय कर्मपर्वत भी झर जाते हैं। फिर यह मागध किस खेतकी मूली है ? कल ही लाकर अपनी सेवामे उसे लगा दूंगा, आप लोग देखें तो सही।

एक बाणको भेजकर उसके अतरंगको देखूंगा। नाखूनसे जहा काम चलता है वहां कुल्हाडेकी क्या जरूरत है ?

उसके लिये आप लोग इतनी चिंता क्यों कर रहे हैं? वह आवे तो ठीक है। नहीं आवे तो भी ठीक है। क्यों कि मेरी वीरताको बतानेके लिये मौका मिलेगा।

कर्मसमूहोंको जीतनेके लिये मुझे विचार करना पडता है। परंतु इस समुद्रमे कूर्म के समान रहने वाले उस मागधामरको जीतने के लिये इतनी चिंता करनेकी क्या जरूरत है? आप लोग समझ है, जाईयेगा।

मै तीन दिनतक ध्यानमें रहकर बादमे उसके पास एक बाण भेजकर यहांपर आवूंगा। यह राजयोगांग है। आपलोग सेनाकी रक्षा होशियारीसे करे। इस प्रकार कहते हुए भरतजीने मंत्री व सेनापतीको अनेक वस्त्राभूषणोंको उपहार में देकर विदा किया। तदनंतर स्वयं समुद्रतटमे गये। वहा पर पहिले से ही विश्वकर्मारत्नने भरतजी को ध्यान करने योग्य प्रशस्त मकानका निर्माण कर रखा था। उसमे प्रवेश कर राजयोगी भरत योगमे मग्न हो गये।

योगशास्त्रमे ध्यान के लिये आठ अंग प्रतिपादित है! यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, कोमलधारणा और सुसमाधि इस प्रकार अष्टाग योगमे भरतजी एकाग्रचित्तसे मग्न होगये।

किसी व्यक्तिको कोई निधि मिली हो, उसे वह जिसप्रकार लोगोके सामने नहीं देखकर एकातमे लाकर देखता है, उसी प्रकार भरतजी भी उस आत्मनिधिको एकातमे समुद्रतटमे लाकर देखरहे है।

भरतजी पीछे भी अनेक बार ध्यान करते थे। परंतु उस दिनका योग तो कुछ और ही था। उस दिन योगमे आनंद, उल्लास, उत्साह व एकाग्र अधिक था। इस लिये भरतजी अपने आप मे अत्यंत प्रसन्न हुए।

विशेष क्या? पर्वयोगसंधिमे जो ध्यानका वर्णन किया है। उसी प्रकार भरतजी ध्यान मग्न हो गये और दुर्वार कर्मोकी उन्होंने सातिशय निर्जराकर अपूर्व आत्मसुखका अनुभव किया।

तीन दिनके ऊपर तीन घटिका और व्यतीत हो गई। परंतु भूख, प्यास वगैरह की कोई बाधा भरतजीको नही हुई। तीन लोकमें सार कहलानेवाले आत्मसुखामृतका सेवन करने पर लौकिक भूख प्यास क्योकर लगेगी ?

तीसरे दिन पारणाके बाद विश्रांति ली। तदनतर दुपहर के समय सोनेके रथपर आरूढ होकर समुद्रमे धीरवीर चक्रवर्तिने प्रयाण किया।

ध्वज, घंटा, कलश, पुष्पमाला इत्यादिसे उस अजितंजय नामक रथका खूब श्रृंगार किया गया था। एक गणबद्ध देव उस रथका सारथी है। वह अपने चातुर्यसे भूमिपर जिस प्रकार रथ चलाता है उसी प्रकार उस जलपर भी चला रहा है। अनेक तरंग एकके बाद एक आरहे है। उन सबको पार कर वह रथ आगे बढ रहा है।

इस प्रकार बारह योजनतक प्रयाण करनेके बाद जहाजके मुकामके समान उस रथने भी मुकाम किया। रथ आगे न बढकर जिस समय ठहर गया उस समय ऐसा मालुम हो रहा था कि शायद समुद्रने भरतजीसे प्रार्थना की है कि "स्वामिन् ! अब आप आगे न बढे। क्यो कि और भी आप आगे बढेगे तो शत्रुगण डरके मारे भाग जायेंगे। इसलिये आपका यहा ठहरना उचित है।

चक्रवर्तिन वहींपर खडे होकर अपने धनुष व बाणको तान दिया। जिस प्रकार भरतजी योग करते समय कर्मके स्थानको ठीक पहिचानकर काम करते है उसी प्रकार यहा भी ठीक शत्रुके स्थानको पहिचानकर बाणका प्रयोग किया। उस बाणगर्जनासे आकाशमें, भूमिमें व जलमे एक विप्लवसा मचगया। उस बाणको प्रयोग करते समय राजा भरतने हूंकार शब्द किया, बाणने टंकार किया, इन दोनों भीषण शब्दोंसे जगत्मे सब जगह त्राहि त्राहि मचगई। सेनाके हाथी, घोडे वगैरह सब डरके मारे इधर उधर भागने लगे। समुद्र तो अपने तीरको भी पारकर दहीके घडेके समान बाहर फैल गया। इसी प्रकार

ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक व पाताललोक सभी कंपायमान हुए। विशेष क्या ? मागधामर के नगरमे समुद्रके पानीने उमडकर लोगोको भय उत्पन्न किया। वह नगर कंपायमान हुआ। इस प्रकार वह बाण अपने वेगसे जाकर मागधामर जिस दरबारमे विराजमान था वहींपर एक खंभेमे जाकर लगा, उसका शब्द उस समय अत्यंत भयंकर था।

एकदम दरबारके सब मनुष्य भयभीत होगये जैसे किसी शेरको देखनेपर सामान्य प्राणियोकी झुण्ड भयभीत होती है। परंतु मागधामर अत्यंत गंभीर है। वह अपने सिंहासनपर ही बैठकर विचार करने लगा कि यह किसकी करतूत है ? सब लोगोको उन्होंने समझाया कि आप लोग घबरावे नहीं। और अपने पासके एक सेवक को कहा कि उस बाण के साथ जो चिट्ठी लगी हुई है उसे इधर ले आवो। उसी समय एक सेवकने डरते डरते उस पत्र को लाकर दिया। उसे पासमे खडे हुए पत्रवाचकको बांचनेकी आज्ञा हुई ! उसे बाचना प्रारंभ किया।

श्रीमन्महाराज, आदिनाथ तीर्थंकरके प्रथमपुत्र, गुरुहंसनाथभावक, उन्मत्तराजगिरिवज्रदंड, प्रचण्डदुर्मुखराजनाशक, अरिराजमेघझंझानिल, कर्मकोलाहल, मृत्युकोलाहल, धर्मपालक, प्रजापालक, भरतचक्रेश्वर की ओर से सेवक मागधामरको निरूप दिया जाता है कि तुम सीधी तरहसे आकर कलतक हमारी सेवामें उपस्थित होना। यह हमारी ओरसे राजाज्ञा है।

इस पत्रको सुनते ही मागधामर क्रोधसे अत्यंत लाल हो गया। एकदम दातोंको चावते हुए कहने लगा कि उस पत्रको फाडो, जलावो, कहांका यह भरत, गिरत, मै नहीं जानता हूं। हमारे समुद्रमें यह आया कैसे ? कहा है अपनी सेना, बुलावो ! मै अभी इसे मजा चखावूंगा। देखो तो सही ! पत्रमे क्या लिखता है ? मै क्या इसका सेवक हूं। मुझे आज्ञा देने आया है। समुद्रमे रहने वाले कैसे होते है सो इसे अभी पता नहीं। सो बताना होगा कि वे इतने भोले नहीं कि इसके

झासेमें आजाय। वह आखरको भूचर है, हम व्यंतर हैं। हमारे सामने वह कहांतक अभिमान बतला सकता है? हमारे सामने यह क्या चल सकता है? भूतनाथोंकी वीरता अभी उसे मालुम नहीं है। रहने दो! मैं क्या उसको वश हो सकता हूं? कभी नहीं। सेनापति! बुलावो! हमारे वीर कहां है? उस भरत को जरा गरत करेंगे।

मागधामरका क्रोध बढ ही रहा था। उसके पासमें ही मंत्री, सेनापति आदि परिवार भी उपस्थित है। उन लोगोंने बहुतसे नीतिपूर्ण वचनोंसे प्रयत्न किया कि किसी तरह इसका क्रोध शांत हो जाय। स्वामिन्! आप क्रोधित नहीं हूजियेगा। आप के लिये यह क्या बडी बात है। हम सब उसकी व्यवस्था करेंगे। आप शांतचित्तसे विराजे रहियेगा। दरबार को बरखास्त करनेकी आज्ञा दीजियेगा। तदनंतर एकांत में इस संबंधमें विचार करें।

इतनेमें दरबारके इतर सब लोग चले गये। कुछ मुख्य मुख्य लोग बैठकर विचार करने लगे। एवं कहने लगे कि राजन्! तुम धीर हो! प्रौढ हो! गंभीर हो! तुम्हारी बराबरी करनेवाले लोकमें कौन है? ऐसी अवस्थामें तुम्हारे विशाल भाग्यके अनुसार ही तुमको चलना चाहिये। क्षुद्रलोगो के समान चलना उचित नहीं है। तुम महलमें रहो। क्रोध को छोडकर हमारी बातको सुनो। हमारे कार्य को देखते जावो। लोक सब तुम्हारी प्रशंसा करें उस प्रकार हम करदेंगे। इस प्रकार की बात सुनकर मागधामरने मंदहासकर कहा कि अच्छा! आप लोग क्या कहना चाहते है कहिये तो सही।

अब उन मंत्रीमित्रोंनें समझलिया कि इसका मन कुछ शांत हुआ है। अब बोलनेमें कोई हर्जकी बात नहीं। आगे कहने लगे कि स्वामिन्! भरतचक्रेश्वर सामान्य नहीं है, वह देवाधिदेव भगवंतका पुत्र है। उसकी महत्ताको तुम सरीखे ही जान सकते हैं। पागल व्यंतर किस प्रकार जान सकते है? भरतजी अद्भुत

संपत्तिके स्वामी है। उनको किसीका भी किंचित् भी भय नहीं है। और तद्भव मोक्षगामी हैं। उसकी चिद्भूतिको देखनेपर तुम्हे प्रसन्नता हुए विना नहीं रह सकती। भरत षट्खण्डको पालन करनेके पुण्यको प्राप्तकर उनका जन्म हुआ है। फिर उस भाग्य को कौन हटा सकते है ? तुम विवेकी है। इस बातको विचार तो करो।

वह इतना वीर है कि विजयार्ध पर्वतके वज्र कपाटको मट्टीके घडेके समान क्षणमात्रमे फोड डालेगा। वह भरत सामान्य नहीं बडे २ पर्वतोको उखाडकर समुद्रमे पुल बाधकर समुद्रको पार करेगा। देखो ! वह कितना बुद्धिमान है। बाणका प्रयोग किया कि सीधा आकर वह उस खंभेमे लगा है। जैसा कि उसके लिए यह कोई अनुभूत ही स्थान हो। उसकी बुद्धिमत्ताके लिये इससे अधिक और साक्षीकी क्या जरूरत है। हाथ कंगनको आरसी क्या ?

समुद्रमे ही खडे होकर उसने बाणको आज्ञा दी कि खंभेमें आकर लगो तो वह बाण खंभेपर आकर लगा। यदि किसी शत्रुके हृदयको चीरनेके लिये आज्ञा देता तो वह शत्रुके प्राण लिये विना लौट सकता था क्या ? कभी नही, वह मंत्रास्त्र है। और भी विचार करो। बाणके साथ जो व्यक्ति पत्रको भेज रहा है क्या वह अग्निकी ज्वालाओंको नहीं भेज सकता है ? उसका परिणाम क्या हो सकता था, जरा विचार तो करो।

खंभेपर लगे हुए बाणको दिखाकर उपर्युक्त प्रकार जब समझाया तब मागधामरको विश्वास हुआ कि सचमुचमें भरत वीर है। जब उसने यह सुना कि भरत विजयार्द्ध पर्वतके वज्र कपाटको मट्टीके घडेके समान फोडेगा उससे और भी घबराया। मुंह खोलकर हक्का बक्का होकर सुनने लगा।

मंत्रियोने कहा कि राजन् ! सामने की शक्ति और अपनी शक्तिको देखकर एवं विचारकर युद्ध करना यह बुद्धिमत्ता है। यदि अभिमान

वश होकर अपन आगे बढे फिर हार जावें तो लोकमे परिहास होता है। युद्ध करना वीर का कर्तव्य है, परंतु उसका विचार न कर अपने से अधिकके साथ यदि युद्ध करे तो श्रेयस्कर कभी नहीं हो सकता।

अपने लिये जो समान हैं उसके साथ युद्ध करना ठीक है, अपने से अधिकके साथ युद्ध करना तो स्वंय का सामना स्वंय करना है। यह वचन तो मागधामरके हृदययमे अच्छी तरह जम गया। वह मन मनमें ही भरत की वीरतापर अभिमान कर रहा था।

राजन्! शायद तुम समझोगे कि हम लोगोने अपने स्वामीकी इच्छाके विरुद्ध दूसरोकी प्रशंसा की। परंतु ऐसा विचार नही करना चाहिए। दर्पणके समान परिस्थितिको ज्योंका त्यों वर्णन किया है। यह तुम्हारे अच्छेके लिए है।

अपने स्वामीकी निंदाकर दूसरोकी प्रशंसा करना यह सचमुचमें नीचवृत्ति है। हम लोगोंने अतमें जीतनेके उपायको कहा है। आपके कार्यको बिगाडनेका उपाय हम लोग नही कह सकते। आज थोडासा आपको हमारे वचन कठिन मालुम होते होंगे। परतु इसका फल अच्छा होगा। हम लोगोंने आपके हितके लिए ही उचित निवेदन किया हे। यदि आपके मनमें आवे तो स्वीकार करें नहीं तो छोड देवें।

कुलवृद्धोंके हित पूर्ण वचनोंको सुनकर मागधामरको पूर्ण निश्चय हुआ कि भरत सचमुचमे असाधारण वीर है। उससे मै जीत नहीं सकता। वह किंकर्तव्य विमूढ हुआ। सिरको खुजाते हुए कहने लगा कि फिर अब आगे क्या करना चाहिये? यह तो बोलिये तब वे कहने लगे कि आगे क्या करना? यही कि बहुत संतोषके साथ जाकर भरत चक्रवर्तीके चरणोंकी वंदना करना। वह आदितीर्थकरके पुत्र ही तो हे न? फिर क्या हर्ज है।

उसके चरणोंकी वदना करनेसे अपनी इज्जत घट नहीं सकती। छहखण्ड भूमिमें उसके साथ विरोध करनेवाले कौन है? उसके गुणों-

पर मुग्ध होकर उसको वंदना कौन नहीं करते ? विशेष क्या ? वह तद्भवमोक्षगामी है। इसलिये उसकी वंदना करनेमे क्या दोष है ? अपन चले।

भक्तिसे जो उसे नमस्कार नहीं करते है वह कलही शक्तिसे कराता है। ऐसी अवस्थामे पहिले से जाकर नमस्कार करना यह महायुक्ति है। इस वचनको सुनकर मागधामरने उसकी स्वीकृति दी। हितैषियोंके वचनको स्वीकृत करने के उपलक्ष्यमे उन लोगोने मागधामरकी हृदयसे प्रसंशा की। नीतिमान् राजाकी प्रशंसा कौन नहीं करेगा।

राजन्! कल आनेके लिये चक्रवर्तीने आज्ञा दी है, इसलिये कल ही जायेगे। आज सायंकाल होगया है इस प्रकार विचार कर बहुत आनंदमे मग्न होगये।

इधर भरतजीने जब बाणका प्रयोग किया था। उस के बाद ही उन्होंने अपनी सेनाकी तरफ जानेके लिये तैयारी की। सारथी को आज्ञा देते ही उन्होने रथ को वापिस घुमा लिया।

अनेक प्रकारकी घंटिया बज रही है। उसकी पताकांये आकाशमे फडक रही है। उस रथ को देखने पर ऐसा मालुम होता है कि शायद मेरुपर्वत ही आ रहा हो। घोडे भी अब वापिस जाने के कारण जरा तेजी से जाने लगे है। उस रथ में वज्रदण्ड एक तरफ शोभा को प्राप्त हो रहा था। भरतजी अपने बाये हाथको टेककर उस रथ पर बहुत वीरताके साथ विराजे हुए है। बाये हाथ मे पंचरत्न से निर्मित बाण है। उसे देखनेपर ऐसा मालुम होता था कि शायद इंद्रधनुप ही है। उस समय भरतजी भी इंद्र धनुष सहित हिमाचल पर्वतके संमान मालुम होते थे। दोनों ओर से भरतजीको चामर ढुल रहे है।

जिस समय भरतजी वापिस लौटे है, यह समाचार सेनाको मिला उसके आनंदका पारावार नहीं रहा। सभी वीर हर्षध्वनि करने लगे। सभी जयजयकार करने लगे।

सेनास्थान अब निकट आया। बाणको रथमें ही छोड दिया। सारथिको सन्मान करनेके लिये एक रथिक को आज्ञा देकर भरतजी चले गये। सामनेसे मंत्री, सेनापति, राजपुत्र आदिने आकर बहुत भक्तिसे नमस्कार किया।

इसी प्रकार अन्य वीर, व्यापारी, वेश्यागण, हाथी के सवार घुडसवार वगैरे सबलोग भरतजीको नमस्कार कर रहे थे। कविगण कविता कर रहे थे। स्तुति पाठक स्तोत्र कर रहे थे। भट्टगण हाथ उठाकर आशिर्वाद देते थे। वेत्रधारीगण सावधान आदि सुंदर शब्दोंका उच्चारण कर रहे हैं। इन सबको सुनते हुए देखते हुए भरतजी अपनी महलमें आकर प्रवेश कर गये। भरतकी राणियोंने बहुत भक्ति के साथ प्राणेशकी आरती उतारी। उसके बाद पूज्य चरणोंमें मस्तक रखा।

राणियोंको भरतका वियोग चार दिनसे हुआ है। परंतु उनको चार युगके समान मालुम हो रहा है। ऐसी अवस्थामें पतिके घरमें आनेपर उनको कितना हर्ष हुआ होगा यह पाठक स्वयं विचार करें।

अपनी स्त्रियोंके साथ भरतजीने सायंकालका भोजन किया एवं सायंकालमें करने योग्य जिनवंदनासे निवृत्त होकर महलमें बहुत लीलाके साथ रहे। वह रात प्रायः समुद्रप्रयाण व ध्यानकी चर्चामें ही व्यतीत हुई। पतिकी जीतपर उन राणियोंको भी बडा हर्ष हुआ। पाठक भूले न होंगे कि भरतजीने मंत्रि सेनापतिसे कहा था कि मागधामरको जीत-नेके संबंधमे आपलोग चिंता मतकरो। मै थोडासा ध्यान करलेता हूं। फिर आपलोग देखियेगा उसे मैं अपने पास मंगालूंगा। उसी प्रकार भरतजीको उस व्यंतरको वश करनेमे सफलता मिली। एक ही बाणके प्रयोगसे उसका गर्व जर्जरित होगया। क्या इतना सामर्थ्य उस ध्यानमें है? हां! है। परंतु आत्मविश्वास होना चाहिये।

भरतजी को भरोसा था कि मै आत्मबलसे सब कुछ कर सकता हूं। वे रात दिन इस प्रकार चिंतवन करते थे कि:—

अगणित दुःखोंको देकर सतानेवाली कर्मरूपी बडे भारी सेनाको केवल एक दृष्टि फेंक कर ही जीतनेका सामर्थ्य इस परमात्मामे है। इसलिये हे परमात्मन्! तुम मेरे हृदयमें बराबर बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! कामदेवरूपी मदोन्मत्त हाथी के लिये आप सिंह के समान है। ज्ञानसमुद्रको उमडाने के लिये आप चंद्रके समान हैं। कर्मपर्वत को आप संहार करचुके है। इसलिये हमें भी उसी प्रकारका सामर्थ्य दीजियेगा। ताकि हम भी कर्मसे कायर नहीं बनें।

ऐसी अवस्थामे भरतजी सदृश वीरोंको लौकिक शत्रुवोकी क्या परवाह है?

इति राजविनोद संधि।
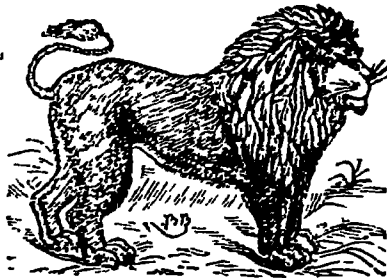
अथ आदिराजोदय संधि ।

प्रातःकाल में उठकर भरतजी नित्य क्रियासे निवृत्त हुए । स्नान व देवार्चन कर उन्होने अपना श्रृंगार किया । अब उनको देखने पर देवेंद्रके समान मालुम हो रहे है । उसी प्रकारके श्रृंगार से आकर उन्होने दरबारको अलंकृत किया ।

बहुतसे राजा व राजपुत्र आज दरबारमे एकत्रित हुए हैं । उन लोगोने सम्राट् को अनेक उत्तम उपहारो को समर्पणकर नमस्कार किया व अपने अपने स्थानमें विराजमान हो गये ।

विचारशील मंत्री, प्रभावशाली सेनापति भरतजी के पास ही बैठे हुए हैं । पीछे की ओरसे गणबद्ध देव हैं । पासमे ही मित्रगण है । कुछ दूरसे वैश्यायें है । सामने वीर योद्धावोका समूह है ।

इसी प्रकार कविगण, व विद्वान लोग सामने खडे होकर अनेक कवितावो को पाठ कर रहे थे । दोनो ओरसे चामर ढुल रहे है । कोई गायक प्रातःकाल के राग में गायन कर रहे हैं । उसे भरतजी चित्त लगाकर सुन रहे है । कोई तांबूल देरहे हैं । उसे भी स्वीकार कर रहे हैं । एक दफे सम्राटकी दृष्टिक्षत्रियपुत्रोंपर पडती है । और एकदफे राजावोकी ओर जाती है । दीर्घसेनाको देखते हुए साथमे गायन भी सुनते जारहे हैं ।

ललित रागका गायन बहुत अच्छा हुआ । उसमें भी आत्मकलाका वर्णन किया । राजन् ! आप कलाको अच्छी तरह जानते हैं । इसलिये आप प्रसन्न होंगे । इस प्रकार अनुकूल नायकने कहा ।

स्वामिन् ! एक एक अक्षरको अच्छीतरह भिन्न २ कर अत्यंत सुस्वरके साथ गारहा था, इस प्रकार दक्षिणनायकने कहा ।

नहीं ! नहीं ! शक्कर और दूध मिलाकर पीनेमे जो आनंद आता है, वह इस गायनमें आया है । इस प्रकार कुटिलनायकने कहा ।

शठः—तान, आलाप, व गायकका गांभीर्य वह सब भरतके हृदयको प्रसन्न करने काबिल है।

जानेदो जी! आपलोग सबके सब एक रागकी ही प्रशंसा करते जारहे है। हम तो यही कहना चाहते है कि श्री गुरुहंसनाथको उसने कोयलके समान गाकर बतलाया। इसप्रकार नागरने कहा।

बहुत पटुत्वके साथ उसने मलहरि रागके द्वारा निष्कुटिल आत्मतत्वका वर्णन किया। सरस्वतीने ही शायद चक्रवर्तीका दर्शन किया ऐसा हुआ। इसप्रकार विटने कहा।

जिसप्रकार मत्स्य जलमे चमकता है उसीप्रकार चमकीले गायनको उसने गाया, इसप्रकार पीठमर्दकने कहा।

नहीं जी! श्रोपण मुखवीणामे अध्यात्मऔषधरसको भरकर वैषय रोगियोंके कानको ठीक किया है, इस प्रकार विदूषक ने कहा।

इस प्रकार भिन्न २ तरहके वचनो को सुनते हुए भरतजी मन मे ही संतुष्ट हो रहे थे। एवं गायन को सुनते हुए जिनके गायन से प्रसन्न होते थे, उनको अनेक प्रकारसे इनाम देरहे थे।

एक एक कलासे प्रसन्न होकर व आत्माको विचार करते हुए सिंहासन पर विराजमान है। इतने मे मंदाकिनि नामक दासिने अर्ककीर्तिकुमार को लाकर सम्राट के हाथमे देदिया।

स्वामिन्! राजदरबार मे आने के लिये कुमारने हठ किया है। इसलिये मै यहापर लाई हूं। इतनेमे सभाका हल्ला गुल्ला सब सब बंद हो गया। सभी लोग उस बच्चेकी सुंदरतापर मुग्ध होकर देखने लगे।

सम्राट्ने बच्चेको अपनी गोदपर बैठालकर उसके साथ प्रेम संलाप करनेको प्रारंभ किया। वह बालक उस समय बहुत सुंदर मालुम होनेलगा। उत्तम जातिके रत्न जिसप्रकार रत्नोमे कोई विशेष स्थान रखता है उसी प्रकार यह रत्न भी कुछ खास विशेषताको लिये हुए था।

पिताका ही सौंदर्य है, पिताका ही रूप है। पिताका ही स्वरूप है, पिताकी ही दृष्टि है। सबकुछ एक ही साचा है। ऐसा सुंदर पुत्र गोदपर आनंदसे बैठा हुआ है। उस कुमार ने अनेक रत्ननिर्मित आभरणों को धारण किये थे। उससे उसका सौंदर्य और भी द्विगुणित होगया था।

एकदफे भरतजी बच्चेकी ओर देखकर हसते हैं, एकदफे चुंबन देरहे हैं। एक दफे उसे उठाते है। इस प्रकार अनेक तरहसे उसके साथ प्रेमव्यवहार कर रहे हैं। भरतजी बच्चेको कह रहे हैं कि बेटा! आदि तीर्थंकर शब्दको उच्चारण तो करो। तब वह "आदिकर" कहने लगा! भरतजी हसने लगे। आत्माके वर्णन करते हुए बच्चेसे कहा कि अच्छा! चिदंबरपुरुष ऐसा बोलो। कहने लगा कि चिंबरपूस। भरतजी जोरसे हसने लगे। अच्छा! गुरुनिरंजनसिद्ध! बोलो। कुमार कहने लगा कि निंजसिद्ध। पुनः भरतजीको हंसी आई।

फिर भरतजी सब राजावोंको दिखाते हुए पूछने लगे कि बेटा! सामने बैठे हुए ये लोग कौन हैं? तब उस बच्चेने हाथको आगे न कर अपने बाये पैरको ही आगे किया।

तब सब राजावोंनें आपसमे बातचीत की कि देखो तो सही बच्चेकी बुद्धिमत्ता! हम लोगोको अपने पादसेवकोंके रूपमें समझ रहा है। इसलिये पैरको आगे कर रहा है। आदिचक्रवर्ती के पुत्रके लिये यह साहजिक है।

अर्ककीर्ति कुमार अपने मुखको भरतजीके कानके पास लेगया। उस समय ऐसा मालुम हो रहा था कि शायद पितासे पुत्र कुछ गुप्त-मंत्रणा ही कर रहा हो। तब बुद्धिसागर कहने लगा कि स्वामिन्! अब मुझे मंत्रित्वकी जरूरत नहीं है। पिता राजा है, पुत्र मंत्री है। फिर आप लोगोंकी बराबरी करनेवाले लोकमें कौन है?

इतनेमें सब राजावोंने आकर उस बच्चेको अनेक प्रकारके उपहारोंको समर्पण किया। क्यों कि वे बुद्धिमान थे, अतएव वे समझते

थे कि यह हमारे भात्रीरक्षक है। भरतजीने कहा कि बच्चेके लिये उपहारकी क्या जरूरत है। आप लोग इस झगडेमे पडे नहीं। ऐसा कहने पर राजावोंने बहुत विनयसे कहा कि स्वामिन्! हम लोगोंकी इतनी सेवाको अवश्य स्वीकृत करनी चाहिये।

तदनंतर राजपुत्र व राजावोंने आकर उस पुत्रको अनेक रत्न, सुवर्ण वगैरह को समर्पण किया। वहां पर सुवर्ण व रत्नका पर्वत ही हुआ। भरतका भाग्य क्या छोटा है?

सब लोग भेंट समर्पणकर बालक को देखते हुए खडे थे। भरतजी ने कहा कि बेटा! सब लोग परवानगी लेनेके लिये खडे हैं। जरा उनको अपने स्थानमें जानेके लिये कहो तो सही! तब बालकने अपने मस्तक व हाथको हिलाया। तब सब लोगोंने समझलिया कि अब जानेके लिये अनुमति दे रहा है। तब भरतजीने कहा कि बेटा! ऐसा नहीं! सब को तांबूल देकर भेजो, खाली हाथ भेजना ठीक नहीं। तब उस बच्चेने ताम्बूल की थाली को अपने हाथसे फैलादी। सब लोगोंने बहुत हर्ष के साथ ताम्बूल का ग्रहण किया।

भरतजीने फिर पूछा कि बेटा! इस सुवर्ण की राशिको किसे देवें! तब उसने सामने खडे हुए सेवकोंकी ओर हात बढाया। तब राजाको उसकी बुद्धिमत्ता पर आश्चर्य हुआ।

स्वामिन्! क्या कल्पवृक्षके बीजसे जंगली पेडकी उत्पत्ति हो सकती है? तुह्मारे पुत्रमें अल्पगुण स्थान पासकते हैं क्या? कभी नहीं। इस प्रकार विद्वानोंने उस समय प्रशंसा की।

इस प्रकार अनेक विनोदसे विद्वान् व सेवकोंको सुवर्णदान देकर जब भरत बहुत आनंद से विराजमान थे उससमय गाजेबाजेका शब्द सुननेमे आया। आकाशप्रदेशमे ध्वजपताका, विमान, इत्यादि दिखने लगे। वह व्यंतरोंकी सेना थी। समुद्र की ओरसे आरही है। मंदाकिनी दासिको बुलाकर उसे कुमारको सोंप दिया। और महल की ओर ले जानेके लिये कहा। और स्वतः मेरु के समान अचल व समुद्रके समान गंभीर होकर विराजमान हुए।

मागधामर आकाश मार्गसे ही भरतकी सेनाओंको देखते हुए आरहा था। उसे उस विशाल सेनाको देखकर आश्चर्य हुआ। उसका पराक्रम जर्जरित हुआ। मनमे ही विचार करने लगा कि इसके साथ मैं कैसे जीत सकता था। इसके साथ वक्रता चलसकती है? कभी नहीं। समुद्रके तटपर ही विमानसे उतरकर मागधामर स्वामीके दर्शनके लिये भरतके दरबार की ओर पैदल ही चला।

इतनेमें बीचमें ही एक घटना हुई। एक चुगली खोरने आकर भरतजीकी सेनाके एक योद्धा के साथ कुछ कहा। वह मागधके नगरमें रहता है। परंतु भरतका भक्त है। इसलिये पहिले दिन मागधामरके दरबारमें जो बातचीत हुई उन सबको उसने उससे कह दी।

चक्रवर्ती के प्रति मागधामर ने पहिले दिन जो तिरस्कारयुक्त वचनोंका प्रयोग किया था वह सब उसे मालुम हुआ। वह योद्धा उससे अत्यधिक क्रोधित हुआ। उसने चुपचापके जाकर भरतजी की कानमें सब बातों को कह कर चल दिया।

मागधामर छत्र, चामर, इत्यादि वैभवके चिन्हों को छोडकर चक्रवर्ती के दर्शनको आगे बढरहा हैं। वह दीर्घमुखी है। आयत नेत्रवाला है। दीर्घशरीरी है। साहसी है। व अनेक रत्नमय आभरणों को उसने धारण किये हैं।

अपने साथके सब लोगो को बाहर ही ठहरने के लिये आज्ञा देकर स्वयं व मंत्री हाथमे अनेक प्रकारके रत्न आदि उत्तमोत्तम उपहारोंको लेकर दरबारमे प्रवेश कर गये।

दरवाजेमें बहुतसे रत्नदण्डको लिये हुए द्वारपालक मौजूद हैं। उनकी अनुमतिको पाकर मागधामरने अंदर प्रवेश किया।

अंदर जाकर एक दफे तो वह हका बका होगया। बाहर कोसोंतक व्याप्त हाथी, घोडे रथ इत्यादिको देखकर तो उसके हृदयमें आश्चर्य उत्पन्न होगया था। अब अंदर अगणित प्रतिभाशाली राजा व राजपुत्र भरतकी

सेवामें उपस्थित है । उन सबके बीचमें रत्नमय सिंहासनपर आरूढ होकर विराजे हुए भरतजी कुलगिरियों के मध्यमे स्थित मेरूके समान सुंदर मालुम होते थे । उनके शरीरके रत्नमय आभरण वगैरहके तेजसे वे साक्षात् पूर्व दिशामे उदय होनेवाले सतेज सूर्यके समान मालुम होते थे ।

भरतजीका सौन्दर्य तो लोकमोहक था । पुरुष देखे तो भी मोहित होना चाहिये । इस प्रकारकी सुंदरता को देखकर मागधामर मुग्ध हुआ यह कहे तो फिर जो स्त्रिया एकदफे भरतजी को देखलेती है उनकी क्या हालत होती होगी ?

बीचबीचमे ठहरते हुए और बहुत विनयके साथ स्वामीके पास सेवक जिस प्रकार आता हो मागधामर चक्रवर्तीके पास आरहा है । चक्रवर्तीने उसके प्रति क्रोधपूर्ण दृष्टिसे देखकर पासमे खडे हुए संधिविग्रहियोसे पूछा कि क्या यही मागध है ? तब उन लोगोने उत्तर दिया कि स्वामिन् ! यही मागध है, बडा आदमी है, आपके सामने है, देखे । तब चक्रवर्तीने "अरे मागध ! कल तुम बहुत जोरमे आया था न ? गुलाम ! क्या तुम्हे समुद्रमे रहनेका अभिमान है ? अच्छा ! " कहा ।

इतनेमे मागधमर डरके मारे कंपने लगा । और स्वामिन् ! मेरे अपराधको क्षमा करो । इस प्रकार कहते हुए वह भरतके चरणमे गिरपडा । चक्रवर्तीको हंसी आई । कहने लगे कि उठो ! घबरावो मत । इतनेमे एकदम उठकर खडा हुआ ।

'स्वामिन् ! तीन छत्रके धारी त्रिलोकाधिपतिके पुत्रके साथ किसका अभिमान चल सकता है ? हम लोग तो कुएमे जिस प्रकार मेंढक रहता है उस प्रकार पानीके बीच एक द्वीपमें रहते है । ऐसी अवस्थामे देव ! आपके तेजको हम किसप्रकार जान सकते है । राजन् ! तुम्हारा सौंदर्य कामदेवसे भी बढकर है । तुम्हारी प्रसन्नताको पानेके लिये पूर्वजन्मके सुकृतकी आवश्यकता है । हम क्या, व्यंतर तो भूत हुआ करते है । भूत क्या भ्रात है ! ऐसी अवस्थामे

हम क्या तुम्हारे महत्वको जाने ? इस लोकमें एक छोटीसी नदी समुद्रकी निंदा करे, उल्लू हंसकी निंदा करे और मागध भरत चक्रवर्तीकी निंदा करें तो क्या बिगडता है ?

अद्भुत सौंदर्य, भरपूर यौवन, आश्चर्यकारक बुद्धिमत्ताको धारण करनेवाले चक्रवर्तीके सामने हमने जो व्यवहार किया इसके लिये धिक्कार हो। मेरे लिये शर्मकी बात है। राजन् ! आपके समान, सौंदर्य प्राप्त करनेके लिये मनुष्यको प्रयत्न करना चाहिये। यदि वह नहीं मिलता हो आपकी प्रसन्नताको प्राप्त करना वह भी बडे भाग्यकी बात है। भोग और योगमें रहकर मुक्त होनेवाले मोक्षभोगीकी बराबरी इस लोकमें कौन करसकता है "। इत्यादि अनेक प्रकारसे स्तुतिपाठक भट्टोंके समान मागधामरने भरतकी प्रशंसा की।

मागधके वचनसे राजागण व राजपुत्र वगैरे प्रसन्न होकर कहने लगे कि शाहबास ! मागध ! स्वामीके गुणको तुमने यथार्थ रूपसे वर्णन किया है। तुम सचमुचमें स्वामीके हितको चाहनेवाला है। इत्यादि प्रकारसे उसकी प्रशंसा की।

तदनंतर चक्रवर्तीने उसे बैठनेके लिये एक आसन दिलाया व कहा कि मागधामर ! तुम दुष्ट नहीं है। सज्जन है। उस आसन पर बैठो।

स्वामिन् ! मैं बचगया। इस प्रकार कहते हुए मागधामरने साथमें लाये हुए अनेक उपहारोंको भरतजीके चरणमें समर्पणकर मंत्री सहित पुनः नमस्कार किया। दरबारमें बैठे हुए सभी सज्जनोंने मागधामर की सज्जनताके प्रति प्रशंसा की। बुद्धिसागर पासमें ही बैठा हुआ है। उसकी तरफ भरतजीने देखा। वह सम्राटके अभिप्रायको समझकर कहनेलगा कि स्वामिन् ! मागधामर सज्जन है। व्यंतर लोकमें यह वीर श्रेष्ठ है। शीघ्र ही आपकी सेवाके लिये आने योग्य है। देशी विपत्तियोंके संसर्गमें जिनेंद्रके पुत्रको प्रसन्न करनेका भाग्य जिसने पाया है वह सचमुचमें कृतार्थ है। इसलिये यह मागध भी धन्य है।

तब मागधामर कहने लगा कि मंत्री ! तुमने बहुत अच्छा कहा । तुम्हारी बुद्धिमत्ताको मैंने बहुत बार सुनी है । परंतु आज प्रत्यक्ष तुम्हे देखलिया । सचमुचमे तुमने मेरा उद्धार किया ।

बुद्धिसागरने मुसकराते हुए कहा कि स्वामिन् ! इस मागध को वापिस जानेकी आज्ञा दीजियेगा । फिर आगेके मुकाममे यह अपने पास आवे ।

भरतजीने उसी समय मागधामर को पास बुलाकर अनेक प्रकारके उत्कृष्ट वस्त्र व आभूषणो को उसे देदिये ।

मागध देवने भेटमें जिन अमूल्य रत्नों को समर्पण किये थे उनसे भी बढकर उत्तमोत्तम रत्नोको चक्रवर्तीने उसे देदिये । चक्रवर्तीको किस बातकी कमी है ? केवल अपने चरणो को नमस्कार कराने की एक मात्र अभिलाषा उसे रहती है । बाकी धनकनक आदि की इच्छा नहीं । इस लिये मागधामर का उसने यथेष्ट सन्मान किया ।

साथमे भरतजीने यह कहते हुए कि मागध ! तुम्हारा मंत्री भी बहुत विवेकी है ऐसा हमने सुना है । उसे भी अनेक प्रकारके उत्तम वस्त्र व आभूषणो को दिये । और दोनोको जानेकी आज्ञा दीगई ।

" स्वामिन् ! मै कल ही लौटकर आवूंगा । तब तक आपकी सेवामें मेरे प्रतिनिधि भुवगति देवको छोडकर जाता हूं " इस प्रकार कहते हुए मागधने एक देवको सोंपकर चक्रवर्तीको नमस्कार किया । व मंत्रीके साथ चलागया । राजसभाको आनंद हुआ । सब लोग उसी की चर्चा करने लगे ।

भगवन् ! इतनेमें और एक घटना हुई । राजमहलसे एक सुंदरी दासी दौडकर आई और हाथ जोडकर कहने लगी कि स्वामिन् ! आपको पुत्र रत्नकी प्राप्ति हुई है । इस हर्ष समाचारको सुनकर उसे एक मोतीके हारको इनाम मे देदिया । पुनः उस दासीको पासमें बुलाकर धीरेसे पूछा कि कौनसी राणी प्रसूत हुई है । तब उत्तर मिला कि

कुसुमाजी राणीने कुमारको प्राप्त किया है। इतनेमें सम्राट्ने उसे संतोषके साथ एक हार और दिया। पास के खडे हुए लोगोको परम हर्ष हुआ। चक्रवर्ती भी मनमनमे ही संतुष्ट हुए। उस समय सभी प्रजाजनोमे हर्षसमुद्र उमडकर आया। अनेक तरहके बाजे बजने लगे। इधर–उधरसे आनद भेरी सुनाई देने लगी। मंदिर वगैरह तोरणसे सुशोभित हुए। लोकमे सब लोगोको मालुम हुआ कि आज सम्राटको पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई है।

सम्राट भी सिंहासनसे " जिनशरण " शब्दको उच्चारण करते हुए उठे। एव दरबारको बरखास्तकर महलमे प्रवेश कर गये। तत्क्षण प्रसूतिगृहमे जाकर नवजात बालकको देखा। पासमे ही सौ० कुसुमाजी लज्जाके मारे मुख नीचाकर बैठी हुई है। बालक अत्यंत तेजस्वी है। उसे भरतजीने देखकर " सिद्धो रक्षत " इस प्रकार आशिर्वाद दिया। फिर वहासे रवाना हुए। महलमे जहा देखो वहा हर्ष ही हर्ष है। कुसुमाजी राणीको पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई है इसपर सभी राणियोको हर्ष हुआ है। सबने आकर भरतजीके चरणमे मस्तक रखकर अपने २ आनदको व्यक्त किया।

बुद्धिसागर मंत्रीने सब देशोमे दान, पूजा, अभिषेक आदि पुण्यकार्य कराये। भरतकी सेनामें सेनापतिने अनेक हर्षसूचक मंगल कार्य कराये। भरतकी संपत्ति क्या कम है? मयजयंतके द्वारा रचित दिव्य देवालयमें राजगण, राजपुत्र, प्रजाजन, सेनाके योद्धा आदिने बहुत भक्तिके साथ जिनेंद्रकी पूजा की जिसे देखकर सभी जयजयकार करते थे।

उस दिन जातकर्म संस्कार, फिर बारहवे दिन नामकरण संस्कार किया। भरतजीकी इच्छासे उस बालकको भगवान् आदिनाथका दिव्य नाम " आदिराज " रखा गया।

नामकर्म संस्कारको रोज मागधामरने अनेक संभ्रम, संपत्ति व सेनाके साथ में उपस्थित होकर चक्रवर्तिका दर्शन किया।

चक्रवर्तीने उसके आगमन के संबंधमें हर्ष प्रकट करते हुए कहा कि मागधको आगेके मुक्काम मे आनेकेलिये कहा था, परंतु वह जल्दी ही लौटकर आया, इससे मालुम होता है कि यह हमारे लिये हमेशा हितैषी बना रहेगा।

इसे सुनकर मागधामर हर्षित हुआ। कहने लगा कि स्वामिन्! आपसे आज्ञा लेकर गया जब समुद्रके तटपर ही मुझे समाचार मिला कि आप को पुत्र रत्नकी प्राप्ति हुई है। मेरा विचार वहींसे लौटनेका हुआ था। फिर भी राज्यमे जाकर वहांसे इस प्रसंगके लिये योग्य भेट वगैरह लाने के विचारसे चलागया, और सब तैयारी के साथ लौटा।

चक्रवर्ती कहने लगे कि मागध! तुम्हारे लिये मैंने भरी सभामें तिरस्कारयुक्त वचन बोले थे, तुम्हारे मनको कष्ट पहुंचा होगा। उसे भूलजावो।

स्वामिन्! इसमे क्या बिगडा? आपने मुझे दबाकर सद्बुद्धि दी। आप तो मेरे परमहितैषी स्वामी है। इस प्रकार कहते हुए मागधने चक्रवर्तीके चरणोपर मस्तक रखा।

भरतजी मागधामरपर संतुष्ट हुए व कहनेलगे कि मागधामर! जावो! तुह्मारे आधीनस्थ राजावों के साथ तुम आनंदसे रहो। मेरा तो कार्य उसी दिन होगया। अब तुम स्वतंत्र होकर रह सकते हो।

स्वामिन्! धिक्कार हो! उस राज्य व उन आधीनस्थ राजावोको। उस राज्यमे क्या है? तुम्हारी सेना मे रहकर पादसेवा करना ही मेरे लिये परमभाग्य है। अब आपके चरणो को मे छोड नही सकता। सचमुचमें जो लोग भरतजी को एकदफे देखलेते थे फिर उन्हे छोडकर जानेकी इच्छा नही होती थी।

नवजात बालक कुछ बढे इसके लिये उसी स्थानमें सम्राट्ने छह महीने का मुक्काम किया। उनका दिन वहापर बहुत आनंदके साथ

व्यतीत हो रहा है। साहित्यकला, संगीतकलासे प्रतिनित्य अपनी तृप्ति करते थे। किसी भी प्रकारकी चिंता उन्हें नहीं थी।

हमारे प्रेमी पाठकों को भी आश्चर्य होगा कि भरतजी का भाग्य बहुत विचित्र है। वे जहां जाते है वहा आनंद ही आनंद है। किसी भी समय दुःख उनके पास भी नहीं आता है। इस प्रकार होनेके लिये उन्होने ऐसा कौनसा कार्य किया होगा? क्या प्रयत्न किया होगा? इसका एकमात्र उत्तर यह है कि भरतजी रातदिन इस प्रकारकी भावना करते थे कि——

सिद्धात्मन्! आप लोकैकशरण हैं! जो भव्य आपके शरणमें आते हैं, उनको पुण्य संपत्तिको देकर उनकी रक्षा करते हैं। इतना ही नहीं पापरूपी भयंकर जंगलके भयसे उन्हे मुक्त करते हैं। इस लिये आप लोकमें श्रेष्ठ हैं। स्वामिन्! अतएव मुझे भी सद्बुद्धि दीजियेगा।

परमात्मन्! तुम जहां बैठते हो, उठते हो, चलते हो, सोते हो सब जगह तुम अपनी कुशललीला को बतलाते हो, इसलिये परमात्मन्! मेरे हृदयमें बराबर सदा बने रहो जिससे मुझे सर्वत्र आनंद ही आनद मिले"

इसी चिंरतन भावनाका फल है कि चक्रवर्ती सर्वत्र विजयी होकर उन्हे सुख मिलता है।

इति आदिराजोदय संधि.
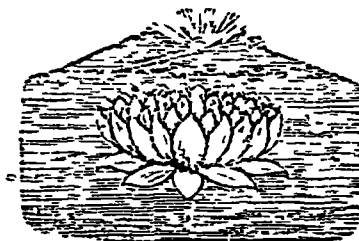
अथ वरतनुसाध्यसंधि.

छह महिने बीतनेके बाद सेना प्रस्थानके लिये आज्ञा दी गई। उसी समय विशाल सेनाने प्रस्थान किया। पूर्वसमुद्रके अधिपति मागधामरको साथ लेकर भरतजी चतुरंग सेनाके साथ दक्षिण समुद्रकी ओर जारहे है। एक रथमे छोटे भाई का झूला व एकमे बडे भाई अर्ककीर्ति कुमारका है।

बीच बीचमे मुक्काम करते हुए सेनाको विश्रांति भी देरहे है। कभी भरतजी पल्लकिपर चढकर जारहे है। कभी हाथीपर और कभी घोडेपर। इस प्रकार जैसी उनकी इच्छा होती हो विहार करते है। इसी प्रकार गर्मी बरसात आदि ऋतुमानोको भी देखकर प्रजाजनोको कष्ट न हो उस दृष्टीसे जहातहा मुक्काम करते हुए आगे बढरहे है। कई मुक्कामोके बाद वे दक्षिण समुद्रके तटपर पहुंचे। वहांपर सेनाने मुक्काम किया। पूर्वोक्त प्रकार वहापर नगर, घर, महल, जिनमंदिर आदिकी व्यवस्था होगई थी।

समुद्र तटपर खडे होकर मागधको बुलावो ऐसा कहनेके पहिले ही मागधामर हाथ जोडकर सामने आकर खडा होगया। भरतजीने कहा कि मागध! इस समुद्रमे वरतनुनामक व्यंतर भेडियोंके समान रहता है न? उसे तुम जानते हो? चुपचापके आकर वह हमारी सेवामें उपस्थित होगा या अभिमानके साथ बैठा रहेगा? बोलो तो सही, वह किस प्रकार के स्वभावका है?

मागधामर कहने लगा कि स्वामिन् ! लोकमें आपके सामने कौन अभिमान बतला सकते है व किसका अभिमान चलसकता है ? इसके अलावा वरतनु सज्जन है । आपकी सेवामें उसे साथमे लेकर कल ही मै उपस्थित होवूंगा । स्वामिन् ! यह क्या बडी बात है ?

भरतजी मागधके वचनको सुनकर प्रसन्न हुए, कहने लगे कि तब तो ठीक है, अभी तुम जाओ ! कल उसे लेकर आओ। ऐसा कहकर उसे व बाकीके लोगोको भेजकर स्वय महलमें प्रवेश कर गये ।

स्नान, देवार्चन भोजन, शयन आदि लीलाओंमे वह दिन व्यतीत हुआ । पुनः प्रात.काल होते ही नित्य.क्रियासे निवृत्त होकर दरबारमे आकर विराजमान हुए ।

दरबारमे यथाप्रकार सर्व परिवार एकत्रित है । कविगण, विद्वद्गण, वेश्याये, गायक वगैरे सभी यथास्थान विराजमान है । सभी लोग भरतजीका दर्शनकर अपनेको धन्य समझ रहे थे ।

अनेक गायक अनेक रागोको आश्रयकर गायन कर रहे है । कोई उस समय मंगलकौशिक रागको आश्रयकर मंगलशरण लोकोत्तम परमात्माके गुणोको गारहे है । उसे चक्रवर्ती बहुत प्रेमके साथ सुन रहे है । कोई नाराणि, गुर्जरि, सौराष्ट्र आदि रागोमे आत्मा और कर्मके कार्यकारण संबंधको वर्णन करते हुए गारहे है । उसे चक्रवर्ती सुनकर प्रसन्न हो रहे है । पुण्य गानको बाहरसे सुनते हुए, अंदरसे परमलावण्य परमात्माको स्मरण करते हुए, पुण्यमय वातावरणमें राजाग्रगण्य सम्राट विराजमान है ।

भगवान् आदिनाथ को स्मरण करते हुए परमात्माको भी भेद विचारसे स्मरण कर रहे है । इतनेमे गंधमाधवी नामक दासीने आदिराज को लाकर चक्रवर्तीके हाथमे दे दिया । भरतजीने बहुत आनंदके साथ उस बच्चेको लेकर प्रेमालाप करनेको प्रारंभ किया ।

कभी बालकको देखकर हंसते है। कभी महाराज ! कहांसे आप की सवारी पधारी है ? इसप्रकार बहुत विनोदसे पूछ रहे है। कैलास पर्वत से आये हुए यह आदिनाथ नहीं है। मेरुके अग्रपर खडे रहकर मुझे करुणासे देखने के लिये आया हुआ यह आदिराज है।

भरतजी के हाथ में सुवर्णरक्षा बंधी हुई है। उसे देखकर बालक हठ करनेलगा वह मुझे मिलनी चाहिये। तब भरतजी कहने लगे कि बेटा ! इस रक्षाकी क्या बात है। थोडा बडा हो जाओ। तुम्हारे लिये आभूषण ढेर के ढेर बनावाकर दूंगा।

भरतजी की गोदपर आदिराज बहुत आनंदके साथ बैठा हुआ है। इतने में अर्ककीर्ति वस्त्राभूषणो से अलंकृत होकर उस दरबार में आया।

उसके पीछेसे मंदाकिनी दासी भी आरही है। अर्ककीर्तिके दरबारमे प्रवेश करते ही दरबारी लोग उठकर खडे हुए व उसे नमस्कार करने लगे। सबको बैठनेके लिये हाथसे इशारा करते हुए भरतजीकी ओर वह जारहा था। भरतजीको भी आते हुए पुत्रको देखकर हर्ष हुआ। आदिराजसे कहने लगे कि बेटा ! तुम्हारे बडे भाई आरहा है, खडे होकर उसका स्वागत तो करो। इतनेमे वह बालक खडा होगया। जब भरतजीने उसे हाथ जोडनेके लिये कहा तब हाथ जोडने लगा। अर्ककीर्ति उसे देखकर प्रसन्न हुआ। स्वयं भरतके चरणमें एक रत्नको भेटमे समर्पण कर सिंहासनके पास ही खडा होगया।

भरतजीको उसकी वृत्ति देखकर आश्चर्य हुआ। वे पूछने लगे कि मंदाकिनी ! अर्ककीर्ति कुमारको यह किसने सिखा रक्खा है ? बोलो तो सही।

स्वामिन् ! किसीने भी सिखाया नहीं है और न जरूरत ही है। स्वयं ही पिताकी सेवा करनेके लिये उपस्थित हुआ है। दूध शक्करका

सेवन करते हुए मातापितावोके ऋणसे वद्ध क्यो होना चाहिये ? उससे मुक्त होनेके लिये वह यहापर आया है । और कोई बात नहीं । इसप्रकार मंदाकिनीने कहा ।

अर्ककीर्ति कुमार उस सिंहासनके पासमे अत्यंत गंभीर होकर खडा है । उसे देखकर आदिराजकी भी इच्छा उत्पन्न हुइ कि मैं भी वडे भाईके समान पिताकी सेवा करूं । इसलिये सबसे पहिले अपने पहने हुए वस्त्राभूषणो को उठाकर फेक दिये व हठ करने लगा कि अर्ककीर्तिने जिस प्रकारके वस्त्राभूपणोको धारण किये है वैसे ही मुझे भी चाहिये । भरतजीने उसे बहुत समझाया परंतु वह मानता नहीं, इतनेमें उस वालकके हठको देखकर एक गणवद्ध देवने विक्रियाशक्तिसे उसको अर्ककीर्तिके समान ही शृंगार किया ।

तव कहीं आदिराज संतुष्ट हुआ । एवं सम्राटके दाहिनी ओर जाकर अर्ककीर्तिके समान ही खडा होगया । उस समयकी शोभा कुछ और ही थी । दोनो ओरसे वालसूर्य है और बीचमे हिमवान् पर्वत है अथवा दो हाथीके दच्चोके वीचमें एक सुंदर हाथी है ।

वालकोंकी सुंदरताको देखकर सव लोग मुग्ध होगये । सव लोग उठकर खडे होकर उनकी शोभाको देखने लगे । भरतजी उनकी आतुरताको देखकर कहने लगे कि ये दोनों बालक हैं । उनके खडे होनेसे आपलोग खडे क्यो हुए । बैठ जाईये ।

राजन् ! हम लोग इस भाग्यको और कहां देख सकते है ? आपके ये दोनो क्या कुमार है ? नहीं नहीं ! ये दोनो सुरकुमार है ।

उनके खडे होनेका प्रकार, बचपनके खेलसे रहित गंभीरता, आदि वातोंको देखनेपर इन्हे वालक कौन कह सकता है ?

आपमें जिस प्रकार गंभीरता है उसी प्रकार आपके पुत्रोंमें भी गंभीरता है आपका गुण आपके पुत्रोमें भी उत्तर गया है । यह साहजिक है । लोकमे बीजके समान अंकुरोत्पत्ति होती है यह

कथन जो अनादिसे चला आरहा है उसकी सत्यता प्रत्यक्षमें आज देखनेके लिये मिली। विशेप क्या ? हम विशेष वर्णन करनेके लिये असमर्थ है। हम लोग उनको देखते देखते थक गये। वे भी बहुत देरसे खडे है। उनको वैठनेके लिये आज्ञा दीजियेगा।

तब भरतजीने पूछा कि एक घडीभर इन दोनोंने खडे होकर हमारी सेवा की इसके उपलक्ष्यमे इनको क्या वेतन दिया जाय ? मंत्री बोलो ! सेनापति तुम भी कहो।

स्वामिन् ! बुद्धिसागरने कहा बडे राजकुमारको एक घटिकाको एक करोड सुवर्ण मुद्राके हिसाबसे देना चाहिये। इसी समय सेनापतिने कहा कि छोटे कुमार श्री आदिराजको अर्धकरोड सुवर्ण मुद्राके हिसाबसे देना चाहिये। तब भरतजीने तथास्तु कहकर आज्ञा दी कि अभी इनको डेढ करोड सुवर्ण मुद्राको देनेकी व्यवस्था कर आगे जब कभी वे मेरी सेवा करे तब इसी हिसाबसे उनको वेतन देनेका प्रबंध करना। फिर दोनों कुमारोंको बैठनेके लिये आज्ञा दी। दोनो राजपुत्र बैठगये। वहांपर उपस्थित सर्व दरबारियोंनें उनको नमस्कार किया व अपने अपने आसनपर विराजमान हुए। इतनेमें गाजेबाजेका शब्द सुनाई देनेलगा।

वरतनु व्यंतर अपने परिवारके साथ आरहा है। यह मालुम होते ही भरतजीने आदिराजको गंधमाधवीको सोपा व अर्ककीर्तिको मंदाकिनी दासीको सोंप दिया व स्वयं बहुत गंभीरताके साथ वैठ गये।

वरतनु समुद्र तटतक तो विमानपर आरूढ होकर आया। बादमे अपने वैभवके चिन्होको छोडकर पैदल ही भरतजी ओर आनेलगा।

वह हसमुख है, दीर्घदेही है, सुवर्णवर्णी है। सचमुचमे उसको वरतनु नाम शोभा देता है। उसके कंधेपर एक दुपट्टा शोभित होरहा है। हाथमे अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम उपहारके योग्य वस्तुवोंको

लेकर अपने मंत्रीके साथ आरहा है। आगे से मागधामर है, पीछेसे वरतनु है। दोनों व्यंतर बहुत विनयके साथ दरबारमें प्रवेश करगये।

दरबारमे वेत्रधारीगण अनेक प्रकारके शब्दोंका उच्चारण कर रहे है। युद्धभूमिमें वीर! मदोन्मत्त शत्रुवोंके मानखंडनमे तत्पर! शरणागतों के रक्षक! राजन्! वरतनु व्यंतर आरहा है, दृष्टिपात कीजियेगा। इत्यादि शब्दोको वरतनु सुनरहा है। दूरसे ही उसने भरतजीको देखलिया। उनके दिव्यशरीरको देखकर वरतनु विचार करने लगा कि यदि राजा होकर उत्पन्न होवे तो इसी प्रकार होवें। इस प्रकार भावना करते हुए दोनों भरतकी ओर आये। दरबारमें दोनो ओरसे राजागण विराजमान है। बीचमें उच्च सिंहासनपर भरतजी विराजमान है। मागधामरने आकर हाथ जोडते हुए कहा कि स्वामिन्! वरतनु आया है। देखिये। आगे और कहने लगा कि मैंने उसके पास जाकर कहा कि तुम्हारे समुद्रके तटपर श्री सम्राट् भरतजी आये हैं। इतना सुनते ही उसने बडा हर्ष प्रकट किया। और अपने भाग्यकी सराहना करते हुए उसी समय मेरे साथ चलकर यहांपर आया। स्वामिन्! वरतनु कहने लगा कि भगवान् आदिनाथ स्वामीके पुत्रके दर्शन कौन नहीं करेगा? आत्म-विज्ञानीके दर्शन से कौन वंचित रहेगा? इस प्रकार कहते हुए वह बुद्धिमान् वरतनु आपकी सेवामे उपस्थित हुआ है।

वरतनुने बहुत भक्तिपूर्वक अनेक रत्न, वस्त्र, वगैरह उपहारोंको समर्पण करते हुए भरतजी को अपने मंत्रीके साथ साष्टांग नमस्कार किया।

स्वामिन्! आपके दर्शनसे हमारे नेत्र दोनों सफल होगये। हृदय प्रसन्न हुआ। इससे अधिक मुझे और किस बातकी जरूरत है? इस प्रकार कहते हुए साष्टांग ही पडा था। भरतजी मनमे ही समझ गये कि यह वरतनु सज्जन है। वक्र नही है। मनमें प्रसन्न होकर कहने लगे कि वरतनु! तुम आये सो अच्छा हुआ। अब उठो। इतने में

वरतनु उठा व राजाकी ओर देखते हुए कहने लगा कि स्वामिन् ! लोक मे सबकी आंखको तृप्त करनेके लिए तुम्हारा जन्म हुआ है। आपका रूप, आपका वैभव, आपका शृंगार यह सब लोक मे अन्य दुर्लभ है। यह सब आपके लिए ही रहने दीजिए। हमे तो केवल आपकी सेवा करनेका भाग्य चाहिए। हम लोग कूपके मत्स्यके समान इस समुद्रमे रहते है। हमारे पापको नाश करनेके लिए दयार्द्र होकर आप पधारे। हम लोग पवित्र होगये। हमारे प्रति आपने बडी कृपा की।

मंदहास करते हुए उसे बैठनेके लिये भरतजीने इशारा करते हुए आसन दिलाया। वरतनु भी आज्ञानुसार अपने मंत्रीके साथ निर्दिष्ट आसनपर बैठ गया।

मागधामरको आसन देकर बैठनेके लिये राजाने इशारा किया। फिर बुद्धिसागरकी ओर देखा। बुद्धिसागरने सम्राट् के अभिप्राय को समझकर बोला कि स्वामिन ! यह वरतनु व्यंतर तुम्हारे भोग के लिये योग्य सेवक है। वह विनीत है, सज्जन है, और आपके चरण कमल के हितको चाहनेवाला है। साथ ही मागधामरने जो यह सेवा बजाई है वह भी बडी है। राजन् ! ये दोनो तुम्हारी सेवा अभेद हृदयसे करेगे। इन दोनोका संरक्षण अच्छीतरह होना चाहिये।

इस प्रकार बुद्धिसागरके चातुर्यपूर्ण वचनको सुनकर वे दोनो कहने लगे कि मंत्री ! सम्राट् को हमारी सेवाकी क्या जरूरत है ? क्या उनके पास सेवको की कमी है ? फिर भी तुमने इस प्रकारके वचनसे हमारा सत्कार किया इसके लिये धन्यवाद है।

फिर बुद्धिसागर कहने लगा कि राजन् ! वरतनुको अपने राज्यमे सुखसे रहनेके लिये आज्ञा दीजिये उसे आज जाने दीजिये और आगे के मुक्कामको चाहे आने दीजिये।

भरतजीने वरतनुको अपने पास बुलाया और उसे अनेक प्रकारके वस्त्र, आभरण आदि विदाई में दिये। साथमें उसके मंत्रीका भी सन्मान किया। वरतनुने भी भरतजीके चरणमें नमस्कार कर सुरकीर्ति नामक एक व्यंतरको उनकी चरण सेवाके लिये सोंपते हुए कहा कि " स्वामिन् आज्ञानुसार मैं अपने राज्यको जाकर शीघ्र लौटता हूं। तबतक आपकी सेवाके लिये मेरे प्रतिनिधि इस सुरकीर्ति को रखकर जाता हूं " फिर वहासे अपने मंत्रीके साथ वह चला गया।

वरतनुके जानेके बाद भरतजी मागधामरकी ओर देखकर बोलने लगे कि यह मागधामर अत्यधिक विश्वासपात्र है। कल यहांपर सेनाने मुक्काम किया ही था, इतने मे यह यहासे वरतनुको लानेके लिये चला गया। यहां आनेके बाद विश्रांति भी नहीं ली, बहुत थक गया होगा।

भरतजीके इस वचनको सुनकर बुद्धिसागर मंत्री कहने लगा कि राजन्! वह विवेकी है, आपके सेवाक्रमको अच्छीतरह जानता है। वह आपकी सेवासे पवित्र हुआ।

इसी समय मागधामर भी कहने लगा कि स्वामिन्! आपकी सेवा करने का जो सौभाग्य मुझे मिला है यह सचमुचमें मेरा पूर्वपुण्य है। आप के पादकी साक्षीपूर्वक मैं कह सकता हू कि मुझे कोई थकावट नहीं है। मैं चाहता हू कि सदा आपकी सेवा करता रहूं।

भरतजीने अस्तु! इधर आवो! ऐसा बुलाकर उसकी पीठ ठोंकते हुए कहा कि मागध! तुमसे मै प्रसन्न होगया हूं। आजसे हमारी व्यंतरसेनाके आधिपति तुम्हे बनाता हूं। आजसे जितने भी व्यंतराधिपति हमारे आधीन होंगे, उनको तुम्हारे दरबारमें दाखल करेंगे। सबसे पहिला मानसन्मान तुम्हारे लिए दिया जायगा। बादका उनको दिया जायगा। समुद्रमें रहनेवाले व्यंतरोंको जो कुछ भी देनेके लिए तुम कहोगे वही देदिया जायगा। जहा तुम उस संबंधमें रोकनेके लिए

कहोगे हम भी रोक देंगे। अर्थात् तुम्हारी सलाहके अनुसार सर्व कार्य करेंगे। मागध ! सचमुचमें तुम अभिन्नहृदयसे मेरी सेवा कर रहे हो, ऐसी अवस्थामें भी उस दिन राजाओंके सामने तुम्हारे लिए जो कठोर शब्द बोल दिये थे, परमात्माके शपथ है कि मेरे हृदयमें उसके लिए पश्चात्ताप हो रहा है।

इस प्रकार भरतजीके वचनको सुनकर मागधामर कहने लगा कि स्वामिन् ! आपने ऐसे कौनसे कठोर वचन बोले हैं। मैंने ही अपराध किया था। पहले दिन मूर्खतासे आपके प्रति तिरस्कार युक्त अनेक वचन बोले थे, उसके लिए आपने प्रायश्चित्त दिया था। इसमें क्या दोष है ? स्वामिन् ! उसका मुझे अब जरा भी दुःख नहीं। आप भी उसे भूल जावें। इस प्रकार कहते हुए मागधामरने भरतके चरणोंपर मस्तक रक्खा।

उसी समय अपने कंठसे एक रत्नहारको निकालकर मागधामरको सम्राट्ने देदिया और सर्वजनसाक्षीसे उसे "**व्यंतराग्रणि**" इस उपाधि से अलंकृत किया।

दरबारके सब लोग कहने लगे कि स्वामिन् ! यह बडे भारी उपाधि है, उसके लिए यह मागधामर सर्वथा योग्य है। उसने आपकी हृदयसे जो सेवा की है वह आज सार्थक होगई है।

उसके बाद सम्राट्ने मागधामरको आज्ञा दी कि मागध ! जाओ ! अपनी महलमें जाकर विश्रांति लो। मागध भी सम्राट्को नमस्कार कर अपनी महलकी ओर चलागया। बाकीके दरबारियोंको भी उचित रूपसे बिदाकर सम्राट् मोतीसे निर्मित सिंहासनसे उठकर अपनी महलमें प्रवेश कर गये।

इस प्रकार सम्राट्ने अंतःपुरकी स्त्रियोंके साथ व अपनी संतानके साथ भोग व योग लीलासे युक्त होकर कुछ दिन बहुत आनंदके साथ वहींपर व्यतीत किया।

अर्ककीर्ति अब बढगया है । इसलिये राजकुलके लिये अनुकूल मुहूर्त देखकर यज्ञोपवीत संस्कार कराया । उत्सवकी शोभाको देखकर सब लोग जयजयकार करने लगे । तदनंतर अर्ककीर्ति के लिये अध्ययनशालाकी व्यवस्था की गई । और उसको आज्ञा दी गई कि अब तुम अपना निवास बोधगृहमे करो और परिश्रमपूर्वक विद्याध्ययन करो । साथ ही अर्ककीर्ति व उसकी दासी के लिये अलग निवासस्थानका भी निर्माण कराया गया । इससे पहिले अंतःपुरकी सर्व स्त्रियां अर्ककीर्ति की सेना कहलाती थी । अब अर्ककीर्ति स्नातक हुआ है। विद्याध्ययन कररहा है । इसलिये वह सेना अब आदिराजकी सेना कहलायगी । इस प्रकार बहुत आनंद व विनोदके साथ भरतजीका समय व्यतीत होरहा है ।

पूर्व व दक्षिण समुद्रके अधिपतियो को वशमे करनेके बाद अब सम्राट् पश्चिमदिशाकी ओर जानेका विचार करने लगे ।

हमारे पाठकोको उत्कठा होती होगी कि भरतजीको स्थान स्थानपर विजय ही क्यो प्राप्त होती है ? पूर्वसमुद्र मे गये वहा से मागधामर को सेवक बना लिये । दक्षिणसमुद्र में गये, वहा वरतनु आधीन हुआ । जहा भी जावे वही विजयी होते है । इसका कारण क्या है ? इसका एक मात्र उत्तर यह है कि यह पूर्वसंचित पुण्योदयका प्रभाव हैं । पूर्वजन्म में भरतजीने अनेक प्रकारकी शुभक्रियाओं द्वारा अपने आत्माको निर्मल किया था । इस भव मे भी वे रातदिन परमात्मा की भावना करते हैं ।

सिद्धात्मन् ! आप चलते समय, बोलते समय, सोते समय, उठते समय स्मरण पथमे विराजमान रहें तो प्राणियोंका सर्व कल्याण होता है। उनके सर्व कार्य सिद्ध होते हैं । इसलिये स्वामिन् ! आप रत्नदर्पण के समान हैं। मुझे सद्बुद्धी दीजियेगा ।

परमात्मन्! तुममें अचिंत्य सामर्थ्य मौजूद है। दशों दिशाओं व तीनों लोकोंको एक साथ व्याप्त होनेके सामर्थ्यको तुम धारण करते हो। तुम्हारी महिमा को लोकमें बहुत विरले ही जानते हैं। इसलिये हे चिदंबरपुरुष! धीर! मेरे हृदयमें बने रहो।

इस शुभ भावनाका ही यह फल है कि भरतजीका नित्य भाग्योदय होता है।

इति वरतनुसाध्य संधि.
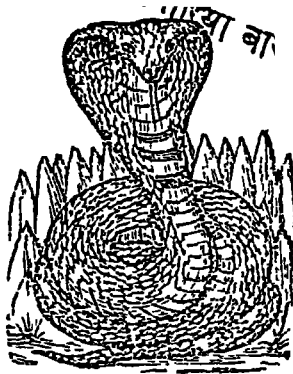
अथ प्रभासामरचिन्ह संधि.

प्रस्थान भेरीके शद्बने तीन लोक आकाश व दशों दिशावोंको व्याप्त किया। तत्क्षण सेनाने पश्चिमदिशाकी ओर प्रयाग किया। राजसूर्य भरतजी पल्लकीपर आरूढ होकर जा रहे है।

आदिराजकी सेना पीछेसे आरही है। पासमें ही मागधामर ध्रुवगति व सुरकीर्तिके साथ आरहा है। इसी प्रकार मगध, काभोज, मालव, चेर, चोल, हम्मीर, केरल, अंग, वंग, कलिंग, बंगाल आदि बहुतसे देशके राजा है। उनको देखते हुए भरतजी बहुत आनंदके साथ जारहे है। बीचमे कितने ही स्थानोमें सेनाका मुक्काम कराते जारहे है। फिर आगे सेनापतिके इशारेसे सेनाका प्रस्थान होता है। ठण्डे समयमे सेनाका प्रयाण होता है। धूपके समयमे सेनाको विश्रांति दी जाती है। अनेक पुत्रोंके पिताको जिस प्रकार पुत्रोपर सम प्रेम रहता है उसी प्रकार सेनापति जयकुमार भी सभी सेनावोंपर सदश प्रेम करता था। इस से किसीको भी किसी प्रकारका भी कष्ट नहीं होता था। इतना ही नहीं सेनाके हाथी, घोडा, वगैरह प्राणियोंको भी किसी प्रकारका कष्ट नहीं होता था। वह विवेकी था। इसलिये सबकी चिंता करता था। इसी लिये उसे सेनापतिरत्न कहते है।

इस प्रकार मुक्काम करते हुए सुख प्रयाण करते हुए जब सेना आगे बढरही थी। एक मुक्काममें भरतजीकी राणी चंद्रिकादेवीने एक पुत्र रत्नको प्रसव किया। इसी समय इस हर्षोपलक्ष्यमें जिनमंदिर वगैरह तोरण इत्यादिसे अलंकृत किये गये। हर्षको सूचित करने वाले अनेक वाद्यविशेष वजने लगे। सर्वत्र भरतजीको पुत्रोत्पत्तिका समाचार फैल गया। वरतनु भी बहुत हर्ष के साथ भरतजीकी सेवामें उपस्थित हुआ। भरतजीका दर्शन करते हुए बहुत दुःखके साथ

कहने लगा कि स्वामिन्! मैं बहुत ही अभागी हूं। मेरे नगरके पास आपको पुत्र रत्नकी प्राप्ति न होकर आगे आनेपर हुई है। सम्राट्को पुत्ररत्न होनेपर अनेक देशके राजागण आकर आनंद मनाते है। उन सब वैभवोंको देखनेका भाग्य मागधामरको प्राप्त हुआ है। पूर्व जन्ममें उसने उसके लिये अनेक प्रकारसे पुण्यसंचय किया है। इस प्रकार कहते हुए प्रार्थना करने लगा कि स्वामिन्! मै बहुत शीघ्र अपने नगरको जाकर जातकर्मके लिये योग्य उपहारोको लेकर सेवामे उपस्थित होता हूं। भरतजी कहने लगे कि वरतनु! कोई जरूरत नहीं! तुम यही रहो। उपहारोंकी क्या जरूरत है? अब आगेका कार्य बहुत है, उसके लिये तुम्हारी जरूरत है, तुम यही रहो। इसके बाद बहुत वैभवके साथ उस बालकको वृषभराज ऐसा नामकरण किया गया। इसी मुक्काम पर आदिराजको भी उपनयन संस्कार कर उसे गुरुकुलमें भेज दिया।

वृषभराज कुछ बडा हो इसके लिये छह महीनेतक वहींपर मुक्काम किया, बादमें वहासे सेनाप्रस्थानके लिये प्रस्थानभेरी बजाई गई, तत्क्षण सेनाने प्रस्थान किया।

अर्ककीर्ति व आदिराज विद्यार्थी वेषमे अपने गुरुवोंके साथ आरहे हैं। पीछेसे वृषभराजकी सेना आरही है। इधर उधरसे अनेक सुंदर घोडोंपर आरूढ होकर राजपुत्र आरहे है। उन सबकी शोभाको देखते हुए भरतजी बहुत आनंदके साथ जा रहे है।

भरतजी इक्ष्वाकुवंशोत्पन्न है। उनके साथ जानेवाले राजपुत्र सबके सब इक्ष्वाकुवंशके नही है। कोई नाथवंशके है। कोई हरिवंशके हैं। कोई उग्रवंशके है। कोई कुरुवंशके है। उनको देखते हुए भरतजी उनके संबंधमें अनेक प्रकारसे विचार कर रहे है।

यह हरिवंश कुलके लिये तिलक है, यह कुरुवंशके लिये भूषणप्राय है, अमुक नाथवंशावतंस है, अमुक गंभीर है, अमुक पराक्रमी है,

अमुक गुणी व सज्जन है, अमुक निरभिमानी है। इत्यादि अनेक प्रकारके विचार भरतजीके मनमे आरहे है।

सूर्यके दर्शनसे कमल, चंद्रके दर्शनसे कुमुदिनीपुष्प जिस प्रकार प्रसन्न होते है उसी प्रकार भरतजीके दर्शनसे वे राजपुत्र अत्यंत प्रसन्न होरहे है और उनके साथ बहुत विनयके साथ जारहे हैं। वे बहुत वडबडाते नहीं, और कोई प्रकारकी अहितचेष्टा भी नहीं करते, वे उत्तम कुल जातिमे उत्पन्न हैं। इतना ही क्यों वे भरत चक्रवर्तीके साथ रोटी बेटी व्यवहारके लिये योग्य प्रशस्त जाति क्षत्रिय वंशज हैं केवल अंतर है तो इतना ही कि चक्रवर्तिके समान संपत्ति नहीं है। वाकी किसी भी विषयमें वे कम नहीं है!

वीचवीचमें अनेक मुक्काम करते हुए कई मुकामके बाद भरतजी पश्चिम समुद्रके तटपर पहुंचे, वहांपर जाते ही मागधामर व वरतनुको बुलाया, तत्क्षण वे दोनों ही हाजिर हुए। समुद्रतटपर खडे होकर सम्राट्ने कहा कि मागध! इस समुद्रमें प्रभास देव राज्य कर रहा है, वह कैसा है? हमारे पासमे सीधी तरहसे आयगा? या कुछ ढोंग रचकर बादमे वश होगा? बोलो तो सही! इस वचनको सुनकर मागध कहने लगा कि स्वामिन्! प्रभास देव सज्जन है। वह आपके साथ विरोध नहीं कर सकता, हम लोग जाकर उसे आपकी सेवामें उपस्थित करेंगे। इस प्रकार कहते हुए जानेकी आज्ञा मागने लगे, सम्राट् कहने लगे कि इस कार्यके लिये तुम लोग नहीं जाना। हमारे साथ तुम लोगोंके जो प्रतिनिधि मौजूद है उनको इस बार भेजकर देखेंगे, वे किस प्रकार कार्य करके आते है। उसी समय ध्रुवगति और सुरकीर्तिको बुलाकर यह काम उनको सोंपकर उनको आज्ञा दी गई कि तुम लोग जाकर प्रभास देवको लेकर आना। दोनो देवोंने उस आज्ञाको शिरोधार्य किया और चले गये।

मंत्री, सेनापति आदि सबको अपने २ स्थानमें भेजकर चक्रवर्ती अपने महलमे प्रवेश कर गये। अपनी राणियोंके साथ स्नान भोजनादि क्रियावोंसे निवृत्त होकर उस दिनको भोग और योगलीलामे चक्रवर्तीने व्यतीत किया। दूसरे दिन प्रातः नित्यक्रियासे निवृत्त होकर दरबारमें आकर विराजमान हुए। दरबारमे चारो ओरसे अनेक राजा, राजपुत्र वगैरे विराजमान है। गायन करनेवाले भिन्न २ सुंदर रागोमे गायन कर रहे है। उनमे परमात्मकलाका वर्णन किया जा रहा है। कोई धन्यासि रागमे, कोई भैरवीमें गा रहे है। चक्रवर्ती उनको सुन रहे है।

बाहरसे जिसप्रकार प्रातःकालका धूप दिख रहा हो उसी प्रकार अंदरसे चक्रवर्तिको आत्मप्रकाश दिख रहा है, कान गान की ओर है, हृदय आत्माकी ओर है, चर्मदृष्टिसे दरबारको देख रहे है। अंतर्दृष्टिसे (ज्ञानदृष्टि) निर्मल आत्माको देख रहे है। आत्मविज्ञानी का मनोधर्म बहुत ही विचित्र रहता है। उसे कौन जान सकते है?

कीचडमें रहनेवाले कमलको सूर्यके प्रति प्रेम रहता है न कि उस कीचडपर। इसी प्रकार इस अपवित्र शरीरमे रहनेवाले विवेकी आत्माको अपने आत्मापर ही प्रेम रहता है न कि उस शरीरपर। भव्योंका खास लक्षण यही है कि पे अखण्ड भोगोंके बीचमे रहनेपर भी आत्माकी ओर ही उनका चित्त रहता है, भोगकी ओर नहीं। अनेक राग रचनावोंसे गाये जानेवाले उन गायनोंपर संतुष्ट होकर उन को अनेक प्रकारसे इनाम भी देते जा रहे है, अंदरसे परमात्मकलाकी भावना भी कर रहे है।

इस प्रकार भरतजी योग और भोग में मग्न होकर दरबारमें विराजमान है। इतनेमे चित्तानुमति नामक दासीने वृषभराज को लाकर सम्राटके हाथमे दे दिया। भरतजी वृषभराजके साथ अनेक प्रकारसे विनोद करने लगे। बेटा! क्या भरतके पिता वृषभनाथ ही साक्षात् आये हैं? नहीं नहीं यह वृषभराज है। भरतजीने जिससमय

उस बच्चेको हाथसे उठाया उस समय ऐसा मालूम हो रहा था कि जैसे कोई बडा रत्ननिर्मित पुतला रत्ननिर्मित छोटे पुतलेको उठा रहा हो। पिताके मुखको पुत्र, पुत्रके मुखके पिता देखकर दोनों हंस रहे हैं।

भरतजी पुत्रके हाथकी रेखावोंके लक्षणको देखकर उनके शुभ फलको विचार कर रहे हैं। मंगलमय रेखाओंको देखकर प्रसन्न हो रहे है। पिता जिस प्रकार उस बच्चे के हाथ देख रहे है, उसी प्रकार उस बच्चेने भी भरतजीके हाथको देखनेके लिये प्रारंभ किया व हंसने लगा। तब भरतजी कहने लगे कि बेटा! मैंने तुम्हारे लक्षणको देखा, क्या इसी लिये तुमने मेरे लक्षणको भी देखा? मुझ सरीखे तुम, तुम सरीखें मै, उसमे अंतर क्या है?

इस प्रकार एक बच्चेके साथ जब प्रेम कर रहे थे तब दरबारमें भरतजीके और दो पुत्र प्रवेश कर आये, आगे अर्ककीर्ति है, पीछेसे आदिराज है, दोनों विनयी है, सद्गुणी है। इसलिये दरबारके बाहर छत्र, चामर, खडाऊ आदिको छोडकर अपने साथके सेवकोंको भी बाहर ही खडे रहनेके लिये आज्ञा देते हुए अंदर आ रहे है। अनेक प्रकारके रत्ननिर्मित आभरण, तिलक, गंध, लेपन आदिसे अत्यंत शोभाको प्राप्त हो रहे है। भय व भक्तिके दोनों मूर्तस्वरूप थे। इस लिये पिताके प्रति भय व भक्तिके साथ दरबारमें आ रहे हैं। वेत्रधारीगण राजाको उच्च स्वरसे सूचना दे रहे है कि स्वामिन्! सूर्यसे भी द्विगुण प्रकाशको धारण करनेवाला अर्ककीर्ति कुमार आरहा है। उसीके साथ आदिराज भी आरहा है। एक घटिकाको एक करोड सुवर्णमुद्रा जिनका वेतन है ऐसे सुकुमार आरहे है। सौजन्य, विनय, विवेकमें जिनकी बरोबरी करनेवाले कोई नहीं ऐसे दोनों कुमार आरहे है। राजन्! देखिये तो सही! राजन्! हुण्डावसर्पिणीके आदियुग में षट्खंडमण्डलेशरूपी पर्वतसे उत्पन्न

सूर्यचंद्ररूपी दोनों पुत्रोंको देखिये तो सही ! इस वचन को सुनकर भरतजीको भी हंसी आई । हंसते हुए ही उन्होने उन वेत्रधारियोको पास बुलाकर इनाम देदिया । दोनो पुत्रोको देखकर सभी दरबारी आकृष्ट हुए । सब लोग खडे होगये। अर्ककीर्ति और आदिराजने सबको बैठनेके लिये इशारा किया । भरतजीने वृषभराजसे कहा कि बेटा ! तुम्हारे बडे भाई आरहे हैं । खडे होकर उनका स्वागत करो, उसी समय वृषभराज उठकर खडा होगया । हाथ जोडनेके लिये कहा तो हाथ जोडकर नमस्कार किया । अर्ककीर्ति व आदिराजने बहुत विनयके साथ कहा कि स्वामिन् ! हमे उसके नमस्कार करने की क्या जरूरत है ? " यह राजपुत्रोका लक्षण है " ऐसा कहकर भरतजीने समाधान किया । उसके बाद दोनों पुत्रोने अनेक भेट वगैरे समर्पण कर पिताके चरणोंमें नमस्कार किया एवं सिंहासनके दोनों और खडे होगये । उस समय भरतजी की शोभा कुछ और ही थी । एक पुत्र गोदपर, दोनो इधर उधरसे खडे हैं । उनकी शोभाको देखते हुए दरबारके सब लोग खडे है । भरतजीने सबको बैठनेके लिये कहा । फिर भी सब लोग खडे ही रहगये । और कुमारो की ओर ही देखते रहे । भरतजीने अर्ककीर्तिसे कहा कि बेटा ! सबको बैठनेके लिये तुम बोलो । तब वे बैठेगे । तब सबको अर्ककीर्तिने बैठनेके लिये कहा । फिर भी लोग खडे खडे ही देखते ही रहे । फिर " तुम लोगोंको पिताजीकी शपथ है । बैठ जाईये " ऐसा कहनेपर भी लोग बैठे नहीं । वे एकदम दोनो कुमारोंके सौदर्यको देखनेमे ही मग्न होगये थे । इतने में भरतजीने आदिराजसे कहा कि बेटा ! सब को तुम बैठनेके लिये बोलो । तब आदिराजने कहा कि प्यारे भाईयो ! आप लोग बैठ जावें फिर भी सब लोग खडे ही रह गये । फिर " मेरे भाई अर्ककीर्तिकी शपथ है, आपलोग बैठ जावे " ऐसा कहनेपर सब लोग एकदम बैठ गये, अर्ककीर्तिने गंभीरताके साथ कहा कि आदिराज को कुछ काम नहीं है,

पिताजी के सामने मेरे शपथ खानेकी क्या जरूरत है ! क्या यह योग्य है ? इसपर आदिराज कहने लगा कि भाई ! पिताजी तुम्हारे लिये स्वामी है । मेरे लिये तो तुम ही स्वामी हो, इसमें क्या बिगडा ?

भरतजी भी अपने पुत्रोंके विनय व्यवहारपर प्रसन्न हुए । दरबारी भी उनके जातिविनयको देखकर प्रसन्न होकर प्रशंसा करने लगे ।

भरतजीने मंत्री और सेनापतिको बुलाकर पूछा कि क्या मेरी उस दिनकी आज्ञाके अनुसार इनको बराबर वेतन दिया जाता है ? स्वामिन् ! आज्ञानुसार वेतन तत्क्षण दिया गया । परंतु उन्होने ही खजाने मे रखनेके लिये आज्ञा दी । इन प्रचण्ड वीरोंको कौन रोक सकता है ?

इस के बाद दोनो कुमारों को बैठने के लिये आज्ञा देकर आसन दिया गया । परंतु वे बैठे नहीं । उन्होने भरतजीकी ओर एक सेवा करनेकी तैयारी की । पासमे ही खडे होकर एक सेवक भरतजीको तांबूल देरहा था । उसके हाथसे तांबूलके तबकको अर्ककीर्तिने छीन लिया । व स्वतः तांबूल देनेकी सेवामे संलग्न हुआ । इतनेमे आदिराजने भी चामर डोलनेवालेके हाथसे चामरको छीन लिया व स्वतः चामर डोलने लगा । उस समय उन दोनों पुत्रोंकी सेवाको देखते हुए दरबारके समस्त सज्जन भावना करने लगे थे कि " लोकमें पुत्रोंकी प्राप्ति हो तो ऐसोंकी ही हो । नहीं तो ऐसे भी बहुतसे पुत्र उत्पन्न होते हैं जिनसे पिताकी सेवा होना तो दूर, पिताको ही उनकी सेवा करनी पडती है । कभी कभी पितृद्रोह के लिये भी वे तैयार होते हैं " ।

तांबूल देनेके बाद और एक सेवा करनेके लिये अर्ककीर्ति सन्नद्ध हुआ । पिताकी गोदमे वृषभराजको लेकर स्वयं उसे खिलाने लगा । भरतजीने कहा कि बेटा ! वृषभराजको तुमने क्यों उठाया ? अर्ककीर्तिने बहुत विनयके साथ कहा कि स्वामिन् ! बहुत देरसे वह आपके गोदपर बैठा है, आपको कितना कष्ट हुआ होगा ? इसलिये कुछ देरके लिये अपने भाईको मैं भी उठावूं, इस विचारसे मैंने लिया और कोई बात नहीं।

भरतजीने सोचा कि मैने जिस बच्चेको पहिले उठाया था उसको यह अब उठा रहा है। इसी प्रकार जिस षट्खण्ड भूभार को मै अब धारण कररहा हूं उसे यह भविष्यमे उठायगा। यह इसके लिये पूर्ण समर्थ है। इसी प्रकार वहां उपस्थित बडे २ राजा, प्रजा, देव, आदियोने अपने मनमे विचार किया। तदनंतर भरतजीने "बेटा! मेरी शपथ है। मुझे बिलकुल कष्ट नहीं, लावो, बच्चेको इधर लावो, तुम दोनो यहां पासमे बैठे रहो" ऐसा कहकर दोनोको पासमे बैठाल लिया। पासमे बैठे हुए दोनों पुत्रोंके साथ भरतजी बहुत आनंदके साथ विनोद कर रहे है।

बेटा! तुमलोग अब गुरुकुलमे विद्याभ्यास कररहे है। क्या वह कष्टमय है या सुखमयः है? इस प्रकार भरतजीने अर्ककीर्तिसे पूछा।

अर्ककीर्ति कहने लगा कि स्वामिन्! विद्योपार्जनके समान अन्य कोई सुख नहीं है। उस सुखको हम कहातक वर्णन कर सकते है? अभ्यास, अध्यवसाय आदि आलस्यको दूर करनेके लिये प्रधान साधन है! शास्त्राभ्यास ज्ञानका साधन है। राजकुलमे उत्पन्न वीरोंके लिये यह विद्यासाधन भूषण है। सुखसाधन है।

भरतजीने पुत्रसे कहा कि बेटा! प्रारंभमे विद्योपार्जन कुछ कठिन मालुम होता है, परंतु आगे जाकर वह सरल मालुम होता है, धीर व साहासियोंके लिये वह साध्य है। डरपोकोंके पास वह विद्यादेवी भी नहीं जाती! इसलिये उसकी कठिनाईयोसे एकदम डरना नही चाहिये।

"पिताजी! हमे बिलकुल भी कष्टका अनुभव नही होता है। प्रत्युत हमे उसमें और भी अधिक आनंद ही आनंद आता है। हमे किसी बातकी जल्दी नहीं है। इसलिये धीरे धीरे उसको साधन कर रहे है। इसलिये हमे कोई कठिनता नहीं होती है। उदयकालमे अभ्यास, दुपहरको पठन, और रात्रिके समयमे पठित पाठका चिंतन करना यह हमारे प्रतिनित्यका साधनक्रम है। हम मृदु मार्गसे व्यवस्थित रूपसे

जारहे हैं। इसलिये हमें उस मार्गमें कष्ट क्योंकर हो सकता है ? पिताजी ! आदिराजकी बुद्धीका मै कहांतक वर्णन करूं ? ग्रंथपठन व अभ्यासमे वह आदर्शरूप है। जिस प्रकार कोई पहिले अभ्यास कर भूले हुए विषयोको एकदम स्मरण करता हो, उसी प्रकार की हालत नवीन ग्रंथोंके अभ्यासमे आदिराज की है अर्थात् बहुत जल्दी सभी ग्रंथ अभ्यस्त होते है। स्वामिन् ! आपने उसका नामकरण करते हुए भगवान् आदिनाथका नाम जो रक्खा है वह बहुत विचार पूर्वक रक्खा है। उसमे अन्यथा क्यो होसकता है ? विचार करनेपर वह सचमुचमें आदिराज है। अंत्यराज व मध्यराज नहीं है। इस प्रकार आदिराज की अर्ककीर्तिने प्रशंसा की।

भरतजीने प्रसन्न होकर "बेटा ! सचमुचमें तुम्हारे भाई साहसी है ? वीर है ? बुद्धिमान् है ? तुमको उससे संतोष हुआ है ? बोलो तो सही ! पिताजी ! विशेष क्या कहूं ? अपने वंशके लिये वह आदिराज भूषणप्राय है।

अर्ककीर्तिके मुखसे अपने वर्णन को सुनकर आदिराज कहने लगा कि भाई ! बडे लोग छोटोंकी इस प्रकार प्रशंसा करते हैं क्या ? क्या राजपुत्रोंके लिये यह योग्य है ? मुझमें इस प्रकारके गुण कहां है ? आप व्यर्थ ही मेरी प्रशंसा क्यों कर कर रहे हैं ?

इतनेमें भरतजीने कहा कि बेटा ! कोई बात नहीं। बडे भाईने संतोषके साथ तुम्हारे विषयमे कहा। तुम दोनो ही भूषणस्वरूप है। इसलिये शात रहो।

अब दरबारको बरखास्त कर देते हैं। आप लोग अपने निवास स्थानको जाईयेगा। इस प्रकार कहकर आभरणोसे भरे हुए दो करंडो को उन पुत्रोंको भरतजी देने लगे। तब उन दोनोने लेनेसे इनकार किया। वे कहने लगे कि हमारे पास अभी आभरण बहुत है। अभी जरूरत नहीं। भरतजीने बहुत आग्रह किया फिर भी लेनेके लिये राजी नहीं हुए।

तब वे कहने लगे कि बेटा ! तुम लोग आज बहुत उत्तम कार्य चुके हो । इसलिये मै दिये विना नहीं रह सकता । यदि तुम लोगोंने आज इसे नहीं लिया तो आगे कभी भी तुम लोगोके हाथसे भी मै भेट नहीं लूंगा । भरतजीने विचार किया कि कदाचित् बडे भाईने ले लिया तो बादमें छोटे भाई लेनेके लिये तैयार हो जायगा । इसलिये अर्ककीर्तिके तरफ हाथ बढाने लगे । परंतु उसने भी लिया नहीं, तब आदिराजसे भरतजीने कहा कि बेटा ! तुम अपने भाईसे लेनेको बोलो ! तब आदिराजने अर्ककीर्तिसे लेनेकी प्रार्थना की । अब अर्ककीर्ति अपने भाईके वचनको टाल नहीं सका। उसने पिताजीसे प्रार्थना की कि हम इस उपहारको लेंगे । परंतु वृषभराजके हाथसे दिलाइयेगा। उसके हाथसे लेनेकी इच्छा है । तदनुसार दोनों करण्डोंको भरतजीने वृषभराज के सामने रखा । प्रथमतः वृषभराजने दोनों भाईयोको नमस्कार किया। फिर उसने उन आभारणोंके करण्डोको हाथ लगाकर सरका दिया ।

छोटे भाई बडे भाईयोको इनाम देरहा है । उसमे भी विनय है । इस नवीन पद्धतीको देखकर सब लोग आश्चर्य चकित हुए, वे तद्भव मोक्षगामीके पुत्र है, एवं तद्भवमोक्षगामी है । इसलिये वे व्यवहारमें किस प्रकार चूक सकते है ? उन आभरणोंको लेकर उनमेसे एक २ हार निकालकर दोनों कुमारोंने वृषभराजको पहना दिया । बाकीके लेकर जाने लगे ।

इतनेमें एक विनोदकी घटना और हुइ । बडे भाई आभरणकी पेटीको बगलमे रखकर जाने लगा तो छोटे भाई आदिराजने कहा कि भाई ! इस पेटीको आपके महल तक मै पहुंचावूंगा, आप क्यों कष्ट ले रहे है ?

आदिराज ! तुम पिताजीके सामने व्यर्थ गडबड मत करो ! जो कुछ व्यवहार, विनय वगैरे बतलाना हो वह हमारे महल में बतलाओ ! यहां यह सब करना ठीक नहीं है । अर्ककीर्तिने कहा ।

भाई ! पिताजी के सामने ऐसा व्यवहार उचित क्यों नहीं ? क्या यह लुच्चे लफंगोंका आचार है ? या सज्जनोंका गौरव है ? हम क्या कोई बुरा काम कर रहे है ? जिससे कि पिताजी के सामने संकोच करें। आपको अपनी प्रतिष्ठा के समान ही चलना चाहिये और मुझे सेवाकृत्य के लिये आज्ञा देनी चाहिये। मैं कह रहा हूं, यह ठीक है या गलत है ? इस वातका निर्णय पिताजी से ही पूछ कर कीजियेगा, अब तो कोई हर्ज नहीं है न ? इस प्रकार कहते हुए आदिराजने उस आभरण की पेटीको लेने के लिये हाथ बढाया, परंतु अर्ककीर्तिने हाथको हटाया तो भी " मैं नहीं छोड सकता " इस प्रकार कहते हुए आदिराज पेटीको छीनने लगा। दोनोका विनयविनोदयुक्त युद्ध होने लगा। पुत्रो के वर्तन पर भरतजी अत्यंत संतुष्ट हुए। और कहने लगे कि बेटा ! पेटी दो ! उसकी भी इच्छा पूर्ति होने दो: तब आदिराजको और भी जोर मिला। उसने पेटी अर्ककीर्तिसे छीन ली, और अपनी वगल मे दवाया। फिर दोनो पुत्रोंने भरतजी को भक्तिसे नमस्कार किया व अपनी महलकी ओर प्रयाण किया। इधर भरतजी आनंदके साथ विराजमान थे।

आकाशप्रदेशमे गाजेबाजेका शब्द सुनाई देने लगा। मालुम हुआ कि प्रभासाक देव आरहा है। चित्तानुमती दासीको बुलाकर वृषभराज को उस के हाथमें सोंप दिया, और महलकी ओर भेज दिया। सम्राट् प्रभासांककी प्रतीक्षा करते हुए सिंहासनपर विराजमान हैं।

पाठकोंको इस वातका आश्चर्य होता होगा कि चक्रवर्ती भरतको वारंवार उत्सव के वाद उत्सव का प्रसंग क्यों आता है ? उनका पुण्य कितना प्रबल है ? उन्होने इसके लिये क्या अनुष्ठान किया होगा ? इसका समाधान यह है कि पुण्यके जागृत रहनेपर मनुष्य का जीवन सुखमय वन जाता है। सम्राट्ने इस वातकी भावना अनेक भवोंमें की

थी कि मेरी आत्मा-सुखमय बने, इस भवमें भी वे हमेशा भावना करते है कि:—

सिद्धात्मन्! पद्मकमलो के पचास दलोंपर अंकित पचास शुभ अक्षरोंको क्रमसे ध्यान कर जो अपने आत्मसाक्षात्कार करते हैं उन को आपका दर्शन होता है। हमें भी आपके दर्शन की इच्छा है, इसलिये सुबुद्धी दीजियेगा। हे परमात्मन्! जो तुम्हारी भावना करते हैं उनको रात्रिंदिन आनंद के ऊपर आनंद देकर संरक्षण आप करते हैं। क्यों कि आप नित्यानंदमय है। इसलिये मेरे हृदयमें निरंतर बने रहनेकी कृपा करें"!

इसी भावनासे भरतजीको नित्यानंद मिल रहा है।

इति प्रभासामरचिन्ह संधि ।
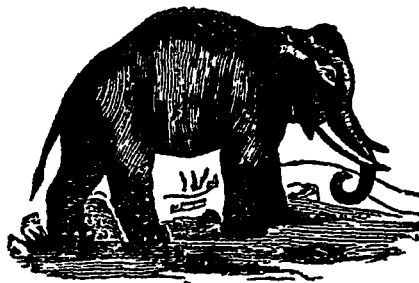
अथ विजयार्धदर्शन संधि।

प्रभासामर अपनी सेना व विमान आदि वैभव के चिन्हो को समुद्रतटपर ही छोडकर चक्रवर्ती के पास बहुत आनंदके साथ आरहा है।

प्रतिभास नामक प्रतिनिधि व मंत्री उसके साथ है। साथ ही सुरकीर्ति व ध्रुवगति भी मौजूद है। वह प्रभासामर बहुत सुंदर है। अनेक रत्ननिर्मित आभरण व दिव्य वस्त्रो के धारण करने से और भी सुंदर मालुम होता है। गौर वर्ण है। इतना ही नहीं उसका मन भी शुभ्र है। बहुत ही भय व भक्तिसे युक्त होकर वह सम्राट् के पास जारहा है। इधर उधर से चक्रवर्ती की सेनाके घोडे हाथी, रथ व अगणित पायदल आदि विभूतियों को देखते हुए उसे मनमे आश्चर्य हो रहा है।

सभा मे प्रवेश करनेके बाद भरतजी का वैभव देखकर मागधामर आश्चर्यचकित हुआ। उस विशाल सभामे वेत्रधारीगण " रास्ता छोडो, बैठो, हल्ला मतकरो " आदि शब्दोच्चारण करते हुए व्यवस्था कर रहे है।

प्रभासामर ने सिंहासनपर विराजमान चक्रवर्ती को देखा। देखते ही उसके मनमे विचित्र विचार उत्पन्न हुए। क्या यह चक्रवर्ती है ? देवेंद्र है ? या कामदेव है ? चंद्र है या सूर्य है ? इत्यादि अनेक प्रकारके विचार उसके मन में उत्पन्न हुए। पासमें जानेके बाद ध्रुवगति और सुरकीर्तिने नमस्कार कर प्रार्थना की कि स्वामिन् ! प्रभासेंद्र यही है। हम लोगोने जाकर जब यह समाचार कहा कि सम्राट् समुद्रके तटपर विराजमान है, तब वह बहुत ही प्रसन्न हुआ, कहने लगा कि मै आज कृतार्थ हुआ, मेरा जन्म सफल हुआ। इससे

पहिले मागधामर, वरतनुको पवित्र किये हुए स्वामी मुझे उद्धार करनेके लिए पधारे, मेरा परम भाग्य है इत्यादि अनेक प्रकार से उन्होने हर्ष प्रकट किया। इतना ही नहीं, स्वामिन् ! विशेष क्या ? हमलोग आपके समाचार लेकर वहां गये थे। इसलिए हम लोगोंसे कहने लगा कि बंधुवर ! पहिले का बंधुत्व तो अपने साथ है ही। फिर भी आज आप लोग स्वामीके अभ्युदय समाचार को लेकर आये है। इसलिए आप लोगोंसे अधिक हितैषी हमारे और कौन होंगे ? ऐसा कहते हुए हम लोगोको प्रेमसे आलिंगन दिया व हमारा यथेष्ठ सत्कार किया। स्वामिन् ! अधिक कहने से क्या प्रयोजन ? आपके दर्शन करने की उत्सुकता से वह यहापर आया है। आपके सामने खडा है, इस प्रकार कहकर वे दोनों देव खडे होगये।

इसके बाद प्रभासेंद्रने चक्रवर्तीके ऊपर चांदीके पुष्पोंकी वृष्टि बहुत भक्तिसे की। अनेक वस्त्र, आभूषण, रत्न, मोती आदिको भेटमे चक्रवर्तीके चरणमे समर्पण किया व अपने मंत्रीके साथ साष्टांग नमस्कार कर चक्रवर्तीकी स्तुति करने लगा।

" आदितीर्थेशाग्रसुकुमार जय जय, आदिचक्रेश मां पाहि, भो देव ! धन्योस्मि " ऐसा कहते हुए सम्राट्के चरणोंमे नमस्कार किया। चक्रवर्तीने प्रसन्नताके साथ उसे उठनेके लिए कहा। प्रभासेंद्र उठकर खडा हुआ। पुनः भक्ति से चक्रवर्तिकी स्तुति करने लगा।

निमिषलोचनेंद्र ! कलंकरहित व अन्यून चंद्र ! उष्णरहित सूर्य ! सशरीर कामदेव ! तुम राजाके रूपमें सबको सुख पहुंचानेके लिए आये हो। स्वामिन् ! अयोध्यानगरीमे रहनेपर समुद्रके अनेक व्यंतर उन्मत्त होकर दुर्मार्गगामी बनेंगे, इसलिए हम लोगोंका उद्धार करनेकेलिए आप यहा पधारे है।

स्वामिन् ! आप परमात्माको प्रसन्न करचुके हैं, इसलिये इसी भवसे मुक्तिको पधारने वाले है। हे सुमुख ! आपकी सेवा करनेका

भाग्य लोकमें सबको क्यों कर मिलसकता है? हम लोग सचमुचमें भाग्यशाली हैं।

इतनेमे भरतजीने प्रभाससे "सुमुख! तुम बहुत थक गये होगे अब बैठजाओ," ऐसा कहते हुए एक आसनके प्रति इशारा किया। अपने मत्रीके साथ वह भी उचित आसनपर बैठ गया।

सुरकीर्ति व ध्रुवगतिको भी बैठनेके लिय आज्ञा देकर सम्राट्ने बुद्धिसागरकी ओर देखा। बुद्धिसागर मत्री सम्राट्के भावोको समझकर कहनेलगा कि स्वामिन्! प्रभास देव अत्यत विवेकी है। मायारहित है, आपका परमभक्त है, आपके पादकमलोकी सेवाकरनेकी इच्छा रखता है, सचमुचमें वह धन्य है कि आपकी सेवाके भाग्यको पाया है। इससे अधिक और कौनसी संपत्ति होसकती है?

इससे पहिले मागधामर व वरतनु पुण्यभागी थे। अब ये तीनों ही पुण्यशाली है।

मंत्रीके वचनको सुनकर वे तीनो देव बहुत प्रसन्न हुए, बुद्धिसागरने ध्रुवगति व सुरकीर्ति की भी प्रशसा की। साथमें यह भी कहा कि स्वामिन्! अब प्रभासेद्र अपने राज्यको जाना चाहे तो उसे जानेकी अनुमति दी जाय और आगे जिस स्थानपर आप मुक्काम करें उसी स्थानपर आवें।

भरतजीने भी प्रभासामर को मंत्री सहित बुलाकर अनेक प्रकार के वस्त्र आभूषण रत्नोंको भेट मे दिया। साथमें सुरकीर्ति व ध्रुवगति का भी सन्मान किया। इतने में एक और सतोष की घटना हुई।

राजदरबार में जिस समय प्रभासदेव के मिलापमें हर्ष संलाप होरहा था, उस समय उधर महलमें पाच राणियोने पाच पुत्र रत्नोंको प्रसव किया है। श्रीमाला, वनमाला, गुणदेवी, गणिदेवी, हेमाजी, नामक पाच राणियोने अत्यंत सुंदर पांच पुत्रोंको जन्म दिया हैं। जो कामदेव के पंचबाणो को भी तिरस्कृत कर रहे थे।

अंतःपुरसे पंचपुत्रोंकी उत्पत्ति के समाचारको लेकर जो दासियां आई है वे बहुत चातुर्य के साथ आरही है। क्यों कि उनको भेजने वाली राणिया भी कम बुद्धिमती नहीं थी। यदि क्रमसे दासियां जाकर कहेगी तो अमुक राणीका पुत्र छोटा है, अमुकका बडा है, अमुकने पहिले जन्म लिया इत्यादि सिद्ध होजायगी। इसलिये दासियोको एक पंक्तिसे जाकर एकसाथ कहनेकेलिये उन राणियोने आदेश दिया था। इसलिये वे दासिया एक पंक्तिमे ही खडी होकर भरतजीके दरबारमे आनंदसे फूलकर आरही है। भरतजीने दूरसे ही देखकर समझलिया कि ये पांचो दासिया पुत्र जन्मके हर्षसमाचारको लेकर आरही है। और कोई बात नहीं।

पासमे आकर उन पांचोने पाच राणियोको पुत्रोत्पत्ति होनेका समाचार सुनाया। भरतजीको हर्ष हुआ। पाचो दासियोको अपने कंठमे धारण किये हुए रत्ननिर्मित पांच हारोको इनाम दिया। उस दरबारमें उपस्थित राजा व प्रजाओंको यह समाचार सुनकर इतना हर्ष हुआ कि शायद उनके हाथमें ही चक्रवर्तीकी संपत्ति आगई हो।

उसीसमय प्रभासांक कहने लगा कि स्वामिन्! मै अपने राज्यमे जाकर वहापर क्या कर सकता हूं। यहां रहनेसे ये सब महोत्सव तो देखनेके लिये मिले। मैं बडा भाग्यशाली हूं। उसी समय प्रभासांकने अपने मंत्रीको बुलाकर आज्ञा दी कि तुम जल्दी अपने राज्यमे जाकर अगणित रत्न, वस्त्र, आभूषण वगैरे भेटके लिये ले आवो। आज्ञा पाकर वह चलागया।

भरतजीने भी सबको दरबारमे विदा किया व निरंजनसिद्ध शब्दको उच्चारण करते हुए महलकी ओर गये। वहापर सबसे पहिले पाच पुत्रोको देखकर फिर उनका यथोचित जातकर्म संस्कार किया। फिर बादमे नामकर्मोचित दिनमे नामकरण संस्कार किया।

उस दिन आधीनस्थ सब राजाओंने नामकरण संस्कारके हर्षोपलक्ष्यमें अनेक रत्न, वस्त्र, उपाहारोंको भेंटमे चक्रवर्तीकी सेवामें समर्पण किया। इसी प्रकार प्रभास देवने भी उत्तमोत्तम उपहारोंको भेंटकर अपना हर्ष और भक्तिको प्रकट किया।

भरतजी को परमात्मा प्रिय है। इसलिये उन पुत्रोंके नामकरणमें भी उन्होंने परमात्माका ध्यान रक्खा। उन पुत्रों का क्रमसे हंसराज, निरंजनसिद्धराज, महांशुराज, रत्नराज, संसुखराज, इस प्रकार नाम रखा गया।

छह महिने तक भरतजीने उसी स्थानपर मुक्काम किया। बादमें वहासे सेनाका प्रस्थान हुआ।

हिमवान् पर्वतमें गंगाके समान ही उदय पाकर दक्षिणकी ओर बहती हुई पश्चिम समुद्र में जा मिलने वाली सिंधुनामक महानदी मौजूद है। उसके दक्षिण तटको अनुसरण कर भरतजी की सेना जारही है। जहां इच्छा होती है, मुक्काम करते है। फिर आगे चलते है। बीच बीचमें जहा तहा पुत्र रत्नोंकी प्राप्ति हुई है या हो रही है, उनको योग्य वय में आने के बाद उपनयनादि क्षत्रियोचित संस्कारों को कराते हुए जारहे हैं। कभी पर्वतोंपर चढकर जाना पडता है। कभी मैदानसे जाते है। कभी चढते हैं। कभी उतरते हैं। इस प्रकार बहुत आनंदके साथ जारहे हैं। कभी कभी मार्ग न होनेके कारण कोई कोई पर्वतोंको तोडकर मार्ग बनाते जाते हैं। पर्वतोंको तोडते समय उनमें अनेक रत्न सुवर्ण वगैरे मिलते हैं। " उन सब के लिये सेनापति ही अधिकारी है " इस प्रकार भरतजी की ओरसे आज्ञा हुई है। सेनामें किसी को कोई प्रकारका कष्ट नहीं है। इतना ही नहीं। प्रयाणके समय किसी भी मनुष्यके पेटका पानी भी नहीं हिलरहा है। किसी भी प्राणी के पैरमें कांटे भी नहीं लगते हैं इतने सुखसे प्रयाण हो रहा है।

इस प्रकार अत्यन्त सुखके साथ अनेक मुक्कामोंको तय करते हुए सम्राट् एक ऐसे पर्वतके पास आये जो चांदीके समान शुभ्र था। वह कोई सामान्य पर्वत नहीं है, विजयार्ध पर्वत है। आकाश को स्पर्श करने जा रहा हो जैसे ऊंचा है, पूर्व और पश्चिम समुद्रको व्याप्त कर चांदी के दीवालके समान अत्यन्त सुंदर मालुम हो रहा है।

उस पर्वत के दक्षिण में एक सौ दस नगर है। जिनमें विद्याधरो का आवास है। उन नगरोमें गगनवल्लभपुर व रथनूपुरचक्रवालपुर नामक दो नगर अत्यंत प्रसिद्ध और श्रेष्ठ है। वहांपर क्रमसे नमिराज, विनमिराज नाम दो भाई राज्य पालन कर रहे है।

नमिराज विनमिराज सम्राटके निकट बंधु हैं। भरतजीकी माता यशस्वती देवीके भाई श्रीकच्छ और महाकच्छ राजाके वे पुत्र है। अर्थात् भरतजीके मामाके पुत्र हैं। वे दोनों अत्यंत प्रभावशाली है। सब विद्याधरोंको अपने आधीन बनाकर विद्याधर लोकका राज्यपालन कर रहे है।

विजयार्ध पर्वत के दक्षिणोत्तर भागमे विद्याधरोका निवास है, विजयार्धपर्वतके मस्तकपर विजयार्धदेव नामक राजा राज्य पालन कर रहा है। इसके अलावा किन्नर यक्ष आदि देव भी वहांपर रहते है। इस प्रकार गंगा नदी और विजयार्ध पर्वत के बीच में एक खंड और सिंधु नदी और विजयार्धके बीच में एक खंड ये दोनों खंड म्लेच्छ खंड कहलाते हैं। विजयार्ध के दक्षिण में गंगा और सिंधु के बीचका जो भाग है वह आर्यखंडके नामसे कहा जाता है। इस प्रकार विजयार्धपर्वत के उत्तर भाग मे भी तीन खंड है, जिनको उत्तरसे हिमवान् नामक पर्वत पूर्व और पश्चिम समुद्रतक व्याप्त होकर सीमाका काम कर रहा है। दोनो पर्वत, दो समुद्र और दो महानदियोंके बीचमे छह खंडका विभाग है। इसीको भरत क्षेत्रका षट्खंड कहते है। उसे भरतजी अपने शौर्यसे पालन करते

हैं। विजयार्द्ध पर्वत तक तो भरतजी आये। उनको यहांपर विद्याधर लोकको वश करनेका है। फिर विजयार्ध पर्वतको पारकर उत्तर भागके म्लेच्छ खंडको भी वश करनेका है। विजयार्ध पर्वतमे एक बडे भारी अत्यत मजबूत वज्रद्वार मौजूद है जो हजारों क्या, लाखों वर्षोंसे बद है। उसे अपने दण्डसे फोडकर भरतजी आगे जायेगे।

भरतजीने आगेके कार्यको विचारकर सेनाधिपतिको बुलाया एवं विजयार्धपर्वतके इधर चार योजन प्रमाणमें एक खाई निकाली जावे इस प्रकारकी आज्ञा उसे देदी। और साथमें यह भी कहा कि आज तो तुम विश्राति लो, और कल अपनी महल और सेनाके रक्षणके लिये तुम्हारे भाईयोको नियुक्त करके तुम व्यतरवीर व आवश्यक सेनाओको लेकर जाओ। फिर खाई निकलनेका कार्य करो।

विजयार्धपर्वतका कवाट (द्वार) हजारों वर्षोंसें बंद है। उसे एकदम तोडने से उससे अग्नि निकलकर बारह कोस तक आगे उछलकर आयेगी। इसलिये आगे वह आकर बाधा न दे सकें इस प्रकार होशियारी से खाईका निर्माण करो। लोक में एक सामान्य लोहे से दूसरे लोहेको कूटते है तो अग्नि निकलती है, फिर दण्ड रत्नसे वज्रकपाटको कूटनेपर अग्नि नहीं उठेगी क्या? एक लकडी को दूसरी लकडी के साथ घर्षण करनेपर उससे अग्निकी उत्पत्ति होकर जंगल के जंगल भस्म हो जाता है। पर्वतको दण्ड रत्नसे कूटनेपर अग्नि प्रज्वलित होवें तो इसमे आश्चर्य क्या है? यह सब लौकिक दृष्टात है। गुफामें अग्निका भरा रहना स्वाहजिक है। इसलिये उस अग्निको रोकने के लिये जल्की खाई ही समर्थ है। यदि इस प्रकारकी खाई की व्यवस्था नहीं हुई तो वह अग्नि भयंकररूपसे प्रज्वलित होकर अपनी सेनाकी तरफ दौडती हुई आयगी। सेना भयभीत हो पलायन करेगी। सभी सेनाने मिलकर उस अग्नि को बुझाने के लिये प्रयत्न किया तो भी वह निष्फल हो जायगा। जैसे २ सेना उस अग्निको दबाने के लिये प्रयत्न

करेगी वैसे ही वह और भी प्रज्वलित होकर सेनाको दबाती हुई बढेगी। ऐसी अवस्थामे इन सब कष्टों को सामना करनेसे क्या प्रयोजन? एक जलकी खाई बनाई गई तो सब कष्ट दूर होते है। अग्नि उस खाई से इधर नहीं आसकेगी। हम लोग निराकुलतासे इधर रह सकते है। यह अपनी तरफ आनेवाली अग्निको रोकनेका उपाय है। इसी प्रकार सिंधुनदी के पश्चिमभागमे कदाचित् वह अग्नि व्याप्त होगई तो प्रलयकालकी अग्निके समान वह व्याप्त होकर वहाकी भूमिको जलायगी, प्रजावोंको महाकष्ट होगा। इसलिये वहापर भी एक खाईका निर्माण करो। उत्तर मे पर्वत है। वह अग्निको रोकसकेगा। दक्षिणमे सिंधु नदी के दोनो तटोंतक खाई होने से उसमे पानी भर जावेगा। वह पानी उत्तर भागके पर्वततक पहुंचे तो सबका संरक्षण होगा। इस प्रकारकी व्यवस्था बहुत विचार पूर्वक करो। इस प्रकार सेनापतिको आज्ञा देते हुए उसी समय वरतनु, प्रभासाक आदि व्यंतर राजावोंको भी बुलाकर उनको आज्ञा दी कि इस कार्य मे आप लोग भी योग देकर सेनानायक जैसा कहे उस की इच्छानुसार सहायता देवे। उन लोगोंने सम्राट्की आज्ञाको शिरधार्य किया।

तदनंतर सेनाका मुक्काम उस विजयार्ध पर्वतके पास करने के लिए आज्ञाभेरी बजाई गई। क्षणभरमे सब व्यवस्था होगई। सब लोगोंको मकान, महल, मंदिर वगैरह की व्यवस्था देखते २ होगई। विशेष क्या? एक विशाल राज्यकी ही वहांपर स्थापना होगई।

भरतजीने सब राजा प्रजावोंको योग्य उपचारपूर्ण वचनोंसे संतुष्ट कर अपने २ स्थानपर भेज दिया। और स्वयं अपने लिए निर्मित सुंदर महल मे प्रवेश कर गये।

भरतजीका कितना अद्भुत सामर्थ्य है! जहां जाते है वहां अलौकिक वैभवको प्राप्त करते है। कैसे भी भयंकर से भयंकर संकट क्यों न हो उसे बहुत दूरदर्शिता पूर्वक विचार कर टाल देते है। अपनी

प्रजावोंको कोई प्रकारका कष्ट न हो इसकी उन्हे सतत चिंता रहती है। उसके लिए वे बहुत शीघ्र व्यवस्था करते है । उन्हें सब प्रकार की अनुकूलता भी मिलती है। इन सब बातो का कारण क्या है? इसका एक मात्र उत्तर यह है कि यह पूर्व पुण्यका फल है। उनकी सतत होनेवाली पुण्यमय भावनाका फल है। वे रात्रिंदिन इस प्रकार की भावना करते रहते है कि—

हे सिद्धात्मन्! आप लोक में सबको सहसा प्रत्यक्ष नहीं होते हैं। जो लोग ध्यानरूपी करवतसे देह और आत्माके अन्योन्य मिलापको भिन्न करना जानते हैं उनको आपका रूप प्रत्यक्ष में देखनेमें आता है। आप प्रकाशमान होकर दिखते हैं। इसलिए हे सिद्धात्मन्! हमें आप नित्य दर्शन दीजियेगा।

हे परमात्मन्! आप अक्षय सामर्थ्य को धारण करनेवाले हैं। अनुपम लावण्यकी आप मूर्ति हैं। मोक्ष में आप अग्रगण्य हैं, श्रेष्ठ हैं। इतना ही नही आपके द्वारा ही लोककी रक्षा होती है। इसलिए परमात्मन्! आप साक्षात् मेरे हृदय में बने रहें।

इस प्रकारकी भावना भरतजी रात दिन अपने हृदयमें करते है। इसीका यह फल है कि उनको प्रत्येक काममें जय और सिद्धी की प्राप्ति होती है।

इति विजयार्द्धदर्शनसंधि।
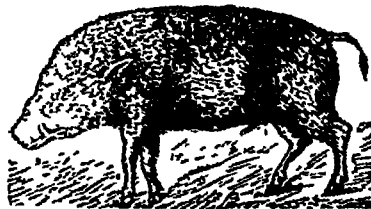
अथ कपाटविस्फोटनसंधि ।

आठ दिनके वाद भरतजीकी सेवामें जयकुमार उपस्थित होकर निवेदन करने लगा कि स्वामिन्! आपकी आज्ञानुसार जलभरित खाई का निर्माण होगया है। आपको उस बातकी सूचना देनेके लिये मै सेवामे उपस्थित हुआ हूं।

भरतजी उसके वचनको सुनकर प्रसन्न हुए, और इस कार्यको करनेके लिए जिन्होने योग दिया उन सब व्यंतरेंद्रोंका और जयकुमारका बहुत से वस्त्र आभूषणोंसे सन्मान किया। दूसरे दिन सम्राट्ने मंत्री और सेनापतिको अपनी महलमे बुलाया, और वज्रकपाटको तोडनेके सम्बंधमें वार्तालाप करते हुए कहा कि मन्त्री! सेनापति! सुनो विजयार्द्ध पर्वतमें जो वज्रकपाट है उसे मै कल ही खण्ड कर देता हूं। उस वज्र कपाटको तोडना कोई बडी बात नही। और न इसकी मुझे सचमुचमे आवश्यकता ही थी। फिर भी पूर्वोपार्जित कर्मको कौन उल्लंघन कर सकता है। उसके फलको तो भोगना ही पडेगा। मेरा जन्म अयोध्यामे हो, और सब राज्योपर अधिपत्यको जमाकर मै इस पर्वतको पारकर उधर के राज्योंको भी वश करूं यह मेरी विधिका आदेश है। उसका पालन करना तो मेरा कर्तव्य है। किसी कार्यमें चिंता करने की जरूरत नहीं। परमात्माकी भावना करते हुए हम प्रत्येक कार्य करते है। ऐसी अवस्थामें निराश होनेकी जरूरत नही है। इस प्रकार भरतजीने कहा। स्वामिन्! परमात्माके स्मरण से आप कर्मपर्वतको फोड सकते है। फिर इस मामूली पर्वतको तो तोडनेमे आपको क्या कठिनता है। सब कुछ साध्य हो जायगा इसमें हमें किसी प्रकार भी संदेह नहीं है। स्वामिन्! जो वज्र कपाट हाथी सिंहों के समूहके समान भयंकर, आकाश के समान उन्नत है,

उसको फोडनेमें सरलता आपको ही होसकती है। दूसरे लोग उसके पास भी जा नहीं सकते। इत्यादि प्रकारसे कहते हुए सेनापति व मंत्रीने भरतजीकी प्रसंशा की।

उन दोनोंका सत्कारकर भरतजीने उनको वहासे अपने २ स्थानमें जानेके लिए कहा। फिर दसवें दिन प्रातःकाल भरतजीने जिनेंद्र भगवंत की पूजा की, फिर विजयार्धकी तरफ जानेके लिये निकले।

योगोचित वस्त्र व आभूषणोंसे अलंकृत होकर बाहर आये, वहापर पवनंजय नामक घोडेका पहिलेसे शृंगार कर रखा था। वह अश्वरत्न है। उसपर भरतजी आरूढ हुए।

उस समय भरतजी उस सुंदर अश्वपर चढकर उच्चैश्रव घोडेपर चढे हुए इंद्रके समान मालुम हो रहे थे। कविगण वर्णन करते हैं कि सूर्य सात घोडोंपर आरूढ होता है। परंतु तेजमें भरतजी भी सूर्यसे कम नहीं है। यह सूर्य उन सात घोडोंमेसे एक ही घोडेको लेकर उसपर आरूढ हुआ है। इस प्रकार देखनेवालोंके मनमें कल्पना होती है।

भरतजीने अपने यज्ञोपवीतको सम्हालते हुए श्री सर्वज्ञ भगवंतका स्मरण किया। तदनतर दाहिने हाथको दावकर घोडेको चलानेके लिये इशारा किया, घोडा आगे बढा।

भरतजीने सेनाकी ओर उस घोडेको चलाते हुए लय, धारा, गति, जव, भ्रामक, नागके पाच प्रकारकी चालोंसे अश्वविद्याका प्रदर्शन किया। अनेक तरहसे घोडा अपनी चालको बतला रहा है। एक २ दफे तो वह कितने ही योजनोंतक छलाग मारकर बतला रहा है। कितने ही जोरसे वह छलाग मारे परंतु भरतजी बराबर अचलरूप से बैठे हुए हैं।

घोडा अब सेनास्थानको छोडकर पर्वतकी ओर चला गया, अब सेनापति व सेना सब उसी स्थानमें रह गये। भरतजीके साथमें

जो नियत गणबद्ध देव मौजूद है। मागधामर आदि व्यंतर भी रुक न सके, वे भी साथमें ही आगये।

कुछ लोग ऐसा वर्णन करते है कि भरतजीने जयकुमार जो सेनापतिरत्न है, उसे भेजकर उसके हातसे वज्रकपाटका विस्फोटन कराया। परंतु यह ठीक नही है। चक्रवर्तियोको अश्वरत्न, गजरत्न आदि स्त्री रत्नके समान है, उन रत्नोंका उपभोग वे स्वतःही कर सकते है। वे रत्न चक्रवर्तीको छोडकर अन्य सामान्य लोगोंको अपनी पीठ दे नहीं सकते, क्यों कि राजाके खडाऊ सिंहासन आदि उसके सेवकके भोगके लिये योग्य नहीं है।

भरतजीने कुछ दूर चलनेके बाद दूरसे ही उस वज्रकपाटको देख-लिया। वह पर्वत लंबाईमे पचीस कोस प्रमाण है। उसमे आठ कोस ऊंचाई व बारह कोस चौडाईके प्रमाणमे व्यवस्थित वह वज्रकपाट है। अंदरसे क्रोधाग्निको धारण कर बाहरसे शात दिखनेवाले क्षुद्रोके समान वह पर्वत मालुम होरहा था।

भरतजीनें मागध, वरतनु, प्रभासांकको बुलाकर कहा कि देखो ! यही तमिस्र नामक गुफा है। यही वज्रद्वार है। यह कैसे मालुम होता है देखो तो सही। जैसे कोई क्रोधी दंत कीलन कर बैठा हो इस प्रकार यह भी दिख रहा है। अब इसके दांतोंको तोडकर मुह खुलवा देता हूं। देखो तो सही, इस प्रकार भरतजीने हंसते हुए कहा। लोकमे ओसका समूह बच्चोको पर्वतके समान मालुम होता है, उससे वे डरते है। परंतु मेरे लिये यह वज्रद्वार भी कोई बडी चीज नहीं, अभी देखते २ तोड डालूंगा।

स्वामिन् ! उन व्यंतरोंने कहा कि लोकमें अमावास्याके अंधकारको दूर करनेके लिये सूर्य समर्थ है, मामूली दीपकोमे वह सामर्थ्य कहा ? इसी प्रकार यह कार्य लोकमे अन्य सर्व वीरोके लिये अतिसाहसका है, परंतु आपके लिये तो अत्यंत अल्प है।

भरतजीने उन व्यंतरेंद्रोंको इशारा किया कि अब आप लोग उस जल खाई की उस ओर चले जावें। और स्वयं दण्डरत्नको वीरताके साथ सम्हालने लगे।

उसके बाद सम्राट्ने पट्टस्थअक्षरोंको देखकर भगवान् आदिनाथके चरण कमलोंका स्मरण किया। तदनंतर अपने निर्मल चित्तमें परमात्माका ध्यान किया। अपने बाये हाथसे घोडेके लगामको ये लिये हुए हैं, दाहिने हाथसे दण्डको धारण किया है, अब उस वज्रकपाटको ताडनेके लिये सन्नद्ध हुए।

दण्डायुधको हाथमें लेकर उस वज्रकपाटपर जोरसे प्रहार किया। पतली ईंठके समान वह दो टुकडोंमें विभक्त हुआ। जिससमय कांसेके पर्वत टूटनेके समान शब्द हुआ। वह घोडा बिजलीके समान वहांसे दौडा मेघ और वज्रमें विशेष अंतर नहीं है। यहां तो वज्रदण्डसे वज्रकपाटका संघट्टन हुआ है। मेघ के टक्करमें जिसप्रकार भयंकर आवाज होती है इसीप्रकार दोनों वज्रोंके संघट्टनमें शब्द होने लगा। विशेष क्या ? भरतजीके वज्रप्रहार व उस वज्रकपाटका विभाग होते समय विजयार्द्ध पर्वत ही हिलने लगा। भूकंप होनेलगा। समुद्र एकदम उमड कर आनेलगा। भरतजीने एक निमिष मात्रमें वज्रद्वारको टुकडाकर रखदिया। वह द्वार कोई सामान्य नहीं था, फिर भी भरतजीने उसे लीलामात्रमे तोड ही दिया। भरतजीकी सेनाको पर्वत पार करनेके लिये वह द्वार प्रतिबन्धरूप था, इसलिये भरतजीने उसे तोड दिया। जब बडेसे बडे वज्रकपाटको इस प्रकार एक ही प्रहारसे तोडते हैं तो फिर उनके सामने शत्रुगण किस प्रकार टिक सकते हैं ? उनको दो चार मार पडने तक वे उसे सहन कर सकेंगे ? कभी नहीं। भरतजीकी वीरता असाधारण है, अजेय है, उसकी बराबरी कोई भी नहीं कर सकते।

उस गुफासे प्रलय कालकी ही अग्नि निकलकर आई। किसी पानी के द्वारको खोलनेपर जिस प्रकार पानी एकदम निकल आता हो उसी प्रकार उस गुफासे अग्नि निकलकर बाहर आई। वज्र कवाट दर्र आवाज के साथ खुला, उस समय अग्नि बुस्स, बुर्र आवाज करती हुई प्रज्वलित हुई, घोडा सुर्र आवाज करते हुए पलायन कर गया।

अग्नि सर्वत्र व्याप्त होगई, वर्षोंसे उस विजयार्ध गुफामे आवृत अग्निने बाहर निकलकर प्रचण्ड रूपको धारण किया। सर्वत्र हाहाकार मचगया, पर्वत अग्निमय बनगया है, बडे २ वृक्ष भस्म होगये। विद्याधर लोग इस प्रलयकालकी अग्निको देखकर घबराये। विजयार्धदेव भरतजी की वीरता पर मुग्ध हुआ। दण्डायुधका प्रहार उस कपाटपर जिससमय किया उस समय एकदम भूकंप ही होगया था। सब लोग मेघाघातसे जिस प्रकार घबराते हैं उसी प्रकार घबराने लगगये। मागधेंद्रादि वीर व्यंतर भी घबराये। सेना समूहमे सर्वत्र कोलाहल मचगया है। परंतु भरतजीका सामर्थ्य व धैर्य अतुल है। वे खाईके पास खडे होकर बहुत आनंदके साथ उस शोभा को देखरहे हैं। उनके आसपास ही व्यंतर वीर खडे हैं।

इतनेमे वहांपर एक उत्सव और हुआ। विजयार्ध देव भरतजीकी वीरतासे अत्यंत प्रसन्न हुआ। वह अपने परिवार देवताओंके साथ आकाश प्रदेशमे खडे होकर भरतजीके प्रति जयजयकार शब्द कर रहा है। एवं भरतजीके ऊपर उसने पुष्पवृष्टि की। इतना ही नहीं, भरतजीको उस अग्निकी गर्मी लगी होगी, इस विचारसे गुलाबजल, कर्पूर, चंदन आदि शीतल पदार्थोंकी भी वृष्टि की। किन्नर, किंपुरुष जातिके देव भरतकी वीरताको गाने लगे। पासमे ही गंधर्वगणिकायें आनंदसे नृत्य करने लगी। तदनंतर वह विजयार्धदेव अनेक उत्तमोत्तम वस्त्र, आभरण, रत्न आदि उपहारद्रव्योंको साथमें लेकर परिवार सहित भरतजीके दर्शनके लिये आया। अनेक उत्तम उपहारोंको भरतजीके

चरणमें समर्पण कर भरतजीको बहुत भक्तिसे साष्टांग नमस्कार किया व निवेदन किया कि स्वामिन् ! हम लोगोंकी दृष्टि आज सफल होगई । साथमें विजयार्ध देवने अपने सब परिवारसे भरतजी के चरणको नमस्कार कराया ।

भरतजीने मागधामरकी ओर देखा । मागधने सम्राट्के अभिप्राय को समझकर निवेदन किया कि राजन् ! यह विजयार्ध देव है, यह इस विजयार्धपर्वतका अधिपति है। वह बहुत सज्जन है । आपकी सेवाके लिये सर्वथा योग्य है, उसके प्रति आपका अनुग्रह होना चाहिये। उस समय विजयार्धदेव कहने लगा कि मागधामर ! लोकमें मोक्षमार्गी व तद्भवमोक्षगामी स्वामीको प्रसन्न करनेका भाग्य सबको नहीं मिला करता है । सचमुचमें तुम हम कृतार्थ हुए कि ऐसे स्वामीको प्रसन्न किया ।

मागधामरने भरतजीसे निवेदन किया कि स्वामिन् ! अब इस विजयार्धदेवको अपने राज्यमें जानेकेलिये आज्ञा दीजाय और अपन जिस समय उत्तर खण्डकी ओर प्रयाण करेंगे उस समय यह आसकता है ।

भरतजीने भी उसे पास बुलाकर उसे अनेक प्रकारके भेंट दिये विजयार्धदेवने भी स्वामीकी आज्ञा पाकर उसे बहुत भक्तिसे नमस्कार कर अपने परिवार सहित प्रस्थान किया ।

विजयार्ध देवके जानेके वाद उस तमिस्र गुफाके अधिपति कृतमाल नामक व्यंतरदेव आया । उसने भी अनेक रत्ननिर्मित उपहारोंके समर्पण कर भरतजीके चरणोंको साष्टांग नमस्कार किया । मागधामरने कृतमालदेवका परिचय कराया कि स्वामिन् ! यह अपने बंधु कृतमाल देव है । जिस तमिस्रगुफाके आपने वज्रकपाटको अभी तोडा है उसी गुफाका यह अधिपति है । वह विनीतभावनासे आपकी सेवाके लिये उपस्थित हुआ है । चाहे उसे फिलहाल अपने स्थानको जानेके लिए आज्ञा दीजाय, आगे सेनाप्रस्थानके समय आवे तो काम चलसकता

है। भरतजीने भी योग्य सत्कारके साथ उस कृतमालको भेज दिया।

भरतजीने अब सेनास्थानमे जानेके लिये अपने घोडेको फिराया। सेनाकी ओर आते समय भरतजी ऐसे मालुम होरहे थे कि जैसे कोई देवेंद्र ही स्वर्गसे उतरकर आ रहा हो। एक निमिषमात्रमें वह अश्वरत्न भरतजीको इच्छित स्थानपर लाया। सेनास्थानमें प्रवेश करते ही सेनाके आनंदका पारावार नहीं रहा। राजा सुखी होनेपर राज्य भी सुखी है यह कहावत उस समय चरितार्थ हो रही थी। भरतजी भी प्रजावोंके आनंदको देखते हुए बढ रहे हैं। सामने से अर्ककीर्ति, आदिराज व वृषभराज अनेक भेंट अपने हाथमें लेकर पितृदर्शनके लिए आ रहे हैं। बहुत भक्ति से भरतजी को उन्होंने नमस्कार किया। भरतजीने तीनों कुमारोको एक २ घोडेपर चढकर अपने साथ होलेनेके लिए कहा। तीनों कुमार भी अश्वारोही होकर भरतजीके साथ जाने लगे।

मंत्री, सेनापति, राजगण, राजकुमार वगैरे अगणित संख्या मे भरतजीको मार्ग में नमस्कार कर रहे है। स्तुतिपाठक अनेक प्रकार से भरतजी की स्तुति कर रहे हैं। कविगण अनेक रचनासे उनकी स्तुति कर रहे है। इन सब आनंदोंको देखते हुए भरतजी अपनी महलकी ओर आरहे है। महलके बाहर के दरवाजेके पास अश्वरत्नको खडाकर दिया। वहीपर स्वयं उतर गये, अपने साथ के व्यंतर आदिकोंको अपने २ स्थान में जानेके लिए कह कर, एवं अश्वरत्न को उस की थकावटको दूर करनेके लिए योग्य सत्कार उपचार करनेके लिए आज्ञा देते हुए स्वयं महलमे प्रविष्ट होगये।

महल में राणियोंके आनंदका क्या वर्णन करे? वहांपर संतोष सागर ही उमडकर आरहा है। आज पतिराज एक बडे भारी लोक विख्यात कार्य में सफलता पाकर आ रहे हैं। ऐसी अवस्थामे उनको आनंद होना साहजिक है। वे सब मिलकर भरतजीके स्वागतके लिए आ रही हैं। उनके हाथमें मंगल आरती है। भरतजीके चरणोंमे

भक्तिसे नमस्कार कर भरतजी की उन रानियोंने आरती उतारी। इतने में हंसके बच्चेके समान सुंदर हंसराज आदि पाच पुत्रोंने आकर भरजीतके चरण में नमस्कार किया। उस समय भरतजीको कितना आनद हुआ होगा! इस प्रकार सर्वत्र आनंद ही आनंद हो रहा है। राजमहल उस समय आनंदध्वनि से गूंज रहा है। भरतजीने स्नान देवार्चन भोजन आदि नित्यक्रियावोंसे निवृत्त होकर उस दिन महल मे अपने कपाटविस्फोटन की लीलावृत्तांतको अपनी प्रियस्त्रियोंको कहते हुए अपना समय बहुत आनंदके साथ व्यतीत किया।

भरतजीका पुण्य अतुल है। जहा जाते है वहीपर उन्हें सफलता मिलती है। विजयार्ध पर्वत पर स्थित वज्रकपाट जो कि सर्व साधारण के द्वारा उद्घाटनीय नहीं है, उसे भी भरतजीने क्षणमात्र मे फोडकर रख दिया, यह किस बातका सामर्थ्य है। उनकी आत्मभावना का फल है। वे प्रतिनित्य भावना करते है कि:—

"हे सिद्धात्मन्! आप ध्यानरूपी दण्डरत्न से कठोर कर्म रूपी वज्र कपाटको तोडनेवाले धीरोदात्त हैं। इसलिए हे स्वामिन्! आप सम्पूर्ण प्राणियोंके दुःखको दूर करनेवाले हैं। इसलिए हमें सन्मति दीजियेगा।

हे परमात्मन्! मिथ्यात्वरूपी कपाटको फोडकर उत्तुंग धैर्यके साथ मोक्षकी ओर जानेवाले आप चित्तसंधानि हैं। आप मेरी संपत्ति हैं। इसलिए मेरे हृदय में बने रहे।"

इसी प्रकारकी शुभभावनासे ही भरतजी को सर्व अतिप्रबल महा-कठिन कार्योंमें भी सफलता मिलती है।

इति कपाटविस्फोटन संधि।

अथ कुमारविनोद संधि ।

दूसरे दिन सम्राट्ने जयकुमार व उसके भाई को महलमें बुलाकर उनको कुछ काम सोंप दिया । जयकुमार! अग्निका वेग कम होनेके लिये करीब २ छह महीनेकी अवधि लगेगी । इसलिये तब तक सेना को यहींपर मुक्काम करना पडेगा । आगे अपन लोग जा नही सकते । इसलिये तब तक आप लोग इधरके दो म्लेच्छ खंडोंके अधिपतियों को वशमें कर आवे । पूर्वखंडके लिये तुम जावो, और पश्चिम खंडके लिये तुम्हारे भाई विजयाक को भेजो । इधर सेना की देखरेख तुम्हारे भाई जयताक करता रहेगा । आप लोगोको जितनी सेना की जरूरत हो ले जावें । गंगानदीको सोपान मार्गसे पार कर जाना और सिंधु-नदीके सोपानमे अभी अग्नि व्याप्त होगई है । इसलिये सिंधुनदी को चर्मरत्नकी सहायतासे पार कर आगे जाना चाहिये । इस प्रकार उन को सब उपायों को बतलाकर दोनो को बिदा किया व सम्राट् बहुत आनंदके साथ समय व्यतीत करने लगे ।

इधर विजयार्ध पर्वतमें गगनवल्लभपुर के अधिपति नमिराज चक्र-वर्तिकी वीरताको सुनकर अत्यंत चिंताक्रांत हुआ । रथनूपुरचक्रवाल-पुरके अधिपति विनमिराजको चक्रवर्तिकी वीरता व अग्निके वेगको देखकर बडी प्रसन्नता हुई । वह अत्यंत प्रसन्नताके साथ गगनवल्लभ-पुरमें अपने भाई नमीके पास चला गया । नमिराज चिंताक्रांत होकर मौनसे बैठा हुआ है ।

कोई गूढ विचार करनेके लिये उसने अपने मंत्रीको बुलाया है। उसीकी प्रतीक्षामें वह बैठा है। वहींपर विनमिराजने जाकर बहुत प्रसन्नता के साथ भाईको नमस्कार किया व कहने लगा कि भाई! जिस वज्रकपाटके बारेसे अपन लोगोंने बडी ख्याति सुनी है, उसे एक क्षणमात्रमें भावाजी भरतजीने टुकडा कर दिया। आकाशमें प्रलयकाल की अग्नि व्याप्त होगई। जिस वेगसे भावाजीने दण्डरत्नका कपाटपर प्रहार किया उससे एकदम पर्वत कंपायमान हुआ। जिससे हमारे साथ के राजा जलेके बच्चोंके समान सिंहासनसे नीचे गिर गये। आकाशमें व्याप्त अग्नि मेघपंक्तिको जला रही है। देव भी आकाशमें भ्रमण करनेके लिये असमर्थ होगये हैं। विजयार्धदेवने भरतजीकी भक्तिसे पूजा की है। भरतजीकी बराबरी कौन करसकते है।

विनमिके वचनको सुनकर नमिराजको हंसी आई। तिरस्कार युक्त हंसी हंसकर विनमिको बैठनेके लिये कहा। परन्तु उसके चेहरेसे संतोषका चिन्ह टपक नहीं रहा था। इतनेमें नमिराजका मंत्री भी वहांपर आगया।

विनमिराजको संदेह उत्पन्न हुआ। कहने लगा कि भाई! सतोषके समय इस प्रकार संक्लेश क्यों? भावाजी भरतजीकी जो विजय हुई है वह हमारी ही तो है। उनकी जो संपत्ति है वह अपनी ही समझनी चाहिये। ऐसे समयमें चिन्ता करनेकी क्या जरूरत है?

विनमिके इस प्रकारके वचनको सुनकर नमिराज कहने लगा कि विनमि! अभी तुम्हें राज्यांगका ज्ञान नहीं है। इसलिये इस विषयमें अब अधिक मत बोलो। भावाजीके पौरुषपर तुम प्रसन्न हुए। परंतु अपने लिये वह अब भावाजी नहीं है। वह षट्खंडाधिपति होने जा रहा है। षट्खंडके राजाओंको अपने आधीन बनानेके लिये उसकी सेना [illegible] हो रही है। अब अपन भी उसके सेवक कहलायेंगे।

भाई ! अपन लोग अभी तक उसके साथ बैठकर सरसविनोद कर-सकते थे। तू मैं की बात होसकती थी। परंतु अब उसके साथ बोल-नेके लिये, उसका दर्शन करनेके लिये भेट लेकर जाना पडेगा। 'आप' शब्दका प्रयोग कर बहुत विनयके बोलना पडेगा। संपत्ति व वैभवमें समानता हो तो बंधुत्वका भी ख्याल रहता है। जब उसकी संपत्ति बढ गई ऐसी अवस्थामें वह अपने साथ बंधुत्वका स्मरण नहीं रख सकता है। सेवकोंको बुलानेके समान अपनेको भी अरे तुरे शब्दका प्रयोग कर वह संबोधन करेगा। बाल्यकालसे लेकर अपन उस के साथ खेलचुके हैं। उसका स्वभाव, गुण, चाल वगैरे सब अपन को मालुम ही है। उसके समानकी वृत्ति लोकमें किसी भी पुरुषमें पाई नहीं जा सकती। याद करो ! अपन गेंद खेलते थे, उसमे भी उसी की जीत होती थी। पढनेमें भी वही आगे रहता था। जो काम करनेकी ठानता था उसे पूरा किये विना नहीं छोडता था। देखो तो सही ! आज भी वह षट्खंड विजयके लिये निकला है, उसे हस्तगत किये विना वह छोड नहीं सकता है। मुझे उसकी आदतोंका अच्छी तरह स्मरण है कि कभी खेलमें वह जीतता था तो जीतनेके बाद चुप-चापके वहांसे निकल जाता था। परंतु हम लोग जीतते थे तो हमे वहासे जाने नही देता था, फिर खेल खिलाकर अच्छी तरह हराकर भेजता था। भरतकी जीत होती है तो साथके लडके सब आनंदके साथ चिल्लाते थे। हमारी जीतमें वे लडके चुपचापके खडे रहते थे। भाई ! विचार करो, भुजबलि वृषभसेनादिके साथ खेलकर अपन गज [हाथी] के समान लौटते थे। परंतु इसके साथ खेलनेके बाद अज [बकरी] के समान आना पडता था। ऐसा होनेपर भी अभीतक और ही बात थी। परंतु अब संपत्ति, वैभव, पराक्रम, अधिकार वगैरे सभी बातोमे उसकी वृद्धि होगई है। इसलिये अब वह किसीकी भी परवाह नहीं करसकता है, इसे अच्छीतरह विचार करो।

विनमिराज सभी बातोंको बहुत ध्यानसे सुन रहा था। कहने लगा कि भाई! ठीक है। अब क्या करें? लोकमे सब कुछ पुण्यके उदयसे होते हैं। आज भरतजीको भी यह सब पुण्यके तेजसे प्राप्त हुए हैं, उसे कौन इन्कार करसकते हैं। कोई हर्जकी बात नहीं। भरत कौन है? वह हमारे लिये भानजी ही तो है। उसके लिये जो वैभव है वह हमारे लिये है ऐसा समझकर अपन चले। वह अपने पिताकी सहोदरीके पुत्र हैं। ऐसी अवस्थामें उसके साथ ईर्ष्या करनेसे क्या प्रयोजन?

नमिराजने कहा कि भाई! वैसी बात नहीं है। मार्ग छोडकर उसकी सेवावृत्तिको ग्रहण करनेके लिये क्या अपन क्षत्रियपुत्र नहीं हैं? अब अपन उसके पास जायेंगे तो पहिलेके समान उठकर खडा नहीं होगा। हाथ नहीं जोडेगा, क्या यह अपना तिरस्कार नहीं है? अपन दोनों राजा हैं। परंतु वह अपनेको राजाके नामसे नहीं कहेगा। बडे अभिमानके साथ तुम, तू करके बुलायगा। व्यंतरगण, देवगण आदि अपनेको भरतके सेवकोंकी दृष्टिसे देखेंगे। जिन्होने अपनी कन्याओंको उन्हे दी है वे यदि हाथ जोडें तो भी उनको वह हाथ नहीं जोडेगा। बाकीके लोगोंकी बात ही क्या है। केवल दिखावटके लिये आप कहकर पुकारेगा। परंतु उन कन्याओंके सहोदरोंके साथ तो वह भी व्यवहार नहीं होगा। फिर भी मूर्ख लोग इस भरतको कन्या देनेके लिये कबूल होंगे व उसमें आनंद मानेंगे। साथमें इस वचनको कहते हुए नमिराज कुछ चिंताक्रांत दिखते थे। उन्होंने मंत्रीसे कहा कि मंत्री! तुमने एकदफे यह कहा था कि बहिन् सुभद्रादेवीका पाणिग्रहण भरतके साथ कराया जाय तो ठीक होगा, उस बातको अब भूल जावो। मेरी इच्छा अब बिलकुल नहीं है। इसकेलिये अब क्या उपाय करना चाहिये। बोलो! यदि उसे मालुम होजाय कि सुभद्रादेवी सुंदरी है, वह जरूर उसे मांगेगा। परंतु अब देना उचित नहीं है।

भाई ! मैं आकर उस का दर्शन नहीं करना चाहता, आपलोग जावें और उसे कहें कि नमिराज किसी एक विद्याकी सिद्धि कर रहे है, इसलिये वे नहीं आसके। साथ में दक्षिणभाग के विद्याधर राजावों की सुंदरी कन्यावों को लेजाकर उन के साथ विवाह करा देवें। बहन सुभद्रा देवी को उसे समर्पण करने का विचार अब मेरा नहीं है। फिर भी हमारे खजाने से जो कुछ भी उत्तम वस्तु आप लोग समझें उसे लेजाकर समर्पण करें। जब उत्तर भाग की तरफ वह आयगा हम उस के विषय में विचार करेंगे इत्यादि प्रकार से समझाकर मंत्री व विनमि को नमिराजने भेज दिया।

इधर चक्रवर्तिकी सेनामें एक विनोदपूर्ण घटना हुई। चक्रवर्तिकुमार वृषभराज अपने कुछ साथियों को लेकर अश्वारोहि होकर बाहर निकला। जाते समय उसने किसी को भी समाचार नहीं दिया। उसे न मालुम क्यों आज घोडेपर सवार होकर कुछ विनोद करने का विचार उत्पन्न हुआ। जाते समय मार्ग में अनेक राजा महाराजा उसे मिले। सम्राट्पुत्र को देखकर उन लोगोंने हाथ जोडा। सब से पहिले चीन व महाचीन के राजा मिले। उन्होंने बहुत विनय के साथ वृषभराज को नमस्कार किया। और साथ में आने लगे। वृषभराजने उन को नगर में जाने के लिए इशारा किया। आगे बढने पर दक्षिण व नागर मिले। उन लोगों ने नमस्कार कर प्रार्थना की कि कुमार ! आज तुम अपने भाईयो को छोड कर इस प्रकार अकेले क्यों जाते हो ? हमारे साथ वापिस चलो ! नहीं तो हम जाकर स्वामी से कहते हैं। तब वृषभराज को बहुत संकोच हुआ। तथापि बडी दीनता से कहने लगे कि राजन् ! माफ करो, मुझे आज बाहर टहलने के लिए जाने की इच्छा हुई है। इसलिए मैं जावूंगा ही। तुम लोग पिताजी को जाकर यह समाचार नहीं देना। यदि तुम्हे कुछ चाहिए तो मुझसे लो। इस

प्रकार कह कर हाथ के सुवर्णकंकण को हाथ लगाने लगा। इतने में दक्षिण व नागर समझ गए कि इसे आज बाहर टहलने की बडी इच्छा हुई है। उन्होंने प्रकटमें कहा कि अच्छा तुम जाओ, हम नहीं कहते हैं। तुम्हारे कंकण की हमें जरूरत नहीं। उसे हाथ मत लगाओ। यह कह कर वे दोनों आगे बढे, कुमार भी आगे गया। दक्षिण व नागर ने विचार किया कि अपन जा कर चक्रवर्ति को समाचार देंगे एवं कुमार की रक्षा के लिए कुछ सेना भेज देंगे।

इधर आदिराज को महल में मालुम हुआ कि वृषभराज आज बाहर अकेला ही टहलने गया है। उसी समय सेवक को घोडा लाने के लिए आज्ञा दी। और स्वतः अर्ककीर्ति को निम्न लिखित प्रकार पत्र लिखा।

श्रीमन्महाराजाधिराज आदिचक्रवर्ति के आदिपुत्र आदरणीय मूर्ति अर्ककीर्ति के चरणों में। पादसेवक आदिराजका विनयपूर्वकसाष्टांगनमस्कारपूर्वकविनंति विशेषः—स्वामिन्!

आज भाई वृषभराज अपने कुछ सेवकों के साथ अकेला ही बाहर टहलने के लिये गया है। इसलिये मैं जाकर उसको ले आवूंगा आप कोई चिंता न करें, आप महलमें स्वस्थ रहें।

आपका सेवक

आदिराज

उपर्युक्त पत्रको अर्ककीर्ति के पास भेजकर आदिराज अश्वारोहि होकर चला गया। अर्ककीर्ति से भी पत्र बांचकर वहां रहा नहीं गया। वह भी उसी समय अश्वारोहि होकर वहांसे चलागया। इधर दक्षिण

व नागरने आकर सर्व समाचार सम्राट् से कहा । तब सम्राट्ने भी पुत्रकी रक्षाके लिये अनेक सेना व विश्वस्त राजावोंको भेजदिया । वृषभराज बहुत उत्साह के साथ सेनास्थानको छोडकर आगे बढा । वहां जाकर एक विस्तृत प्रदेशमें अश्वारोहणकलाके अनुभव करनेके लिये प्रारंभ करने ही वाला था, इतनेमें आदिराज को आते हुए देखा । आदिराजको देखकर वृषभराज घोडेसे नीचे उतरकर भाई के पास आया और हाथ जोडकर कहने लगा कि स्वामिन् ! आपका यहांपर आगमन क्यों हुआ ? मुझे तो घोडेपर सवारी करनेकी इच्छा हुई, इसलिये मै आया । इतनेमें अर्ककीर्तिकुमार भी आया। अर्ककीर्तिको देखकर दोनोंनें नमस्कार किया। अर्ककीर्तिने दोनों भाईयोको घोडेपर चढनेके लिये आदेश दिया, साथमें अश्वारोहणकल.को देखनेकी इच्छा प्रक.ट की । इतनेमें सम्राट् के द्वारा प्रेषित सेना, राजा वगैरे आ उपस्थित हुए, देखते देखते वहापर हजारों लोग इकट्ठे हुए।

अर्ककीर्ति ने भाई वृषभराज से कहा कि भाई ! आज हम लोग अश्वारोहलीला को देखना चाहते हैं, कुछ कमाल कर बताओ । तब वृषभराज ने अपनी लघुता को व्यक्त करते हुए कहा कि स्वामिन् ! मैं आपके सामने क्या कलाप्रदर्शन कर सकता हूं । मै डरता हूं । अर्ककीर्ति ने " डरने की कोई जरूरत नहीं है, हमें देखने की इच्छा हुई है । " इत्यादि शब्दों से उस के संकोच को हटाया । बाद में वृषभराज ने घोडे पर सवार हो कर उस कला में उस ने जो नैपुण्य प्राप्त किया था उस का प्रदर्शन किया । उस समय उस का घोडा प्रतिदिशा में वायुवेग से जाने लगा था । घोडे की अनेक प्रकार की चाल, लगाम का परिवर्तन, अनेक प्रकार का गमन इत्यादि बहुत से प्रकार से अपनी विद्या का दिग्दर्शन कराया । आकाश में निंबू को

रख कर तीव्रवेग से जाते हुए अश्व से ही उस निंबू पर ठीक बाण चढाना आदि अनेक प्रकार से दूसरों को आश्चर्यान्वित किया। आदिराज व अर्ककीर्ति को भी महान् संतोष हुआ। अर्ककीर्ति ने खेल बंद करने के लिए इशारा किया। इतने में वृषभराज घोडे से उतर कर भाई के पास आया और हाथ जोड कर खडा रहा। अर्ककीर्ति ने प्रसन्न हो कर कहा कि वृषभराज ! तुम्हारी विद्या को देख कर मैं प्रसन्न हुआ हूं। मुझे आज मालुम हुआ कि तुम अश्वारोहणकला में इतने प्रवीण हुए हो। इतना कह कर दोनों भाईयों ने अपने कंठ के दोनों हारों को निकाल कर वृषभराज को पहना दिया। वृषभराज ने भी दोनो को बहुत भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। अर्ककीर्ति ने आशिर्वाद देते हुए कहा कि अब खेल बंद करो, अब महल की तरफ चलो। तीनों भाई अश्वरोहि हो कर परिवारसहित महल की ओर चले इधर महल में भरतजी भोजन का समय होने पर भी भोजन न कर के पुत्रों की प्रतीक्षा में बैठे रहे। उधर से तीनों कुमार अनेक वाद्य घोष के साथ सेनाकी तरफ आरहे हैं। भरतजी की आज्ञा से उन के स्वागत के लिये इधर से भी बहुत से राजा महाराजा गये हैं। अनेक स्त्रियां आरति आदि मंगलद्रव्य लेकर स्वागत के लिये गईं। कितनी ही वेश्यायें कुमारों को दरबार के समान ही नमस्कार करने लगी। तीनों कुमारों ने उन के तरफ उपेक्षितदृष्टि से दृष्टिपात किया। क्यों कि उन को बाल्यकाल में ही परदारसहोदर, गणिकापगतचेष्टि, विरत इत्यादि नामों से लोग उल्लेख करते थे। भरतजी को मालुम हुआ कि तीनों पुत्र क्रमशः अर्थात् सब से आगे अर्ककीर्ति उस के पीछे आदिराज व बाद में वृषभराज इस प्रकार आरहे हैं। उन्होंने उसी समय एक सेवकको बुला कर उस से कान में कुछ कहा। वह उसी समय उस जुलुस में गया व

भरतजी की इच्छा को वहां प्रकट न कर के स्वतः ही वृषभराज व आदिराज के घोडे को दाहिने और बाये तरफ करके और अर्ककीर्ति के घोडे को बीच मे किया। अनेक स्थानो में उन पर लोग चामर ढोल रहे है। कितने ही स्थानो में आरति उतार रहे है। इस प्रकार बहुत ही आदर को प्राप्त करते हुए वे तीनों कुमार बहुत समारंभ के साथ राजभवन की ओर आरहे है। सेना के हर्षमय शब्दो को सुनकर महलकी माडियों पर चढकर राणियां अपने पुत्रो के आगमन को देखने लगी व मन मन में बहुत ही हर्षित होने लगी।

इस प्रकार अतुलसंभ्रमके साथ आकर तीनो पुत्र महलके सामने घोडेसे उतरे और अंदर जाकर पिताजी के चरणोमें मस्तक रखा। भरतजीने भी तीनों कुमारोंको आलिंगन देकर अशिर्वाद दिया। अर्ककीर्तिसे कहा कि बेटा! क्या तुम भी इनके साथ लीलाविनोद के लिये गये थे? अर्ककीर्ति ने बहुत विनयके साथ कहा कि स्वामिन्! मै आपसे क्या कहूं वृषभराजने अश्वारोहणकलामे कमाल ही किया है, उसने उस कलाके अनेक प्रकारको जो दिखाया उसे देखकर हम सब आश्चर्यचकित हुए। स्वामिन्! उसकी लीलाको देखनेकेलिये श्रीचरण ही समर्थ हैं। इसलिये आज उसे बंदकरके मैं लाया हूं। इस प्रकार अर्ककीर्तिने भाईकी प्रसंशा की। साथमें आये हुए राजावोंनें भी अर्ककीर्ति के वचनका समर्थन किया। भरतजी भी मनमें प्रसन्न होकर मौनसे अपने पुत्रकी प्रसंशा सुन रहे थे। फिर वृषभराज से कहने लगे कि पुत्र! अश्वारोहण कलामें इस प्रकार नैपुण्यको प्राप्त करनेपर भी उसदिन वज्रकपाटको फोडते समय तुम चुप क्यों रहे? मुझसे भी पहिले जाकर तुमको ही उसे फोडना चाहिये था, इसे सुनकर वृषभराज

हुआ। सबको योग्य सन्मानके साथ भेजकर सम्राट् अपने पुत्रोंको लेकर महलमें प्रवेश कर गये। वहांपर तीनों कुमारोंको बैठालकर स्त्रियों से फिरसे आरती उतरवाई, और उसे स्वतः प्रसन्न होकर देखने लगा। स्त्रियां अनेक मंगलपद गाने लगी। साथ ही राजाने कुंतलावती, चंद्रिका देवी, कुसुमाजी आदि अपनी राणियोंको बुलवाकर सुपुत्रों के वृत्तांत को कहा। उन पुत्रोंने भी माताओंके चरणों में मस्तक रक्खा, भरतजी ने उन राणियों से विनोद के लिए कहा कि देवी! क्या तुम्हारे पुत्रों को तुम लोग योग्यशिक्षा नहीं देती है? वे स्वेच्छाचार वर्तन करते है। उन राणियों ने भी विनोदसे ही उत्तर दिया कि स्वामिन्! आप को जब हमारी पूज्य सासू शिक्षा देंगी तब हम भी अपने पुत्रों को शिक्षा देंगी। आप के पुत्र तो आप के समान ही हैं।

इस के बाद भरतजी ने उन पुत्रों के साथ एक पंक्ति मे बैठकर बहुत आनंद के साथ मे भोजन किया। बाद में उन तीनों पुत्रों को उन के महल में भेजकर हमेशाके समान लीलाविनोद के साथ अपनी राणियों के साथ भरतजी पुत्रों के गांभीर्य, चातुर्य, आदि की चर्चा करते हुए अपने महल में रहे।

भरत जी सदा आनंदमग्न रहते हैं। उन को हर समय हर काममें सुख का ही अनुभव होता है, इस का कारण तो क्या है? यह उन्हों ने पूर्व मे सतत परिश्रम से अर्जित आत्मभावना का फल है। उन की सदा भावना रहती है कि—

" हे सिद्धात्मन् ! आप अनंतसुखी हैं। क्यों कि आपने नित्य समाधिभावना के बल से सच्चिदानंद अवस्था को प्राप्त किया है। जहां पर सुख दुःख की हीनाधिक कल्पना ही नहीं, वहां पर अनंत सुख ही सुख विद्यमान हैं। इसलिए हे स्वामिन् ! मुझे भी परमसुख की प्राप्ति के लिए उस प्रकार की सुबुद्धि दीजिए "।

"हे परमात्मन् ! आप उपमातीत है। आप की महिमा अपार है। मुनिजनों के द्वारा आप वंद्य है। निरंजन है, अनंतसुखों का पिंड है। इसलिए आप और कहीं न जा कर मेरे हृदय मे ही विराजे रहें "।

इस प्रकार की आत्मभावना का ही फल है कि भरतजी के हृदय में बिलकुल आकुलता को स्थान नहीं, अतएव दुःख का लव-लेश नहीं, हमेशा प्रत्येककार्य में वे सुख का ही अनुभव किया करते हैं।

कारण कि आत्मभावना मनुष्यके हृदयमें अलौकिक निराकुलताका अनुभव कराता है। वह व्यक्ति कभी भी किसी भी हालतमें मार्गच्युत होकर व्यवहार नहीं करता है। उसे संसारकी समस्तवस्तुस्थितिका यथार्थ परिज्ञान है। स्त्रियोंमें, पुत्रोंमें, परिवारमें, वह मिलकर रहनेपर भी वह अपनेको नहीं भूलता है, यही कारण है कि उसे इस संसारमें

एक विचित्र आनंद आता है। श्रीभरतजीने भी इसीका अभ्यास किया है।

॥ इति कुमारविनोदसंधि ॥

खेचरीविवाहसंधि

सुमतिसागर मंत्री के साथ विमानारूढ होकर नमिराज अनेक गाजे बाजे सहित भरतजी की सेना की ओर आरहे है। सेनाके पासमें आनेपर स्वर्गके देवताओंके समान विमान से नीचे उतरे और सेनाकी शोभा देखते हुए महलकी ओर चले। भरतजी को पहिलेसे मालुम था कि विनमिराज आरहा है। सो इस समाचारके ज्ञात होते ही बुद्धिसागर आदि मंत्रियोंके साथ अनेक राज्यकारभारके विषयमें परामर्श करते हुए दरबारमें विराजमान हुए।

विनमिराजको सूचना दी गई कि वह स्वयं पहिले आवे, साथके आये हुए विद्याधर राजा बादमें आवें, उसी प्रकार विनमिने सर्व विद्याधर राजाओं को महलसे बाहर ही खडा कर दिया और स्वयं दरबार में गया। भरतचक्रवर्ति के देव निर्मित दरबार की शोभा व सौंदर्य को देखकर विनमिराज दंग रहा। उस आश्चर्यके मारे वह अपने को भी भूल गया। भरतचक्रवर्ति के लिए विनय करने का भी उसे स्मरण नहीं रहा। केवल पास में जा कर एक रत्न को भेट रख कर नमस्कार किया। इसी प्रकार सुमतिसागर मंत्री ने भी भेंट समर्पण कर साष्टांग नमस्कार किया।

सम्राट् ने पास में ही एक आसन दिलाया और उन को बैठने के लिए इशारा किया। दोनों ने अपने २ आसन को अलंकृत किया।

" विनमि! तुम कुशल तो हो न? नमिराज कुशलपूर्वक है न? और घर में सर्व परिवार आनंद से है न?" भरतजी ने विनमि से प्रश्न किया।

" आप की कृपा से मै कुशल हूं, नमिराज भी क्षेमपूर्वक है. घर में सब आनंदमंगल है "।

" भगवान् ! आदिनाथ के पुत्र होकर आपने भरतखंड के राज्य को पालन करते हुए हम सब बंधुजनवन को आप वसंत के समान हैं। फिर हमें आनद क्यों नहीं होगा ? । विनमिने हसते हुए कहा।

" भाई नमिराज भी यहा आते थे। परन्तु आपके पधारने के पहिले उन्होंने भ्रमरी नामक एक विद्या सिद्ध करने के लिए प्रारंभ किया है। इसलिए उन का प्रयाण स्थगित हुआ । वे मंत्रयोग में लगे हुए है। उन को मैं समाचार देकर मंत्री के साथ चले आया " इस प्रकार विनमिने तत्र के साथ कहा। भरतजी मन मन में इस तंत्र को समझकर भी मौन से रहे। पुनः विनमिराज बोले।

" आप के गंभीर राज्यवैभव--ऐश्वर्य को देखकर लोक में किसे संतोष न होगा। इस लिए इस विजयार्द्ध के अनेक विद्याधर राजा अपनी २ सुंदर उत्तम कन्यावोंको आप को समर्पण करने के लिये लाये हैं। अनेक राजा उत्तमोत्तम अन्य भेंट लेकर आये है । उन को अंदर आने के लिये आज्ञा होनी चाहिये "।

इस संबंध में पहिले से सम्राटने दक्षिण नायक को सूचना दे रखी थी। इसलिये समय को जानकर दक्षिणाकने सुमतिसागर मत्री के साथ कहा कि मंत्री ! तुम्हारे राजाओं में जो सम्राट को समर्पण करने के लिये अपनी कन्याओं को साथ लाये हैं उन को पहिले अंदर आने दो, बाद में बाकी के राजाओं को आकर भरतजी को नमस्कार करने दो। सुमतिसागर मंत्रिने भी उसी प्रकार व्यवस्था की। उसी समय बहुतसे विद्याधर राजा संतोष के साथ दरबारमें प्रविष्ट हुए, और उन्होंने चक्रवर्तिको नमस्कार किया, उनको योग्य आसन दिलाये गये। वे

उनपर बैठ गये इसी प्रकार बाद में अन्य विद्याधर राजा भी बुलाये गये। उन्होंने आकर साष्टांग नमस्कार किया और उन को बैठने के लिए नीचे आसन दिये गये। वे उन पर बहुत आनंद के साथ बैठे। सम्राट् के मित्रोंने मन मन में ही विचार किया कि उत्तमरूपवती कन्यावों को उत्पन्न करना यह भी एक भाग्य की ही बात है। सचमुच मे संसार मे स्त्री ही भोगाग है। इसलिए इन राजावों का इस प्रकार सन्मान हो रहा है।

चक्रवर्ती के शरीरसौंदर्य को देखकर वे विद्याधरराजा आश्चर्यचकित हुए। उन को ऐसा मालुम हुआ कि हम देवेंद्र की सभामें प्रविष्ट हुए है। वे मन में अपने जीवन को धिक्कारने लगे। इस उमर मे यह शरीर सौंदर्य, संपत्ति, गौरव, गांभीर्य को प्राप्त करना यह मनुष्य के लिए भूषण है। हम लोगो का जीवन व्यर्थ है।

सुमतिसागर मंत्री खडे होकर कहने लगा स्वामिन् ! विद्याधर राजा आप के दर्शन के लिए बहुत काल से उत्सुक थे। पुण्य के संयोगसे आज उन की इच्छा पूर्ति हुई।

देव ! लोक में सामान्य पद को प्राप्त करने वाले बहुत है। परन्तु षट्खण्ड पृथ्वी के राज्यभार को वहने वाले कौन है ? कदाचित् षट्खंड भूमि को पालन करने पर भी स्वामिन् ! आप की सुंदरता देवेंद्र और नरेंद्रों में किसने पाई है ?

मै मुखस्तुति नहीं कर रहा हूं। भगवान् आदिनाथ के पादों की साक्षीपूर्वक कह रहा हूं कि आप के शरीरसौंदर्य को देखकर मुग्ध न होनेवाले स्त्रीपुरुष क्या इस भूमंडल में मिल सकते है ?

स्वामिन ! हमारे साथ आये हुए राजा तीन सौ सुंदर कन्यावोंको आप को समर्पण करने के लिए लाये है। इसलिए विवाह के लिये आज्ञा होनी चाहिए। इत्यादि विषय बहुत विनय के साथ सुमतिसागर

ने निवेदन किया । भरतजी ने भी मुसकराकर सुमतिसागर को बैठने के लिए कहा ।

बुद्धिसागर मंत्री ने समय को जान कर सुमतिसागर की प्रशंसा की ! साथ में अन्य मित्रों ने भी प्रशंसा की । बुद्धिसागर ने सम्राट् से यह भी कहा कि विवाह कल की रात में हो । आज इन लोगों को विश्रांति लेने के लिए आज्ञा होनी चाहिए । सम्राट् ने भी बुद्धिसागर के वचन को सम्मति दी । सुख के आगमन की प्रतीक्षा कौन नहीं करते हैं !

आये हुए सज्जनों को योग्य रीति से आदरसत्कार करने के लिए सम्राट् ने बुद्धिसागर को आज्ञा दी । साथ में उन विद्याधर राजावों को उसी समय अनेक रत्नवस्त्राभरणों को भरतजी ने भेंट किया । साथ में विनमिराज व सुमतिसागर को भी उत्तमोत्तम रत्नों को समर्पण किया । और सब को उन के लिए निर्मित महलो में भेजा ।

दूसरे दिन उस सेनाराज्य में विवाह की तैयारी होने लगी । सर्वत्र लोग आनंद ही आनंद मनाने लगे । मंदिरों में तोरण, पताका वगैरे फडकने लगे । करोडों प्रकार के वाद्यविशेष बजने लगे । परकोटा, राजद्वार, गोपुर आदि स्थान अत्यधिक सुशोभित किए गए । राजागण व व्यंतर भी अपने २ श्रृंगार करने लगे । साथ में सुवर्ण व रत्नमय तीन सौ विवाहमंडप भी निर्मित हुए, विशेष क्या ? महल का श्रृंगार हुआ, राणियों ने अपना श्रृंगार उत्साह के साथ किया । भरतजी ने अपना श्रृंगार कर लिया । वहांपर बात की बात में एक महोत्सव ही हुआ ।

विद्याधर राजाओंने अपनी पुत्रियों को नवरत्ननिर्मित सुंदर आभूषणों का श्रृंगार कराया । उनकी दासियोंने सबप्रकार से सुंदर आभूषणों को धारण कराकर उन्हे विवाहकालोचित सर्व अलंकारों से अलंकृत किया ।

लोकमे भरतेश बुद्धिमान् है यह सब जानते थे । साथ में वह कामदेवके समान ही सुंदर है यह जगजाहिर था । ऐसी अवस्थामें भरतेश भी प्रसन्न होसके इसे दृष्टिकोण में रखकर उन चतुर दासियोंने उन विद्याधरकन्यकावोंको विविध प्रकार से अलंकृत किया ।

भरतेशकी राणियां भी महाबुद्धिमती हैं । वे भी आज इन नव-वधुवों को देखेगी, वे भी प्रसन्न होजाय इसी प्रकार उनका शृंगार हुआ। सब शृंगार होनेके बाद स्वयं ही अपनेद्वारा किये हुए शृंगारको देखकर वे दासिया प्रसन्न हुई, और विनोदसे कहने लगी कि देवी ! आजतक भूचर स्त्रियोंने भरतजी के चित्त व नेत्र को प्रसन्न कर जो उनके हृदयको वश किया उसे आप खेचरस्त्रियां अपने सौंदर्य व प्रेममय व्यवहार से भुला देवें ।

उन कन्यकाओंने भी सुन लिया । वे पहिलेसे भरतजी के जग-द्विश्रुत गुणों को जानती थी । इसलिये मन में विचार करने लगी कि भरतजी को जीतनेवाली स्त्रियां लोक में कोई नहीं है । ऐसी अवस्था में यह सब विचार व्यर्थ है । तथापि हम लोग पति के अनुकूल वृत्ति को धारण कर रहेंगी ।

इस प्रकार सर्व शृंगार पूर्ण होने के बाद दासियोंने उन कन्यकाओंकी आरति उतारी । और ' भरतजी के मन को आप लोग प्रसन्न करें " इस प्रकार आशिर्वाद दिया ।

रात्रि के प्रथम प्रहर में जब चक्रवर्ति के सेवकोने आकर सब विद्याधर राजावों को यह समाचार दिया कि अब विवाह का मुहूर्त अतिनिकट है, सभी राजा अपनी २ विवाह के लिये सुसज्जित कन्यावों को पालकियोंपर चढाकर गाजेबाजे के साथ विवाहमंडपकी

ओर गये। उस समय सेनानायकने भी अपनी सेना व परिवारके साथ इन राजाओं का स्वागत सामने से आकर किया। इस प्रकार बहुत आनंद के साथ सभी विवाहमंडप में प्रविष्ट हुए। तीनसौ कन्यका ओंने तीनसौ खास निर्मित मंडपो को सुशोभित किया। साथकी स्त्रिया अनेक प्रकार से सुंदर मंगल गान कर रहीं हैं। वे कन्यायें मंडप में खडी होकर भरतजी का ध्यान कर रहीं है और उन के आगमनकी प्रतीक्षा कर रहीं है। परतु भरतजी जल्दी नहीं आरहे है।

इधर भरतजीने भी विवाहोचित शृंगार कर लिया। और समय समीप आतेही जिनेंद्रमंदिर में गये वहा पर भक्तिपूर्वक जिनेंद्रवंदना की परमहंस गुरु परमात्माका भी स्मरण किया। तदनंतर आनंद के साथ आकर महलमें रहे। इधर उधरसे उनकी राणियां बैठीं हुई है। अपने पतिदेवके अलौकिक सौंदर्य को देखकर उनकी आंखें तृप्त नही होती, एक राणी विनोदके लिये कहने लगी कि:—

स्वामिन्! कुछ निवेदन करना चाहती हूं। एक हंस को हजारों हंसिनी पहिले से मौजूद है, फिर भी वह हंस अनेक हंसिनियोंको प्राप्त कर रहा है। ऐसी अवस्थामें पहिलेकी हंसिनियोंको दुःख होगा या नहीं?

भरतजीने हसकर उत्तर दिया कि देवी! एक ही हंस जब हजारों रूपको धारणकर आगत व स्थित ऐसी हजारों हंसिनियोंको सुख देता है तो फिर दुःखका क्या कारण है?

इतनेमें दूसरी राणी कहने लगी कि राजन्! फूलके दुकान में एक भ्रमर था। वह हर एक फूलपर बैठकर रस चूस रहा था। फुलारीने फिर नवीन पुष्पों को दुकान में लाये, ऐसी अवस्थामें उस भ्रमरको किन फूलोंपर इच्छा होगी, नवीन फूलोंपर या पुराने फूलोंपर?

भरतजीने उसके मनको समझकर कहा कि देवी ! वह भ्रमर कुत्सित विचार का नहीं है । वह परमपरंज्योति परमात्माका दर्शन रात्रिंदिन करनेवाला भ्रमर है। ऐसी अवस्थामें उस भ्रमरको पुराने और नये सभी फूल समान प्रीतिके पात्र है। आत्मविज्ञानी की दृष्टिसे सोना और कंकड, महल और जंगल जब एक सरीखे हैं फिर नवीन और पुराने पदार्थों में वह भेद क्यों मानेगा ?

उसी समय बाकी की राणियो नें कहा कि देवियों ! आप लोग इस मंगल समय में ऐसी बातें क्यों कर रही है, पतिराज के हृदय में कैसी चोट लगेगी ? सरस में विरस क्यों ? इसलिए इस समय में आप लोग चुप रहे । लोक की सभी स्त्रियां आजावें तो भी एक पुरुष जिस प्रकार एक स्त्री का पालन करता है उसी प्रकार अव्याहत रूप से पालन करने का सामर्थ्य जब पुरुषोत्तम पतिराज को मौजूद है फिर हमे चिंता करने की क्या जरूरत है ?

भरतजी ने भी उन राणियों को संतुष्ट करते हुए कहा कि देवियो ! इस प्रसंग को कौन चाहते थे ? हजारों राणियों के होते हुए और अधिक स्त्रियों की लालसा मुझे नहीं है । फिर भी पूर्व में जो मै ने आत्मभावना की है उस का ही यह फल है कि आज उस पुण्य का उदय इस प्रकार आ रहा है । आप लोग ही विचार करें कि मैने आप लोगों से भी जब विवाह किया तब मै चाह कर के तो नहीं आया था ? आज की कन्यावों को भी मैं निमंत्रण देने नहीं गया था।

फिर भी वह पूर्व पुण्य ने आप लोगों को व इन को बुला कर मेरे साथ संबंध किया। जबतक कर्म का संबंध है उस के भोग को अनुभव करना ही पडेगा, यह संसार की रीत है, यही परतंत्रता है।

भरतजी के मन को तिलमात्र भी दुःख न होवे, ऐसी भावना करनेवाली उन नारीमणियों ने उसी समय उस बात को बदल कर कहा कि स्वामिन् जाने दीजिए। अब विवाह का समय अत्यंत निकट है। आप विवाहमंडप में पधारियेगा। भरतजी भी वहा से उठ कर विवाहमंडप की ओर चले गए।

उस समय भरतजी की शोभा देखने लायक थी, उस समय वे विवाह के योग्य वस्त्राभूषण को धारण किये हुए थे। रास्ते में अनेक सेवक उन को देखते हुए हाथ जोड रहे हैं और आनंद के साथ कहते हैं कि भोगसाम्राज्य के अधिपति, लोकागम्य सुखी कामदेवविजयी भरतजी की जय हो। इसीप्रकार गायन करनेवाले गारहे है। स्तुति-पाठक स्तोत्र कर रहे है, इन सब को देखते हुए भरतजी विवाहमंडप में दाखिल हुए। उन विवाहमंडपो में सब विद्याधरकन्यकायें पश्चिम मुखी होकर खडी थी। भरतजी जाकर पूर्वमुखी होकर खडे हुए। आते समय भरतजी अकेलेही आये थे। अब उन्होने अपने को तीन सौ संख्या में बना लिया अर्थात् अपने तीन सौ रूप बनाकर तीन सौ मंडपों में खडे हो गये।

सामने से अनेक द्विजगण मंगलाष्टक का पाठ बहुत जोरसे कर रहे है। अनेक विद्वान विवाह समयोचित सिद्धांतमंत्र का उच्चारण कर रहे है। और उत्तमोत्तम मंगल वचनों से आशिर्वाद दे रहे है। अनेक सुवासिनी स्त्रियां मंगलपदों को गा रही है। इस प्रकार बहुत वैभव के साथ आगमोक्त विवाहविधि संपन्न हो रही है। मंगलाष्टक पूर्ण होने के बाद वधूवर के बीच में स्थित परदा हटाया गया। उसी समय भरतजी ने उन सब कन्याओ का पाणिग्रहण किया। जिस समय भरतजी ने उन को हाथ लगाया उन देवियों को एकदम रोमाच हुआ उस के बाद उन वधुवोंके साथ भरतजी होमकुंडके पास आये। और वहापर विधिपूर्वक पूजन कर नववधूसमूहके साथ होमकुंड की तीन प्रदक्षिणा दी।

भरत जी जिस समय उन पाणिगृहीत कन्यावों के साथ उस होमकुंड की प्रदक्षिणा दे रहे थे उस समय की शोभा अपूर्व थी, चंद्र देव स्वयं अपने अनेक रूपों को बनाकर साथ में रोहिणी को भी अनेक रूप धारण कराकर मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा दे रहा है ऐसा मालुम हो रहा था।

कन्यावों के मातापितावों को बहुत ही हर्ष हुआ। उन्होंने भरत जी को कन्या दे कर अपने को धन्य माना।

विवाह का विधान विधिपूर्वक पूर्ण हुआ। भरतजी ने मंत्री, सेनाधिपति आदि को इशारा किया कि सर्व सज्जनों को अपने २ स्थानों में पहुंचा कर उन की उचित व्यवस्था कीजियेगा। तदनुसार क्षणभर में वह मंडप रिक्त हो गया। भरत जी भी उन विवाहित नारियों को ले कर महल में प्रवेश कर गए।

महल में उन्हों ने शयनागार मे पहुंच कर उन नववधुओंके साथ अनेक विनोद संकथालाप किए। साथ मे अनेक प्रकार से सुखों का अनुभव किया एवं बाद में सुखनिद्रा में मग्न हुए। उन के साथ मे

जितने भी सुखों का अनुभव किया वह पुण्यनिर्जरा है इस प्रकार भरत जी विचार कर रहे थे।

प्रातःकाल के प्रहर में भरत जी उन नारीमणियों का निद्राभंग न हो उस प्रकार उठ कर अपने तल्प पर ध्यान करने के लिए बैठे। पापरहित निरंजन सिद्ध का उन्हों ने अपने हृदय मे अनुभव किया। बाद मे अरुणोदय हुआ। सुप्रभात मंगल को गानेवाले वहा पर उपस्थित हो कर सुंदर गायन करने लगे। भरतजी अभी तक आत्मदर्शन ही कर रहे है। गायन को सुन कर वे सब स्त्रिया अपनी शय्या से उठी और भरतजी की ध्यानमग्नावस्था की शोभा को देखने लगी। भरतजीने ध्यान पूर्ण किया साथ में अपने अनेक रूपों को अदृश्य किया। नवविवाहित स्त्रियों को आश्चर्य हुआ।

भरतजी अपने शय्यागृह से बाहर आये व नित्य कर्ममें लीन हुए।

इस प्रकार भरतजी को तीन सौ विद्याधर कन्याओं के साथ विवाह हुआ। यह उन के पुण्य का फल। उन्होंने पूर्व जन्म में सातिशय पुण्य का उपार्जन किया था, और अब भी अखंड साम्राज्य को भोगते हुए भी उस के यथार्थ स्वरूपको जान रहे हैं, अपने आत्मा को बिलकुल भूल नहीं जाते है। सुखों के भोग करने में वे उदासीनता से विचार करते है कि इतने समयतक मेरी पुण्यकर्म की निर्जरा हुई। यह मुझे पुण्यकर्म के फल का अनुभव करना पड रहा है। इस प्रकार विचार करते थे।

सतत उन की भावना यह रहती है कि "हे परमात्मन्! तुम लोकके सर्व सुख दुःख के लिए साक्षी के रूप में रहते हो। परंतु उन को साक्षात् अनुभव नहीं करते, क्यों कि तुम मोक्ष के स्वरूप में हो। इसी प्रकार मेरी आत्मा है। इंद्रियजन्य सुखोंके लिए केवल वह साक्षी है। साक्षात् अनुभवी नहीं है। यह केवल पुण्यवर्गणाओं की लीला है।

हे सिद्धात्मन् ! कर्मों की निर्जरा जितने प्रमाण में होती जाती है उतना ही सुख भी आत्मा को अधिक मिलता जाता है। इस का साक्षात्कार आप कर चुके है, इसलिए आप लोक पूजित हुए है। इसलिए मुझे भी उसी प्रकार की सुबुद्धि दीजियेगा ”

इसी प्रकार की भावना का फल है कि भरतजी विशिष्ट सुख का अनुभव कर रहे हैं।

॥ इति खेचरिविवाहसंधिः ॥

अथ भूचरिविवाहसंधिः

दूसरे दिन की बात है। नमिराज आदि अनेक विद्याधरराजा-वों को महल में बुलाकर भरतजीने उन का सत्कार किया, उन को बहुत ही आदर के साथ देवोचित भोजन कराया, साथ में अनेक वस्त्रा-भूषण रत्नोपहार आदि को समर्पण करते हुए यह भी कहा कि आजसे आप लोग यहां महल में आकर भोजन करते हुए कुछ दिनतक हमारे आतिथ्य को ग्रहण करें। इसीप्रकार सर्व परिवार दासी दास आदि जनों का भी यथोचित सत्कार किया गया।

पहिलेकी राणियों के बीच में बैठकर भरतजीने नववधुवों को बुलाया और उन से यह कहना चाहते थे कि तुम्हारी बडी बहिनों को नमस्कार करो। परंतु भरतजी के कहने के पहिले ही उन चतुर वधुवोंने उन राणियों को नमस्कार किया। उन राणियोनें भी बहुत ही प्रेम व आदर के साथ उन का स्वागत किया। और आलिंगन देकर अपने पास बैठाल लिया।

इसप्रकार अनेक विनोद संकथालाप करते हुए कुछ दिन वहींपर सुख से काल व्यतीत कर रहे थे। इतने में और एक संतोषकी घटना हुई। पुण्यशालियों को सुखों के ऊपर सुख मिला करते हैं, पापीजनों को दुःखोंपर दुःख आया करते हैं।

एक दिन की बात है भरतजी अपने मंत्री आदि के साथ अनेक राजाप्रजावों से युक्त होकर दरबार में विराजमान हैं। उस समय एक दूतने लाकर एक पत्र दिया। वह पत्र विजयराज का था उसे खोलकर भरतजी बाचने लगे। उस में निम्नलिखित मंगलवाक्य उन को बांचने को मिले।

स्वस्ति श्रीमन्महानिस्सीमसामर्थ्य विस्तारितोर्वरातल दुस्तर रिपुराज वैर्याप्तराजस्तोमसंतोषकरकामिनीजनपंचबाण, षट्खंडभूमंडलाग्रगण्य, नाममात्रश्रवणसुक्षेमकर सुजनेंदु भरतभूपति भरतेशकी चरण सेवामें:— विजय के भयभक्ति पूर्वक साष्टांग नमस्कार स्वामिन्!

पश्चिम म्लेच्छखंड हस्तगत हुआ। विजय लक्ष्मीने आपके गले मे माला डाल दी, इस देस के राजा लोग हे अध्यात्मसूर्य! बहुत संतोष के साथ आपके चरणों के दर्शन के लिये उत्सुक थे। कितने ही राजा आपके आगमन की वार्ता सुनकर आपकी सेवामें भेंट करने के लिये कितने ही उत्तम हाथी घोडों की तैयारी कर रहे थे। कितने ही राजावोने हाथियो के समान गमनकरनेवाली मंदगजगामिनी कन्यवोंको श्रृंगार कर रखा था। वे लोग जातिक्षत्रिय हैं, इस विचार से उन्होने समझा था कि हमारी कन्यावोंको सम्राट् झट स्वीकार करलेंगे। परंतु मैने उनको कहा कि हमारे स्वामी व्रतगात्र कन्यावोंको ही ग्रहण करते है। व्रतरहितों को वे स्वीकार नहीं करते है। व्रतों को ग्रहण करने के लिये दीक्षकाचार्य मुनियों की आवश्यकता है, परंतु इस खंड में धर्मपद्धति नही है। मुनियों का अस्तित्व नहीं, ऐसी परिस्थिति में उन लोगोने स्वीकार किया कि हम लोग आर्य भूमिमें आकर योगियोंसे व्रतग्रहण करलेंगे। परंतु आपके पुण्योदयसे संतोष व आश्चर्य की एक घटना हुई। अपने इष्ट स्थानमें जानेवाले दो चारण मुनीश्वर आकर इस भूमिमें उतर गये। उनके हाथसे हमारे महलमें सबको चारित्र धारण कराया, हमारा कार्य हुआ, वे मुनिराज अपने मार्गमे चले गये। आगे निवेदन इतना ही है कि सुवर्णकी पुतलियो के समान सुंदर ऐसी तीनसौ बीस कन्यावोंको लेकर वे राजागण बहुत हर्षके साथ आ रहे है। कलतक आप की सेवा में उपस्थित हो जायेंगे।

भवदीय चरणसेवक— **विजय.**

इस पत्र को सुन कर सब को हर्ष हुआ। सब ने भरत की जयघोषणा की। इस शुभ समाचार को लानेवाले दूत को बुद्धिसागर ने अनेक वस्त्राभरणों को इनाम में दिए।

वह दिन व्यतीत हुआ, दूसरे दिन की बात है। विजयराज बहुत संभ्रम के साथ सिंधु नदी को पार कर अपनी सेना के साथ भरतजी

की सेना के पास में आये, वाद्यध्वनि सुननेमें आई। भरतजीने विजयार्क को बुलाने के लिए अपने सेवकों को भेजा। विजयार्क ने भी उसी समय आकर भरतजी का दर्शन किया। साथ में अनेक उत्तमोत्तम उपहार पदार्थों को भेट में समर्पण किया। साथ में अनेक राजाओं ने भी भरतजी को अनेक उत्तम वस्तुओं को भेंट मे समर्पण करते हुए भरत जी को नमस्कार किया। और भरतजी के इशारे पर उचित आसनों पर बैठ गए।

विजयराज ने सामने आकर कहा कि स्वामिन्! ये जितने भी राजा हैं वे सब सज्जन है। परन्तु इन में मुख्य उद्दण्ड नामक भूपति है। ये अपनी दो कन्याओं को लेकर आए हुए हैं। मैंने इन से कहा है कि कल के रात्रि को विवाह के लिए योग्य मुहूर्त है, आशा है कि आप लोग भी इसे स्वीकार करेंगे।

उपस्थित सब लोगों ने उस का समर्थन किया। उस समय भरत जी ने सब को आदरसत्कारपूर्वक विदा किया। वह दिन गया, दूसरे दिन योग्य मुहूर्त में उन राजाओं की तीन सौ बीस कन्याओं के साथ सम्राट् का विवाह संपन्न हुआ। सर्वत्र उत्सव ही उत्सव हो रहा है।

इस के बाद सम्राट् उन नवविवाहित वधुवोंके साथ शयनगृह में गये। वहा उन के साथ अनेक प्रकार से आनंदक्रीडा की। उन स्त्रियों में सभी स्त्रिया एक से एक बढ कर सुंदरी थी, परंतु उन में रंगाणि और गंगाणि नाम की दो स्त्रिया अत्यधिक सुंदरी थी जिन को देखने पर भरतजी भी एक दफे मोहित हुए।

प्रातःकाल नित्यक्रियासे निवृत्त होकर विजयराज को आदि लेकर सर्व परिजनों को आनंद भोजन कराकर सत्कार किया। कुछ समय तक बहुत सुख से समय व्यतीत हुआ। पुनः एक दिन दरबार में विराजमान थे, उस समय एक और आनंदका समाचार आया।

जयराज पूर्वखंडकी ओर गया था, वह उस खंडको जीतकर वह

बहुत आनंद से गाजे बाजे के साथ आरहा है । दूसरे मंगल शब्द भी सुनने में आरहे है । उस के साथ असंख्यात सेना है । हाथी है, घोडा है, रथ है, एक राजकीय ठाटवाट से ही वह आरहा है ।

सचमुच में जयराज एक राजाधिराज है । दुनिया में भरतजीका ही वह सेवक है, बाकी और कोई राजा ऐसे नहीं जो उसे जीत सके वह जातिक्षत्रिय है । जाते समय जितनी सेनाको वह लेगया था उस से दुगनी सेना को अब साथ लेकर उस स्थान में दाखिल हुआ ।

जिन राजावोंने चक्रवर्ती को समर्पण करने के लिये उत्तमोत्तम हाथी घोडा वगैरे ले आये थे, उन को व उन की सेना को एक तरफ स्थान दिया और जो कन्यारत्नों को ले आये थे उन को एक तरफ स्थान दिया ।

वेतंडराज नामक भूपति अपने साथ सुंदरी दो कन्यावों को ले आये है, उस के साथ ही अन्य ४०० कन्यायें भी आई है ।

अपने खंड से जिससमय उन्होंने कर्मभूमि में प्रवेश किया उस समय गुरुसान्निधि में नियतव्रतों को ग्रहण कराये । क्यों कि जयराज बुद्धिमान् है, उसे मालुम था कि सम्राट व्रतसंस्कारहीन कन्यावों को ग्रहण नहीं करेंगे ।

विशेष क्या कहें ? पूर्वोक्त प्रकार जयकुमार सम्राट के पास गये । सम्राटका उन कन्यावों के साथ विवाह हुआ । पूर्वोक्त प्रकार भरतजी ने अपने महल में उन देवियों के साथ अनेक प्रकार से क्रीडा की । उन स्त्रियों में सिंधुरावती बंधुरावती नामक दो स्त्रियां अत्यधिक सुंदर थी । ये दोनों वेतंडराज की पुत्रिया है । इन दोनों के प्रति सम्राट् को विशेष अनुराग हुआ । उन के सौंदर्य को देख कर आश्चर्य हुआ । उन्होंने अपने मन में विचार किया कि ये दोनों परमसुंदरी है । म्लेच्छखण्ड मे उत्पन्न होने पर भी इन में कुछ विशेषता है । स्वच्छरूप को धारण कर अत्यधिक कुशल युवतियों के उत्पन्न होने से

ही शायद इस खण्ड को म्लेच्छखंड नाम पडा होगा । वहांपर धर्माचरण नहीं है, इतने मात्र से उसे म्लेच्छखण्ड कहते हैं, बाकी सौंदर्य कामकलाकौशल्य आदि बातों में ये कर्मभूमिज स्त्रियों से क्या कम है। धर्माचरण इन में और मिल जाय तो किसी भी बात में कम नहीं है। कोई हर्ज की बात नहीं, इन को अब धर्मपालनक्रम को सिखाना चाहिए। मेरे भाग्य से ही मुझे ऐसी सुंदरियों की प्राप्ति हुई है.

इस विषय को दूसरों के साथ बोलना उचित नहीं है। अपने मन मे ही रखना चाहिए। यह मेरे परमात्माकी कृपा है। धन्य है परमात्मा! भक्तिपूर्वक जो तुम्हारी भावना करते हैं उन्हें कैवल्यसुख की प्राप्ति होती है, फिर लौकिकसुख मिले इस मे आश्चर्य की क्या बात है?

आये हुए सुख का त्याग नहीं करना चाहिए. नहीं आते हुए की अभिलाषा नहीं करनी चाहिए। अपने शरीर में स्थित आत्मा को कभी भूलना नहीं चाहिये। उस व्यक्ति के पास दुःख कभी नहीं आसकता। सांसारिक सुख का अनुभव करना कोई पाप नहीं, परंतु उसके साथ अपनेको भुलाना यह पाप है, आत्मज्ञानि स्त्रियोंके भोग को भोगते हुए भी " पुंवेय वेदंतो " इस सिद्धांतसूत्र के अनुसार वेदनीय कर्मकी निर्जरा ही करता है।

इस रहस्यको विवेकी ही जान सकते हैं। हरएक को इसे समझनेकी पात्रता नहीं। यह परम रहस्य है। इसे लोगोंके सामने कहूं तो वे हसेंगे इत्यादि प्रकारसे मनमें ही विचार करने लगे एवं उन रमणियों के साथ यथेष्ट सुख भोगे। इतना ही नहीं, भरतजी के व्यवहारसे संतुष्ट वे स्त्रियां अपने मातापिताओं को भी भूलगई। इस प्रकार बहुत आनंद के साथ उन्होंने समय व्यतीत किया।

विवाह के उपलक्ष्यमें पहिले के समान ही मंत्री सेनापति एवं कन्याओंके पिता आदिका यथोचित सन्मान किया गया।

रात्रिंदिन सेनाकटकस्थानमें उत्सव ही उत्सव होते रहते है। उस स्थानमे छह महीनेसे भी कुछ दिन अधिक व्यतीत हुए, परंतु उत्साहसे बीतनेसे वह समय बहुत थोडा मालुम हुआ।

एक दिन भरतजी दरबारमे विराजमान है। उस समय बुद्धिसागर मत्रीने आकर नम्रशद्बो में निम्नलिखित निवेदन किया।

" स्वामिन्! तीन खंडका राज्य वश होगया, अब विजयार्धके आगेके तीन खंडोंको वशमे करना चाहिये। इस स्थानमें अपने को ६ महीने व्यतीत हुए विजयार्ध गुफाकी अग्नि भी शात होगई है। अब आगे पयाण करने में कोई आपत्ति नहीं। इसलिये अब आज्ञा होनी चाहिये। जिन राजावोंने आपके चरणोंमें स्त्री रत्नोको समर्पण किये है उनको भी अब यथोचित सत्कार करके संतोष के साथ अपने नगरो को जाने के लिये अज्ञा देवें। क्यों कि उनको अपने साथ कष्ट होगा।" इत्यादि—

मंत्री के निवेदन को सुनकर उसी समय कुछ विचार कर भरतजी महलकी ओर चले गये। एवं अपने अनेक रूपों को बनाकर उन नव विवाहित खेचरभूचरकन्यावों के अंतःपुरमें प्रवेश कर गये। वहां जाकर उन्होने उन स्त्रियोसे यह कहा कि प्रियदेवी! तुम्हारे पिता अब अपने नगरको जारहे है। अब आगे क्या होना चाहिये बोलो। देवी! जाते समय तुम्हारे पिताका यथोचित सत्कार किया जायगा। परंतु तुम्हारी माता यहांपर नहीं आई है। ऐसी हालतमें मै उनको कुछ भेंट भेजना चाहता हूं, बोलो उनको क्या प्रिय है। कौनसे पदार्थ मे उनको इच्छा रहती है। अभूषणोमें उनको कौनसा प्रिय है। वस्त्रोमे कौनसी साडी उनको पसंद है। एवं अन्य भोग्य पदार्थोंमें उन्हे कौनसा इष्ट है? उनको जो पसंद है उसे ही मै भेजना चाहता हूं। आप लोग बोलो।

भरतजीकी बातको सुनकर वे कुछ जवाब न देकर हस रही हैं। फिर भरतजी पूछने लगे कि तुम्हारी माताकी क्या इच्छा है बोलो तो सही। पुनः वे हंसने लगी। पुन. भरतजी अच्छा, हमारी सासूकी क्या इच्छा है बोलो तो सही, कहने लगे, परंतु वे स्त्रिया पुनः हंसने लगी। जब भरतजीने आग्रह पूर्वक पूछा तो उन्हे आखरको कहना पडा। भरतजीने अपने सामने ही सभी वस्त्र आभूषण भेट आदिको बंधवाये। व उनकी दासियों को बुलाकर कहा कि इन्हे लेजाकर मेरी सासुवोंके पास पहुंचाना। एवं बहुत दिन वहांपर नहीं लगाना, जल्दी यहांपर लौट आना, नहीं तो सासुबाई की पुत्रीको यहांपर कष्ट होगा।

इस प्रकार महल के कार्य को कर के भरत जी पुनः दरबार मे आये वहांपर जो राजा थे उनमें से जिन्होने कन्यावोंको समर्पण किया था उनको अपनी २ पुत्रियों से मिलकर आनेके लिये महलमें भेजदिया एवं बाकी बचे हुए राजावों का यथेष्ट सत्कार किया। विद्याधर लोकवे एवं म्लेच्छ खंडके राजावोंको बुलाकर सम्राट्ने कहा कि आप लोगोंक ही मैं पहिले सत्कार करता हूं, नहीं तो आप लोग कहेंगे लडकी देनेवालों का सत्कार पहिले किया। इसलिये आप लोगोंका सत्कार पहिले कर बादमे उनका किया जायगा। सबका यथोचित सत्कार करने के बाद जयकुमार ने समय जान कर कहा कि आप लोगो में कुछ लोग अपने २ राज्य में जा सकते है। कुछ लोग यहां पर सम्राट्की सेवामें रह सकते है। जयकुमारकी बात सुनकर उन सबने उत्तर दिया कि सेनानायक! हम लोगो में कुछ लोग राज्यमें जाकर क्या करें? हम लोगों की यही इच्छा है कि हमे सतत सम्राट्की चरणसेवा मिले। इसलिये हम यहींपर रहकर अपने समयको व्यतीत करना चाहते हैं।

सम्राट् व जयकुमारने उसके लिये अनुमति दी, उनको परमहर्ष हुआ। उन सबने सम्राट्के चरणोंमें भक्तिके साथ नमस्कार किया।

अपनी पुत्रियों के महलमें गये हुए सभी राजगण लौटे। उद्दंण्ड राज वेतण्डराज आदि लेकर सर्व राजावोंको भरतजीने यथेष्ट सन्मान किया। व मित्रोंकी ओर देखते हुए कहा कि अब आपलोग अपने २ राज्यमें जासकते है। वहांपर सुखसे राज्यपालन करें। जब आप लोगोंको हमें देखनेकी इच्छा होगी उस समय हमारे पास आसकते है।

मित्रोंने भी समय जानकर बहुत संतोषके साथ कहा कि स्वामिन्! इनका भाग्य बहुत बडा है। आपके राजमहलको बेरोक टोक प्रवेश कर सुखसे रहनेके बहुभाग्य को उन्होंने प्राप्त किया है।

बादमें सब राजावोंने भरतजीको नमस्कार किया एवं भरतजीने भी उनकी संतोषके साथ विदाई की।

उनके साथमे सासुवों को भी अनेक उपहार की पेटियोंको भेजे। बडे २ राजावोंको भी अरे, तुरे शब्दसे संबोधन करने वाले सम्राट् अपनी स्त्रियों को सासू शब्दसे उच्चारण किया यह जानकर इन राजावोंको षट्खंड ही हाथमे आनेके समान संतोष हुआ। हर्ष के साथ प्रयाण करते समय उद्दण्ड व वेतण्डराज अपने सेनानायक व सेनाको भरत जी की सेवामें नियुक्त कर चले गये।

इस प्रकार आये हुए सभी राजा महाराजाओंको सम्राट्ने उनका यथोचित आदर सत्कार कर भेजा। अब केवल विनमिराज व विद्याधर मंत्री मौजूद है। उनको भी भेजने के लिये भरतजी विचार कर रहे है। आजकलमें भेजने वाले है।

इस प्रकार भरतजी के दिन अत्यंत आनंदोत्सव में ही व्यतीत हो रहे है। नित्य नये उत्सव, नित्य नया मंगल, जहां देखो वहा आनंदके तरंग उमड रहे है। इसका कारण भी क्या है! इसका एक मात्र कारण यह है कि भरतजीके हृदयमें रहनेवाला धैर्य, स्थैर्य व विवेक। संपत्तिके मिलने पर अविवेकी न होना। अत्यधिक सुखकी प्राप्ति होनेपर भी अपने आत्माको न भूलना यही महापुरुषोंकी

विशेषता है। भरतजी परमात्मा की भावना इस हृदयसे करते हैं कि—

" हे परमात्मन् ! आप प्रौढोंके परमाराध्य देव हैं । पराक्रमियोंके परम आराधनीय हृदय हैं । अध्यात्मगाढोंके अतिहृद्य हृदय हैं । गूढ-स्थानमें वास करनेवाले हैं एवं लोकरूढ हैं, मेरे हृदयमें बने रहे ।

हे सिद्धात्मन् ! आप परमगुरु, परमाराध्य परात्पर वस्तु हैं, इसलिये, आपको नमोस्तु, आप सौख्यतत्पर हैं, अतएव हमें भी सुबुद्धि दीजियेगा'

इसी सद्भावनासे उनको उत्तरोत्तर आनंदराशिकी प्राप्ति हो रही है।

इति भूचरिविवाहसंधिः
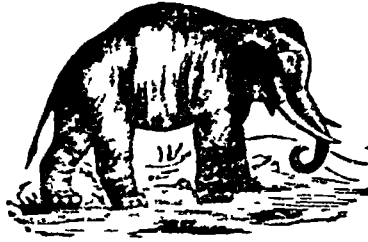
अथ विनमिवार्तालापसंधिः

एक दिनकी बात है, भरतजी अपने मित्र व मंत्री के साथ दरबारमें विराजमान है। विनमि भी अब अपने राज्यको जाना चाहता है. उसे सम्राट् के पास बहुत दिन हो चुके है। भरतजीने भी अब जानेकी सम्मति देनेका विचार किया था। मौका पाकर भरतजीने विनमिसे कहा कि विनमि ! देखो नमिने अपनी बडप्पन दिखला ही दिया, न मालुम उसने मुझे क्या समझ लिया हो, भगवन्! शायद उसे इस बातका अभिमान होगा कि मै चांदीके पर्वतपर (विजयार्ध) हूं। रहने दो ! देखा जायगा।

विनमि विनयके साथ बोला कि स्वामिन्! नमिराजने ऐसा कौनसा अभिमान बतलाया ? आप ऐसा क्यों कहरहे है ? यह हमारे पूर्वजन्मके कर्मका फल है।

भरत—विनमि रहने दो। यह ढोंग क्यों रचते हो ? यह सब कुछ झूठ है, वह मेरे पास क्यों नहीं आया ? उसकी इस वक्रताको क्या मै नहीं जानता ?

विनमि—स्वामिन्! मै इधर आनेके ३ दिन पहिले से वह एक विद्याको सिद्ध कर रहा था, उस कारणसे वह नहीं आसका, नहीं तो जरूर आता।

भरत— क्या मै इस तंत्र को नहीं जानसकता ? विनमि! तुम्हारे भाईको बोलो कि मेरे साथ यह चाल चलना उचित नहीं है। मेरे साथ यह अभिमान नहीं चल सकता है। जाने दोजी, मै विनोद के लिये बोल रहा हूं। मैं भूल गया, वह मेरे मामाका पुत्र है। इसलिये वह अपने अभिमान को व्यक्त कर रहा

होगा। आप लोगोंको ध्यान रहे. मैं आगे जाकर उसके साथ लीला विनोद करूंगा, आप लोग भी देखें।

आगे क्यों ? आज ही व्यंतरोंको भेजकर वह जिस विद्याको सिद्ध कर रहा है उसकी अधिदेवताओंको वापिस करावूं ?

व्यंतरोंको भी क्यों भेजूं ? मैं ही अपने आत्मध्यानके बल से उसकी विद्याका उच्चाटन कर डालूं ? उच्चाटन भी क्यों करूं ? उन विद्याओंको आकर्षण कर अपनी विद्याके बलसे उनको दबा डालूं ? परंतु यह सब करना उचित नहीं है, नहीं तो यदि मंत्रबलको देखना हो तो मैं अभी उस भागरी विद्याको सिद्ध करने वाले विनमि को भ्रम उत्पन्न कर सकता हूं।

विद्याके मायने भूत है, उसे सामान्य लोग साधन करते हैं। उन विद्याओं के अधिपति श्री परमात्माकी जब मुझे सिद्धि है फिर किस बातकी कमी है। लोग विवेकरहित है, उस परमात्माकी शक्ति को नहीं जानते हैं। वह परममोक्षस्थान को प्राप्त करानेवाला है। फिर उसके ध्यान करनेवाले भव्योंके लिये क्या क्या सिद्धि नहीं हो सकती है ? मेरे लिये यह कोई बडी बात नहीं है, फिर भी मैं उसको विघ्न नहीं करूंगा। तुम्हारे लिये केवल सूचना दी है। समझलेना।

विनमि---आपका सामर्थ्य बहुत बडा है, यह हम जानते है, उस सामर्थ्य के प्रदर्शनको अपने मामाके पुत्रोंपर दिखाना उचित नहीं। उनके साथ तो हर्षा खुशी मनानी चाहिये।

भरत---रहने दो, बातें बनाकर मुझे ठगने के लिये आये हो, आप लोग मेरे मामा के पुत्र हैं। परंतु आप लोगोंका व्यवहार बहुत ही विचित्र दिखता है। आप लोगों का नाम मामाजी ने नमि व विनमि रक्खा है, फिर आपलोग मुझे नमन क्यों नहीं करते है ? मुझे पिताजी ने भरतेश नाम रक्खा है, मैं भरतभूमीका ईश अवश्य बनूंगा। परंतु मुझे खेद है कि आप लोग अपने पिताकी इच्छाकी पूर्ति नहीं कर सके।

कच्छ महाकच्छ मामाके स्वच्छ गर्भ में उत्पन्न होकर तुम लोग स्वेच्छाचारी होगये यह आश्चर्य की बात है। इस प्रकार भरतजीने कुछ तिरस्कारवाणीसे कहा। कोरी बातों से विनय दिखाकर अपने मनकी बात छिपाकर मुझे फसाने के लिये चले। क्या इस चाल को मै नहीं जानता ? विनमि ! क्या बुद्धिमानो के साथ ऐसा करने से चल सकता है?

विनमि—माताजी ! आप ऐसा क्यों कहते है यह समझमें नहीं आया। हमने कौनसी बात आपसे छिपाई, हमारे हृदयमें जरा भी कपट नहीं है। जब आप इस प्रकार बोल रहे है हम तो परकीय है ऐसा अर्थ निकलता है।

भरत— विनमि ! तुम परकीय नही हो, तुम आत्मीय हो, परंतु तुम्हारे भाई नमि परकीय है। उसके हृदयको मै अच्छी तरह जानता हूं। उसे कहने की जरूरत नहीं। तुम्हारे मनमें ही रक्खो, मौकेपर सर्व विदित होजायगा। उसके अभिमान को छुडाना व उसके गूढको रूढ करना कोई मेरे लिये अवगाढ (कठिन) नहीं है। परंतु अभी नहीं, आगे देखा जायगा, इस प्रकार भरतजीने रहस्ययुक्त वचन को कहा। भरतजीने नागर दक्षिण विट विदूषकादि अपने मित्रोसे पूछा कि आप लोग भी कहें कि मै जो कुछ भी बोलरहा हूं वह ठीक है या नहीं, आप लोगोंको पसंद है या नहीं।

नागर—स्वामिन् ! आपका वचन किसे अच्छा नहीं लगेगा ? लोकमें सबको आपका वचन वश करलेता है। यहां नहीं आया हुआ नमिराज भी अवश्य कल आयगा। यह आपके वचनमे सामर्थ्य है।

अनुकूलनायक—स्वामिन् ! जब आपने विनमि राज को नमिराजके संबंधमें जो आपका विचार था कह ही दिया है, अब बुद्धिमान् विनमि राज जाकर इस मामलेको सुलझाये विना नहीं रह सकता है।

विटनायक—उस नमिराजने सम्राट्के लिये भेंट क्या भेजी है? क्या वस्त्राभूषण सम्राट्के पास नहीं है? विशिष्टसुखियोंको किस चीज की आवश्यकता या इच्छा रहती है यह समझकर भेंट भेजना यह बुद्धि मानोंका कर्तव्य है।

जीवरत्नोमें उत्कृष्ट पदार्थों को न भेजकर अजीव रत्नोंको भेजने से क्या मतलब? (विनमि मनमें सोचने लगा)।

शठनायक-स्वामिन्! अब विनमिराजको ही विजयार्धका पट्टाभिषेक करना चाहिये। नमिराज को बहुत ही मद चढ गया है।

उसे इस का सेवक बना देना चाहिये। यह कोई सम्राट्के लिये बडी बात नहीं। ऐसा शासन होना ही चाहिये। जो हित करने वाला है वह बंधु है। बधु होकर भी जो अहित करने वाला है वह शत्रु है। ऐसी अवस्थामें शत्रु को योग्य दंड देना ही चाहिये।

कुटिलनायक—फसानेवाले बंधुको फसाकर ही उसे राज्यच्युत कर किसी एक जगह रखदेना चाहिये। भोले भाईयोंको फसानेके समान हमारे विवेकी गूढ आत्मपरिज्ञनी सम्राट्को फसानेका विचार कर रहा है! उसके लिये उचित व्यवस्था करनी चाहिये। (विनमिराजका गर्व गलित होरहा था)

पीठमर्दक—वह सामान्य पर्वत नही है। विजयार्धपर्वत बहुत बडा पर्वत है। इसलिये ऊंचे पर्वतपर रखनेसे उसे मद चढ गया है। इसलिये उसे वहासे हटाकर समतल भूमिपर रखदेना चाहिये।

विदूषक—उसे वहा हटाना भी नहीं, नीचे रखना भी नहीं, जहा बैठा है वहींपर कीलित करदेना चाहिये। [सबलोग हसने लगे]।

दक्षिण—आप लोग सब कर्कश ही बोलरहे है क्या तर्क शास्त्रका पठन तो नहीं किया है ? क्या वह नमिराज सम्राट् के लिये कोई परकीय है ? उसके प्रति इस प्रकारके विरस वचनोंको बोलना क्या उचित है ? वह अवश्य सम्राट् के पास संतोषके साथ आयगा। आपलोग चिंता न करें। अभी तो अपने भाईको उसने भेजा है; और वह भी समयपर आयगा ही, पहिले दूसरे सब राजावों नें आकर उत्तमोत्तम पदार्थोंको लाकर सम्राट् को समर्पण किये, अब वह भी उत्तम वस्तुको लाकर सम्राट् को समर्पण करेगा।

शठ—भेंटकी आशा तुमने क्यों दिखलाई है, हमारे सम्राट्को किसी चीज की कमी है ? उनको किस बातका लोभ है ?

भरतजी—आप लोग सब शांत रहें, उनके देनेकी और हमारे लेनेकी कोई बात नहीं। वह तो होगा ही। परंतु वह मेरे पास खुले हृदयसे नही आया इसीका मुझे दुःख है।

सम्राट्के अंतःकरणको जानकर विद्याधर मंत्री हर्षके साथ उठकर कहने लगा कि स्वामिन् ! आप ठीक फरमा रहे है। हमारे राजा अवश्य आपके पास आजायेंगे। आप जिस समय विजयार्ध की उस ओर पधारेंगे उस समय वे अवश्य ही विनयके साथ आपसे आकर मिलेंगे। स्वामिन् ! आप व्यवहार विनयके लिये हमारे राजाको मिलने के लिये कहते है। पदार्थकी इच्छा आपको क्या है, उसकी क्या बडी बात है, उसे मैं ही आगे लाकर आपको समर्पण कराबूंगा।

विनमि भी सम्राट् से कहने लगा कि आपके चित्तको दुखाना यह हमारी बुद्धिमत्ता नही है। आपके लिये जिससे संतोष होगा वैसा हम अवश्य करेंगे।

भरतजी—विनमि ! उसकी कोई बात नहीं, परंतु तुम्हारा भाई जो मेरे साथ अभिमान बतला रहा है क्या यह उचित है, केवल तुम्हारे

लिये सहन किया और कोई बात नहीं, इतना ही नहीं इसमें एक गूढ रहस्य है। सुनो, तुम्हारी माता मेरी बाल्यावस्थामें मुझसे बहुत प्रेम करती थी, मुझे खिलाती थी, पिलाती थी, उसके तरफ देखकर शांत हुआ। अगर मैं इस समय कुछ करता तो मेरी मामीजी तो यही कहती कि मेरे पुत्रोंने अविवेकसे कुछ किया तो भी भरत ने उनको परकीय दृष्टिसे देखा। आप लोगो में कौनसा गुण है, मामा और मामीके तरफ देखना चाहिये, उनके हृदयमें कोई भेद नहीं है, आपलोग मायाचार करते है।

पासके मित्रगण विनमिराजासे कहने लगे कि विनमि ! तुम्हारा भाग्य बहुत बडा है। तुम्हारे माता पिताओंको जब सम्राट्ने मामी व मामाके नामसे संबोधित किया इससे अधिक और सन्मान क्या होसकता है ? उत्तगोत्तम कन्यारत्नों को समर्पण करने वाले हजारों राजा है, परंतु सम्राट्ने आजतक किसीको मामी मामाके नामसे संबोधन नहीं किया है, यह भाग्य तो आप लोगोने पाया है, फिर भी सम्राट् के साथ भेदभाव रखते हो यह आश्चर्य की बात है।

बुद्धिसागर मंत्रीने भी विनमिसे कहा कि विनमि ! नमिराजसे जाकर मेरी ओरसे भी विनंति करना कि शीघ्र ही वह सम्राट्से आकर मिले।

उस समय अन्य मित्रोने कहा कि विनमि ! अब तो हद होगई। सम्राट्का मंत्री बुद्धिसागर अपने स्वामीके सिवाय और किसीको विनंति शब्दसे विनय नहीं कर सकता है। फिर भी नमिराजाकेलिये विनंति शब्दका प्रयोग कर रहा है। इस से अधिक और कौनसे सन्मान की आवश्यकता है ? आज सम्राट्के पास बुद्धिसागर के सिवाय और किसका महत्व अधिक है, वह सम्राट्का प्रतिनिधि है। वह दूसरे बडेसे बडे राजाओंके साथ भी इस प्रकार बोल नहीं सकता है। ऐसी अवस्थामें तुम्हे ही विचार करना चाहिये कि सम्राट्के हृदयमें तुम्हारेलिये कौनसा

स्थान है ?

दूसरे लोग कन्या वगैरे देकर बहुत अधिक चाहते हुए साम्राट्के साथ संबंध बढाते है। परंतु आप लोग तो जन्मजात संबंधी हैं। ऐसी अवस्था में चक्रवर्ती के मन को दुखाने का साहस आप लोगोंको कैसा होता है यह आश्चर्य की बात है। इत्यादि रूप से विनमिराज से कहने लगे।

विनमिराज भी विवश हुआ, उसने स्पष्ट कहा कि भावाजी, आप उत्तरखंड को जिस समय आयेंगे उस समय नमिराज अवश्य ही आप का दर्शन करेंगे। अब विशेष बोलने से क्या प्रयोजन ? आप को छोड कर रहना क्या बुद्धिमत्ता है ? आपके वैभव को सुनकर माताजी पहिलेसे ही प्रसन्न हो रही थी, ऐसी परिस्थिति में हम नहीं जान सकते है ? आपसे बढ कर हमें और बंधु कौन है ? आप के हृदय को हम दुखायेंगे नहीं, अब अवश्य ही आप को संतुष्ट कर देंगे।

भरत—विनमि ! ठीक है, मैंने अपने मामा के पुत्र समझकर तुम लोगों के साथ प्रेम किया, परंतु तुम लोगोंने मुझे परकीय समझ लिया, कोई बात नहीं, जो हुआ सो हुआ। साथमें भरतजीने विनमि को पास मे बुलाकर अनेक वस्त्र आभूषणों को उपहार में दिये। व साथ में नमिराज व अपनी मामी को भी योग्य उपहारों को दिये। साथ मे भरतजी ने प्रेम के साथ विनमिको आलिंगन दिया।

विनमि को ऐसा मालुम हुआ कि मैं बडे भारी भाग्यशाली हूं। इस लोक में ऐसे विरले ही होंगे जिन को अनेक राजावों के सामने साम्राट् आलिंगन देता हो।

मित्रोनें भी विनमिकी प्रशंसाकी। विनमिने हर्षके साथ भरतजी को नमस्कार किया, विद्याधर मंत्रीनें भी साष्टाग नमस्कार किया व विमानमें चढकर आकाश मार्गसे चले गये। जाते समय आपस में बातचीत करते जा रहे थे कि अब सुभद्रा देवीको नही देनेपर सम्राट छोडेगा।

नही । इस लिये नमिराजको जाकर मनाना चाहिये ।

इधर भरतजीने सभामें उपस्थित मित्रोंको भी बुलाकर उनका यथेष्ट सम्मान किया । मित्रगण भी जाते हुए चक्रवर्तीकी दूरदर्शिताकी प्रशंसा करते हुये जा रहे थे । सम्राट बहुत बुद्धिमान हैं । गंभीर है, जिस दिन विनमि आये उसी दिन उसे न कराकर इतने दिन अपने मनमें गुप्तरूपसे इस विषयको रक्खा, वह इसलिये कि विनमि के मन में दुःख होकर वह यहांसे जल्दी चला जाता, परंतु अब सब कार्य होने के बाद, मंगल विवाह होनेके बाद यह सब वृत्तांत विनमिसे कहा देखो ! क्या ही बुद्धिमत्ता है ! सुभद्रादेवीके साथ विवाह करलेने की इच्छा है । उसके प्रति मोह है । परंतु अपने मुखसे उसे न कह कर उसे अनायास आनेके मार्ग को तैयार किया । कमाल है !

इतने में कृतमाल आया, जयकुमारने आकर प्रार्थना की कि स्वामिन् ! आगेकी आज्ञा होनी चाहिये । सम्राटने भद्रमुखको बुलवाकर कहा कि यह कृतमाल तमिस्र गुफाके लिये अधिपति है । इसके साथ जाकर उत्तरकी ओर जाने के लिये मार्ग तैयार करो । तदनंतर हम यहांसे आगे प्रस्थान करेंगे ।

पानीकी खाईको निकालकर वज्रकपाटको फोडें और गुफाके अंधकारके लिये काकिणीरत्नकी प्रभासे काम लेना। गुफाके बीचमें सिंधुनदी दक्षिण मुखहोकर बहरही है, साथमें पूर्व व पश्चिमसे दो भयंकर नदी आकर मिल गई हैं । पश्चिमसे निमग्न और पूर्वसे उन्मग्न नामक भयंकर तरंगोंसे युक्त होकर आती है । निमग्न तो उसमें जो भी पडते हैं उनको पातालको ले जाती है और उन्मग्न गेंदके समान आकाशमें उडा देती है इसलिये होशियारीसे जाना । सभी नदियोंको चर्मरत्नसे पार कर सकते हैं, परंतु इनको पार करना नहीं हो सकता है । इसलिये आवश्यकता पडे तो उन दोनों नदीयोंपर पुल बांधना चाहिये । पानीको स्पर्श न कर ऊपरसे ही पुल बांधना चाहिये । इस कामके लिये भूचरियोंसे काम नहीं चल

सकता, अंबरचर व्यंतरोंसे ही यह काम होसकेगा। फिर उस तरफ जाकर उत्तर दिशाकी ओर के कपाट को फोडकर निकालें और हमारे आनेतक कृतमाल सेनाको लेकर वहींपर रहें। पुल बांधने का काम भद्रमुख का है, गुफाके संरक्षणका कार्य कृतमाल करें, और खाई बनवाकर अंतके कपाटको फोडनेका काम जयकुमार करें। इस प्रकार तीनोंको काम दिया। और व्यंतरश्रेष्ठों को बुलाकर उनको मदतके लिये उनके साथ जानेको कहा।

बुद्धिसागर सम्राट्के ज्ञानको देखकर आश्चर्यचकित हुआ। उसने कहा कि स्वामिन्! आपने पहिले देखा ही हो जिस प्रकार वर्णन किया आपका ज्ञान सातिशय है।

भरतजीने कहा कि बुद्धिसागर! वहा जाकर देखने की क्या आवश्यकता है, इस में क्या आश्चर्य की बात है? जैनशास्त्रों का स्वाध्याय करनेवाले इस बात को अच्छीतरह जान सकते हैं। तुम भी तो उस को जानते हो।

बुद्धिसागर ने कहा कि स्वामिन्! हम जानते तो जरूर हैं, परंतु उसी समय भूल जाते हैं, परंतु आप की धारणा शक्ति विशिष्ट है। इत्यादि प्रकार से प्रशंसा की।

भरतजीने भी समयोचित सन्मान कर बुद्धिसागर को अपने स्थानमें भेजा व स्वतः महल की ओर चले गये। आज अनेक राणियां उन की दासियोंसे वियुक्त हैं इसलिए वे शायद कुछ चिंतातुर होंगी। इसलिये उन सबको संतुष्ट करने के लिये भरतजी उधर चले गये।

भरतजीके व्यवहारको देखनेपर उनके चातुर्यका पता लगता है। किसीको भी वे अप्रसन्न नहीं करते। अप्रसन्नता उपस्थित होनेके समयमें भी वे सरस विनोद संकथालाप कर सामने के व्यक्ति को प्रसन्न कर देते हैं। विनमिराजके वार्तालापसे पाठक इस बातका अनुभव करते

होंगे। यह उनका सातिशय पुण्य का फल है। इस के लिये उन्होंने क्या किया है? वे रात्रि दिन परमात्माकी भावना करते है कि हे परमात्मन्! सरस, सुमधुर बातोसे ही दुष्ट कर्मों की निर्जरा करने का सामर्थ्य तुममें है, क्यों कि तुम सुखाकरहो, इसलिये मेरे हृदयमें तुम सदा फाठ बने रहो। हे सिद्धात्मन्! आप गुणवानोंके स्वामी है, सुज्ञानियोंके राजा है। मुमुक्षवोंके लिये आदर्श रूप है। इसलिये प्रार्थना है मुझे द्विगुण चतुर्गुण रूपसे सुबुद्धी दीजियेगा।

इसी भावनाका फल है कि सम्राट् को सर्व कार्यों मे अनायास जयलाभ होता है।

इति त्रिनगि वार्त्तालाप संधि

अथ वृष्टिनिवारण संधिः

एक महीनेके बाद जयकुमारने आकर चक्रवर्ती से कहा कि स्वामिन् ! आपकी आज्ञानुसार सर्व व्यवस्था की गई है। लोगों को उत्तर खंडमें जानेके लिये योग्य मार्ग तैयार किया गया। निमग्न और उन्मग्ननदीके ऊपर पुल भी बांध लिया है। भूतारण्य देवारण्य नामक बडे प्रसिद्ध जंगलके वृक्षोंको लाकर इस काममें उपयोग किया गया। इस लिये इस कार्य में इतनी देरी लगी। वह पर्वत दक्षिणोत्तर पचास योजन प्रमाण है, उसके बीचोबीच पुल की व्यवस्था की गई है। तमिस्र गुफाने मारीके समान मुंह खोला। तथापि वीरतासे प्रवेशकर कपाटको तोडा। तो भी स्वामिन ! मै समझता हूं कि मैने इसमे कोई वीरताका कार्य नहीं किया है। प्राण गये हुए शेरके नखको तोडना कोई बडी बात नहीं, इसी प्रकार अग्निकी ज्वाला शांत हुए गुफाका मैंने कपाट तोड दिया इस में कौन सी बडी बात है, सचमुच में महावीरों के लिये असदृश कार्य को आपने किया है। भयंकर अग्निज्वालारूपी प्राण भी घबराकर चला जावे इस प्रकार की वीरतासे सामने के विशाल वज्रकपाटका आपने स्फोटन किया है। परंतु मै तो एक गिरे हुए मकान के पीछे के छोटे से दरवाजे को ही खोला है, इसमें क्या बहादुरी हुई ?

स्वामिन् ! विशेष क्या कहूं ? आपके ही पुण्ययोगसे वह दरवाजा अनायास खुल गया। कृतमाल भी सम्राटकी सेवा पाकर अपनेको धन्य मानता है। वह कृतकृत्य हो गया, स्वामीकी आज्ञानुसार वह व्यंतर सेनावोंको साथ लेकर गुफामुखमें पहरा दे रहा है। भूचरोंसे खाई खुदवाई और खेचरोंसे पुलका कार्य कराया गया। इस प्रकार सेनापति व विश्वकर्माने निवेदन किया।

एक महीनेके बाद प्रस्थानभेरी बजनेके बाद वहांसे सेनाका प्रस्थान हुआ। सबसे आगे जयकुमार अनेक राजावोंके साथ जा रहा है। तदनंतर व्यंतरोंकी सेना जा रही है। बीचमें गणबद्ध देवोंके साथ भरतजी जा रहे है। अपनी सेनाके साथ सोपान मार्गसे चढकर उस गुफामें प्रवेश कर गये और आगे जाकर सिंधुनदीके तटपर जा रहे थे वहांपर भयंकर अंधकार है, तथापि एक कोसमें एक काकिनीरत्न रक्खा गया है। उसके प्रकाशमें जानेमें सम्राटकी सेनाको कोई कष्ट मालुम नहीं होता था। दिन रात्रीका विभाग वहांपर मालुम नहीं होता था। दिनमें भी अंधकार ही अंधकार रहता था, तथापि घडीकी सहायतासे दिनरात्रिके विभागको जानकर सम्राट सायंकालके भोजन वगैरे संध्याकृत्यको करते थे। विवेकी भरत किसी भी जगह किसी कारणसे फंसनेवाले नहीं हैं। गुरु हंसनाथ परमात्माका ध्यान करते हुये स्थान स्थानपर मुक्काम करते जा रहे थे। हमेशा स्त्रियोंकी सेना पीछे रहती थी, परंतु उस गुफामें शायद वे डर जायेंगी ऐसा समझकर अपने साथ ही ले जा रहे हैं। अर्ककीर्ति आदि पुत्रोंको बुद्धिसागर के साथ भेजकर स्वयं स्त्रियोंका योग क्षेम विचारते हुए जारहे थे। इतना ही नहीं उस भयकर गुफामें स्त्रियां डर जायेंगी इस विचारसे अपने अनेक रूप बनाकर उनके साथ भरतजी विनोद संकथालाप करते जाते हैं। संगीत करनेवाली स्त्रिया अध्यात्म गायन कर रही हैं। उनमें आत्म कलाका वर्णन है। उनका अर्थ समझाते हुए भरतजीको बडा हर्ष होता था। दुनियामें सब लोगोंको कहीं सुख और कहीं दुःख होता है। परंतु विवेकियोंको सब जगह सुख ही सुख है, इस बातका साक्षात् अनुभव उस गुफामे भरतजी कर रहे थे। इस प्रकार बहुत आनंदसे उस भयंकर पुल व गुफाको आनंदके साथ सम्राटने सेनासहित पार किया।

कृतमालने सम्राटके स्वागत के लिये पहिले से ही गुफाके अनेक द्वारोंमें तोरण बंधनको किया था, उन सब की शोभा को देखते हुए सम्राट् आगे बढ रहे हैं। उस अंधकारमय गुफा को पार करने के बाद सब को बडा हर्ष हुआ। जिस प्रकार तबेले में बंधे हुए घोडे को मैदान में लानेपर वह जिस प्रकार आनंद से इधर ऊधर दौडता है उसी प्रकार अंधेरे से प्रकाश में आने पर उन स्त्रियों के हृदय में भी हर्ष उत्पन्न हुआ। गुफा के बाहर सब राणियों के सुरक्षित रूप से आनेपर चक्रवर्ति ने अपने अनेक रूपों को अदृश्य कर एक ही रूप बना लिया। इसी प्रकार उस गुफासे सर्व सेना बाहर निकल आई, सबसे पहिले सम्राट् अपने पुत्र, मंत्री, सेनापति, पुरोहित आदिसे मिल कर नंतर मित्रगण, विद्वज्जन, कवि, गायक आदि सभीसे कुशल प्रश्न किया। सम्राटने सेनापतीसे प्रश्न किया कि क्या सेनाके सभी लोग सुरक्षित रूपसे आगये? सेनापतिने 'आगये' इस प्रकार उत्तर दिया। सम्राट निश्चिंत व संतुष्ट हुए। इसप्रकार उस गुफासे बाहर निकलनेके बाद उस मध्य म्लेच्छ खंड में मुकाम करनेका निश्चय हुआ। सम्राटकी आज्ञासे सेनापतीने सर्व व्यवस्था की। कृतमालको गुफाकी सुव्यवस्थितिके उपलक्ष्यमें अनेक उत्तमोत्तम उपहारोंको भेट मे दिये। वहांपर एक विचित्र व अपूर्व घटना हुई।

उस मध्यम्लेच्छ खंडमे चिलातराज और आवर्तकराज नामक दो प्रमुख राज्यपालन कर रहे हैं। वे बडे अभिमानी हैं। उनको सम्राटके आनेका समाचार मिला। वे कहने लगे कि कभी इस खंडमें चक्रवर्ति नहीं आता है! आज यह क्यों आया? हम लोग इसके आधीन नहीं हो सकते। परंतु युद्ध कर इसे लौटाना कठिन है। अन्य उपायोंसे ही इसे यहासे वापिस भेजदेना चाहिये। इस विचार से उन्हों ने इस आपत्ति के समय कालमुख मेघमुख नाम के अपने कुलदे-

वोंकी आराधना की, वे दोनों देव प्रकट होकर कहने लगे कि आप लोगोंनें हमें क्यों स्मरण किया है बोलो ! हमसे क्या कार्य की अपेक्षा करते हो ?

उन दोनोंने उत्तर दिया कि देव ! हम लोग तो आपलोगोंके भक्त है । तब दूसरोंको नमस्कार करना क्या उचित है ? कालमुख व मेघमुख के भक्तोंने जाकर कालवश नरपतिके चरणोंको नमस्कार किया यह घटना ही आपलोगोंके अपमान के लिए पर्याप्त है । इसका उपाय होना चाहिये । इसप्रकार उन दोनों देवोंके चरणोंमे चिलातक व आवर्तक राजाने प्रार्थना की । तब देवोने आश्वासन दिया कि आपलोग उठो । सात आठ दिन तक ठहर जाईये । तब सब आपलोग देखें । उनके साथ युद्ध करके जीतने का सामर्थ्य हममें नहीं है । तथापि ७-८ दिनतक बराबर मूसलधार वृष्टि कर के उन को जिस रास्ते से आये हैं उसी रास्ते से वापिस भेजते हैं । आप लोग चिंता न करें । इस प्रकार उन देवों के कहनेपर दोनों राजा निश्चित होकर वहा से चले गये ।

उसी समय आकाश बादलों से छागया । हाथियोंके समूहके समान मेघपंक्ति एकत्रित हुई । काल राक्षसोने शायद युद्ध करनेके लिए आकाश में अपनी सेना रखी हो इस प्रकार कालमेघ से सर्व आकाश प्रदेश भर गया । सचमुच में उस समय प्रलय काल का ही भय सूचित हो रहा था । क्या नीलपर्वत ही आकर आकाश प्रदेश में खडे तो नहीं हुए ? अथवा तमालतावोंने आकाश प्रदेश पर आक्रमण तो नहीं किया ? इस प्रकार की शंका उस समय उत्पन्न हो रही थी ।

चंद्र सूर्य आच्छादित हुए । दिन में रात्रि होगई । सर्वत्र अंधकार ही अंधकार छागया । वे दोनों देव पहिले से आगे के अनिष्ट को

सूचित कर रहे हों मानों उस प्रकार बिजली चमक रही है। बिजली व इंद्र धनुष्य के सम्मेलन से ऐसा मालुम हो रहा था कि शायद वे दोनों देव अपनी आंखोंको लाल करके क्रुद्ध दृष्टि से नीचे की ओर देख रहे हों। वज्रकपाट का विस्फोटन कर जिस चक्रवर्तिने दुनियाको हिलाया और भयभीत किया उसकी सेना को भय उत्पन्न करने के लिये बडे जोर से मेघ गर्जना होने लगी। एक तरफसे बिजली चमक रही है, एकतरफ आंधी बहरही है। शायद वह आंधी इस बातकी सूचना देरही है कि आपलोग जल्दी यहांसे चले जावें। प्रलयकालकी ही वृष्टि आरही है।

बडे बडे घडोंसे ही पानी नीचे फैलारहे हों इस प्रकारका भास उस समय होरहा है। मेघरूपी मदगजों से मदजल तो नही झर रहा है, अथवा मेघरूपी राहु विषको तो नहीं थूंकरहा है। इस प्रकार उस वृष्टिका भास होरहा है। उस वृष्टिको देखते हुए ऐसा मालुम होरहा था कि शायद प्रलय कालकी ही बरसात हो, उसकी धारा नारियलके वृक्षोंसे भी अधिक प्रमाणमें मोटी थी। उस समय सारी पृथ्वी जलमय होगई। चारोंतरफसे पानी भरकर सेनाके स्थान में पानी आने लगा। सब लोग घबराने लगे। चक्रवर्तिने चक्ररत्न व चर्मरत्नको उपयोग करनेके लिए आज्ञा दी। छत्ररत्नको ऊपरसे लगाकर ऊपरके पानीको रोका व चर्मरत्नको नीचेसे लगाकर नीचेकी ओरसे आनेवाले पानीको बंदकर दिया। चक्रवर्तिकी सेना ४८ योजन लंबे और ३६ कोश चौडे स्थानमें व्याप्त है। उतने प्रदेशोंमें छत्र व चर्मरत्न भी व्याप्त है। चर्मरत्नको शायद लोग चमडा समझेंगे। परंतु वह चमडा नहीं है अत्यंत पवित्र है वज्रमय है। उसे वज्रमय रत्नके नामसे कहते हैं। छत्ररत्नको सूर्यप्रभके नामसे भी कहते हैं। ये दोनों रत्न पुण्यनिर्मित हैं, असाधरण हैं।

ऊपरके उपसर्गको छत्ररत्न रोककर दूर कर रहा है, नीचेके उपसर्गको चर्मरत्न निवारण कर रहा है। चक्रवर्तीका पुण्य जबर्दस्त रहता है। उस मूसलधार वृष्टिसे सेनाकी रक्षा दोनों रत्नोंसे हो तो गई परंतु सेनामें अंधकार छाया हुआ है। उसे काकिणीरत्न ने दूर किया। लोगोंमें उस समय अंधकारसे जो चिंता छाई हुई थी उसे उस काकिणी रत्नने दूर किया, अतएव उसे उस समय चिंताहृतिके नामसे लोग कहने लगे। सबके रूपको दिखानेके कारणसे चक्ररत्नको सुदर्शन नाम पडगया।

पानी मूसलधार होकर बराबर पड रहा है। सम्राटने सोचा कि शायद इस प्रदेशमें पानी अधिक पडता होगा। इसी विचारसे वे पानीकी शोभाको देख रहे हैं जैसे कि एक व्यापारी जहाजमें बैठकर समुद्रकी शोभा देख रहा हो। देश व काल के गुण से यह पानी बरस रहा है, कल या परसों तक यह बंद होजायगा, इस प्रकार भरतजी प्रतीक्षा कर रहे थे। परंतु पानी सात दिन तक बराबर बरसता रहा। भरतजी विचार करने लगे कि रात्रिंदिन निरवकाश होकर यह पानी बरस रहा है। सात दिन से बरसने पर भी उल्टा बढता ही जा रहा है कम नहीं होता है। इस से सेना के भयभीत होने की संभावना है। आकाश और भूमि पानी से एक स्वरूप हो रहे हैं। जमीन को देखते हुए समुद्र के समान हो गया है। ताड वृक्ष से भी अधिक प्रमाण में स्थूल धार से यह पानी पड रहा है। यह मनुष्यों का कार्य नहीं है। यह अवश्य दैवीय कारण है। नहीं तो सात दिनतक बराबर नहीं बरसता। मागधामर व जयकुमार को बुलाकर कहा गया कि आप लोग जरा बाहर जाकर देखें कि क्या यह देवकृत चेष्टा तो नहीं है? जयकुमार और

मागधामरने देखा कि ऊपर आकाश में देवगण खडे होकर यह सब कर रहे है। तब सम्राट् को नमस्कार कर दोनों आकाश में चले गये उन के पीछे अनेक व्यंतर भी आकाश मार्गपर उड गये।

इन स्वामिद्रोहियोंको पकडो ! मारो ! छोडो मत ! इत्यादि शब्दों-को उच्चारण करते हुए उन देवोंका पीछा किया। देवोने पानी बरसाना बंदकर युद्धके लिये प्रारंभ किया। उसमें भी विद्याधरोने उनको परास्त किया तो वे अग्निकी वर्षा करने लगे। विद्याधरोने अग्निस्तंभविद्यासे उसको रोका। इस प्रकार व्यंतरोने अनेक प्रकारसे उनको पराजित किया तो वे देव एक तरफ जाकर अपने परिवारके साथ खडे होगये। इधर मागधामर आदि व्यंतर उनको दबाते ही जारहे हैं। उधरसे जयकुमार पीछेसे उनको दबारहा है।

भरतेश के साथमें द्रोह करना सामान्य काम नहीं है, व्यर्थकी उद्दण्डता मत करो, इस प्रकार पहिले से कहनेपर इन लोगोने नहीं माना, घमंडसे अनेक मायाकृत्योंको करने लगे। इन स्वामिद्रोहियोंको छोडो मत। मारो, कूटो, पीटो इत्यादि शब्द कहते हुए उधरसे जय-कुमार दबारहे है। जयकुमारको देखते ही मागधामर आदि चक्रवर्ति के पुण्यकी सराहना करने लगे।

अब देवोने देखा कि हम लोग इनसे बच नहीं सकते हैं। इस लिए किसी तरह जान बचाकर भागना चाहिये इस प्रकार के विचारसे कौवे जिस प्रकार आकाशमें उडते हैं उड़कर जाने लगे। उस समय जयकुमारने उन कालमुख व मेघमुखको पकडनेके लिए आदेश किया। परंतु दोनों डरके मारे भाग गये। कहीं इनके हाथमें आयेंगे इस भयसे हिमवान् पर्वतको उल्लंघन कर भागे और छिपगये।

अभीतक चिलातक राजा अपने कुलदेवोंके उपद्रवोंको देखते हुए बहुत ही प्रसन्न होरहा था। परंतु जब यह मालुम हुआ कि वे कुल

देव अब भयभीत होकर भाग गये हैं तो उसको भी भय मालुम हुआ। वह अब अपनी जान बचानेके लिए किसी गुप्त स्थान में जाकर छिप गया। परंतु आवर्तक तो यह सोचरहा था कि बरसात बंद हुई तो क्या हुआ? हमारे कुछ देव अभी युद्धकरके शत्रुओंको भगायेंगे। इस विचारसे वह बराबर उस ओर देख ही रहा था इतनेमे जयकुमार आदिने आकर उसे घेर लिया। चिलातक राजा यद्यपि जाकर जंगलमें छिप गया था उसे व्यंतरगण जान सकते थे। तथापि डरके मारे छिपे हुए को पकडना उचित नहीं है। उसे जाने दो। उसकी खबर कल लेंगे। इस प्रकार कहकर आवर्तक राजाको पकडकर लेगये।

उस युद्धमें लडनेवाले भूप अनेक वहांपर थे। परंतु जयकुमारने केवल आवर्त राजाके ही दोनों हाथोंको बांधकर उसे राजाकी ओर लेगया।

उस समय सूर्यका उदय होगया था। भरतजी दरबार लगाकर विराजमान हुए हैं। जयकुमारने कैदी को लाकर सम्राट्के सामने खडा-कर कहदिया कि स्वामिन्! यही स्वामिद्रोहि है। इसीने देवोंकी सहा-यतासे हमको कष्ट पहुंचाया है।

भरतजी—सीधे साधे मेरे पासमें न आकर उद्दण्डतासे युद्ध करनेकी भावना क्या इस दुष्टने की थी? इस पापीके मकुटपर लात मारो, क्यों खडे खडे देखते हो, इस प्रकार भरतजीने क्रोधसे कहा।

सेनानायक उसे लात मारनेके लिये आगे बढा तो सम्राट्ने उसे रोका व एक चपरासी को आज्ञा दी कि तुम लात दो! सम्राट्की आज्ञा पाकर चक्रवर्तिके पादत्राण को सम्हालनेवाले चपरासीने उसे अपने बाये पैरसे लात दिया। आवर्तकराजाका मकुट ठंढण शब्द करते हुए जमीन

पर पड गया, मानो वह शब्द शायद घोषित कर रहा था कि भरतके साथ उद्दण्डता करनेवालोंकी यह हालत होती है।

भरतजीने सेनापतिको आज्ञा दी कि इस दुष्टको हमारे सामने से लेजावो और नजर कैदमें रक्खो। आज्ञा पाते ही जयकुमारने उसके बंधे हुए हाथोंको खुलवाये व एक मकानमें लेजाकर कैद रखने की व्यवस्था की।

भरतजी जयकुमार और मागधामरसे कहा कि आपलोगोंने बहुत अच्छा काम किया है। आज आपलोग जावे। कल मै आपलोगोंका सत्कार करूंगा, सेनाको भी आज विश्रांति मिलने दो। इसप्रकार कहते हुए वे महलमें चले गये।

इसप्रकार भरतजीने दुष्टोंका निग्रह किया। और शिष्टोंका संरक्षण भी करेंगे। यही उनका क्षात्रधर्म है।

भरतजीका पुण्य जबर्दस्त है। विजयार्ध पर्वतके तमिश्र गुफा, सिंधु आदि नदियोंको पारकर आगे बढना कोई सामान्य कार्य नहीं है। वहांपर उन्मग्न निमग्न नामक दो भयंकर भोंवरे है। वज्रमय कपाटोंको तुडवाकर उन भयंकर नदियोपर पुल बंधवाकर उत्तर खंडमें आप पहुंचे है। यहांपर आते ही यह अपत्ति खडी होगई। उसे भी निरायास ही उन्होने दूर किया तो यह सब उनके पूर्वसंचित पुण्यका ही फल है। भरतजी सदा इसप्रकार की भावना करते है कि—

हे परमात्मान्! शरीररूपी तमिस्र गुफा में रागद्वेषरूपी नदी मौजूद है। उसे पार करने के लिए आप चिद्घन (ज्ञानघन) रूपी पुलको बांधते हैं उस से उस नदी को उल्लंघन करते हैं। इस लिए हे दिव्यलोचन! मुझे भी इस प्रकारकी सुबुद्धी दीजियेगा। भगवन्! कृत्रिमवृष्टि की तो मामूली बात है। कर्म के आस्रवरूपी

वृष्टि अनंतानंत कार्माणवर्गणाके समूहसे प्रतिसमय हमपर पडती है। उसे आत्मध्यानरूपी उत्कृष्ट छत्रसे आप निवारण करते हैं। इसलिये हे निर्ममाकार! आप मेरे हृदयमें सदा बने रहें जिससे मैं उस अकृत्रिम अलौकिक वृष्टिसे भी भयभीत न हो सकूं।

इसप्रकारकी भावना का ही फल है कि सम्राटके संकट हरसमय लीलासे टलते जाते हैं।

इति वृष्टिनिवारणसंधिः

सिंधुदेवियाशिर्वाद् संधि.

सात दिनतक भयंकर वृष्टि होनेसे भरतकी राणियोंके चित्तमें एक दम उदासीनता छागई थी। भरतजीने दो दिनतक महलमें रहकर उनके हृदयमें हर्षका संचार किया। जिस प्रकार ओस पडकर मुरझाये हुए कमलोंको सूर्य प्रफुल्लित करता है, उसी प्रकार उन म्लानमुखी राणियोंको गुणशाली भरतजीने आनंदित किया। अंदरसे स्त्रियोंको प्रसन्न करके बाहर दरबारमें आये व जयकुमार आदि वीरोंको संबोधन कर कहने लगे कि आप लोगोंनें इस युद्धमें बहुत कष्ट उठाया, बडी मेहनत की।

सम्राट्के वचनको सुनकर जयकुमार आदि वीर बोले कि स्वामिन्! हमें क्या कष्ट हुआ। आपके दिव्यनामको स्मरण करते हुए हम-लोग युद्ध करते है। उसमें सफलता मिलती है। इसमें हमारी वीरता क्या हुई। सब कुछ आपकी ही कृपा का फल है। स्वामिन्! हम झूठ नहीं बोल रहे हैं। आपका पुण्य अनुपम है। हम लोग जब उन मायाचारी देवताओंको इधरसे दबाते हुए जारहे थे इतनेमें उधरसे अकस्मात् ही दो देव अपनी सेनाके साथ उनको दबाते हुए आरहे थे, साथमें आपके नामको भी उच्चारण कर रहे थे। वे उधरसे आरहे थे, हम इधरसे जारहे हे थे। बीचमें फसे हुए देवतावोनें देखा कि अब बिलकुल बच नहीं सकते है,इसलिये वे एकदम जान बचाकर भाग गये।

जयकुमारके निवेदनको सुनकर सम्राट्ने मागधामरसे प्रश्न किया कि मागध! वे दोनों देव कौन थे? मागधामर कहने लगा कि स्वामिन्! वे दोनों हमारे व्यंतरों के लिये माननीय प्रतिष्ठित देव हैं, एक गंगादेव है और दूसरा सिंधुदेव है। उन दोनोके आनेपर वे दुष्ट पिशाच एकदम भाग गये। वे दोनों देव कल या परसो तक आकर सम्राट् के चरणों का दर्शन करेंगे। चक्रवर्ति को यह समाचार सुनकर हर्ष हुआ

एवं उन दोनों देवोंके प्रति हृदय में प्रेम उत्पन्न हुआ। उस समय युद्ध में गये हुए सर्व वीरों को अनेक वस्त्राभरण वगैरे प्रदान कर सन्मान किया। एवं कुरुवंश के तिलक सोमप्रभ राजा के पुत्र जयकुमार को उस की वीरतासे प्रसन्न होकर अलौकिक उपहारों को प्रदान किया एवं उसे कहा कि जयकुमार! आज तुमने मेघमुख देवताको परास्त किया है। इसलिए आज से तुम्हे मेघेश्वर के नाम से उल्लेख किया जायगा। विशेष क्या? तुम्हारे लिए मैं वीराग्रणि यह उपाधि प्रदान करता हूं। तुम्हारी वीरतासे मैं प्रसन्न हुआ हूं। उस समय सभी विद्वानोंने इस की अनुमोदना की। सम्राट् ने अपने कोमलहस्त से जयकुमार की पीठ को ठोकते हुए प्रेम से कहा कि जयकुमार! तुम मेरे लिए अर्ककीर्ति के समान हो। तुम्हारी वीरकृतिपर मुझे अभिमान है। जयकुमार भी प्रसन्न हुआ! हर्षसे चरणोमें पडकर कहने लगा कि स्वामिन्। मैं आज धन्य हुआ। स्वामिन्! आवर्त के भाई माधव व चिलात राजा चरणोंके दर्शन करने की इच्छासे बाहर आकर खडे है। परंतु पहिले द्रोह करने के कारण से डर रहे हैं। इसलिये आज्ञा होनी चाहिये।

सम्राट्ने कहा कि वे दोनो द्रोहि तो है। उन दोनोंको देखने की आवश्यकता नहीं है, तथापि तुम्हारे वचनकी उपेक्षा करना भी ठीक नहीं है। इसालिये उनको मेरे सामने बुलावो। इस प्रकार उदारहृदयी व मंदकषायी भरतजीने कहा। जयकुमारने दोनोको लाकर सामने हाजिर किया। दोनों देवोंने हाथ जोडकर भरतजीके चरणोंको भक्तिसे नमस्कार किया व प्रार्थना करने लगे कि स्वामिन्! आप शरणागतोंकेलिए वज्रपंजर है। अतएव हमारी भी रक्षा करें। भरतजीने उनको पूर्ण अभयदान दिया। उन दोनोंने उठकर अनेक वस्त्राभूषणोंको भरतजीकी सेवामें समर्पण किये। साथ में जयकुमारने सम्राट्के कानमें सूचित किया कि ये स्वामीकी सेवामें कुछ कन्याओंको भी समर्पण करना चाहते है! सम्राट्ने इशारेसे उत्तर दिया कि यह समय नहीं है, तब जयकुमारने उनको इशारा किया।

सम्राट्ने माधव व चिलातको बुलाकर उनको अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको देते हुए कहा कि आपलोग दोनों जावें, और अपने राज्यमें सुखसे रहे। आवर्तक की उद्दण्डताके लिए हमने उसे उचित दंड दिया है। अब उसे देख नहीं सकते। माधव ! तुम उसे लेजावो, अपने राज्यमें उसको कुछ अलग संपत्ति देकर उसे रक्खो। मेरे हृदयमें अब कोई क्रोध नहीं है। आगे समय जानकर आप लोग मेरे पास आसकते है।

इस प्रकार उन दोनोंको भेजकर सेनापति जयकुमारसे सम्राट्ने कहा कि मेघेश्वर ! तुम अब पश्चिमखंडको वशमे करनेकेलिए जावो। और विजयकुमारको सेनासहित पूर्व खंडमें जाने दो। भरतजीकी आज्ञानुसार वे दोनो चले गये।

इधर विजयार्धदेवने आकर भरतजीको भक्तिसे नमस्कार किया व कहने लगा कि स्वामिन् ! आप अद्भुत पुण्यशाली है, जहां जाते हैं वहीं सभी आकर शरणागत होते है। सम्राट्ने बीचमें ही बात काटकर कहा कि उसे जाने दो !

विजयार्धदेव ! हिमवंतदेव मेरे पास संतोष के साथ आकर शरणगत होगा या उसे कुछ भयभीत करने की आवश्यकता होगी ? विजयार्धने कहा कि स्वामिन् ! हिमवंतदेव उग्र स्वभावका नहीं, मै शीघ्र ही वहां जाकर उसे आपके पाद में ले आवूंगा। ऐसा कहकर वह वहांसे चला गया। इतने में नाट्यमाल नामक देव आया। उसने सम्राटको साष्टांग नमस्कार किया। मागधामरने परिचय कराया कि स्वामिन् ! यह खंडप्रताप गुफाके अधिपति नाट्यमालदेव है। भरतजीने भी उस का सन्मानकर कहा कि अब इसे संतोषसे हमारी सेना में रहने दो। इस प्रकार सब को संतोष से भेजकर पुनः दूसरे दिन दरबारमें आसीन हुए।

गंगादेव और सिंधुदेव चक्रवर्ति के दर्शनार्थ आये है । उन्होंने पहिले आकर मागधामरसे कुछ कहा । मागधामर अपने साथ वरतनु आदि व्यंतरवीरोंको लेकर चक्रवर्तिके पास गया व वहांपर चक्रवर्ति के चरणोंमें साष्टांग नमस्कार किया । सम्राट्को आश्चर्य हुआ कि आज बात क्या है ? मागध ! प्रभास ! वरतनु ! आप लोग इस प्रकार क्यों कर रहे हैं? बात क्या है? कहो तो सही । तब मागधने कहा कि स्वामिन् ! हम सेवा में कुछ निवेदन करना चाहते हैं । उसे सुननेकी कृपा होनी चाहिए । आज जो स्वामीके दर्शनके लिए गंगादेव और सिंधुदेव आ रहे हैं । वे हम व्यंतरोंके लिए पूज्य हैं । जिनेंद्रके परमभक्त हैं । आपके प्रति भी उन के हृदय में पूर्णभक्ति हैं । इस बात को आप जानते ही हैं ! अतएव उन को कुछ आदरपूर्वक आनेकी आज्ञा होनी चाहिए । अर्थात् वे केवल भेंटको चरणोंमें रखकर खडे खडे ही नमस्कार करेंगे । इसकेलिए अनुमति मिलनी चाहिए ।

भरतजी हसते हुए कहने लगे कि मागध! इतनी ही बात है ! आप लोग इस मामूली बात के लिए इतने चिंतित क्यों होते है ? तथास्तु, तुम्हारी बात की मैं कभी उपेक्षा कर सकता हूं ? उनको आनेके लिए कहो ।

इतनेमें गंगादेव व सिंधुदेव आये, चक्रवर्तिके सामने भेंट रखकर अपने लिये योग्य आसनपर बैठ गये । समय जानकर सम्राट्ने कहा कि गंगादेव ! हमारे प्रति हित करनेवालोंको क्या मै पहिचानता नहीं? क्या आपलोगोंको मै उपेक्षितदृष्टिसे देख सकता हूं ? इतने संकोचसे आनेकी क्या जरूरत थी ?

गंगादेव व सिंधुदेवने कहा कि स्वामिन् ! हमने आपका हित किया है । तीन लोकमें आपका सामना कौन कर सकते हैं ? हमे कोई संकोच नहीं था । परंतु आपके सेवक व्यंतरोंके हृदयमें जो पूज्य

भाव हमारे प्रति है उसीने थोडा संकोच उत्पन्न किया। आप कोई सामान्य राजा नहीं है। षट्खंड भूमिको एक छत्राधिपत्य होकर संरक्षण करनेवाले महापुरुषके दर्शनको एकदम लेनेमें हमें भी मनमें संकोच होने लगा था। अपरिचितावस्थामें यह साहजिक ही है। स्वामिन्! जो आपका विरोधी है वह स्वतःका विरोधी है। जो आपका हितैषी है वह स्वतःका भी हितैषी है। उद्दण्डोंके गर्वको तोडनेका, शरणागतोंको संरक्षण करनेका सामर्थ्य जिसमें है ऐसे भाग्यशाली आपका दर्शन बहुत पुण्यसे ही प्राप्त होता है। इसप्रकार के उनके विनयको देखर इतर व्यंतरोंनें कहा कि सचमुचमें आपलोगोंनें सम्राटके सहज गुणोंका ही वर्णन किया है। सचमुचमें ये अलौकिक महापुरुष हैं। भरतजीने समय जानकर कहा कि विशेष वर्णन करने की क्या आवश्यकता है ? आप लोगों के विनय को मै अच्छी तरह जानता हूं। अधिक क्या कहूं। आज से आपलोग हमारे कुटुंबवर्ग में गिने जायेंगे। आप लोगोंके साथ हमारे रोटीबेटीव्यवहार तो नहीं होसकेगा। परंतु वचनसे ही बंधुत्वका व्यवहार कायम होसकेगा। आज से आप लोग हमारी राणियोंको आपकी बहिन समझें और आपकी देवियोंको हम हमारी बहिन समझेंगे। भरतजीकी इस विशिष्ट उदारताको देखकर पास के व्यंतरगण कहने लगे कि इस गंगादेव और सिंधुदेव महान पुण्यशाली है जिन्होने कि आज चक्रवर्तिके साथ बंधुत्वका भाग्य पाया है। तदनंतर गंगादेव और सिंधुदेवको अनेक उपहारोंको देते हुए सम्राट्ने कहा कि आप लोग आज अपने स्थान में जावें। हम कल ही वहांपर आयेंगे। आप के यहां जो जिनेंद्रबिंब है उस के दर्शन करने की हमें अभिलाषा है। भरतजीकी आज्ञा पाकर दोनों देव वहांसे संतोषके साथ अपने स्थानपर चले गये।

दूसरे ही दिन भरतजीने वहांसे प्रस्थान किया। कई मुक्कामोंको तय करते हुए सिंधुनदीके तटपर पहुंचे। सिंधुदेवने वहांपर भरतजी

का अपूर्व स्वागत किया। उत्तमोत्तम रत्न वस्त्र आदि को समर्पण करते हुए भरतजीका सन्मान किया। भरतजीने विचार किया कि आज का दिन इसके उपचार में बिताकर कल यहांपर सिंधु नदी के तीर्थमें स्नान कर फिर आगे प्रस्थान करेंगे। सो सम्राट्ने आकाशको स्पर्श करनेवाले हिमवान् पर्वतमें उत्पन्न होकर दक्षिणाभिमुख होकर जमीन में पडनेवाली सिंधुनदीको देखा। जमीनपर एक वज्रमय छोटा पर्वत मौजूद है जिसके ऊपर स्फटिकमणिसे निर्मित एक जिनबिंब है। उसके मस्तकपर यह नदी पडरही है। वह बिंब सिंहासनमें विराजमान है। उस पर वह पानी पडने से लोकमें भक्तगण ईश्वर अपने मस्तकपर गंगाको धारण करता है, इस प्रकार कहते हैं। द्विजों के साथ युक्त होकर भरतके मंत्री बुद्धिसागरने उस तीर्थमें स्नान किया एवं जिनेंद्र बिंबका स्तोत्र करने लगा। इसी प्रकार वे सर्व भूसुर (ब्राम्हण) पुण्यतीर्थ में स्नानकर सहस्रनाममंत्र के पाठको करते हुए श्री सर्वज्ञ प्रतिमाका जप कर रहे थे। इस पुण्यशोभाको सम्राट् बहुत आनंदके साथ देख रहे है। अपनी नाकको हाथसे दबाकर कोई प्राणायाम कर रहे हैं। कोई आचमन कर रहे हैं। और कोई सुंदर मंत्रोंको उच्चारण करते हुए अर्हन्नामकी स्तुति कर रहे हैं। इन सबकी भक्तिको देखकर सम्राट् मन मनमें ही प्रसन्न हो रहे हैं। मनमें विचार करते हैं कि ये पुरुनाथ (आदिप्रभु) की आदिसृष्टिके हैं, अतएव शिष्ट हैं। इस प्रकार की परिणामशुद्धि सबमें कहांसे आसकती है?

इतनेमें वहां स्नान करने वाले द्विज अब चक्रवर्ति तीर्थस्नान के लिए आयेंगे इस विचारसे जल्दी वहांसे निकल गये। सम्राट् अपनी राणियोंके साथ उस तीर्थ में प्रविष्ट हुए। अपनी राणियोंको तीर्थकी शोभा दिखलाकर बहुत भक्तिसे जिनेंद्रबिंबकी स्तुति भरतजीने की। स्नान करनेके बाद सभी द्विजों को दान दिया। तदनंतर मंत्रीको आज्ञा

दी कि इनको अच्छी तरह भोजन करावो । विप्रोने सम्राट् को " पुत्र पौत्रादिकके साथ सुखजीवी होवो " इस प्रकार आशिर्वाद दिया।

इतनेमें सिंधुदेवने आकर सम्राट्के कानमें कहा कि स्वामिन्! आपकी बहिन आपका दर्शन करना चाहती है। आज्ञा होनी चाहिये। तब चक्रवर्तिने सभी द्विजोंको वहासे भेजकर स्वयं महलमे प्रविष्ट हुए। वहांपर अपनी राणियों के साथ विराजमान हुए। इतनेमें वहांपर अनेक देवांगनावोंके परिवारके साथ रत्नाभरणोसे शृंगारित होकर सिंधुदेवी सम्राट्के पास आई, उस को देखनेपर वह सचमुच में चक्रवर्ति की बहनके समान ही मालुम होरही थी। अपने नवीन भ्राताके पास वह बहिन पहिले ही पहिले आरही थी। अतएव उसे कुछ संकोच होरहा था। परंतु भरतजीने बहिन! भय क्यों? निस्संकोच आवो, इस प्रकार कहकर उसके संकोचको दूर किया। सिंधुदेवीने पासमें जाकर मोतीकी अक्षतावो को समर्पण करते हुए भाई! चिरकाल तक सुखसे जीते रहो, इस प्रकारकी शुभ कामना की। साथ ही तुम अविचल-लीलासे षट्खंडराज्यकी संपत्ति को पाकर तुम सुखी होजावो इस प्रकार कहती हुई सिंधुदेवीने तिलक लगाया। आकाश और भूमिपर तुम्हारी धवलकीर्ति सर्वत्र फैले। इस प्रकार आशिर्वाद देती हुई अपने भाईको दिव्य वस्त्र को प्रदान किया। इसी प्रकार " कोई भी तुम्हारे सामने आवे उसे अपने वशमे करनेकी वीरता तुममें अक्षय होकर रहे " इस प्रकार कहकर भाई के हाथमें वीरकंकणका बंधन किया। इसप्रकार भरतकी राणियोंको भी " आपलोग एक निमिष भी अपने पतिविरहके दुःखको अनुभव न कर चिरकालत संततिके साथ सुखसे रहो " इस प्रकार आशिर्वाद देते हुए उनको भी देवागवस्त्रोंको समर्पण किया। आप लोग कभी बुढापेका अनुभव न करें, चिंता स्वप्नमे भी आपके पासमें न आवें। सदा जवानी बनी रहें इत्यादि आशिर्वाद दिया।

उन राणियोंने विनयसे कहा कि हम आपके आशिर्वादको ग्रहण करती हैं, वस्त्रकी आवश्यकता नहीं। परंतु उसीसमय भरतजीने कहा कि मेरी बहनके द्वारा दिये हुए उपहारको लेलेना चाहिये। तिरस्कार करना ठीक नहीं है। तब सब स्त्रियोंने सिंधुदेवीके उपहारको ग्रहण कर लिया, सिंधुदेवी कहने लगी कि देवियो ! मेरे भाईने जब मेरे दिये हुए पदार्थको ग्रहण कर लिया तो आपलोगोंकी बात ही क्या है? इस प्रकार कहती हुई सब राणियोंको एक २ रत्नहारको समर्पण किया। इसीप्रकार उन सब राणियोंको तिलक लगाकर सत्कार किया, फिर भरतजीसे कहा कि भाई ! आपलोग आये, हमें बडा हर्ष हुआ। अब यहापर एक दिन मुकाम कर आगे जाना चाहिये, बहिनकी इतनी प्रार्थनाको अवश्य स्वीकार करें। भरतजीने संतोषसे उसे स्वीकार कर लिया।

सिंधुदेवी कहने लगी कि भाई हम व्रतधारी नहीं हैं। अतएव हमारे हाथसे आप आहारग्रहण नहीं कर सकते है। इसलिये मैं सब भोजनके सामान को तैयार कर देती हूं। आप अपने परिचारकों से भोजन तैयार करावें। उसी प्रकार हुआ। दोनों समय भरतजीने अपनी राणियों के साथ आनंदसे भोजन किया। दूसरे दिन सिंधुदेवीको बुलाकर उस का सन्मान किया।

सिंधुदेवि ! बहिन ! आवो, पहिले मेरी एक बहिन थी। उसका नाम ब्राह्मिलादेवी था। उस का शरीर और तुह्मारा शरीर मिलता जुलता है। वह कैलासमें दीक्षा लेकर तपश्चर्या कर रही है। तुझे प्राप्त कर उस के वियोगके दुःखको मैं भूल गया हूं। अब मेरे लिए तुम ही ब्राह्मिला देवी हो।

इस प्रकार स्नेहभरे वचनों को सुनकर सिंधुदेवी कहने लगी कि भाई ! मैं आज कृतकृत्य होगई हूं। देवाधिदेव आदिप्रभुकी पुत्री, षट्-खण्डाधिपति की बहिन कहलानेका भाग्य मैंने पाया है, इससे बढकर और क्या चाहिये। इसके बाद सम्राट्ने नवनिधियों ओर इशारा कर

बहिन को नवरत्न वस्त्र आभरणादिसे यथेष्ट सत्कार किया। इसी प्रकार परिवार देवियोंको, सिंधुदेव आदिको कल्पवृक्षके समान ही विपुल उपहारोंसे सन्मान किया। तदनंतर भरतकी राणियोंने मोतीका हार, मुद्रिका आदिसे सिंधुदेवी का सत्कार किया। सिंधु देवीने यह कहते हुए कि मैंने जब दिया था आप लोगोने लेनेसे इन्कार किया था। अब मुझे क्यों दे रही हैं, लेनेके लिए संकोच किया। तब राणियोने क्या हमने नहीं लिया था ? यह कहकर जबर्दस्तीसे दिया। अन्योन्य विनयसे सदाकाल रहना अपना धर्म है, इसी प्रकार प्रेमसे सदा रहें इस प्रकार कहते हुए सबलोगोनें विदाई ली।

भरतजी जहां जाते हैं उनको आनंद ही आनंद रहता है, मनुष्य, देव, व्यंतर आदि सभी उनके बंधु होजाते है। मनुष्यों मे देखें तो सभी उनके गुणोंपर मुग्ध है। देवगण जरासी देरमें उनके किंकर होते है। उन्होने अपनी दिग्विजय यात्रामें कहीं भी असफलता का अनुभव नहीं किया। किसीने अदूरदर्शितासे उनके साथ प्रतिद्वंदिता करनेके लिए प्रयत्न किया तो वे बादमें पछताये। दिनपर दिन उन्हे अपूर्व उत्सवोंका अनुभव होता है। सिंधुनदी के तीर्थस्नान करनेका भाग्य, सिंधुदेव व सिंधुदेवीसे प्राप्त सन्मानको पाठक भूले नहीं होंगे। यह उनके सातिशय पुण्यका फल है।

भरतजी रात्रिंदिन इस प्रकार की भावना करते हैः—

हे परमात्मन् ! तुम स्वपरहितार्थ हो ! तुम तीर्थके रूप हो! संपूर्ण शास्त्रोंके सारार्थस्वरूप हो ! मुक्तिके लिए मूलभूत हो ! अतएव मेरे हृदयमें सदा बने रहो। हे सिद्धात्मन् ! थकेहुए इंद्रियोंको शांतकर आगे तपश्चर्या केलिए समर्थ बनानेकी शक्ति आपमें मौजूद है। अतएव आप विशिष्ट कलावान् हैं। जगमे अति बलशाली हैं। मेरे हृदयमे भी सन्मति प्रदान करें"

इसी भावनाका फल है कि भरतजीका समय सदा सुखमय ही बना रहता है । अत्युत्कट संकट भी टलकर भरतजी सिंधुके तीर्थमें स्नान कर श्रीजिनेंद्र के दर्शनको भी करसके ।

इति सिंधुदेवियाशिर्वादसंधिः
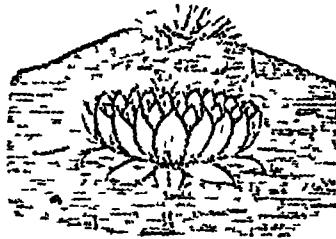
अथ अंकमाला संधिः

सिंधुदेवसे आदरके साथ विदाईको पाकर तथैव गुणसिंधु भगवंत को स्मरण करते हुए भरतजीने आगे प्रस्थान किया। एक दो मुक्कामको तय करते हुए सिंधु के तटमें ही फिरसे मुक्काम किया। वहांपर हिमवंतदेव अपने परिवारके साथ आया। विजयार्धदेव उसे ले आनेके लिये गया था, यह पाठकोंको स्मरण होगा, विजयार्धदेव उसे लेकर आया है। भरतजीसे "स्वामिन्! यह हिमवान् पर्वतके अग्र भागपर रहता है। सज्जन है, आपके दर्शनके लिए आया है।" इस प्रकार विजयार्धदेवने उस का परिचय कराया। हिमवंतदेवने आकर अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणों को चक्रवर्तिके सामने भेट में रखकर साष्टांग नमस्कार किया। साथ ही चंदन, गंध, गोशीर्ष, महौषध आदि अनेक उत्तम पदार्थों को समर्पण किया। भरतजीने भी उसे उपचार सत्कारसे आदरके साथ योग्य आसन पर बैठाल दिया। विजयार्धदेव भी बैठ गया।

भरतजी अब पश्चिम दिशा से गंगाकूट की ओर प्रयाण कर रहे है। उस समय उन को दाहिने भाग में सुंदर हिमवान् पर्वत दिख रहा था। उसके सौंदर्य को देखकर मागधामर से सम्राट् कहने लगे कि मागध! इस पर्वत में भी विजयार्धके समान ही एक दरवाजा होता तो अपन आगेकी शोभा देखनेके लिए जा सकते थे। आगे क्या २ स्थान है? बोलो तो सही!

मागधामर विनय से कहता है कि स्वामिन्! आप का कहना सत्य है। परंतु हिमवान् पर्वतके उस भाग में जो रहते है उन को हमारे समान आपकी सेवा करने का भाग्य नहीं है। इस पर्वत की उस ओर भोगभूमि है। वहांके मनुष्य भोग में आसक्त हैं। वहांपर सम्यक्त्व नहीं, व्रताचरण नहीं, इतना ही नहीं व्रतियों की संगति भी

उन को नहीं है। स्वामिन्! उनसे तो हम व्यंतरगण अधिक भाग्यशाली हैं। क्यों कि व्यंतरोंको भी व्रत नहीं है। तथापि व्रतियोंकी संगति हमें मिल सकती है। अतएव हम आप की सेवामें रहकर अनेक तत्वोपदेश वगैरे सुनने के अधिकारी हुए।

जिस प्रकार वे और हम व्रतरहित हैं, उसी प्रकार इस खंडमें रहने वाले म्लेच्छ भी व्रतहीन हैं। तथापि वे आर्यभूमि पर आकर व्रतादिक ग्रहण करते हैं। अतएव वे महापुण्यशाली हैं। स्वामिन्! हमलोग तो समवसरण में जाकर जिनेंद्रका दर्शन करते हैं, पूजा करते हैं। किसीने उत्तमदान दिया तो उसमें हर्ष प्रकटकर अनुमोदना देते हैं। परंतु यह भाग्य हिमवान् पर्वतकी उस ओर रहने वाले जीवोंके लिए नहीं है। केवल वे चिह्नजक ऐसे साधुवोंको आहार देकर उसके फलसे उस भोगभूमिमें जाकर उत्पन्न होते हैं। वहापर पुण्यकर्म का संचय नहीं करते हैं। साक्षात् जिनेंद्रके प्रथमपुत्र, आपका दर्शन करने का भाग्य इस क्षेत्रवालों को जिस प्रकार प्राप्त हो सकता है, वह उस क्षेत्रवालोंको प्राप्त नहीं हो सकता है। स्वामिन्! भोगभूमिज जीवोंको आपके दर्शन करने का भाग्य नहीं, अतएव प्रकृतिने हिमवान् पर्वतमें विजयार्धके समान दरवाजे का निर्माण नहीं किया। इत्यादि प्रकार से मागधामरने बहुत बुद्धिमत्ताके साथ कहा।

वरतनु आदि व्यंतर भी मागधामरके चातुर्य पर प्रसन्न हुए; स्वामीके हृदय को पहिचानकर वस्तुस्थिति का वर्णन करने में मागधामर चतुर है। भरतजीने भी मागधामरसे कहा कि मैंने भी केवल विनोद के लिए कहा था। नहीं तो मैं जानता ही था उससे आगे अपनेको जाने की आवश्यकता ही नहीं। इस प्रकार कहकर आगे प्रस्थान किया और गंगाकूट की ओर आने लगे। भरतजी गंगाकूट की ओर जिस समय आ रहे थे उस समय मार्ग में उनके स्वागतके लिए स्थान स्थान पर

तोरण लगाये गये हैं। कहीं रत्नतोरण है; कहीं पुष्पतोरण है, कहीं पत्रतोरण है। गंगादेवने सम्राट्के स्वागतके लिए यह सब व्यवस्था की है। अब गंगानदी एक कोस बाकी है। गंगादेव अपने परिवारके साथ वहांपर सम्राट्को लेनेके लिए आया है। चक्रवर्तिने गंगानदीके तटपर सेनाका मुक्काम करानेके लिए आदेश दिया। उसदिन भरतजीने गंगादेवके आतिथ्यको स्वीकार कर बहुत आनंदसे समय व्यतीत किया। दूसरे दिन भरतजीकी बहिन् गंगादेवी भाईके दर्शनके लिए अपनी परिवार देवियोंके साथ आई। एकदम भाईसे आकर मिलनेमें उसके हृदयमें संकोच होरहा था। परंतु भरतजीने "बहिन्! आवो, संकोच क्यों? इस प्रकार कहकर उसको दूर किया। गंगादेवीने पासमें आकर भाईसे निवेदन किया कि भाई! तुम्हारा यहांपर रहना उचित नहीं है। मैंने तुम्हारे लिए ही एक खास महलका निर्माण कराया है। तुम्हारे लिए वह न कुछ के बराबर है। तथापि बहिनकी इच्छा की पूर्ति करना तुम्हारा काम है। अतएव उस नवीन भवनमें प्रवेश करना चाहिये। आजके दिन आपका मुक्काम रहकर कल आप तीर्थवंदना करें, बादमें आप आगे जासकते हैं। बहिनकी इतनी प्रार्थना अवश्य स्वीकृत होनी चाहिये। भाई! हम लोग संपत्तिसे गरीब जरूर है। फिर भी भरतेशकी बहिन कहलानेका गौरव मुझे प्राप्त हुआ है। अत एव मै लोकमें सबसे श्रेष्ठ हूं। इसलिए डरनेकी कोई जरूरी नहीं, इस प्रकार कहती हुई उसने भरतके दुपट्टेको धरकर उठनेके लिए कहा। भरतजीने भी बहिनकी भक्तिको देखकर प्रसन्नताको व्यक्त किया। और कहने लगे कि बहिन्! मै अवश्य आवूंगा। तुम्हारी इच्छाके विरुद्ध मै चल नहीं सकता। तुम्हे अप्रसन्न करना मुझे पसंद नहीं है। तब उसने दुपट्टेको छोडा, साथ मे भरतजी की राणियोंको भी उसने बहुत सन्मानके साथ बुलाकर कहा कि आपलोग भी मेरे भाईके साथ नवीन महलमे चले। सभी प्रसन्न चित्तसे वहां ज़ानेकेलिए उठे।

भरतजी प्रसन्नताके साथ अपनी बहिनके यहां जारहे हैं । उसे देखकर गंगादेवने अपने मनमें विचार किया कि देखो ! मैं सम्राट्के पास जानेके लिए संकोच कर रहा था, परंतु सम्राट् अपनी बहिनके साथ किस प्रकार निस्संकोच जारहे हैं ।

गंगादेवीने भरतजीको उस नवीन महलके परकोटा, गोपुर आदिको दिखाकर अंदर प्रवेश कराया । वहांपर भोजनशाला, चंद्रशाला आदि भिन्न २ स्थानोंके निर्माणको देखकर भरतजी बहुत ही प्रसन्न हुए । कई शय्यागृह सुंदर रत्ननिर्मित पलंगोंसे सुशोभित हैं । दिव्य अन्न के लिये योग्य अनेक पदार्थ और सोनेके बरतन और कर्पूर तांबूल आदि रसोई घरमें रखे हुए हैं । इस प्रकार सर्व सुखसामग्रियोंसे भरे हुए उस महलको देखकर अपनी राणियोंसे कहने लगे कि मेरी बहिनकी भक्ति आपलोगोंने देखा ? उसके मनमें कितना उत्साह है ? तब राणियोंनें हसकर उत्तर दिया कि इसमें आपकी बहिनने क्या किया ? यह सब हमारे भाई के कार्य हैं । आप व्यर्थ ही अभिमान क्यों करते हैं ? भरतजीने राणियोंकी बात सुनकर अपनी बहिनसे कहा कि देखा बहिन ! इन औरतोंकी बात कैसी है ? गंगादेवीने उत्तर दिया कि भाई ! औरतें हमेंशा अपनी मायके की प्रशंसा करती रहती हैं । इनका स्वभाव ही यह है । इत्यादि विनोद वार्तालाप के बाद स्नान भोजन व विश्रांति से वह दिन व्यतीत हुआ । दूसरे दिन तीर्थवंदनाकी इच्छा हुई । तब गंगाकूटकी ओर सब लोग चले ।

जिस प्रकार सिंधुनदि ऊपरसे नीचे जिनप्रतिमाके ऊपर पड रही थी उसी प्रकार गंगानदी भी अर्हत्प्रतिमा पर पडरही थी । उसे सम्राट्ने देखा । उस पुण्यगंगाको देखनेपर ऐसा मालुम होरहा था कि शायद अर्हतकी प्रतिमारूपी चंद्रमाको देखकर हिमवान् पर्वतरूपी चंद्रकांत शिला पिघलकर नीचे पडरही हो । जो लोग इस तीर्थमें जो भगवंतको

अभिषेक कराते हुए आरहा है, भक्तिसे स्नान करेंगे उनका पापको मै दूर करूंगा इस बातको वह घोषणापूर्वक कहता हुआ आरहा हो मानो कि वह तीर्थ भोर्भोर घुमघुम्, झुळझुळ शब्दको करते हुए पडरहा था। मानस सरोवरमें हंस जिस प्रकार स्नान करते है उसी प्रकार बुद्धिसागर मंत्रीने अनेक द्विजोंके साथ उस तीर्थमें स्नान किया। तद-नंतर अपनी राणियों के साथ भरतजीने उसमें प्रवेश किया। राणियों को अर्हत्प्रतिमा का दर्शन कराकर बहुत आनंद से उस तीर्थ में स्नान किया। बाद में भूसुरवर्ग को दान देकर, भोजनादि से निवृत्त होनेके बाद सिंधुदेवी के समान गंगादेवी से भी भरतजीने आशिर्वाद प्राप्त किया।

उस दिन भरतजीने अपने लिए निर्मित महलमें सुखसे समय व्यतीत किया। श्री परमात्मा की सेवा करके विपुल कर्मो की निर्जरा की। दूसरे दिन जब उन्होंने आगे प्रस्थान करने का विचार किया तब गंगादेवीको बुलाकर उसका यथोचित सत्कार किया। कहने लगे कि बहिन्! मेरी दो बहिनें थी। परंतु उन्होंने दीक्षा ली। उससे मेरे हृदयमें जो दुःख होरहा था उसे तुमने और सिंधुदेवीने दूर किया है। मेरी बहिन ब्राम्हिलाके समान ही सिंधुदेवी है, और सौंदरीके समान ही तुम हो। इस प्रकार दोनोंसे मै अपनी दोनों बहिनोंके स्थानकी पूर्तिकर चुका हूं। जब भी अब मंगल प्रसंग उपस्थित होगा उससमय आप दोनों को विना भूले बुलावूंगा। गंगादेवी को भी भरतजीके वचनसे परम संतोष हुआ। साक्षात् तीर्थंकरकी पुत्री, षट्-खंडाधिपतिकी सहोदरी कहलानेका भाग्य प्राप्त होनेसे गंगादेवीके शरीरमें एकदम रोमांच हुआ। भरतजीने चिंतामणिरत्नको आज्ञा दी। उसी समय नवीन भवनमें जाकर उसने दिव्यवस्त्र आभूषणोंका निर्माण

किया। वदिनका इसप्रकार सत्कार कर गंगादेव (बहनोई) का भी सत्कार किया। सभी राणियोंने भी गंगादेवी को एक एक हार दिया। गंगादेवीने उन राणियोंका सन्मान किया। इसप्रकार बहुत आनंदके साथ उनसे विदाई लेकर सम्राट् आगे बढे। इतनेमें पूर्व व पश्चिम खंडसे दो दूतोंने आकर समाचार दिया कि वे दोनों खड वशमें आगये है। तब भरतजीने विचार किया कि अब उत्तर व पश्चिमभिमुख होकर जानेकी आवश्यकता नहीं है। अतएव दक्षिणाभिमुख होकर उन्होंने प्रस्थान किया। बीच के खंडमें बीचोबीच वृषभाद्रि नामक पर्वत है। उस ओर अब षट्खण्ड वश होनेपर भरतजी जाने लगे है। भरतजी बहुत वैभवके साथ प्रयाण करते हुए कई मुक्कामोंको तय कर उस पर्वतके समीप पहुंचे हैं।

यह पर्वत बहुत विशाल है। सौ कोस तो उसके प्रथम भागका विस्तार है। तदनंतर सौ कोस पुनः ऊंचा होकर पुनः क्रम से वह नीचे की ओर गया है। इस प्रकार देखने में बडा सुंदर प्रतीत हो रहा है। हर एक काल में जो षट्खंडविजयी चक्र-वर्ति होते हैं वे आकर इस पर्वतपर अपना शिलालेख लिखवाकर जाते हैं। भरतजीने जाकर देखा तो वह पर्वत शिलालेखों से भरा हुआ है, तिलमात्र स्थान भी उस में रिक्त नहीं है। इसे देखकर भरतजी का गर्व गलित हुआ।

मुझसे पहिले कितने चक्रवर्ति हुए हैं! उन सब के शिलालेखोंसे यह पर्वत भर गया है। भगवन्! 'यह पृथ्वी मेरी है' इस बुद्धिसे अभिमान करना सचमुच में मूर्खता है।

भरतजीके मन को जानकर विदूषकने उस समय यह कहकर सब लोगों को हसाया कि यह गिरी कई जार पुरुषोंके साथ क्रीडाकर उन की नखक्षति व दंतक्षति से युक्त वेश्याके समान मालुम हो रही है। तब विटने उस बात को काटकर कहा कि यह बात जमती नहीं, यह पृथ्वी वेश्या है। यह गिरि उस वेश्याकी कलावंत कुट्टिनी [वेश्यादलाल दूति] है।

अपनी अंकमला को लिखने के लिए स्थान न होनेसे दूसरे किसी के शासन को दंडरत्नसे उडाकर उस स्थान पर लिखनेके लिए भरतजी ने अज्ञा दी। आत्मतत्वविशिष्ट शासनों को प्रसन्नतासे उडानेके लिए सम्मति न देकर आत्मतत्वबाह्य शासनोंको ही रद्द करने के लिए इशारा किया। इतने मे उन शासनोंके रक्षक शासनदेवोंनें प्रकट होकर चिल्लानेके लिए प्रारंभ किया कि हम लोग पूर्व चक्रवर्तियोंके शासनोंको रद्द नहीं करने देंगे। हम उनके रक्षक है इत्यादि। तब भरतजीको क्रोध आया। मागधामर आदि व्यंतरो को उन्होने आज्ञा दी कि इन दुष्टोंको मारो, बहुत बडबड करने लगे हैं! उनके मुखपर ही मारो, तब चुप रहेंगे। आज्ञा पाते ही व्यंतरोंने जाकर उन देवोंको खूब ठोका। उनके दात सबके सब पडगये। मागधेंद्रने व्यंतरोंको आज्ञा दी कि इन सब दुष्टोके हाथ बंधवाकर हिमवान् पर्वतकी उस ओर फेंक दो। तब उनकी स्त्रियोने आकर चक्रवर्तिके चरणोंमें साष्टाग प्रणाम कर प्रार्थना की कि स्वामिन्! हमारे पतियोंनें अविवेकसे जो कार्य किया है उसके लिए आप क्षमा करें। और हमारे लिए हमारे पतियों का संरक्षण करें। स्त्रियो की प्रार्थना से सम्राट् ने मागधामर को उन्हे छोडने की आज्ञा दी। मागधामर ने उन को छोड दिया। वे लोग किसी तरह अपनी स्त्रियो की कृपा से जान बचाकर आनंद से चले गए। परंतु टूटे हुए दात फिर से थोडे ही आ सकते है?!

चिटनायक कहने लगा कि सामान्य लिपि के गर्व से मार खाकर ये सेनास्थानमें अपमानित हुए इतना ही नहीं, अपने दांतो को भी खोये।

दक्षिणाक ने कहा कि क्या सूर्य के सामने चंद्रमा का प्रकाश टिक सकता है ?। हमारे सम्राट के सामने इन पागलों की क्या कीमत है ? व्यर्थ ही इन्होंने कष्ट उठाया।

वहांपर उन शासनदेवों के अधिपति कृतमाल व नाट्यमाल भी थे। उन्होंने चक्रवर्ती से कहा कि स्वामिन्! आप यदि इस प्रकार क्रोधित होते हैं तो आगे इन लिपियों की रक्षा कैसे होगी ? क्यों कि ये देव तो रक्षण नहीं करेंगे। तब चक्रवर्ति ने कहा कि आत्मतत्व विशिष्टलिपि को अर्थात् जिन्हों ने आत्मसाधन कर लिया है ऐसे चक्रवर्तियोंकी लिपि को रद्द करने के लिए कोई भी समर्थ नहीं हो सकते। आत्मतत्व से बहिर्भूत चक्रवर्तियो की लिपिपर अभिमान करने की आवश्यकता ही क्या है ? आप लोग देखें। मैं अब आत्मतत्वप्रधान लिपि को यहापर लिखवा देता हूं। उसे कौन नाश कर सकता है ? यह जैनशासन है। इतर सब मिथ्याशासन हैं। जैनशासन अपने आप रक्षित रहता है। मिथ्याशासनों की टिकाव कहातक हो सकती है ? उस समय आकाश में हजारों भूतगण खडे हो कर घोषणा कर रहे थे हम लोग इस लिपिका संरक्षण करेंगे। चक्रवर्तिने भी परमात्मनाम स्मरण कर के सेवकों को आज्ञा दी कि दंडरत्न से उन दुष्टलिपियों को उडा दो। तब उस प्रकार पहिलेके एक शासन को उडाने के बाद वज्रशासन नामक कुशल करणिक ने निम्नलिखित प्रकार वज्र सूचियों से उस पर्वत पर शासन का निर्माण किया।

अंकमालापंचकं.

स्वस्तिश्रीमन्महात्रैलोक्यराजेंद्रमस्तकमणिगणकिरणप्रस्तारितांघ्रिपयोज, पूतिकर्मस्तोममथनविक्रम, त्रिजगदंतर्बहिरवगमेक्षण, त्रिजगद्दहनशक्तियुत, अजरानंतसौख्ययुत श्रीवृषभेश्वरः,

तस्याग्रपुत्रो निरामय हंसोपमानसारग्राहि, हंसनाथेक्षणोत्साहि, संसेव्य, सन्मोहि, तद्भवकर्मविध्वंसि, सुज्ञानावगाहि, शृंगारयोगि, शुद्धात्मानुरागि, राज्यांगोपि संगत्यागि, अंगनाजनवनमधुमास, दिव्यमुक्त्यंगनाचित्तविलास, भरतचक्रेशचंडः हुण्डावसर्पिणीकालस्यादौ षट्खण्डमण्डलेऽस्मिन् खण्डे अखंडभोगी बभूवेति मंगलं महाश्रीश्रीश्री मंडनमस्तु हि स्वाहा।

इसप्रकार रत्नमाला के समान सुंदर अक्षरोंसे काकिणी रत्न से उस अंकमाला को लिखाया। बादमे वहा से प्रस्थानकर पर्वत के पास में ही मुक्काम करनेके लिए आज्ञा दी। स्वयं भी सब लोगोंको अपने २ स्थानपर भेजनेके बाद अपनी महलमें प्रविष्ट होगये।

पाठक भूले न होंगे कि अंकमाला को अंकित करनेमे भरतजी को किस प्रकार विघ्न आकर सामने खडे हुए। परंतु आत्मविश्वास के बल से वे विचलित नहीं हुए। उनको मालुम था कि षट्खंड जब मेरे वशमे होगया है तो यह काम मेरे हाथसे होना ही चाहिये। क्यों कि उनको यह अभ्यस्त विषय था। वे रात्रिंदिन अंकमाला लिखने की धुनमें रहते थे। वे सदा आत्मभावना करते थे कि:—

हे निष्कलंक परमात्मन्! पकजषट्कोंमे ही नहीं, मेरे सर्वांगमे ही अंकमालाके समान लिपिको अंकित कर मेरे हृदयमें सदा बने रहो। जिससे मैं अंकमालामें सफल होसकूं।

सिद्धात्मन्! आप मंगलमहिमाओंसे संयुक्त है! मनोहरस्वरूप हैं। सौख्योंके सारके आप भंडार है! सरसकलांग है! इसलिए मुझे सन्मति प्रदान करें।

इसी भावना का फल है कि उनके कार्यमें कैसे भी विघ्न उपस्थित हों वे सब दूर होकर उन्हे सफलता मिलती है। यह अलौकिक पुण्य प्रभाव है।

इति अंकमालासंधिः।

—+—

अथ मंगलयान संधिः ।

विजय प्रशस्तिको लिखाने के बाद पट्खंड विजयी चक्रवर्तिने उस स्थानपर आठ दिन तक मुकाम किया । इतने में विजयार्ध के पास सेना को छोडकर विजयराज सम्राट् के पास आया । सम्राट्ने विजयराजके अकेले आने से पूछा कि तुम अकेले कैसे आगये ? तुह्मारी सेना वगैरे को कहां छोड आये ?। तब विजयराजने विनयसे कहा कि स्वामिन ! पूर्व और पश्चिम खंड की तरफ गये हुए सब आकर विजयार्ध पर्वतके पास एकत्रित हुए हैं । खडप्रपातगुफाके पास मध्यखंडकी गंगाके तट में दोनों सेनावों को एकत्रित कर मेघेश्वर आप की प्रतीक्षा कर रहे हैं । सम्राट् सुनकर प्रसन्न हुए । विजयराज ! हमें आगे उसी रास्ते से जाना है । अतः मेघेश्वर वहांपर सेनाके साथ में खडा है यह अच्छा ही हुआ । परन्तु तुम यहांपर किस कार्यसे आये ? बोलो तो सही ।

स्वामिन् ! पूर्व पश्चिमखंडके राजावोंमें कुछ लोग आपकी सेवामें कुछ उत्तमोत्तम भेंटको लेकर आरहे हैं । कुछ लोग सुंदर कन्यावोंको लेकर उपस्थित हैं । पश्चिमखंडके अधिपति कलिराज है, पूर्वखंडके अधिपति कामराज है । वे दोनों एक २ सुंदर कन्यावोंको लेकर तुम्हें समर्पण करने आरहे हैं । उन्हींके समान मध्यखंडके अनेक राजा कन्या, हाथी घोडा आदि उत्तमोत्तम उपहारोंको लेकर उपस्थित हैं । स्वामिन् ! और एक बात सुनिये । उत्तरश्रेणीके अनेक विद्याधर राजाओंको परसों ही सुमतिसागर मेरे भाई मेघेश्वर के पास छोडकर चला गया । एक एक खंडसे चार चार सौ कन्यावों को लेकर वे उपस्थित हैं । कुल दो हजार कन्यावोंको लेकर विद्याधरराजा उपस्थित हैं । स्वामिन् ! यह आश्चर्य की बात नहीं है । और एक बात सुनियेगा । आपके साथ विवाह करने के लिए जो कन्यायें लाई गई हैं उनको व्रतसे संस्कृत करनेके लिए चारणमुनीश्वर सेनास्थान पर उतरे थे । उन्होंने सभी कन्यावों को व्रतसंस्कार कराया था । इसलिए आपका पुण्य अनुपम है । हम दोनों भाईयोंको परम हर्ष हुआ । सभी कन्यायें व्रती हैं । यह सूचित करनेके लिए मैं यहांपर आया हूं ।

विजयराजके वचनको सुनकर भरतजी को मनमें हर्ष हुआ। तथापि उसे छिपाकर कहने लगे कि विजयांक! कन्यावोंकी कौनसी बडी बात है। आप दोनों भाईयोंनें जो परिश्रम किया है उसे मै अच्छीतरह जानता हूं। आगे चलो, मै भी परिवारके साथ विजयार्ध की ओर ही आता हूं।

नाट्यमाल व विजयराजको आगे भेजकर स्वतः चक्रवर्तिने भी विजयार्ध की ओर प्रस्थान किया। कहीं भी विलंब न कर, बहुत वैभवके साथ कई मुकामोंको तय करते हुए विजयार्धके पास आपहुंचे। सामनेसे सम्राट्के स्वागत के लिए मेघेश्वर आये है। उन्होने बहुत आदरके साथ सम्राट्का स्वागत किया। मेघेश्वर के साथ बहुत आनंदके साथ बोलते हुए सम्राट् अपने लिए निर्मित महलकी ओर जारहे हैं। जिस समय भरतजी उस सेनास्थानपर प्रवेश कर जारहे थे उस समय जिन कन्यावों के साथ विवाह होने वाला है वे कन्यायें अपनी महलकी छतपरसे सम्रट्को छिपकर देखने लगी। उनके हृदयमें अपने भावी पतिको देखने की बडी आतुरता है। बाहर दूसरोंको अपना शरीर न दिखे, इस प्रकार छिपकर सम्राट्की शोभा को वे देखने लगी है। उनके मनमें तरह तरह के विचार उत्पन्न होरहे है।

क्या यही भरतेश है? यह तो कामदेवसे भी बढकर है। परंतु इस प्रकार स्पष्ट बोलनेमें उन्हे लज्जा आती थी। भरतजीको जिस समय बहुत आतुरतासे वे देख रही थी उस समय कभी कभी सम्राट् के ऊपर डुलने वाले चामरोंकी आड होती थी। तब उनको क्रोध आता था। परंतु लज्जासे दूसरोंसे कह नहीं सकती थी। परंतु दूसरे शब्दसे बोलती थी कि यह सम्राट् अकेले ही अपने स्थानकी ओर हाथी पर चढकर आरहे है, तब यह धवलछत्र ही काफी है। फिर इस सफेद हुए बालके समान इस चामरकी क्या जरूरत है! [जो कि व्यर्थ ही हमें अपने प्रियमुखको देखनेके लिए विघ्न डाल रहा

है] चलते चलते हाथी कहीं खडा हुआ तो उनको बडा आनंद आता था। हाथी जिस समय धीरे धीरे चले उस समय भरतेशके मुख को देखने के लिए उनको अनुकूलता होती थी। परंतु यह हाथी जब जरा वेगसे जावे तब उन्हें क्रोध आता था। वे कहती कि हाथी के गमन को मंदगमन कहते हैं। परंतु यह हाथी तो शीघ्रगामी है। यह अच्छा नहीं है।

हाथीसे उतरकर,सब लोगों को अपने २ स्थानोंपर भेजकर सम्राट् अपनी महल में प्रवेश करगये। उन कन्यावों के हृदय मे " हम लोगों का विवाह कब होगा " इस प्रकारकी उत्कंठा लगी हुई थी।

उसी दिन मंत्रेश्वरने बाहर से आये हुये राजावोंकी सम्राट् के साथ भेंट कराई। उन राजावो ने भी चक्रवर्ति को भेंट में उत्तमोत्तम हाथी, घोडे, रत्न, वगैरे समर्पण करते हुए सम्राट्का आदर किया। सम्राट्ने भी उनका यथोचित सत्कार किया।

भरतजीने तमिस्रगुफाके समान ही खण्डप्रपातगुफाको अपने दण्डायुध से फोडा व दूसरे दिन बहुत आनन्दके साथ महलमें आकर प्रवेश करगये। आज सेनास्थान में शृंगार ही शृंगार होरहा है। सब जगह सजावट होने के बाद विवाह मण्डपकी भी रचना होगई है। तदनंतर सम्राट्ने २००० दोहजार कन्यावोंके साथ बहुत वैभवसे विवाह कर लिया।

कांभोजराजकी कन्या राजमति, कामराजकी कन्या मोहिनीदेवी, इसी प्रकार मागधराज व चिलातराज की मृदुमाधुर्ययुक्त अष्टकन्यायें भरतजीके मनको प्रसन्न कर रही थी। भरतजीने तत्क्षण सब कन्यावोंको अपनी मायकेको भुलादिया। वे देवियां भी अब स्वर्गीय सुखोंको अनुभव करती हुई अपने समयको व्यतीत कररही है।

उन कन्यावोंके जनकोंका भरतजीने योग्य रूपसे सत्कार किया। भरतजी आनंदमग्न है। अब अपन जरा नमिराजकी महल की ओर जाकर आवें।

नमिराज अपनी महलमें कुछ आप्त, मित्र व बंधुओंके साथ विराजे हैं। बंधुजन नमिराज से निवेदन कर रहे है कि स्वामिन् ! आपकी बहिनको सम्राटको समर्पण करना उत्तम है । इसपर आप अवश्य विचार करें। इस वातका समर्थन सुमतिसागर मंत्री व विनमिराजने भी किया। नमिराजने उनको उत्तर दिया कि आपलोग क्या कहते है ? क्या मैं सुभद्रा बहिन को देनेकेलिए इन्कार करता हूं ? नहीं, नहीं, जब वह हमारे नगरमें आयगा तब देना उचित है । व्यर्थ ही शरात्रियोंके समान अपनी कन्याको वहांपर लेजाकर देना तो मुझे पसंद नहीं है। मै मानता हूं कि उसकी संपत्ति बढगई है । परंतु राजवंशकी दृष्टिसे मैं उससे कम नहीं हूं। उसको यहां आनेदो, आप लोगोंकी इच्छानुसार मै यह कार्य करूंगा।

नमिराज के वचनको सुनकर वे कहने लगे कि राजन् ! हम लोग बोलनेके लिए डरते है, नहीं बोलनेसे काम बिगडता है। इसलिए बोलना ही पडता है । जब लोकमें सब राजागण उनको अपनी कन्यावोंको समर्पण करते हैं तब आप उनको अपने नगरमें बुलाते है, क्या यह योग्य है ? उनके समान आपको भी देना चाहिये । क्या वे क्षत्रिय नहीं है ? परंतु सम्राटके सामने गर्व दिखाने के लिए वे घबरागये । अतएव उन्होंने अपनी कन्यावोंको वहां लेजाकर विवाह कर दिया । उनके राज्य में रहते हुए हम लोगोंका इसप्रकार बोलना क्या उचित हो सकता है ? आपके भाई व मंत्री के साथ उस दिन भरतेश क्या बोल रहे थे, उस बातको क्या भूल गये ? इसलिए यही अच्छा है कि आप अपनी कन्याको सम्राट के पास ले जाकर देवे ।

नमिराज को क्रोध आया। कहने लगा कि ठीक है ! उन राजाओंको अपना गौरव, मानहानिकी कीमत मालुम नहीं । अत एव उन्होने अपनी कन्याओंको लेजाकर सम्राटको समर्पण किया । परंतु मैं वैसा नहीं करसकता । मेरे भाई व मंत्रीके साथ बोला तो क्या हुआ । वह क्या करेगा सो देखा जायगा । मैं जानता हूं कि आवर्त राजको

राज्यसे निकालकर उसने उसके भाई माधव को राज्यपर बैठाल दिया। यह सब मुझे डराने के लिए किया है। परंतु मै ऐसी बातोंसे डरनेवाला नहीं हूं। दोनो श्रेणियोंके राजावोंको मैने भेजा। उसके आते ही भेंटके साथ मेरे भाई व मंत्रीको भेजा। अब मेरा क्या दोष है? वह क्या करेगा देखूंगा।

जब बंधुवोने देखा कि नमिराजको हम लोग समझा नहीं सकते, तब उन्होने इस समाचारको नमिराज को माता यशोभद्राको कहा। यशोभद्राने नमिराजको बुलवाया। नमिराज भी अपनी माताकी महलमें पहुंचे।

" बेटा! मेने सुना है कि भरतेश के प्रति तुम बहुत गर्व दिखा रहे हो, यह ठीक नहीं है। उसे देनेकेलिए ही जो कन्या पालपोसकर बढाई गई है, उसे ही देनी चाहिये। इसमें उपेक्षा दिखानेकी क्या जरूरत है? " माता यशोभद्राने कहा।

उत्तरमें नमिराज कहने लगे कि माताजी! मैने कन्या देनेकेलिए इन्कार नहीं किया है। भरतेश पट्खंडाधिपति हुआ, इस गर्वसे कन्या लेना चाहे तो मै मंजूर कैसे कर सकता हू? पहिले सगाई वगैरे की विधि होने के बाद कन्याके घरमें आकर पाणिग्रहण करना, यह रीत है, परंतु भरत यह नही चाहता है। वहां ले जाकर देना मुझे पसंद नहीं है। मंत्री, विनमि आदि भी भरतेश के पास ले जाकर कन्या देनेकेलिए कहते है। परंतु मैने इसे स्वीकार नहीं किया।

यशोभद्राने कहा कि बेटा! क्या चक्रवर्ति तुम्हारे घरपर आता है? उनका बोलना तो उचित ही था। इसलिए व्यर्थ ही क्यों हठ करते हो? इस में तुम्हारे लिए कोई कमी नहीं है।

नमिराज—यदि लडकी की जरूरत हो तो सम्राट् को भी यहा आना पडेगा। फिर क्या हम अपनी महत्ताको खोकर दे सकते हैं? कन्याकी देन लेन में इस प्रकार चलना उचित नहीं है।

यशोभद्रा—बेटा! पट्खंडके समस्त राजा सम्राट् के सेवक हैं।

फिर सम्राट् एकदम अपने घरपर कैसे आ सकते हैं ? यदि अपन लोग ही ले जाकर कन्या दे दें तो इस मे क्या बिगडता है ? वह भरत कौन है ? वह खास तुम्हारी मामीके पुत्र हैं । और उस के मामा का पुत्र तुम हो । इसलिए इस प्रकारके हठ को छोडकर उस मनुवंश तिलकको कन्या दो ।

नमिराज—माता ! मुझे इस बातपर मजबूर मत करो । मार्ग छोडकर कन्या देने की मुझे इच्छा नहीं है ।

यशोभद्रा—क्या यह बात है ? अच्छा ! फिर तुम्हारी बहिन तुम्हारे घरपर रहने दो । मै अब जाती हूं । मेरे लिए कैलासमें ब्राह्मी, सुंदरी की संगति चाहिये । उसीमें मुझे आनंद है । एक बेटीको पाकर मनमें उत्कंठा लगी थी कि भरतको देकर इसे कब संतुष्ट होऊं ? परंतु अब तुम्हारी इच्छा नहीं है, अब मै अपने आत्मकार्य को साधन कर लूंगी । अब इसके लिए मंजूरी दो । इंद्रको भी तिरस्कृत करने वाले भरतचक्रवर्तिको शची महादेवी के समान सुंदर पुत्री को देकर मैं प्रसन्न होना चाहती थी, परंतु तुम उसे मंजूर नहीं करते । अब तुम संतुष्ट रहो, मै कैलासकी ओर जाती हूं ।

नमिराज—माता ! आपके जाने की जरूरत नहीं है । आपके भानजेको आप और विनमि मिलकर कन्या प्रदानकर आनंदसे रहें । मैं ही तपोवनके लिए जाता हूं । राजगौरवको भूलकर इस राज्यवैभव में रहने की अपेक्षा जिनदीक्षा लेना हजारगुना श्रेयस्कर है । माताजी ! मैंने मार्ग छोडकर बातकी है ! अच्छा ! मै ही जाता हूं । आप लोग आनंदसे रहे ।

यशोभद्रा घबरागई । अतः परिस्थितिको सुधारनेके लिये कहने लगी कि बेटा! ऐसा क्यों करते हो ! तुम्हारे घरपर चक्रवर्ति नहीं आयगा । परंतु सगाई यहांपर होजाय तो फिर देनेमें क्या हर्ज है ! वह यहांपर इस प्रकार बुलाने पर नहीं आसकता है । मैं जानतीहूं उसके मनको,

तुम्हारे पिता होते तो ....।

नमिराज—माता ! वह यहांपर अपने मुख्य व्यक्तियोंको भेजकर सगाई करनेकेलिए भी तैयार नहीं है। वहीं पर मुझे आने के लिए कह रहा है। ऐसी हालतमें मै कैसे जासकता हूं ! हां ! यहा आकर वह पूर्वमंगलकार्य करे तो भी मै उसे अनंदके साथ कन्या देसकता हूं।

यशोभद्रा—फिर कोई हर्ज नहीं, मै अपनी प्रधान दासी व तुम्हारे मंत्रीको उसके पास भेजती हूं। वे जाकर मेरी ओरसे मेरे भानजेको सब बातें कहेंगे। वह मंजूर करेगा। अब तो देसकते हो न ?।

नमिराज—अच्छा ! मंजूर है।

यह कालिंदी बाल्यकालसे ही उस भरतेशको जानती है। साथ ही यह मधुवाणी अपनी मधुरवाणीसे भरतेशको प्रसन्न करने के लिये समर्थ है। इन दोनोंसे यह कार्य होजायगा। इस प्रकार विचार कर सभी विषयोंको समझाकर मधुवाणी व कालिंदी को सुमतिसागर मंत्रीके साथ भेज दिया। और साथमें सम्राट् के लिए उचित अनेक उपहारों को भी भेजे।

वे तीनों विमानपर चढकर सेना स्थानपर आये। भरतजी दरबार लगाये हुए विराजमान थे। सुमतिसागर अकेला ही दरबारमें गया। उन्होंने उपचार वचनके बाद सुमतिसागरसे आगमनकारण को पूछा। सुमतिसागरने कानपर कुछ कहा।

"स्वामिन् ! कार्य क्या है, मुझे मालुम नहीं है, आपकी मामीजीने अपनी दोनों दासियों को आपके तरफ भेजी है। उनके साथ मैं आया हूं। विशेषवृत्तान्त वे ही कहेंगी। वे दोनों कालिंदी और मधुवाणी बाहर खडी हैं"।

भरतजीने समझलिया कि ये कन्यावृत्तान्त को लेकर आई हैं। परन्तु बाहरसे किसी को मालूम होने नहीं दिया। साथमें सब दरबारी

लोगोंको भेजकर अंदरके दरबार में जा विराजमान हुए। अंदरसे पंडिताको बुलाकर बाहरसे दोनोंको बुलाया। पंडिता उसी समय आई। दोनों विद्याधरी भी अंदर प्रवेश कर गई।

कालिंदीने यह कहती हुई कि बहुत समयके बाद स्वामीका दर्शन हुआ, सम्राट् के चरणोंको नमस्कार किया। मैने स्वामीके छोटे २ चरणोंको देखा था, परन्तु अब बडे चरण हुए हैं, इस प्रकार कहकर चरणस्पर्श किया। स्वामिन्! क्या आप पहिचान गये कि मै कौन हूं? तब सम्राट्ने कहा कि क्या कालिंदी नहीं? कालिंदी भरतजी की स्मरणशक्ति पर आश्चर्य प्रकट करती हुई कहने लगी कि आप तो महान् बुद्धिमान हैं। चिरकाल की बातों को भी स्मरण रखते है। आपकी मामीजीने आप को भेंट भेजी है। उसे स्वीकार करें।

इतने में एक सुवर्णकमलको समर्पण करती हुई मधुवाणीने भी चक्रवर्ती को नमस्कार किया। कालिंदीने उसका परिचय कराया।

यह तुम्हारी मामीकी विलासिनी, श्रीकलानिवासिनी, मधुवाणी है। इसके वचन अत्यंत मृदु मधुर होते है।

सम्राट्ने दोनों को बैठनेके लिए इशारा करते हुए प्रश्न किया कि क्या मामीजी क्षेम है? नमि विनमि कुशल तो है? महल मे सब आनंद मंगल तो है? कालिंदी! जरा कहो तो सही।

स्वामिन्! आपकी मामी कुशल है। जबसे आपके इधर आनेका समाचार मालुम हुआ है, उनको बहुत आनंद है। इसी प्रकार नमि विनमिको भी बडा आनंद हो रहा है। वे भी आपके वैभवको सुनकर संतुष्ट हो रहे हैं। कालिंदीने कहा।

"मेरे आने के बाद मामीजीको संतोष हुआ है, यह तो सत्य है। परंतु शेषवार्ता सत्य नहीं है"। भरतजी ने कहा।

"नहीं! स्वामिन्! सब को आनंद है। सौभाग्यशाली आप

के आने पर गरीबों को निधिप्राप्ति के समान, समुद्र को चंद्रदर्शन के समान हमारे स्वामियो को भी परमानंद हो रहा है " । मधुवाणी ने कहा ।

मधुवाणी ने पुनः समय जानकर कहा कि लोग कहते हैं यह सम्राट् सभी राजाओं में श्रेष्ठ हैं । परंतु मुझे मालुम होता है कि यह महान् मायाचारी है ।

भरतजीने हसते हुए पूछा कि मैंने क्या मायाचार किया ? बोलो !

तब मधुवाणी ने कहा कि आप ही सोचो । कुशल समाचार को पूछने का जो आप का तरीका है वही मायाचार को सूचित करता है । मामी के कुशल समाचार को पूछा । मामी के पुत्रों के क्षेम-वृत्तांत का प्रश्न किया ! और एक व्यक्ति का समाचार क्यों नहीं पूछा ? क्या यह आपकी चित्तविशुद्धि है या मायाचार है ? आप ही कहियेगा ।

और कौन है ? चक्रवर्तिने अनजान होकर पूछा।

' कोई नहीं है ? ' मधुवाणी ने फिर पूछा। सम्राट् बोले कि "नहीं"।

" अच्छा ! वृत्तभारोन्नतकुचको धारण करनेवाली आपकी मामी की बेटी है। आप नहीं जानते हैं ? " मधुवाणी ने कहा ।

"क्या हमारी मामी को एक बेटी भी है ? मुझे मालुम ही नहीं" भरतजी ने कहा ।

" अच्छा ! आपको मालुम नहीं ! आप बडे कुटिल मालुम होते हैं । आपकी जीभ में नहीं ! हृदय से पूछियेगा । आप के हृदय में वह होने पर भी मुझे फसा रहे हो । सचमुच में तुम कपटियोंके राजा हो। बोलो राजन् ! तुम्हारे हृदय में वह है या नहीं ।

" मधुवाणी ! जाने दो। मैंने पहिले से ही पूछा था कि महल में सब आनंदमंगल तो हैं ? उसी में सब अंतर्भूत हुए या नहीं ? फिर अलग पूछने की क्या आवश्यकता है ? भरतजी ने कहा ।

" हां! हमारे स्वामीने पहिले ही पूछा था कि क्या महलमें सब आनंद है ? मधुवाणी ! व्यर्थ प्रकरणको मत बढावो "। कालिंदीने कहा।

स्वामिन् ! इस बातको जाने दीजिए। हमारी देवी व आपके सौंदर्य की समानताको देखकर विनोदके लिए कुछ कहा। क्षमा करें।

एक रत्नका दो विभागकर स्त्री और पुरुषरूपमें उसे बनाया। उन दोनोंमें आत्मा आकर आप दोनों बनगये ऐसा मालुम होता है।

यहा पर कोई नहीं है. एकात है, सुनो। आपका सुंदरहृदय व हमारी देवीके पीनस्तन सचमुचमे पीनपुण्यनिर्मित है। आपलोगोंके मिलनेपर न मालुम किस प्रकार भाग्योदय होगा ? सुवर्णलता के समान सुदर आपलोगोंकी बाहुलताको मैने देखी। वे लतायें जब रत्नबिंबके समान सुंदर शरीरपर वेष्टित होवे तो न मालुम कितना सुंदर मालुम होगी ?

सुंदर दांत, लाल ओंठ, हसन्मुख, व दीर्घनेत्र को देखा। कमल को कमल मिलने पर दूसरों की चिंता क्यों हो सकती है !

पाद, जाघ, कटि, उदर, छाती, बाहु, मुख, केशपाश कंठ आदि सभी अवयवोंको देखने पर दोनोंकी जोडी बहुत सुंदर मालुम होती है।

स्वामिन् ! आप तो अनेक पुजारियोंसे पूजित नवीन देवके समान मालुम होते है। परंतु वह देवी देवता के समान मालुम होती है। परंतु वह अभी तक किसी को पूजाके लिए मिली नहीं है। किसी की पूजा से भी वह प्रसन्न नहीं होगी। तुम उसे अपने हृदय में रखकर ध्यान करोगे तो वह अवश्य ही आये बिना नहीं रहेगी । एवं तुम्हारे लिए महासुख देगी। तुम सचमुचमे महाभाग्यशाली हो। मधुवाणीने कहा। भरतजी सुनकर मुसकराये। तब मधुवाणीने फिर कहा कि आपको हंसी आना साहजिक है। क्यों कि देवांगनाओं को भी तिरस्कृत करने वाली जब राणी मिल रही है तो क्यों नहीं आनंद होगा ? तुम्हारी मामीने इस कन्याको अपने भानजे को देनेके लिए बहुत चिंतासे पालन

किया था। अब वह सचमुच में तुम्हारे मन को अपहरण करनेवाले रूपको धारण कर रही है। करोडों मन्मथोके बाण को केवल अपनी दृष्टि में जो धारण करती है वह क्या सामान्यरमणी है ? इस समय वह सुंदरी भरयौवन को प्राप्त है।

भरतजी को मधुवाणी के वचनको सुननेमें आनंद तो आरहा था। परंतु उसे छिपाकर वे कहने लगे कि अच्छा ! जाने दो ! अब आप लोग किस कार्यसे आई हैं वह तो कहो !

राजन् ! हमारा क्या कार्य है। आपकी मामीजीने हमें आपके पास इस संबंधके समाचार को लेकर भेजी है। हम आगई। परंतु उसके चातुर्यको तो जरा सुनो।

राजन् ! विनमिराज, मत्री, विद्वान् वगैरे सबने आपको ही कन्या देने के लिए संमति दी है। परंतु बडे राजा नमिराज महान् भाग्यशाली को हम कन्या कैसे देवें, इस प्रकार के विचार में पडा। वह कहता है कि संपत्तिमें हम भरतकी बराबरी नहीं कर सकते हों तो क्या कुलमें भी हम बराबरी नहीं कर सकते ? जब वह भरत हमें नीच दृष्टीसे देखता है तो हम उसे कन्या देकर सेवक क्यों कहलावें ? हम उनसे कुलमें कम नहीं हैं। इत्यादि कहा। तब माताने पुत्रको बुलाकर अनेक प्रकारसे समझाया। और भरत को ही कन्या देनेके लिए जोर दिया। परंतु नमिराजने फिर भी नहीं माना। उनका कहना था कि रीतसिर भरत सगाई वगैरह करके बादमें आकर विवाह कर ले जाय तो कन्या देनेमें कोई हर्ज नहीं है। ऐसा न कर केवल लडकी दो, लडकी दो इतना कहनेसे कौन कन्या देगा? यह मैं मानता हूं कि हमें भरतसे अधिक कोई बंधु नहीं है, तथापि हमें जब वह बराबरी की दृष्टीसे नहीं देखता तो फिर माता ! तुम ही कहो कि उसे कन्या क्यों देनी चाहिये। तब नमिराज के वचन को सुनकर माताने यह कहा कि बेटा ! उसके मामा होते तो वह यहापर अवश्य आता, परतु तुम्हारे पास वह कैसे आयगा ?

क्या वह चक्रवर्ति नहीं है ? मै और एक उपाय कहती हूं, सुनो, सगाईकी रीतको तो वह यहांपर करावे, और बादमें अपन कन्याको वहा लेजाकर विवाह वहांपर करावे । यह बात नमिराजको भी पसंद आई । तब हम इसे कहने के लिए आपके पास आई है ।

नमिराजकी राजनीति और मामीके गुणों के प्रति भरतजी को मनमे प्रसन्नता हुई तथापि उसे बाहर न बताकर वे कहने लगे कि पहिले सबने जैसे कन्या दी है उसी प्रकार लाकर देनेको कहो । यह सब प्रकार नहीं हो सकता है ।

तब मधुवाणीने कहा कि राजन् ! यदि मामीजीने इस बातको सुनली तो उन्हे बहुत दुःख होगा । सोचो ।

तब भरतजीने कहा कि ठीक है ! मै अपनी तरफसे प्रमुख राजावोको भेजकर सगाईका कार्य करावूंगा । तब उन दोनोका मुख फिरसे खिलगया । तदनंतर उन दोनोको स्नानादि करानेके लिए हुकुम देकर स्वतः पंडिताके साथ कुछ मंत्राणकर महलकी ओर गये । महलमे जाकर उदास चित्तसे क्लिन्नमुख होकर एक आसनपर चक्रवर्ति बैठे हैं । इतनेमें वहां सभी राणियां आकर एकत्रित हुईं। भरतजी को देखकर सबको आश्चर्य हुआ । सुननेमें आया है कि आज हर्षसमाचार आया है,परंतु ये तो चिंतामें बैठे है । क्या कारण है ? सबको जाननेकी उत्कंठा हुई । सबने भरतजी की चिंताका कारण पंडितासे पूछा ।

पंडिताने कहा कि संतोषका वृत्तात अवश्य आया है । परंतु उसमें तीन बातें ऐसी है जिनके कारणसे सम्राट्के चित्तमें चिंता उत्पन्न होगई है । सम्राट् असमंजसमे पडगये है । उनको ग्रहण भी नहीं करसकते, छोड भी नहीं सकते । बडी दिक्कत होगई है ।

जब वहां कन्या उत्पन्न हुई उस समय माता-पिताओने संकल्प किया था कि इस का विवाह भरतके साथ ही करेंगे । उसी संकल्प से सुभद्राकुमारी का पालन पोषण हुआ । आज भी उसे भरत को ही

देने की इच्छा है, परंतु सगाई पहिले हो जानी चाहिए ऐसा उनका कहना है। एक शर्त और है। पट्टके मुकुट को धारण कर विवाह होना चाहिये, साथ ही पट्टरानी उसे बनानी चाहिए। ऐसा उन के कहने पर चिंता पैदा हुई। सम्राट्ने कहा कि उसे पट्टरानी क्यों बनावें ? मेरी सभी राणियां जैसे रहती हैं वैसा ही इसे भी मेरे अंतःपुर में सुख से रहने दो। परंतु उन लोगोंने इस बात को स्वीकार नहीं किया। क्यों कि सम्राट् के हृदय में उनकी सभी राणियों के प्रति कोई पक्षपात नहीं है। वे कभी भेदभाव से अपनी राणियों को देख नहीं सकते। अतएव इतनी चिंता उत्पन्न होगई है।

राणियोंको भरतजी की मनोवृत्तिको देखकर हर्ष हुआ। चुपचाप के उस सुभद्रादेवी को सब की इच्छानुसार महत्व देकर लावें तो हम लोग क्या कर सकती हैं ? तथापि सम्राट् के मन में हम लोगोंके प्रति कितना प्रेम है ! इस प्रकार सब वे विचार करने लगी। अपनी माता के भाईकी वह पुत्री है, उसमें भी सम्राट के लिए ही उसका संकल्प हो चुका है। फिर इतनी चिंता क्यों ? वे जो कुछ मांगते हैं उन सब को देकर सुभसे विवाह कर लेना चाहिये। इसमें हमलोगों की सब की सम्मति है। लोकमें सब की यह रीत है कि राजा के लिए एक पट्टरानी रहती है। फिर इसके लिए हम क्यों इनकार करेंगी ? क्या हम लोग कोई गंवारकी स्त्रिया हैं ? या शूद्रों की कन्यायें हैं ? नहीं, हम सब क्षत्रियोंकी कन्यायें हैं। फिर क्यों उसके पट्टरानीपदकेलिए इन्कार कर सकती हैं ? उस सुभद्रादेवीको जो महत्व प्राप्त होगा वह सब हमारेलिए ही है ऐसा हम समझती हैं। क्यों कि वह क्षत्रियपुत्री है। हम भी सब उसी वर्णकी हैं। फिर क्यों हमें दुःख होगा, इसमें विचार करनेकी कोई बात नहीं है। उनकी सर्व शर्तों को मंजूरकर विवाह करलेना चाहिये। यह बात हमलोग बहुत संतोषके साथ कहरही हैं। यह भी जाने

दीजिये । हम लोगोंका कर्तव्य है कि पतिकी इच्छानुसार चले । पतिकी इच्छाके विरुद्ध जो जाती है क्या वह राजपुत्री होसकती है ? हम लोग हृदयमें एक रखकर मुखसे एक बोल नहीं सकती, संतोषके साथ सुभद्रा बहिनको पट्टरानी बनाकर लावे । इस प्रकार राणियोंनें हर्षपूर्वक सम्मति दी ।

वह दिन आनंदसे व्यतीत हुआ । दूसरे दिन सम्राट्ने कालिंदी व मधुवाणीका सत्कार किया एवं विद्याधरमंत्रीका भी सत्कारकर उनको रवाना किया । भंडारवती नामक बुद्धिमती स्त्रीके साथ लग्ननिश्चय-मुद्रिका व आभरणोंके करंडको देकर विजयार्धपर भेजनेकी तैयारी की। विशेष क्या ? सेनाके संरक्षणके लिए जयंतको रखकर बाकीके सभी व्यंतर, म्लेच्छ व विद्याधर राजावोंको वहांपर जानेकी आज्ञा कीगई। बहुत संतोषके साथ छप्पन देशके राजा व राजपुत्र व अपने मित्रोंको सम्राट्ने वहांपर भेजा जिससे मामीजीको हर्ष होजाय । मंगलोपहारके साथ समस्त राजगणोंको भेजकर इधर अपनी बहिनोंके तरफ भी समाचार भेजा ।

भरतजी सचमुचमें असदृशपुण्यशाली हैं । वे जहां जाते हैं वहां उनका आदर ही आदर होता है । प्रतिसमय उनको सुखसाधनों की ही प्राप्ति होती रहती है । षट्खंडविजयी होकर सर्वाधिपत्यको प्राप्त करनेका समाचार हम पिछले प्रकरणमें बाच चुके हैं। परंतु इस प्रकरणमें पट्टरानीकी प्राप्ति का संदेश है । इस प्रकार रात्रिंदिन उन को आनंद पर आनंद हो रहा है । इस का कारण क्या है ? भरत जी रात्रिंदिन उस आनंद की निधि परमात्मा का जिस भावना से स्मरण करते है उसी का यह फल है । उनकी भावना सदा यह रहती है कि:—

" हे परमात्मन् ! सागर में जिस प्रकार तरंग के ऊपर दूसरा तरंग आता है उसी प्रकार संपत्ति व संतोष के ऊपर पुनः संपत्ति

व संतोष के तरंगोंको उत्पन्न करने का सामर्थ्य तुममें है । तुम मनोहर व चरितार्थ हो । सुख के भंडार हो । अतएव मेरे अन्तरंग में बने रहो ।

हे सिद्धात्मन् ! जो आप का ध्यान करते हैं उन को आप दिव्य भोगोंका सन्धान कर देते हैं । आप की महिमा उपमातीत है । स्वामिन् ! आप ज्ञानियोंके अधिपति हैं । फिर देरी क्यों ? मुझे सन्मति प्रदान कीजिये " ।

इसी उत्कट भक्तिपूर्ण भावनाका फल है कि भरतजी इस संसारमें भी सुखका अनुभव कर रहे है ।

इति मंगलयान संधिः
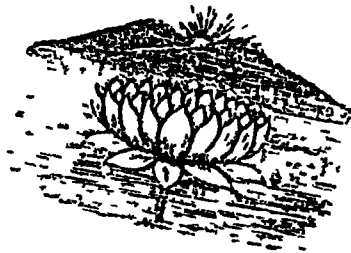
मुद्रिकोपहार संधिः

भरतजी की ओरसे गये हुए राजाओंने बहुत वैभवके साथ विजयार्धपर्वत के ऊपर आरोहण किया। मार्ग में चक्रवर्ति के मंत्रीने मौका देखकर नमिराजके मंत्रीसे कहा कि मंत्री ! एक बात सुनो, चक्रवर्तिकी ओरसे जो राजा आये है, वे नमिराज को नमस्कार करेंगे। परंतु भेंट वगैरे समर्पण नही करेंगे। नमिराज भी उन को नमस्कार करें। चक्रवर्तिके कुछ मित्र व मै भेंट रखकर नमस्कार करेंगे। क्यों कि मै ब्राह्मण हूं, और मित्रगण चक्रवर्ति के इच्छाकेनुवर्ति है। इसलिए हम तो उनको महत्व देसकेंगे। बाकीके व्यंतर विद्याधरराजा वगैरे मानी है। वे चक्रवर्तिको छोडकर और किसीको भी नमस्कार नही करेंगे। विवाहके लिए जो आयेंगे उनको नौकरोंके समान देखना क्या उचित होगा? हम लोग जो उसकी इच्छानुसार घरपर आते है यह कोई कम महत्व की बात नहीं है। इसे स्वीकार करना ही चाहिये। सुमतिसागर मंत्रीने भी उसे स्वीकार कर लिया।

सुमतिसागर ने आगे जाकर नमिराज को सर्व वृत्तांत कहा, नमिराज भी प्रसन्न हुआ। कालिंदी व मधुवाणीने जाकर यशोभद्रादेवी को समाचार दिया। यशोभद्रादेवी को भी परमहर्ष हुआ। नमिराज ने अपने मंत्री के साथ अनेक राजाओं को स्वागत के लिए भेजा।

शठनायक—सम्राट् का मंत्री आया है उसके लिए अपने मन्त्रीको, राजावों के लिए राजावों को स्वागत के लिए भेजा है, क्या अपने भाईको भेजना नही चाहिये? यह कितना अभिमानी है?

दक्षिण—इसमें क्या बिगडा, हमारे स्वामीके लिए कन्यासंधान करनेका काम हमारा है। इन बातों को विचार करनेका यह समय नही है।

नागर—नमिराज कैसा है? आप लोग नहीं जानते है ?। कन्या देनेकी इच्छा न होनेसे पहिलेसे ही अतिवक्र व्यवहार करता था। अब अपनेको सहन करना चाहिये।

कुटिलनायक—इसे पहिलेसे बहुत अभिमान आगया है। जिसमे उसकी बहिनके प्रति चक्रवर्तिने नजर डाली तो और भी फूलगया। जाने दो। उसका मार्ग योग्य नहीं है।

परंतु इन सबके चित्तको शांत करनेके लिए बुद्धिसागर मंत्री कह-रहा था कि आपलोग व्यर्थ क्यों बोलते है ? यह सम्राट्के मामाके पुत्र है। चक्रवर्तिकी महत्ता तो हम लोगोंको नहीं है। इसलिए वे चक्र-वर्तिका ही स्वागत करनेके लिए आसकते है। हम लोगोंको इस समय इन बातोंपर विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है। हमलोग जिस कार्य के लिए आये हैं, उस कार्यको हमें करके जाना चाहिये।

सब लोगोंने गगनवल्लभपुरमें प्रवेश किया। राजमहलमें प्रवेश-करके सबलोगोंने दरबारमें स्थित नमिराजको देखा। वेत्रधारी चपरासीने नमिराज को निम्न लिखित प्रकार सबका परिचय कराया।

स्वामिन्! यह भरत के सर्व भाग्य के लिए आधारभूत, सर्व लोक के लिए अनिमिपाचार्य बुद्धिसागर मन्त्री है।

यह अगोचरवीरता को धारण करनेवाले मेघेश्वर व विजयराज है। जो सम्राट्के प्रधान सेनाध्यक्ष है।

यह भरतचक्रवर्ति के लिए परम विश्वासपात्र, चक्रवर्ति का परम मित्र व्यंतरेंद्र मागधामर है, स्वामिन्! इनका स्वागत करो।

यह वरतनुदेव दक्षिणसमुद्रका अधिपति है, यह पश्चिम समुद्रके अधिपति प्रभासेंद्र है। ध्रुवगति, सुरकीर्ति, प्रतिभास नामक ये तीनों देव मागधादि देवोंके प्रतिनिधि है।

स्वामिन्! यह तमिस्रगुफाके अधिपति कृतमाल देव है, यह खंडप्रपात गुफा के अधिपति नाट्यमाल है!

इस विजयार्ध पर्वतके मध्यप्रदेशमें हमलोग रहते हैं। परंतु इस पर्वत के ऊपर यह विजयार्धदेव राज्य कर रहा है। यह नागेंद्रके समान है।

हिमवान् पर्वतकी उस ओर नाग, यक्ष आदि जाति के देवों के अधिपति होकर यह हिमवंत देव राज्य कर रहा है। हे राजन्! इसे जरा देखें।

इसी प्रकार पश्चिम व उत्तर खंडके राजा भी यहां मौजूद है। पश्चिम खंडके राजा कलिराज आदि राजावों को देखें। ये मध्यम खंडके राजगण हैं। यह माघवेंद्र है। यह चिलातेंद्र है। नमिराजनें आतंकमय दृष्टिसे उनकी तरफ देखा।

दक्षिण व पूर्व खंडके राजा उद्दंड व वेतंडराजा हैं। इसी प्रकार आर्यखंड के सूर्यवंशादि उत्तम वंशो में उत्पन्न इन छप्पन देशके राजावोंको एवं उनके राजपुत्रोंको आप देखें। राजन्! इधर देखिये। ये दक्षिणोत्तर श्रेणीके विद्याधर है। इसी प्रकार दक्षिण नायक, शठनायक आदि चक्रवर्तिके मित्रोंको भी देखें। ये संख्यामें आठ होनेपर भी चक्रवर्तिको अष्टांगके समान रहते हैं। ये चक्रवर्तिके परम भक्त है। बुद्धिसागर मंत्रीके अनुकूल है। लोकमें अद्वितीय बुद्धिमान् हैं। यह सुनकर नमिराजने उनको अपने पास बुला लिया।

सबको यथायोग्य आसन प्रदान कर बैठनेके लिए कहा। बुद्धिसागर मंत्रीको अपने सिंहासनके पास ही आसन दिया। बुद्धिसागरसे बोलते हुए नमिराजने कहा कि मंत्री! ये राजा, व्यंतरेंद्र वगैरे सामान्य नहीं है। अहो 'जिनसिद्ध' भरतकी संपत्ति बहुत बढी हुई है। इन एकेक व्यंतर व राजावों को देखते हुए एकेक पर्वतके समान मालुम होते है। फिर इनके बीचमें न मालुम वह भरत किस प्रकार मालुम होता होगा। कहां अयोध्या? व कहां हिमवान् पर्वत? इन दोनोके बीचके षट्खंडोंको वशमें करनेके भाग्यको भरतके समान कौन प्राप्त

कर सकते हैं ? सब लोग चाहें तो ऐसी संपत्ति क्यों कर मिल सकती है ? उसके लिए पूर्वपुण्यकी आवश्यकता है। सचमुचमें उसका भाग्य महान् है। उसकी बराबरी करनेवाले लोकमें कौन है! श्रीजिनेंद्र ही जाने।

बुद्धिसागर मंत्रीने कहा कि राजन्! आप ठीक कहते हैं। आपके बहिनोईका भाग्य असदृश है। आपको हर्ष होना साहजिक है। भरतकी केवल संपत्तिही बढी है ऐसी बात नहीं, उसकी बुद्धिमत्ता, सुंदरता, शृंगार व धीरता आदि बातों को देखकर देवलोक भी मस्तक झुकाता है। क्या तुम्हारा बहनोई इस नरलोकका राजा है? नहीं सुरलोकका है।

राजन् पुरुषोंमें उसकी बराबरी करनेवाले दूसरे कोई नहीं है। स्त्रियोंमें तुम्हारी बहिन् सुभद्राकी बराबरी करनेवाली कोई नहीं है। ऐसी हालतमें उन दोनोंका संबंध कराने का तुमने जो विचार किया है यह कमबुद्धिमत्ताकी बात नहीं है। अपनी पितृपरंपरासे आये हुए स्नेहसंबंधको न भूलकर उसे बराबर चलानेका विचार तुमने जो किया है, वह स्तुत्य है। नमिराज! ऐसी हालतमें तुम्हारी समानता कौन करसकते हैं ?

नमिराज ने कहा कि मंत्री! मैंने क्या किया! भरतके पुण्यने ही मुझे इस कार्य के लिये प्रेरणा की। उस बातको सभी राजावोंके सामने रखने की इच्छा मुझे हुई। ये सब राजगण हमारे बंधु हैं। परंतु ये बुलानेपर भी हमारी महलमें नहीं आसकते। इसलिए विवाहका बहाना करके इनको हमने बुलाया है। इस निमित्तसे तो यह आनंदका समय देखूं। इसलिए आपलोगोंको कष्ट दिया।

नमिराजके चातुर्यको देखकर सबको हर्ष हुआ। नमिराजने सबको स्नान भोजनादि कार्य के लिये उनके लिए निर्मित सुंदर महलोंमें भेजदिया। मनुष्यों के लिए योग्य अन्न, पान, भक्ष्य विशेष व वस्त्र

भूषणोंसे सत्कार कर देवोंको सुगंध द्रव्य, वस्त्र व आभरणोंसे सन्मान किया। भंडारवति आदि देवियां जो आई थीं उन का भी यशोभद्रा देवीके द्वारा यथेष्ट सन्मान हुआ।

दूसरे दिन सब लोगोंने नमिराज से कहा कि राजन्! हम सब जिस कार्यके लिए आये है उसे हमें करने दो, तब नमिराजने "गडबड क्या है, चार दिन बीतने दो, आप लोग हमारे यहां कब आते हैं, इस विवाहके बहानेसे आगये। इस लिए चार दिन तो मुझे आनंद मनाने दो। मेरी इच्छा पूर्ति होनेके बाद आप लोग जाईयेगा"। इस प्रकार नमिराज ने उन लोगोंका कई तरहसे सत्कार किया। कभी गायन गोष्ठीमें, कभी साहित्यसम्मेलन में, कभी नवीन नाटक नृत्योंमें कभी वाद्यवादन में, और कभी महेंद्रजाल विद्यामे उन अभ्यागतों को आनंदित किया। तदनंतर पुनः राजावोंने कहा कि सगाई का कार्य होने दीजिये। बाद में यह सब कार्य करें। नमिराज पुनः कहते है कि इतनी जल्दी क्या है, वह होनेके बाद आपलोग क्यों कर ठहर सकेंगे। तब वे राजा उत्तरमें कहते है कि स्वामीके कार्यको भूलकर खेलकूद में मस्त होना क्या सज्जनोंका धर्म है? उत्तरमें नमिराज कहते है कि मुहूर्त लग्न अच्छा मिले विना मैं क्या करसकता हूं। आपलोग जल्दी न करें।

"व्यर्थ ही बहानाबाजी क्यों कर रहे हो? हमें देरी होती है। यह कार्य जल्दी होजाना चाहिये" वे कहने लगे।

"मैने उद्दण्डराज व वेतंडराजको कहलाकर भेजा है, उनके आनेकी आवश्यकता है, उनके आनेके बाद यह कार्य मै कर दूंगा" नमिराजने कहा।

प्रतिनित्य तरह तरह के वस्त्र आभूषणों से उनका सन्मान किया। अपनी महल में बुलाकर रोज मिष्टान्न भोजन से संतर्पण कर रहा है। मंत्री उसकी भक्तिको देखकर प्रसन्न हुआ। राजगण आश्चर्यचकित हुए। देव व व्यंतरगण आनंदित हुए। सचमुचमें

नमिराज उस समय जो अतिथिसत्कार कर रहा था वह अद्वितीय था।

उद्दण्ड राजा व वेतंडराजा आगये। अब रोकरखनेके लिए कोई बहाना नहीं था। इस लिए नमिराज योग्य मुहूर्तमें इस मंगलकार्य को करनेके लिए उद्युक्त हुआ। दिन में जिनेंद्रभगवंतकी पूजा, मुनिदान, ब्राम्हणभोजन आदि कराकर रात्रिके समय में मगाई के मंगलकार्यको संपन्न किया। नगरमें सर्वत्र श्रृंगार किया गया। रथ, विमान, हाथी, घोडा आदि सर्व राज्यांगकी शोभा की गई, मंगलमुखी नामक हथिनी जो कि सुभद्रादेवी के लिए अत्यंत प्रिय थी, उसका श्रृंगार किया गया। उसके ऊपर कन्याके लिए अर्पण करने योग्य मंगलाभरण शोभित हो रहे थे। स्त्रियां हाथीपर चढे तो विद्याधर लोग अपना अपमान समझते हैं। अतः स्त्रियोंके धारण करने योग्य आभरण भी हथिनीपर ही रखा है। क्यों कि वे क्षत्रिय क्षत्रियोंकी प्रतिष्ठाको अच्छी तरह जानते थे। पुरुष यदि हाथीपर चढा हो तो उसके साथ स्त्रियां भी हाथी पर चढ सकती है। परंतु केवल स्त्रिया हाथीपर चढ नहीं सकती। अतः मंगलमुखी को ही अलंकृत किया था। इस प्रकार मंगलमुखी हाथिनीपर अनेक आभरण विशेषोंको रखकर बहुत वैभव के साथ उस गगनपुर वल्लभके प्रत्येक राजमार्गोंमें होते हुए राजालयमें प्रवेश किया।

राजालय में प्रवेश करते ही सब लोगोंको वहीपर विनामिराज व मंत्रीके साथ ठहराकर स्वतः नमिराज अंदर चले गये। और वहांपर अनेक अलंकारों से विभूषित अपनी बहिन को हजारों परिवार स्त्रियोंके साथ परदेकी आड में खडाकर, मंगलगृह में स्थित अभ्यागतों को बुलानेके लिए कहा। तदनुसार बहुत वैभव के साथ सब लोगोंने अदर प्रवेश किया। जो आभरण कन्याको प्रदान करनेके लिए वे ले आये थे उन की कांति सब दिशाओं में पसर रही थी। एक विशाल मंगलगृह

में पहुंचकर जहां नमिराजने इस उत्सवकी सारी तय्यारियां की थी, उस आभरणकी थाली को एक रत्ननिर्मित आसनपर रख दिया। साथमें आये हुए राजागण बहुत विवेकी थे। उन्होंने उस अलंकार को अपने स्वामी की पट्टराणीका है, समझकर उसके प्रति अनेक भेंट समर्पण किया। कन्याकी माता उस समय आनंदसे फूली नहीं समाती थी।

सबको यथायोग्य आसन प्रदानकर नमिराज भी एक आसनपर बैठ गया। ब्राह्मण विद्वानोंने मंगलाष्टकका पठन किया। मंगलाष्टकको वे मंगलकौशिक आदि सुंदर रागोंमें पठनकर रहे थे। मुहूर्तका समय आनेपर नमिराजने सबकी ओर देखा, उस समय भरतकी ओरसे प्रेषित आभरणोंको कन्याको प्रदान करनेके लिए बुद्धिसागर मंत्रीने प्रार्थना की। स्वामिन् ! आपके यहां आभरणों की कमी नहीं है। तथापि सम्राट्के द्वारा प्रेषित इसे अवश्य ग्रहण करना चाहिये। लोकके सभी राजावो से जिसने भेंट ग्रहण किया उस सम्राट्ने तुम्हारी बहिनको भेंट भेजी है। तुम महान् भाग्यशाली हो। इस प्रकार सभी राजावोंने विनोदसे कहा।

हर्षसे उस आभरणके तबकको उठाकर नमिराजने मधुवाणीको दिया। मधुवाणीने उसे परदेकी उस ओर ले जाकर सुभद्रा कुमारीको उन आभरणों को धारण कराया। उस समय सौभाग्यवती स्त्रियां अनेक मंगल गीतोंको गा रही थी। मोतीके शिरोभूषण को उन लोगोंने जिस समय धारण कराया उस समय उसका प्रकाश चारों ओर फैल गया, शायद वह चक्रवर्तिके पुण्यसामर्थ्य को ही लोकको सूचित कर रहा है। कंठमें धारण किया हुआ आभरण चक्रवर्ति भी कल इसी प्रकार अपने हाथसे कंठको आवृत करेगा, इस बातको सूचित कर रहा था। हाथमें जो भरतके रूपसे युक्त रत्नमुद्रिकाको उसने धारण किया था वह इस

बातको सूचित कर रही थी कि इसी प्रकार भरत भी तुम्हारे वश होकर चिरकाल तक राज्य करेंगे ।

चक्रवर्तिने कैसे अमूल्य व अनर्घ्य वस्त्राभरणोंको भेजे होंगे ? इसे वर्णन करना क्या शक्य है ? वह सुभद्राकुमारी स्वभावसे ही अलौकिक सुंदरी है, उसमें भी चक्रवर्तिके द्वारा प्रेषित आभरणोंको धारण करनेके बाद फिर कहना ही क्या ? उसमें एक नवीन कांतिही आगई है । माताने मोतीके तिलकको लगाते हुए " श्री सुभद्रादेवी भरतके अंतःपुरमें प्रधान होकर सुखसे जीवे " इसप्रकार आशिर्वाद दिया । इसी प्रकार नमिराज व विनमिराजकी राणियोंने भी तिलक लगाकर अशिर्वाद दिया । नमिराजने सबको तांबूल, वस्त्र आभूषण को प्रदान कर उन का सत्कार किया । मंत्रीने दरवाजे तक उन के साथ जाकर उनको भेजा । पुनः आकर चक्रवर्ति ने जो वस्त्राभूषण नमिराज की माता व स्त्रियोंके लिए भेजे थे उन सब को प्रदान किया व महलही उससे भर दिया ।

वह रात्रि बहुत हर्षके साथ व्यतीत हुई । प्रातःकाल होनेके बाद सबको महलमें बुलाकर नमिराजने बहुत आदरके साथ भोजन कराया। और उन लोगोंसे कहने लगा कि आप लोग हमारे परमबंधु हैं, इस लिए हमारी एक बात आप लोग और सुनें, वह यह है कि चक्रवर्ति के मंत्री बुद्धिसागर को आगे जाने दीजियेगा । आप हम मिलकर सब चक्रवर्ति के पास जावें, इसे आप लोग स्वीकार करें । इस बात को सब ने स्वीकार किया । तदनंतर हिमवंत मागधामर आदि व्यंतर देवों को उन्होंने सत्कार किया । तदनंतर महलके अंदर चंद्रशालामें बैठकर चक्रवर्तिके मंत्री व मित्रों को बुलवाया । उनके आने पर कहने लगा कि मंत्री ! कहो अब तो तुम्हारे स्वामी की जीत हुई या नहीं ? तुम लोगोंका कार्य तो हुआ । मंत्रीने उत्तर दिया कि राजन् ! षट्खंडाधि-

पति सम्राट् के आधीनस्थ राजावोंको अपने दरवाजेपर बुलवाया, फिर कहो कि जीत तुम्हारी है ? या हमारे स्वामीकी ?

उत्तरमें नमिराजने कहा कि कल विनमि आकर विवाहकार्य को संपन्न कर देगा। आप लोग आनंदसे जावें, इस प्रकार विनोदकेलिए अपितु गंभीरतासे कहा। इसे सुनकर बुद्धिसागर को आश्चर्य हुआ। कहने लगा कि राजन्! यह क्या कहते हो, १६ दिन तक तुम्हारे कहनेके अनुसार हम लोग यहा रह गये। अब तुम्हे छोडकर हम कैसे जा सकते हैं। तुम्हारे विना विवाहकी शोभा नहीं है।

नमिराज कहने लगा कि मै कैसे आ सकता हूं ? तुम्हारे राजा मुझे " नमि आवो " इस एक वचनसे संबोधन करेंगे। मुझे बुलाते समय " नमिराज आईये " इस प्रकार बहुमानात्मक शब्द का प्रयोग करना होगा। राजवंश में जो उत्पन्न है, उनको राजा कहकर नहीं बुलाना यह राजत्वके लिए अपमान है। मै षट्खंडपतिको भेंट समर्पण-कर एवं नमस्कार कर बैठ सकता हूं। परंतु मेरे साथ बोलते समय 'आप' का प्रयोगकर ही बोलना चाहिए। एवं मुझे राजा कहकर बुलाना होगा।

मंत्रीने उत्तर में कहा कि राजन्! आजपर्यंत किसी को भी हमारे स्वामीने राजा शब्द से नही बुलाया। परंतु तुम्हें बुलवायेंगे। आवो, तुम्हारे साथ सन्मानपूर्वक बोलने के लिए कहेंगे। परंतु आप कहकर वे नहीं बुलायेंगे। जैसे अन्य कन्या देनेवाले पितावोंको बुलायेंगे उसी प्रकार बुलाकर " आईये, बैठिये " यह कहेंगे। परंतु 'आप' शब्द का प्रयोग कैसा होगा ? नमिराज कहने लगा कि आप लोग समझा-कर इस आदत को छुडा नहीं सकते ? तब मंत्रीने कहा कि राजन्! सम्राट् की गंभीरताके संबंध में आपको क्या कहें ! हमें कुछ बोलनेकी ही जरूरत नहीं है। उनकी वृत्तिको देखनेपर देवेंद्र की उस के सामने कोई कीमत नहीं है। " रहने दो, एक नरपतिको सुरपतिसे भी नीचा

दिखा कर आप लोग प्रशंसा कर रहे हो, यह केवल आप लोगों की चापलूसी है " नमिराजने कहा उत्तरमें मंत्री कहता है कि राजन्! बोलो, क्या देवेंद्र तद्भवमोक्षगामी है ? हमारे राजा तद्भवमोक्षगामी हैं। उसके गाम्भीर्यका क्या वर्णन करें ? समुद्र के समान गंभीरता को धारण करनेवाले हमारे सम्राट् इंद्रकी वृत्तिको देखकर हसते हैं ? जिनेंद्रभगवंतके सामने देवेंद्र जिस समय जाता है उस समय नृत्य करने लगता है। परंतु सम्राट् कहते हैं कि वह नाचता क्यों है। क्या भक्तिसे स्तुति करनेपर उत्कटभक्तिका फल नहीं मिलसकता है ! सर्वांगभ्रांतिकी भक्तिमें आवश्यकता नहीं है। देवेंद्र अपनी देवीके साथ समवसरण को हाथीपर चढकर जाता है, इस प्रकार खुलेरूपमें अपनी स्त्रीको सबके सामने प्रदर्शन करते हुए वह भक्तिकरनेके लिए जाता है या अपनी स्त्रीकी लाजको बेचनेके लिए जाता है ! क्या अकेला ही स्त्रीको विमानमें लेकर वह देवसभामें पहुंचकर दर्शन व भक्ति नहीं करसकता है। लुच्चे व लफंगे जैसे युद्ध मे जाते समय अपनी स्त्रियोंको साथमें ही लेजाते है, उस प्रकार यह बहिरंग पद्धति क्या है ! राजन्। उसकी गंभीरताके लिए लोकमें वही उदाहरण है। दूसरे नहीं मिल सकते हैं। इसलिए वह तुम्हे राजा कहकर बोले तो भी तुम्हारा कम सन्मान नहीं हुआ। इसलिए व्यर्थ तुम आग्रह मत करो। तब नमिराजने उस बात को स्वीकार कर लिया। आप लोग आज आगे जावें, मैं कल आता हूं, इस प्रकार कहकर उन को विदा किया। इसी प्रकार मंडा-रवति आदि स्त्री जनोंका भी सत्कार करने के लिए माता यशोभद्रा देवीको कहलाकर भेजा। यशोभद्रादेवीने भी पुत्रोंकी इच्छानुसार उन स्त्रियोंका यथेष्ट वस्त्राभरणोंसे सन्मान किया। उन स्त्रियोंने भी उनसे समयोचित विनोदालापको करती हुई अब भरतकी ओर जानेके लिए आग्रह किया। तदनंतर सब लोग मिलकर बुद्धिसागर के साथ रवाना हुए।

इधर नमिराज अपनी माता की महल में चलागया। मातुश्री को नमस्कार कर कहने लगा कि माताजी! आप कहती थीं कि भरतको कन्या लेजाकर दो। परंतु मैने कहा था कि अपनी प्रतिष्ठा को खोकर कन्या देना यह उचित नहीं है। आखर को कौनसा अच्छा हुआ? सभी राजावों को अपनी महल में बुलाकर प्रतिष्ठा के साथ कन्या न देते हुए स्वयं लेजाकर देने के लिए हम क्या डरपोक व्यापारी है? अपनी कन्या के लिए जब बडे २ राजा सन्मान के साथ यहां पर आने के लिए तैयार हैं तो फिर वहांपर लेजाकर देने के लिए क्या वह लड्डू जलेबी है? कन्या देनेके पूर्व लोभ का परित्याग कर बारात में आये हुओं को खूब सन्मान करना चाहिये। वह सम्राट् स्वतः नहीं आया। यदि वह भी आता तो मैं उसकी सेना व उसका यथेष्ठ सन्मान करता। उत्तरमे यशोभद्राने कहा कि बेटा! तुमने भरतकी ओरके प्रमुख राजावोंका जो सन्मान किया वह श्लाघनाय है। मेरी इच्छा तृप्त हुई।

" माताजी! इस प्रकार मै प्रतिष्ठा के साथ उन सबको यहां न बुलाकर एकात में लेजाकर सबके समान कन्याको देदेता तो बहिन भी उस के अंतःपुर मे हजारों राणियों के समान सामान्यरूपसे रहती, उसे हमेशा सवतिमत्सरसे होनेवाले दुःख को अनुभव करना पडता। परंतु आज जिस ढंगसे मैने कार्य किया उस से वह पट्टराणी होगई। इन सब बातों को न सोचकर आप तो कहती थी कि कन्या को लेजाकर भरत को दो, नहीं तो मै घर छोडकर जावूंगी। कहिये अब कैसा हुआ?" नमिराजने कहा।

यशोभद्रा देवी नमिराज के वचन को सुनकर हस गई, कहने लगी कि बेटा! लोकमें कहावत है कि औरतों की बुद्धि राखमें मिलती है, क्या यह झूठ है? तुमने मेरे अविवेक को सम्हाल कर सचमुचमें हमारे वंश का उद्धार किया है। बहिन के लिए परम सुख हुआ, वह पट्टरानी बनगई। मुझे परम संतोष हुआ।

राज्याग गौरव हुआ। इन सबके लिए तुम ही कारण हो,अतएव बेटा ! सुखसे जीते रहो।

नमिराजने मातुश्रीके चरणोंमें नमस्कार अपनी महलकी ओर प्रस्थान किया। मातुश्री आनंदसे वहींपर बैठी रही। बुद्धिसागर अपने कार्यको करके भरतजीकी ओर चलागया।

भरतजीकी इच्छायें निर्विघ्नरूपसे एवं निमिषमात्रसे पूर्ण होती हैं। इसके लिए पूर्वजन्ममें जो उन्होने तपस्या की है और वर्तमानमें पुण्य मय भावना कर रहे हैं, वही कारण है।

उनकी सतत भावना रहती है कि—

हे परमात्मन् ! तुम निमिषमात्र भी दुःखका अनुभव नहीं करते हुए सुखसागर में मग्न हो, अतएव महादेव कहलाते हो। हे सुखो-त्तम ! उस अमृत को सिंचन करते हुए मेरे हृदय मे सदा बने रहो। हे सिद्धात्मन् ! तुम उत्साहवर्धक हो, उन्मार्गमर्दक हो, चित्सुखी हो, चित्राश्चर्यचरित हो, सन्मुनिहृदयश्रीवत्स हो, इसलिए स्वामिन् ! मुझे सन्मतिप्रदान कीजिये ॥

इसी भावना का फल है कि उन को किसी भी कार्य मे दुःखांत फल नहीं मिलता है।

इति मुद्रिकोपहारसंधिः

—।—

नमिराजविनयसंधिः

भरतजीको बुद्धिसागर मंत्री रोज वहांसे मंगल समाचारको भेज रहा है, उसे जानकर भरतजी प्रसन्न होते हैं।

एक दिनकी बात है कि भरतजी अपनी महलमें सुखसे बैठे हैं, प्रातःकालका समय है। आकाश प्रदेशमें अनेक वाद्यविशेषों के शब्द सुननेमें आये। भरतजीने जानलिया कि यह गंगादेव व सिंधुदेव आरहे हैं। जयंतांकको उन्होने स्वागतके लिए भेजा। सब लोगोंने बहुत वैभवके साथ पुरप्रवेश किया। गंगादेवी व सिंधुदेवीने आकर अपने भाईको नमस्कार किया व उचित आसनपर बैठ गई।

भरतजीने हर्षकेसाथ पंडितासे कहा कि हमारी बहिने मंगल समयमें उपस्थित हुई, देखा? पंडिताने उत्तर दिया कि क्या बडे भाईके कार्यमें वे उपस्थित न हों तो फिर कब उपस्थित हों? स्वामिन्! स्त्रियोंका स्वभाव ही यह होता है कि वे मायके में कुछ विवाहादि मंगलकार्य हो तो उसमें उपस्थित होने के लिए उत्कंठित रहती हैं। उसमें भी जब आपका ही गौरवपूर्ण मंगलकार्य है, उसे सुनकर वे कैसे रहसकती हैं? जिस विवाहमें सहोदरियां नहीं है वह विवाह ही नहीं है। भरतजीने हंसकर पंडिताको कुछ इनाम दिये, व बहिनोंकी ओर देखकर कहने लगे कि आप लोग थकगई होगी। गंगादेवी व सिंधुदेवीने कहा कि भाई! हमें कोई थकावट नहीं है, तुम्हारी महलकी ओर आते समय अनुकूल-पवन था। कोई आंधी वगैरह नहीं थी। जिस समय हम आरही थी उस-समय बहुतसी व्यंतर देवियां हमें हाथ जोडकर प्रार्थना करने लगी थी कि आपलोग बडो भाग्यशालिनी है। भरतराजकी भगिनियां है, आप लोग हमपर कृपा रखें। इसी प्रकार आगे जिस समय हम बढी कुछ देवियां दूरसे ही नमस्कार कर चली गई। ये इसप्रकार चुप चापके क्यों जारही

है ? ऐसा हमें संदेह हुआ। तलाश करनेपर मालुम हुआ कि आपके सेवकोंने अंकमाला को लिखते समय उद्दण्डता करनेसे उनके पतियोंके दांतो को तोड डाले थे। अतएव वे चुपचापके जारही है। हमे अपने भाई की वीरतापर हर्ष हुआ, उनकी मूर्खतापर दया आई। इधर चक्रवर्तिकी राणियोंने उन दोनों देवियो का स्वागत किया, व उन दोनोंको अंदर लिवा ले गई। इधर जयंताकने गंगादेव व सिंधुदेव का स्वागत किया। गंगादेव व सिंधुदेव भी सेनास्थानकी शोभाको आश्चर्य के साथ देखते हुए अंदर प्रवेशकर गये। जयंताकने विवाहके निमित्त से उस समय सेनास्थान को स्वर्गपुरीके समान अलंकृत किया था। भरतजीने उनके साथ सरस वार्तालाप करने के बाद उनको देवोचित महलमें विश्रांतिके लिए भेजा। गंगादेव सिंधुदेवने यह कहते हुए कि आपको किसी बातकी कमी नहीं है, तथापि हम लोगोंकी भक्ति है कि विवाहके समय इन उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको धारण करें, भरतजी को अनेक वस्त्र व रत्नाभरणों को भेट में दिये। भरतजीने भी संतोष के साथ ग्रहण किये। तदनंतर उनको उनके लिए निर्मित महलमें भेजकर, उन की महल में उत्तम वस्तुवों को भेजने के लिए जयंताकको सूचना दीगई, तदनंतर गंगादेवी व सिंधुदेवी भी उनके योग्य महलमें गई। क्यों कि वे देवियां थी, मानवीय स्त्रियां होतीं तो भाईके महल मे ही रहती। उन को भी यथेष्ट वस्त्राभरणादि उपहार भेजे गये।

वह दिन आनंद के साथ व्यतीत हुआ। रात्रि के समय बुद्धिसागर मंत्री अनेक गाजेबाजे के साथ आया व चक्रवर्ति को भक्ति से नमस्कार किया। बुद्धिसागर के साथ गए हुए बहुत से व्यंतर राजा व विद्याधर राजा थे। उन सब से सम्राट् ने कुशलप्रश्न किया। मागधामर, प्रभासांक, हिमवंत आदि का उन्होंने नामोच्चारण करते हुए उनका

कुशल समाचार पूछा एवं उन लोगोंको अनेक वस्त्राभरण प्रदान किए। उस समय सब लोगोंने भरतजी को हाथ जोडकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! हम लोग कुछ निवेदन करना चाहते हैं। उसका स्वीकार होना चाहिये। भरतजी विचारमें पड गए कि ये क्या कहनेवाले होंगे। कुछ भी हो, ये मेरे अहित को नहीं कहेंगे। फिर क्या हर्ज है। फिर उनसे कहने लगे कि अच्छा! क्या कहना चाहते हैं? कहिये, मै अवश्य सुनूंगा।

स्वामिन्! और कुछ नहीं, वह नमिराज बहुत मानी है। वह यहां आने के लिए ही तैयार नहीं था। परन्तु हम लोगोंने किसीतरह मनाकर उसे मंजूर कराया है। परंतु आप उसे नमिराजके नामसे संबोधन करें। वह चाहता था कि आप उसके साथ 'आप' शब्दके साथ बोलें। परंतु हम लोगोने उसे स्वीकार नहीं किया। केवल नमिराज शब्दसे संबोधन करना मंजूर किया है। इसे आप स्वीकार करें। आपके मामाके पुत्रकेलिए यह सन्मान रहने दीजियेगा। नमिराज के स्वाभिमान को देखकर भरतजी को मनमें प्रसन्नता हुई। सचमुचमें नमिराजके हृदय में क्षत्रिय कुल का अभिमान है। फिर भी उस प्रसन्नता को बाहर न बतलाकर कहने लगे कि मंत्री! इस षट्खंड मे राजा मै अकेला ही हूं। तब क्या दूसरे को यह पद मिल सकता है? फिर मै उसे राजाके नामसे कैसे बुलासकता हूं? जब वह मेरे सामने आकर नमस्कार करेगा फिर उसे स्वामित्व कहां रहेगा। ऐसी अवस्थामें मै उसे राजा कैसे कह सकता हूं। सबने प्रार्थना की कि आपकी पट्टरानी के बडे भाई के लिए यह सन्मान देना ही चाहिये। तब भरतजी ने कहा कि यद्यपि यह मान देना ठीक नहीं है। तथापि आप लोगोंकी बात को मानना भी मेरा कर्तव्य है। मैने उसे स्वीकार कर लिया।

इतनेमें भंडारवतीने आकर सम्राट्को नमस्कार किया व कहने लगी कि स्वामिन् ! मैं सुभद्रादेवीको देखकर आगई हूं, सचमुचमें उसका सौंदर्य अप्रतिम है। अब तो उसे देखकर आप षट्खंड राज्यको भी भूलजायेंगे। उसके प्रत्येक अवयवमें वह रूप भरा हुआ है जो अन्यत्र देखनेके लिए मिल नहीं सकता। वह अपने सौंदर्यसे स्वर्गीय तरुणियोंको भी तिरस्कृत करती है। पुरुषोंमें आप व स्त्रियोंमें वह एक सौंदर्य के भंडार है। इत्यादि प्रकारसे उसके रूपकी प्रसंशा कर जाने लगी, भरतजीने उसे खाली हाथ न जाने देकर अनेक उपहारोंके साथ भेजा। इसप्रकार वह रात्रि भी आनंदके साथ व्यतीत हुई।

दूसरे दिन प्रातःकालकी बात है। भरतजी दरबार लगाकर बैठे हुए हैं। इतनेमें आकाश प्रदेशमें अनेक विमान आते हुए दिखाई दिये। वह और कोई नहीं था। नमिराज अनेकराजा व परिवारको साथमें लेकर विवाहकी तैयारी से आरहा है। यहांसे गये हुए प्रायः षट्खंडके सभी राजा उसके साथ हैं। अपनी मातुश्री व बहिनको विमानमें रखकर एवं अपनी स्त्रियोंको अपने पुरमें ही छोडकर आया है। इसमें राजाग रहस्य है। उसे मालुम था कि भरतजी मुझे अब सन्मानकी दृष्टिसे नहीं देखेंगे। अतएव उनकी स्त्रियां भी मेरी स्त्रियों को हीनदृष्टिसे देखेंगी। इस विचारसे उसने अपनी स्त्रियोंको अपने नगरमें ही छोड दी। यदि बंधुवोंको बराबरीकी दृष्टिसे देखी तो उनसे मिलना ठीक है। जो सेवकोंके समान बंधुवोंको देखते हैं उनसे मिलना कदापि उचित नहीं है।

आकाश प्रदेशमें आते हुए नमिराजने चक्रवर्तिके सेना स्थानके सौंदर्यको देखा, अनेक तोरणोंसे अलंकृत मंदिर, तरह तरहकी शोभावोंसे शोभित ४८ कोश परिमाण सेनास्थान, रत्ननिर्मित महल, अन्यदुर्लभ सुगंधसामग्री, आदियों को देखकर नमिराज

आश्चर्यचकित हुआ । मनमें सोचने लगा कि बीचमें जहां मुक्काम किया है वहां इसकी यह हालत है, तो फिर इसकी साक्षात् नगरीमें क्या होगी । सचमुचमें यह भाग्यशाली है, साक्षात् देवेंद्र भी इसकी बराबरी नही कर सकता है । प्रत्यक्ष देखे विना कोई बात मालुम नहीं होती है । मैने व्यर्थ ही गर्व किया । इसकी संपत्ति को देखते हुए मुझे धिक्कार होना चाहिए । " कुलमें मैं इससे कम नही हूं ", इस गर्वसे मै अभीतक बैठा रहा । क्या मै इसकी बराबरी कर सकता हूं ? इसके साथ मैने व्यर्थ ही छल किया । अब मैं अपनी बहिन को जल्दी ही उसे देकर विवाह कर दूंगा । मेरी बहिन का भाग्य भी अप्रतिम है । इत्यादि विचारसे नमिराज का मस्तक भरने लगा । यशोभद्रादेवी भी अपने जमाई के भाग्यको विमानसे ही देखकर फूली नहीं समाती थी ।

नमिराज विमानसे उतर कर चक्रवर्ति की महल की ओर आरहा है । चक्रवर्ति ने भी उसके स्वागत के लिए मंत्री आदि प्रमुख पुरुषोंको भेजे । उन्होने जाकर बहुत संतोषके साथ नमिराज का स्वागत किया। नमिराज सब के साथ बहुत हर्ष से महल की ओर आरहा है। वह भी परम सुंदर है, बहुत वैभवके साथ आरहा है । उसने दूरसे चक्रवर्ति को देखा, दरबार में प्रवेश किया ।

वेत्रधारी लोग भरतजी से कह रहे है कि हे राजाधिराजमार्तण्ड ! देखियेगा, नमिराज पासमें आरहे है । आपके मामा के पुत्र नमिराज आरहे है । सम्राट् ने गायन वगैरह बंद कराकर इस ओर देखा । नमिराजने अनेक भेटोंको समर्पण कर चक्रवर्ति को नमस्कार किया । सम्राट्ने हर्षके साथ उसे आलिंगन दिया व अपने सिंहासन के साथ ही दूसरा एक आसन दिया । उसपर नमिराज बैठ गया । बाकी के लोगोंको भी उचित आसन दिये गए। बादमें सम्राट् कहने लगे कि नमिराज!-

बहुत दिनके बाद तुहारा दर्शन हुआ, आज हमें हर्ष होरहा है। उत्तरमें नमिराज कहने लगा कि भावाजी ! आप यह क्यों कहरहे है कि मैं बहुत समयके बाद देखनेको मिला, प्रत्युत् मुझे बहुतकाल बाद भाग्यसे आपका दर्शन मिला। सचमुचमें उससमय नमिराजका हर्ष-सागर उमड पडा था। कारण सम्राट्ने उसे राजा शब्दसे संबोधन किया था। क्यों नहीं, उसे हर्ष होना साहजिक है। उसका आसन छोटा होनेपर भी यह मान छोटा नही था।

भरतजी—नमिराज ! तुमने मुझे देखनेकी इच्छा नहीं की, परंतु तुम्हे देखनेकेलिए मैंने अनेक तंत्रोसे प्रयत्न किये। क्यो कि स्नेह पदार्थ ही वैसा है। वह सब कुछ कराता है।

नमिराज—क्या आपके प्रति मेरा प्रेम नहीं है ? आपको देखने को मेरी इच्छा नही होती थी ? जरूर होती थी। परंतु आपके भाग्य की महिमा को सुनकर मै डरता था कि मै आपसे कैसे मिलूं ? इसलिए मै दूर ही था। क्या इसे आप नहीं जानते है ? भावाजी ! आप यह अच्छी तरह जानते है कि लोकमें गरीव व्यक्ति श्रीमंतोको अपना बंधु कहे तो लोग सब हंसते हैं। यदि श्रीमंतने गरीब को अपना बंधु कहे तो उसकी शोभा होती है। बडे आदमी कैसे भी बोले तो चलता है, उसके लिए कोई बाधा नही है, अतएव मै पहाडके ऊपर ही रहा। जब आपकी आज्ञा हुई झट यहांपर चले आया।

भरतजी—नमिराज ! तुम बोलनेमें बडे चतुर हो, शाहबास ! (चक्रवर्ति हर्षके साथ उसकी ओर देखते रहे)

नमिराज—स्वामिन् ! बोलनेकी चतुराई आपमें है या मुझमें है यह साथके राजावोंसे ही पूछलिया जावे। हाथ कंगनको आरसीकी क्या जरूरत है ?

इतनेमें मागधामरादि प्रमुख कहने लगे कि सचमुचमें हमारे स्वामी बोलने चालनेमें चतुर है। परंतु वह स्वयं ही जब आपको चतुर कहरहा है तो आप भी चतुर हो इसमें कोई शक नहीं है।

भरतजी—नमिराज ! तुम मेरे मामाके पुत्र होनेके लिए सर्वथा योग्य हो, गुणान्वित हो, भावको जाननेवाले हो, हजार बातोंसे क्या है! तुम राजा कहलानेके लिए सर्वथा समर्थ हो। मैं चक्ररत्नको पाकर पराक्रमसे जीवन व्यतीत करसकता हूं व कर रहा हूं। परंतु तुम क्षात्राभिमानको कायम रखकर उसी तेजसे यहांपर आये। तुम ही सच-मुचमें विक्रमान्वयशुद्ध हो। किसी भी बातको छोडनेमें पकडनेमें, लेने देनेमें, शरीरसौंदर्य, बोलने चालने आदि बातोंमें क्षत्रियोंमें कोई विशेषता रहनी चाहिये। खाली पोली चालपर मैं प्रसन्न नहीं होसकता, तुम्हारी वृत्तिने मेरे मस्तकको झुलाया।

इतनेमें नमिराजने अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको राजाके सामने भेंटमें रखा।

भरतजी पुनः कहने लगे कि जब मैं तुमसे प्रसन्न हुआ तो तुम मुझे भेंट क्यों देरहे हो। मुझे तुमको देना चाहिये।

नमिराज कहने लगा कि तुम्हारे वचनोंसे मेरा हृदय पिघल गया। अतएव विनयके चिन्हके रूपमें इनको स्वीकार करना ही चाहिये।

तदनंतर भरतजीने द्विगुणित रूपसे आगत बंधुओंका सन्मान किया। नमिराजको भी उसी प्रकार उपहार दिये गये।

बुद्धिसागरने प्रार्थना की कि स्वामिन् ! कलके रोज हमलोग विवाह-मंगलके आनंदको मनायेंगे। आज इन सबको विश्रांतिकी आज्ञा होनी चाहिये। तदनुसार भरतजीने सबको दरबारसे बिदा किया। सबको जानेके लिए इशारा करके स्वयं भी महलकी ओर जाना हुए। चक्रवर्तिके कुछ दूर जानेके बाद एक दासीने आकर कानमें कहा कि स्वामिन ! नमिराज अकेले ही आये हैं। उनकी देवियोंको यहांपर नहीं लाये

आये हैं। सम्राट् वहीं ठहर गए व नमिराजको बुलाने भेजा। नमिराजको अकेला ही आनेके लिए इशारा करनेपर वह अकेला ही पासमें आया। बाकीके नौकर, चाकर सब दूर चले गए। सम्राट् ने नमिराज के कान में कहा कि नमिराज! तुम यहांपर आये, सो बहुत अच्छा हुआ। परंतु तुम्हारी स्त्रियोंको तुम अपने गांव में ही रखकर आये यह ठीक नहीं है। उत्तर में नमिराज ने कहा कि माताजी आई है। बहिन को लेकर आया ही हूं। फिर उनकी क्या आवश्यकता है ? इसलिए छोडकर आया हूं। आपको किस वैभव की कमी है।

भरतजी कहने लगे कि तुम व्यर्थकी बहानाबाजी मेरे साथ मत करो। मेरी बहिनोंको मुझे देखनेकी इच्छा होरही है। उनके आये बिना विवाहमें शोभा ही नहीं है। नमिराजने थोडा संकोच किया। पुनः सम्राट् कहने लगे कि नमिराज! इस प्रकार भेदभावसे क्यों विचार करते हो? मेरी बहिनोंसे मुझे मिलना ही है। आज ही रात्रि को उन्हें बुलवा लूंगा। तुम यहांपर आये। मामीजी आगई। अब केवल मेरी बहिनें वहांपर रहगईं। उन के मनमें न मालूम क्या विचार उत्पन्न होता होगा। मनमें कितना दुःख होता होगा। हमारी स्त्रियोंसे वे दो दिनके लिए मिलकर प्रसन्न होजाती। स्त्रियोंको ऐसे कामोंमें बडा संतोष रहता है। इसलिए जरूर बुलवावो। इतना कहकर सम्राट् महलकी ओर चले गये। नमिराज भी अपने लिए खास निर्मित महलकी ओर चलेगये।

नमिराज की महल को पहिलेसे सम्राट्ने भोगोपभोगसामग्रियोंसे भर दिया था। चक्रवर्तिने महलमें जाकर भोजन किया। नमिराज भी भोजनादि क्रियासे निवृत्त हुए। इस प्रकार वह दिन सुखसे व्यतीत हुआ।

पाठक देखें कि नमिराज चक्रवर्तिके पास आनेके लिए संकोच करता था। अभिमानसे अपनी बहिनको सम्राट्को देनेके लिए भी तैयार नहीं था। परंतु सम्राट् पुण्यशाली है। उन के सातिशय पुण्यके

प्रभावमे कैसा भी कठोर हृदय क्यों न हो वह पिघल जाता है। उनको सुख ही सुखका प्रसंग आता है। आगेके प्रकरणमें पाठक सुभद्राकुमारी के साथ भरतजी का विवाह होनेके मंगलप्रसंगका दर्शन करेंगे। भरतजी सदा संसारमें भी सातिशय सुख मिल सके इसके लिए आत्मभावना करते रहते हैं। उनके हृदयमें सदा आत्मविचार बना रहता है।

" हे परमात्मन्! जो व्यक्ति हृदयसे तुम्हे देखता है उसे तुम अविच्छिन्न सुखको प्रदान करते हो। वह सुख अनुपम है। क्यों कि तुम सुखसागर हो। अतएव सदा अचल होकर मेरे हृदयमें बनेरहो।

हे सिद्धात्मन्! आपकी उपासना करनेवाले व्यक्ति अनेक सिद्धियोंको साध्यकर अंतमें संसिद्धि (मुक्ति) युवतिके साथ विवाह करलेते हैं जैसा कि आपने कर लिया है। इसलिए हे भव्यबांधव! अगणित सुखको प्राप्त करने योग्य सुबुद्धी को प्रदान कीजियेगा "।

इसी भव्य भावनाका यह फल है कि उनको बार २ सुख साधनोंकी प्राप्ति होती रहती है।

इति नमिराजविनयसंधिः

—— ० ——

विवाहसंभ्रमसंधिः

नमिराज अपने मनमें विचार करने लगा कि जब स्वयं सम्राट् ने जिनको अपनी सहोदरियोंके नाम से उल्लेख किया, ऐसी अवस्था में अपनी स्त्रियोंको नहीं लाना यह उचित नहीं है । उसी समय उनको बुलवानेकी व्यवस्था की गई । विनमिराज की माता शुभदेवी, उसकी पांच सौ देवियोंके साथ आई व नमिराज की आठ हजार राणियां भी आगई । सब का स्वागत किया गया ।

यशस्वतीदेवी जो कि भरतजीकी माता है उसका भाई कच्छ राजा है । सुनंदादेवी के भाई महाकच्छ है । दोनों सुखी है । कच्छराज को नमिराज व सुभद्रादेवी, और महाकच्छ को इच्छामहादेवी व विनमिराज इस प्रकार प्रत्येक के दो दो संतान हैं । कामदेव बाहुबलि के साथ इच्छामहादेवी का विवाह हुआ है । वह पौदनापुर में सुखसे अपने समयको व्यतीत कर रही है । सुभद्राके साथ आज भरतजीके विवाह की तैयारी होरही है । अतएव इस मंगल प्रसंग में सब लोग यहांपर एकत्रित हुए।

सब लोग यहांपर आगए है यह समझकर भरतजी को परम हर्ष हुआ । उन्होंने विवाह की तैयारी करने के लिए आदेश दिया ।

विवाहसमारंभ के उपलक्ष्य में सेनास्थान का शृंगार किया गया । एक नवीन जिनमंदिर का निर्माण हुआ । वहांपर बहुत संभ्रम के साथ पूजा विधान होने लगे । करोडों प्रकारके गाजेबाजे के साथ, शुद्ध मंत्रोच्चारण के साथ पूजाविधान चल रहा है । भरतजी भक्ति से उसे देख रहे हैं । पूजाविधानके अनंतर विप्रगणों को अभ्यंग के साथ अनेक भक्ष्यभोज्यसे तृप्त किया एवं उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंको दान में दिए । सम्राट् को किस बातकी कमी है ?

" सति सुभद्रादेवी व पति भरतेश बहुत सुख के साथ चिरकाल जीते रहे " इस प्रकार दान लेते समय विप्रोंने आशीर्वाद दिया ।

इसी प्रकार अन्य श्रेष्ठिवर्ग, वेश्याएं, परिवार आदि सब को परमान्न से सम्राट् ने तृप्त कराया। सेनास्थानकी प्रत्येक गली में भोजन का समारंभ हुआ। सेनाके एक २ बच्चे को भक्ष्यभोज्य से संतुष्ट किया। स्थान स्थान पर वस्त्र के पहाड़ ही रखे हुए है। जिसे चाहे वह लेजावे। तांबूल, कर्पूर, इलायची वगैरे पर्वतोंके समान ढेरके ढेर रक्खे हुए हैं। जो महलमे जीमसकते हैं उनको महल में जिमाया। अन्य लोगोंको स्थान २ पर पाकशालाका निर्माण कर भोजन कराया। और जो अस्पृश्य है उनको पक्वान्न मिठाई वगैरे दिये गये। वे बांधकर लेगये। इतना ही नहीं, हाथी घोडा आदि जो सेनामें सजीव युद्धसाधन है उनकी भी तृप्ति कीगई। परिवारको संतुष्ट किया। व्यंतरोंको दिव्य वस्त्राभरणोंसे संतुष्ट किया। नरपति, खगपति, व्यंतरपति आदि अपने मित्रोंका यथेष्ट सत्कार किया। हजारों राजकुमारोंको अपनी महलमें बुलाकर भोजन कराया व उनका सत्कार किया। अपनी बहिन गंगादेवी व सिंधुदेवीका यथेष्ट सत्कार किया गया। साथमें देवपरिवारजनोंका भी सत्कार किया। अपनी दोनों मामी और नमिराज का उन्होने जिस वैभव से सन्मान किया उसका क्या वर्णन होसकता है। नमिराज की देवियों का भी सन्मान किया। विशेष क्या? ४८ क्रोश परिमित उस स्थानमें रहे हुए प्रत्येक प्राणीको सम्राट्ने तृप्त किया। परंतु मुनिभुक्ति मात्र नहीं हो सकी। इसका भरतजी के मनमें जरूर दुःख हुआ। तथापि उन्होने अपनी उत्कट भावनासे इस कार्यको भी पूर्ण किया।

इस प्रकार चक्रवर्ति के कार्य को देखकर सासूके हृदयमें बडा हर्ष हुआ। मनमे सोचनेलगी कि ऐसे महापुरुष की महलमें पहुंचने वाली मेरी पुत्री धन्य है।

इस प्रकार प्रातःकालमें बडे आनंदके साथ भोजनादि कार्य हुए।

बादमें दुपहर को चक्रवर्ति ने सब को आनंदसे वसंतोत्सव व कुंकुमो-त्सव को मनानेके लिए आदेश दिया।

तदनंतर गंगादेव व सिंधुदेव दोनों नमिराजकी महलपर गये व सहो-दरी के लिए उचित दिव्य वस्त्राभरणोंको देकर चले गये। इसे देखकर गंगादेवी व सिंधुदेवीको भी बडी इच्छा हुई कि हम भी भाभीको कुछ भेंट दें। उन्होंने अपने पतिराजसे पूछा। उत्तरमें गंगादेव सिंधु-देवने कहा कि यदि तुम्हारे भाईने आज्ञा दी तो तुमलोग जासकती है। उसी समय गंगादेवी व सिंधुदेवी दोनों मिलकर भाईके पास आई। और कहने लगी कि भाई! विवाहकेलिए शृंगार की हुई कन्याको हम देखना चाहती है। परवानगी मिलनी चाहिये। तब भरतजीने कहा कि आपलोगोंको इतनी गडबड क्या है? रात्रीमें विवाह मंडपमें आपलोग देखसकती हैं। दूसरोंके घरमें विना बुलाये जाना क्या उचित है ?

भाई! परगृह कौनसा है? यह गगनवल्लभपुर तो नहीं है। अपने नगरमें आकर उन्होंने अपनी महलमें मुक्काम किया है। फिर वह परगृह किस प्रकार होसकता है ?

ऐसा नहीं बहिन्! दूसरे जब अपनको बुलाते नहीं, अपन ही स्वतः वहा पहुंचते हैं तो उसमें आदर नहीं रहता है। वे कह सकते हैं कि हमने क्या बुलाया था? वे क्यों आगई? इससे अपनी प्रतिष्ठा कम हो सकती है।

भाई! तुमने हमें आदरकी दृष्टि से देखा तो हमें दुनियाका सन्मान मिल गया। यदि तुमने आदर नहीं किया तो हमारी कीमत अपने आप कम हो जाती है। इसलिए वे क्या करसकते हैं। हमें उनके सन्मान से क्या प्रयोजन? विशेष क्या? षट्खंडाधिपति हमारे भाई की भाग्यशालिनी भावी पट्टरानी, उस हमारी भाभी को देखने की भव्य भावना हमारे मनमें होगई है। इसलिए हमें अनुमति मिलनी चाहिये।

भरतजीने बहिनोंकी बडी आतुरता देखी । उन्होंने कहा कि अच्छा ! यदि आप लोगोंकी बहुत इच्छा हो तो एक दफे जाकर आवें। तब उनको बडा आनंद हुआ । वे दोनों बहिने उसी समय नमिराज के महल में गई । यशोभद्रादेवी को मालुम हुआ कि भरतजी की बहिनें मिलने के लिए आरही हैं । तब देवीने सेवकियों से उन दोनों बहिनों का पैर धुलवाया, और योग्य आसन देकर बैठने के लिए कहा । परंतु उन बहिनोंने कहा कि हम लोग यहां नहीं बैठेंगी । हमारी भाभी कहा है ? उसके पास हम जाकर बैठेंगी । तब यशोभद्रादेवी उन को ऊपर की महल में लेगई । वहांपर अनेक स्त्रियों के बीच आनंदसे बैठी हुई उस सुभद्रादेवीको देखा । यशोभद्राने पुत्रीसे कहा कि बेटी ! तुम्हारे राजा भरतजीकी बहिनें आगई है, उनसे मिलो। तब सुभद्रा देवीने उठकर दोनोंको आलिंगन दिया । तदनंतर तीनों मिलकर वहां बैठगई । पासमें ही यशोभद्रा देवी भी बैठगई ।

सुभद्रा देवी की बोलचाल, हावभाव को देख कर गंगादेवी व सिंधुदेवीने मनमें विचार किया कि सचमुचमें यह सामान्य लडकी नहीं है । सम्राट्की पत्नी होने योग्य है । यह चक्रवर्तिको मोहित किये विना नहीं रहेगी । इसके शृंगार, अलंकार, सौंदर्य आदि देवांगनावोंको भी तिरस्कृत करते हैं । मनुष्यस्त्रियोंकी तो बात ही क्या है ! सुभद्रा देवीके प्रत्येक अवयवके आभरण अत्यंत शोभा को प्राप्त होरहे थे । अनेक सखियां उसकी सेवामें खडी है । तांबूलदान आदि कार्यमें सदा सिद्ध रहती है । वह सुभद्रा देवी बहुत गंभीरतासे उन देवागनावोंकी ओर देखकर बैठी थी ।

देवियोने प्रश्न किया कि हमारे भाईके मनको हरण करनेवाली क्या तुम ही हो ? । सुभद्रादेवीने कुछ भी उत्तर न देकर मुसकाये. शायद वह मौनसे यह कह रही है कि यह कौनसी

बड़ी बात है ? पुनश्च वे प्रश्न करने लगी कि क्या यही तिलक भरतजी के मन को प्रसन्न करेगा? क्या यह वेणी ही सम्राट् को मोहित करेगी। बोलो देवी ! तुम मौनसे क्यों बैठी है। तब सुभद्रादेवी ने लज्जा से शिर झुकाया। वे दोनो बार २ उसे बुलवाने की कोशिस कर रही हैं। परंतु वह लज्जा से बोलती नहीं है। फिर उसे चिढाने के लिए कह रही है कि यह सुंदरी तो जरूर है, परंतु सरस नहीं है, क्यों कि जब हम स्त्रियोंसे नहीं बोलती है तो अपने पति से कैसे बोल सकती है ? केवल सुंदरी रहने से क्या प्रयोजन ? देखने के लिए सुंदर दिखनेवाले फल यदि सरस न हो तो क्या प्रयोजन ?

तब मधुवाणी कहने लगी कि वह आज नहीं बोलेगी। कल या परसो आकर आप लोग देखें। आप लोगोंको एक दो बातों में ही निरुत्तर कर देगी। आप लोगोंकी बात ही क्या है ? आपके भाई की बुद्धिमत्ता भी हमारे देवी के सामने कभी २ चल नहीं सकेगी। उन को भी किसी किसी समय निरुत्तर कर देगी। हमारी देवी की बुद्धिमत्ताके सामने दुसरोंका चातुर्य नहीं चल सकेगा। आज रहने दीजिए। तब गंगादेवी व सिंधुदेवीने कहा कि मधुवाणी ! ठीक है ! शायद इस सुभद्रा देवीका नियम होगा कि अपने पतिके सिवाय दूसरे किसीसे भी नहीं बोलेगी, इसलिए मौनसे बैठी है ! अच्छा ! हम जाकर भाईसे बोल देंगी।

तब यशोभद्राने कहा कि जानेदो जी ! तुम्हारे भाई व तुमको यह कन्या कैसे जीत सकती है ? इसलिए व्यर्थ ही उसे क्यों बुलवानेका प्रयत्न आप लोग कररही हैं। तुम्हारे भाई इस लोकमें सर्वश्रेष्ट है। और आपलोग देखलिया है। आप लोगोंको बातोंमे कौन जीत सकते हैं। इसलिए आप लोग मेरी कन्याके साथ प्रेमसे मिलती रहें यही हमें चाहिये।

इस प्रकार विनय विलास कर वे दोनों बहिनें जानेके लिए निकली। जाते समय दोनों बहिनो ने सुभद्रा कुमारी की अंगूठी देख-नेके लिए चाहने पर उसने सहज ही निकालकर दी। तब वे दोनों कहने लगी कि इसे तुम्हारे प्रेमचिन्ह के रूपमे लेजाकर हम अपने भाई को देंगी। तब दोनो को अपनी दोनों हाथों से धरकर बैठाल दिया। सचमुच में उस की शक्ति अपार थी। लोककी समस्त स्त्रियों के मिलने पर भी चक्रवर्ति को स्त्रीरत्न के सिवाय संतोप नहीं होता है। यह सुभद्रा स्त्रीरत्न है। शक्ति में फिर उस की बराबरी कौन कर सकते है। उस ने उन देवागनाओं के हाथ से अंगूठी छीनली। उस के सामर्थ्य को देखकर उन देवियों को भी आश्चर्य हुआ। उत्तर में उन्होंने कहा कि कुमारी! तुम्हारे घरमे तुम इतनी शक्ति को दिखला रही हो। अब अच्छा! हमारे भाई की महल में आवो! वहां पर देखेंगे तुम्हारा सामर्थ्य कितना है? इस प्रकार विनोद वार्तालाप करती हुई जानेके लिए निकली। तब यशोभद्रा देवीने अनेक मंगल पदार्थों को देकर उनका सत्कार किया।

वहांसे निकलकर दोनों देवियां भाईके पास गई, वहां जाकर उन्होंने सुभद्राकुमारी की बडी प्रसंशा की। भाई! उसका रूप, श्रृंगार व गांभीर्य आदिको देखकर हम दंग रहगई। उत्तरमें भरतजी कहने लगे कि न मालुम आपलोग व्यर्थ प्रसंशा क्यों कर रही है। तब देवियोने कहा कि भाई! इसमें बिलकुल संदेह नहीं है। वह स्त्रियोमें रत्नके समान है। उसका सामर्थ्य अपार है। भाई! हम लोगोंका चित्त प्रसन्न हुआ। यह बडे भारी समारंभ है। ऐसे समयमे मातुश्री भी रहें तो बडा आनंद होता। उत्तरमें भरतजी कहने लगे कि बहिन्! मैं भी यही सोचरहा था। माताजीको इससमय विमान भेजकर बुलवा लेता। परंतु उसमें एक विघ्न है। माताजी को बुलाते समय मेरी छोटी मां सुनंदा देवीको भी बुलाना चाहिये। उनका भी आना जरूरी है। परंतु बाहुबलि उनको भेजनेके लिए मंजूर नहीं करेगा।

क्यों कि मेरे भाईका हृदय कैसा है मै जानता हूं। इसलिए आपलोग संतुष्ट रहें। आज रहने दो।

रात्रि होगई, पूर्णिमा होने के कारण शुभ्र चांदनी फैल गई। उस समय नरलोक ज्योतिर्लोक के समान माल्लम हो रही है। सेनास्थान में विवाह समारम्भ की तैयारिया हो रही है। सेनाके प्रत्येक अंगका श्रृंगार कियागया है। हाथी घोडे आदि भी सजाये गये हैं। सर्वत्र आनन्द ही आनद होरहा है। एकतरफ इस खुशीमें विद्याधरी देवियां आकाशमें नृत्य कर रही थी तो दूसरी तरफ भूचरी देविया भूमिपर नृत्यकर रही थी। करोडों प्रकारके वाद्य बज रहे थे। सुभद्राकुमारीको अनेक देवियोंने मिलकर विवाहोचित श्रृंगारसे श्रृंगारित किया। भरतजी भी देवेंद्रके समान अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभरणोंसे अलंकृत हुए। सर्वत्र उनकी जयजयकार होरही है।

भरतजीका पुण्य अन्यासदृश है। उनको हरसमय आनंद व मंगलके प्रसंग आया करते हैं। वे संसारमें भी सुखका अनुभव करते हैं। उनकी सेवामें रहनेवाले सेवकोंको भी जब दुःख नहीं है तो फिर उनको स्वयंको दुःख किस बातका होसकता है। जिस प्रकार दीपक दूसरोंको भी प्रकाश देता है व स्वयं भी प्रकाशित होता है उसी प्रकार भरतजी स्वयं भी सुख भोगते है, दूसरों को भी सुख देते हैं। वे परमात्मासे प्रार्थना करते है कि—

" हे परमात्मन्! तुम स्वयं सुखी हो एवं समस्त लोकको सुखप्रदान करते हो। क्यों कि तुम सुखस्वरूप हो। अतएव मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! मुक्तिलक्ष्मीके साथ विवाह करनेके पहिले आप लोकको मृदु, मधुर व गंभीर धर्मामृत पानसे संतुष्ट करते हैं। हितोक्तिके द्वारा संसारके समस्त प्राणियोंको तृप्त करते हैं। अतएव हे परमविरक्त! मुझे व्यक्तमार्गको प्रदान करें।

इसी भावना फल है कि वे सदा सुख भोगते हैं व दूसरोंको भी सुख देते है।

इति विवाहसंभ्रमसंधिः

अथ स्त्रीरत्नसंभोगसंधिः

विवाहकी सर्व तैयारियां हो चुकी है। करोडो प्रकारके गाजेबाजों के साथ कन्याने आकर विवाहमंडप में प्रवेश किया। वहापर सुंदर अलंकृत अक्षतवेदीपर आकर कन्या खडी है। अनेक विप्रजन मंगल मंत्र बोल रहे है। सम्राट भी विवाहोचित वेषभूषासे युक्त होकर अपने परिवार के साथ आरहे है। वहांपर उन्होंने विवाहमंडप में प्रवेश कर अपने लिए निर्मित अक्षतवेदी पर खडे हुए। वर और वधू के बीच एक सुंदर पर्दा है। द्विजोने मंगलाष्टक पठन के लिए प्रारंभ किया। उत्तम मंत्रोंका उच्चारण करते हुए उन्होंने उन दंपतियोंको मोतियोंका तिलक लगाया। मंगलाष्टक पूर्ण होनेके बाद मंगलकौशिक राग में गायन करने लगे। तदनंतर जब पलमंजरि राग में गा रहे थे तब वह बीच का पर्दा एकदम अलग हुआ। नमि, विनमि व सिंधुदेव गंगादेव ने सुभद्रादेवी से पुष्पमाला डालने के लिए कहा। तदनुसार सुभद्रादेवीने सम्राट के गलेमें माला डाल दी। उस समय सम्राट् को इतना हर्ष हुआ कि मानो तीन लोकका भाग्य ही उनके गलेमें आ गया हो। सम्राट् स्वभावसे ही सुंदर है। उसमें भी देवलोकके वस्त्राभरणों को उन्होंने धारण किया है। जब उनके गलेमें पुष्पमाला आई उसका वर्णन फिर क्या करें। चारों भाइयोंने मिलकर सुभद्रादेवी के हाथको सम्राट् के हाथ से मिलाया। तब मधुवाणी विनोद से कहने लगी कि नमिराज! तुम बडे आदमी हो, तुम तो समझ रहे थे कि तुह्मारी बहिन के हाथ पकडनेवाला कोई नहीं है। अब हमारे भरतजीके साथ हाथ क्यों मिलवा रहे हो। उस समय सम्राट् हंसे। नमिराज भी भी थोडा लज्जित हुआ। धीरेसे उसने एक रत्नहार को निकालकर मधुवाणी के हाथ मे रखा व कहने लगा कि अब चुप रहो, बोलो मत। सर्व प्रकार से योग्यविधान के साथ विवाह हुआ। ५६ देशके राजा

वहांपर सम्राट् के विवाह के लिए उपस्थित थे । उस विवाह का कहांतक वर्णन किया जाय ।

विवाह विधि से निवृत्त होकर भरतजी राजमहल मे प्रविष्ट हुए । दरवाजे में सिंधुदेवी व गंगादेवी खडी है । कहने लगी कि भाई ! तुम हमारे घर पर विना पूछे किस कन्याको ले आये हो । अब हम अंदर नहीं जाने देगी । पहिले यह कन्या हमें जीत लें, वाद मे हम उसे अंदर जाने देंगी । फिर विनोद से सुभद्राकुमारी से पूछने लगी कि लडकी ! तुह्मारा नाम क्या है ? कहासे आई है ? तुह्मारे समस्त कुटुंब परिवार को छोडकर इसके पीछे क्यों जा रही है ? । यह हमारे भाई तुम्हे क्या लगता है । बोलो तो सही । हमारे भाई को हजारों स्त्रियां हैं । उन सब से छिपाकर हमारे भाई को एकांत मे कहां ले जा रही है ? तुम बडी मायाचारिणी मालुम होती है । तुम्हारे घरपर आने पर तुमने अपने सामर्थ्य को वतलाया था । अब हम देखती हैं कि क्या करती है ? भाई ! उसकी अंगूठी लेकर हम तुम्हारे पास ला रही थी । उसने हम दोनोंको एक एक हाथसे ही दाव दिया और अंगूठी को हमसे छीन ली । चक्रवर्ति को हंसी आई । वोले लडकी अब चुप क्यों है ? अब हम लोगोंको धक्का देकर अंदर जावो देखें । तुममे कितनी शक्ति है ? वे गंगादेवी व सिंधुदेवी विनोदसे वोलने लगी ।

सम्राट्को वहिनोंके विनोदको देखकर मनमें हर्ष होरहा था । वोलने लगे कि बहिन । मेरे आदमियोंने जो अपराध किया वह मेरा ही अपराध समझना चाहिये । इसलिए अब आपलोगोंका मैं इस उपलक्ष्यमें सत्कार करूंगा । इसे अंदर जाने दो । तब दोनों बहिनें कहने लगी कि अच्छा ! हमारा आदर किस प्रकार किया जायगा वोलो । उत्तरमें सम्राट्ने कहा कि तुम दोनों को रत्नकी महल बनवाकर देंगे और साथमें सकल संपत्समृद्ध बारह हजार करोड ग्रामोंको भी प्रदान

करदेंगे। यह लो, वचनमुद्रिका। तव दोनों संतुष्ट होकर नवदंपतियों-को आशिर्वाद देती हुई संतोष के साथ अन्यत्र चली गई।

भरतजी पट्टरानी के साथ अंतःपुरमे प्रवेश करगये। सर्व सुखसामाग्रियोसे सुसज्जित उस शय्यागृहमे नववधूके साथ सुखका अनुभव कर सुखनिद्रामे मग्न होगये।

सुभद्रादेवी अपने पति को आलिंगन देकर सोई है। परंतु सम्राट् सच्चिदानंद परमात्मा को आलिंगन देकर सोये है। उस सुखशय्यापर उनके शरीर के रहनेपर भी उनका मन मात्र आत्मकला में मग्न हो गया है। दो घटिका मंगलनिद्रा में समय को व्यतीत कर रानी को जागरण न हो, उस प्रकार धीरेसे उठे व भगवान् हंसनाथ परमात्माके स्मरण करने लगे। परमात्मयोग में जिस समय वे मग्न थे उस समय कर्मपरमाणुओंकी निर्जरा हो रही थी। तदनंतर थोडी देरमें सुभद्रादेवी भी उठी। दोनोंने वहुत देर तक अनेक प्रकार से विनोद वार्तालाप किया। इतने में प्रातःकाल हुआ। गायकियोंने सूचना देने के लिए उदय राग में अनेक गायन गाये। सम्राट् भी अपनी नववधू के नव-राग में मग्न थे।

भरतजी बडे भाग्यशाली हैं। उनको इच्छित पदार्थोंकी प्राप्ति में देरी नहीं लगती है। संसार में इष्ट पदार्थों का संयोग सब को नहीं हुआ करता है। जो महान् पुण्यशील हैं उन्हीको उनकी मनोकामना की पूर्ति होती है। भरतजी भी उन महापुरुषोमें से है। वे सदा परमात्मा की भावना करते है।

हे परमात्मन्! तुम्हारा जो स्मरण करते हैं उनको उनके इच्छित सुखोंको तुम प्राप्त करा देते हो। क्यों कि तुम परमानन्द स्वरूप हो। इसलिए हे अमृतवर्धन! तुम मेरे हृदय में सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन् ! आपका मुक्तिश्री के साथ जिस समय विवाह होता है उस समय लोक के समस्त जन आनंद से नर्तन करते हैं। परन्तु आपको उस बात का विचार बिलकुल नहीं रहता है। आप उस नववधू मुक्तिकांताके साथ बिलकुल सुख भोगने में मग्न हो जाते हैं। इसलिए आप निरंजनसिद्ध कहलाते हैं। हे स्वामिन् ! मुझे सुबुद्धि प्रदान कीजिये।

इसी पुनीत भावना का फल है कि सम्राट् को इस संसार में उस प्रकार के सुख मिलते हैं।

इति श्रीरत्नसंभोगसंधिः

—×—

अथ पुत्रवैवाहसंधिः

विवाहादि कार्यके दूसरे दिन ; विप्रोने आकर भरतजीको आशिर्वाद दिया। कवियोने अनेक साहित्यिक रचनाओंसे उनको संतुष्ट किया राजाओने भेट आदि समर्पण अपना आदर व्यक्त किया। सम्राट्ने भी सबको यथायोग्य वस्त्राभरणादिसे सन्मान किया। दोनों तरफके बंधुओंमें कई दिनतक आनंद ही आनंद रहा। भरतजी की पुत्रियां और नमिराजकी देवियोमे इस बीचमें कईबार आना जाना हुआ। परस्पर भोजनके लिए एकमेकके घर जाती रही। आपसमे विशेष प्रेम बढने लगा।

एक दिनकी बात है सम्राट् व उनके चारों साले, व अपनी राणियोके बीच बैठकर विनोद वार्तालाप कर रहे थे। उस विनोदमें उनको चक्रवर्ति चिढानेके लिए प्रयत्न कर रहे थे। नमिराजसे बोलते समय पहिले बीती बातोंको याद दिलाकर विनोद करने लगे। तब मधुवाणी बोलने लगी कि रहने दो सम्राट्! हमारे राजाको आप क्या समझते है? उन्होने आपके लिए क्या कम किया है? लोकमें सबसे श्रेष्ठ पदार्थको आपको दिया है, इस बातका भी विचार आपको नहीं है? उत्तम वस्तुको जिन्होंने दिया है उनके साथ बहुत नम्रतासे बोलना चाहिये। परंतु आप तो उनकी हसी कर रहे है। यह वृत्ति क्या आपको शोभा देती है?

भरतजी—मधुवाणि! तुम्हारे राजाने लाकर मुझे क्या उत्तम वस्तुको लाकर दिया है। मेरी चीजको लाकर मुझे दी है। इस में क्या बडी बात की। व्यर्थकी डींग क्यो मार रही है?

मधुवाणि—राजन्! व्यर्थकी बातें क्यों बनारहे हो? हमारे राजाने लाकर जब तुम्हारे आधीन किया तब वह तुम्हारी चीज बनगई। उससे पहिले तो वह आपकी चीज नहीं थी।

भरतजी—मधुवाणि! तुम अभी जानती नहीं। मामाकी पुत्री भानजेके लिए ही पैदा हुआ करती है। इस बातको दुनिया जानती है।

फिर तुम्हारे राजाने क्या तो दिया। चक्रवार्तिने क्या तो लिया ? वह तो हमारी हक्की चीज थी।

हमारी माताके बडे भाई कच्छराज अपनी पुत्री को अपने भानजे को नहीं देता ? यदि वह नहीं देता तो क्या यशस्वती का ज्येष्ठ पुत्र उसे छोड सकता था ?

मधुवाणि—राजन्! तुम्हारे मामा तो दीक्षा लेकर चले गए हैं। अब तो देने के अधिकारी हमारे राजा नमिराज ही थे। यदि वे गुस्से में आकर देने के लिए इन्कार करते तो क्या करते ?

भरतजी—एक नमिराजने इन्कार किया तो क्या हुआ? बाकीके सब के सब अनुकूल तो थे ? फिर मेरे लिए किस बात का डर था ?

मधुवाणि—बाकीके कौन २ तुम्हारे पक्षमे थे। बोलो तो सही।

भरतजी—दोनो मामीजी, विनमिराज और यह मेरी आठ हजार पांच सौ बहिनें ये सब के सब अनुकूल है। मेरी बहिनें तो मेरे पक्ष मे ही रहनेवाली हैं। यदि नमिराज ने कन्या देने के लिए इन्कार किया तो यह भोजन भी नहीं परोसती। समझी! मधुवाणी! भरतजी के विनोद को देखकर नमिराज की देवियां बहुत प्रसन्न हुई।

मौका देखकर नमिराज कहने लगे कि आज इस एक कन्या की क्या बात है। इससे पहिले हजारों सहोदरियोंको तुम्हे दिया है। मैने हजारों सहोदरियोंके साथ तुम्हारा विवाह करदेने पर भी तुम जब हमारा उपकार नहीं समझते तो यह बिलकुल ठीक सिद्ध हुआ कि श्रीमंत लोग गरीबोंको भूला करते है। बडे लोग छोटोकी परवाह नहीं करते। इस भरतजीकी संपत्ति-शोभा हमारी बहिनो से बढी, नहीं तो क्या था ? तब तीनों भाई एकदम हसगये। नमिराज भी एकदम खिलखिलाकर हसा।

सम्राट् कहने लगे कि यहांपर मेरे पक्षकी केवल आठ हजार पांचसौ बहिनें हैं। परंतु तुह्मारे पक्षकी लाखों है। इसलिए आप लोग मुझे अधिक दबा रहे हो। बाहरकी दरबार में तो मेरे पक्षके अधिक मिल सकते है। अंदरकी दरबार में आप लोगों के पक्षके अधिक मिल सकते हैं। इसलिए आप लोगोंने यह मौका देखा होगा। अच्छा कोई हर्ज नहीं! आगे देखेंगे।

इतना हर्ष विनोदमें समय व्यतीत होनेके बाद आगत सर्व बंधुवोंने सम्राट्का सन्मान किया। उन चारों भाईयोंने सन्मान किया, सासुवोंकी ओरसे मधुवाणीने उपहारोंको समर्पण किया। गंगादेवी व सिंधुदेवीने सन्मान किया। नमि विनमिकी देवियोने भाईका आदर किया। तदनंतर सुवर्ण की पुतलियोंके समान सुंदर नमिराज की दो सौ कन्याये व विनमिराजकी पचास कन्याये सम्राट्को नमस्कार करनेके लिए आई। वर्ष छह महीनेके अंदर विवाहके योग्य वयको धारण करनेवाली उन कन्यावों को देखकर सम्राट्ने मधुवाणीसे प्रश्न किया कि ये कौन हैं? मधुवाणीने उत्तरमे कहा कि राजन्! ये आपकी बहिनोंकी कन्याये है। चक्रवर्तिको परम संतोष हुआ। उन्होंने कहा कि सचमुचमे अर्ककीर्ति आदि मेरे पुत्र भाग्यशाली है, ये कन्यायें उनकेलिए सर्वथा योग्य हैं। इतनेमें उन कन्याओंने भरतजीके चरणों को प्रणाम किया। भरतजीने उनको आशिर्वाद देते हुए उनकी हस्तरेखावोंको देख लिया। उत्तम लक्षणोंको देखकर उन्हे संतोप हुआ। कहने लगे कि आप लोगोंका यहां आना बहुत ही उत्तम हुआ। अर्ककीर्ति आदिराज आदि पुत्रोंने आप लोगोंको देखली तो वे कभी नहीं छोडेंगे। और आप लोगोंने भी उन सुंदर कुमारोंको देखा तो आप लोग भी उन को छोडना न चाहेंगी। यह कहते हुए अनेक वस्त्राभरणोंको प्रदान किया। कन्यायें लज्जित होकर पर्देके अंदर गई।

नमिराज कहने लगा कि हमें पहिले जो संबंध हुआ है उतना ही काफी है। अब अधिक बढाने की जरूरत नहीं है। तब भरतजीने कहा कि नमिराज ! तुम्हारी बहिनोंके हमारे घरपर आने से क्या कोई लडाई झगडा हुआ है। बोलो। खैर ! इसकेलिए अपनको चिंता करने की जरूरत नहीं है। तुम्हारी हमारी देवियां स्वय सब व्यवस्था कर देंगी। आज उसका विचार क्यों ? आगे समयपर देखा जायगा।

इतनेमें भरतजीकी पुत्रियां देवकन्यावोंके समान श्रृंगारित होकर आ रही हैं। पांचसौ कन्याओंनें आकर पिताके चरणोमें प्रणाम किया। सबको सम्राट्ने आशिर्वाद दिया। भरतजीने उनको नमिराज आदिको नमस्कार करनेके लिए कहा। कितनी ही कन्यावोंने नमस्कार किया। कितनी ही लज्जासे भरतजीके पास खडी रहीं। भरतजी उन पुत्रियोंको आशिर्वाद देते हुए प्रेमसे कहने लगे कि बेटी ! तुम-लोग अब वयमें आगई हैं। जल्दी वयमें आवोगी तो तुमको यहांसे भेजना होगा। तब हम लोगोंको पुत्री-वियोगके दुःखको सहन करना पडता है। खैर ! कोई बात नहीं है। मेरी पुत्रियोंके लिए योग्य घर मौजूद हैं। वे इनको आनंदित करेंगे। मैं संपत्तियोंसे उन को तृप्त कर दूंगा। भरतजीके पास जितनी पुत्रियां थीं वे लज्जा से उधर भाग गईं। सब लोगोंके भागने पर मधुराजी नामक छोटीसी कन्याने परदेकी आड में खडी होकर कहा कि पिताजी ! अब, तुम्हारी तरफ हम लोग नहीं आयेंगी। कारण आपने हम लोगोंका सबके सामने अपमान किया है। तब भरतजीने पूछा कि बेटी ! क्यों क्या बात हुई ? इतना गुस्सा क्यों ! तब मधुराजी कहनेलगी कि छो ! जाने दो। तुमने सबके सामने हम-लोगोंका अपमान किया है। इस प्रकारके छिछोरपनेकी बात करना सम्राट् कहलानेवाले के लिए कभी शोभा नहीं देता।

" बेटी ! मैंने क्या कहा ! तुम सबकेलिए एक एक पतिकी आवश्यकता है, इतना ही तो कहा और क्या कहा ? इसमें छिछोरपने की बात क्या हुई "। भरतजीने कहा।

मधुराजी—देखो, पुनः वही बात ! लज्जासे मुख नीचे करती हुई कहने लगी कि छी ! पिताजी ! आप क्यो ऐसी बात कर रहे है। सबलोग हंसते हैं। यहां अंदर सभी बहिनें आपकी वृत्तिको देखकर हंस रही है। देखिये तो सही।

तब भरतजीने कहा कि बेटी ! जो मेरी वृत्तिपर हसती हैं उनके पास तू मत रह, मेरेपास आजा। परंतु वह नहीं आई। रतिचन्द्रा नामक दासीसे उसे लानेके लिए कहा। दासीने जबर्दस्ती उसे लाकर चक्रवर्तिको सोंपा। फिर भी सबके सामने लज्जासे मुंह ढक कर वह सम्राट्की गोदपर बैठी हुई है।

भरतजी तरह तरहसे उसे बुलवानेका प्रयत्न कर रहे हैं। परंतु वह तो बोलती ही नहीं। बेटी इधर देखो तो सही ! सबलोग प्रसन्न होकर तेरीतरफ देख रहे हैं। तू आंख मीचकर बैठी है। पगली ! तुमने आंख मीचली तो क्या हुआ। क्या लोग भी तुम्हे नहीं देखसकते है ? भरतजीके अनेक प्रकार के वार्तालापोंको सुनकर भी वह मधुराजी मौनसे बैठी है।

फिर सम्राट् कहने लगे कि इतना सब होते हुए भी मधुराजी क्यों नहीं बोलती है। हा ! समझगया। आज मेरी बेटी ध्यान कर रही होगी। मधुराजी अंदरसे हंस रही थी। बेटी ! मोक्षसिद्धिको तुमलोग अपने आत्मामे ही करनेके लिए प्रयत्न कर रही है। मुझे भी थोडा समझा दो। कहो कि आत्मसिद्धिकेलिए मुझे क्या क्या करना पडता है। मधुराजी मौनभंग नहीं करती है। भरतजी और भी अनेक प्रकार से उसे बुलानेका प्रयत्न कर रहे है। परंतु वह बोलती नहीं। भरतजीने पुनः कहा कि बेटी ! मुझसे क्या गलती हुई। क्षमा कर।

उसके १२ छ रहे हैं। पहिलेके आभरणोंको निकाल कर नवीन आभ-णोंको धारण करा रहे हैं। मधुराजी और भी लज्जित हुई। एकदम वहांसे निकल कर भाग गई। भरतजीकी वृत्तिको देखकर राणियोंने विद्याधरदेवियोंके साथ कहा कि देखा! तुह्मारे भाईकी गंभीरताको देख ली! तब विद्याधरियोंने कहा कि इसमे क्या हुआ। अपनी पुत्रीके प्रति प्रेम करना क्या यह पाप है? हमारे भाईने इससे अधिक क्या किया। यह लोककी रीत है। उस दिनकी विनोदगोष्ठी बंद होगई।

एक दिनकी बात है। पहिलेके समान ही महल में सम्राट् सरस व्यवहार करते हुए बैठे हैं। इतनेमें कनकराज, कांतराज आदि नमिराजके तीनसौ पुत्रोंनें और शांतराज आदि विनमि के सौ पुत्रोने आकर सम्राट्को नमस्कार किया। तब सम्रा-ट्ने मधुवाणीसे पूछा कि मधुवाणी! ये कुमार बडे सुंदर हैं। इन लोगोने क्या क्या अध्ययन किया? तब मधुवाणीने कहा कि स्वामिन्! ये लोग शस्त्रशास्त्रादि अनेक विद्यावोंमें निपुण हैं। विद्याधरोचित अनेक विद्यावोंको इन्होंने सिद्ध कर लिया है। सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रसे भी संयुक्त है। तब सम्राट्ने उनको वहांपर बैठाल कर अपने पुत्रोंको भी बुलवाया। तब भरतजीके सैकडों पुत्र पंक्तिबद्ध होकर आने लगे। मधुराज विधुराज नामक दो पुत्रोने पहिले पिताके चरणोंमे नमस्कार किया। बाकी के पुत्रोंने भी नमस्कार किया। सबको आशीर्वाद देकर बैठनेकेलिए कहा। भरतजीने पुनः अपने पुत्रोंसे कहा कि बेटा! आप लोग जरा अपने शास्त्रानुभवको बतलावे तो सही! तब उन कुशल पुत्रोंने अपने शास्त्र-कौशल्यको बतलाया। कभी व्याकरणसे शब्दसिद्धि कर रहे हैं तो फिर तर्कशास्त्रसे तत्त्वसिद्धि कर रहे हैं। छन्दोदार संस्कृत बोलतेहुए आगमके तत्त्वोंको प्रतिपादन कर रहे हैं। भरतशास्त्र, नाटक, कविता, हस्तिपरीक्षा, अश्वपरीक्षा, रत्नपरीक्षा

आदि अनेक शास्त्रोंमें उन पुत्रोंने अपने नैपुण्यको बताया। वे भरतके ही तो पुत्र थे। तब भरतजीको बडी प्रसन्नता हुई। प्रश्न किया कि बेटा! लोकरंजनकी आवश्यकता नहीं। मोक्षसिद्धिकेलिए क्या साधन है। उसे कहो। भरतजी उनके बोलनेके चातुर्यको देख कर खूब प्रसन्न हुए थे। परंतु उसे छिपाकर कहने लगे कि गड-बडीमें हम लोगोंको तुम फसाने जा रहे हो। परंतु हमे बतलावो कि कर्मोंका नाश किस प्रकार किया जाता है? उसके विना यह सब व्यर्थ है। तब उन पुत्रोंने कहा कि पिताजी! पहिले भेद रत्नत्रय को धारण करना चाहिए। बादमें अभेद रत्नत्रयको धारण कर उसके बलसे कर्मोंका नाश करना चाहिए। यही कर्मोंको नाश करने का उपाय है। जब कर्मनाश होता है तब मोक्षकी सिद्धि अपने आप होती है।

फिर पिताने पूछा कि उस भेद रत्नत्रयका स्वरूप क्या है? उसे बोलो तो सही! तब पुनः पुत्रोंने कहा कि देव, गुरुभक्ति व अनेक आ-गमोंकी चिंता पूर्वक अध्ययन करना यह व्यवहार रत्नत्रय है। और यही भेदरत्नत्रय है। केवल आत्मा, आत्मामे लगे रहना यह निश्चय या अभेद रत्नत्रय है। तब नमिराजने भी कहा कि बिलकुल ठीक है। तब चक्रवर्तिने नमिराज से प्रश्न किया कि क्या ठीक है। बोलो तो सही! नमिराजने उत्तर दिया कि पहिले भेदरत्नत्रयमे प्रवीण होकर बाद अपने आत्मामें लीन होना यही श्रेष्ठ मार्ग है। तब भरतजीने प्रश्न किया कि क्या व्यवहार ही पर्याप्त नहीं है? निश्चयकी क्या जरूरत है। तब नमिराजने कहा कि व्यवहारसे स्वर्गकी प्राप्ति होसकती है। मोक्षसिद्धिके लिए निश्चयकी आवश्यकता है। नमिराजके वचनको सुनकर चक्रवर्ति प्रसन्न तो हुआ, परंतु उसे छिपाकर कहने लगा कि तुम्हारी बात मुझे पसंद नही आई। तुम ठीक नही बोल रहे हो। तब भरतपुत्रोंने कहा कि पिताजी! मामाजी ठीक तो कह रहे है। इस

सीधी बातको आप क्यों नहीं मान रहे है ? तब सम्राट्ने कहा कि शायद आपलोग अपने मामाकी बातको पुष्टी देरहे हैं। जाने दो। यह जो और मेरे पुत्र आरहे हैं उनसे भी पूछेंगे। वे क्या कहते हैं। देखें।

इतनेमें पुरुराज व गुरुराज नामक दो पुत्र आये। उनसे भरतजीने प्रश्न किया। तब उन लोगोने यही कहा कि मामाजी जो बोलते हैं वह सही है। परंतु भरतजी कहते हैं कि मैं उसे नहीं मानता। श्रीराज माराज नामक दो पुत्र आये। उनसे पूछनेपर उन्होने भी वही उत्तर दिया। वस्तुराज, रतिराज, गतिराज, हस्तिराज, सिंहराज, वास्तुकराज, वर्णराज, देवराज, दिव्यराज, मोहनराज, बाबनराज आदि एक हजार दो सौ पुत्रोंसे प्रश्न किया, सबका उत्तर वही। हंसराज, रत्नराज, महाशुराज, संसुखराज व निरंजन सिद्धराज नामक पांच पुत्रों को पूछा, उन्होंने भी वही कहा। इतनेमें अर्ककीर्ति आदिराज वृषभराज आये। उन लोगोने पिताजी व मामाको नमस्कार कर योग्य आसन को ग्रहण किया। भरतजीने प्रश्न किया कि बेटा! मेरे व तुम्हारे मामाके बीच एक विवाद खडा हुआ है। उसका निर्णय आप लोगोंको देना चाहिये। अर्ककीर्ति आदि कुशल पुत्रोने कहा कि आप और मामाजीके विवादमें हाथ डालनेका अधिकार हमें नहीं है। आप लोग आदिभगवंतकी दरबार मे जासकते हैं। वहां सब निपटेरा होजायगा। तब सम्राटने कहा कि मामूली बात है। तुम लोग सुनो तो सही। बेटा! मुक्तिके लिए आत्मधर्म की क्या आवश्यकता है। क्या व्यवहार या बाह्यधर्म ही पर्याप्त नहीं है ? यह नमिराज कहता है कि स्थूलधर्मसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है, आत्मधर्मसे मुक्तिकी प्राप्ति होती है। तुम लोगों का क्या मत है ? बोलो। तब वे पुत्र आश्चर्यचकित हुए। मनमें सोचने लगे कि हमेशा पिताजी हमें कहा करते थे कि मुक्तिके लिए आत्मानुभव ही मुख्यसाधन है। आज मात्र

उलटा बोल रहे हैं। इसका कारण क्या है ? तब पुत्रोंके संकोचको देखकर भरतजी कहने लगे कि आप लोग संकोच मत करो, जो सच है उसे बोलो। पुनः उनको संकोच होरहा था। अर्ककीर्तिसे पुनः कहा कि घबरावो मत ! मेरा शपथ है। तुम संकोच मत करो ! जो तुम्हे मालुम है निस्संदेह कहो। तब अर्ककीर्ति ने कहा कि पिताजी इसमें सौगंध खिलानेकी क्या जरूरत है। मामाजी बिलकुल ठीक कह रहे हैं। आपको भी यह मंजूर होना चाहिये।

अर्ककीर्तिकी बात को सुनकर चक्रवर्ति कहने लगे कि बेटा ! मैंने सोचा था कि तुम्हारे भाईयोंने मामाके पक्षको ग्रहण किया तो भी तुम तो मेरे ही पक्ष में रहोगे। परंतु तुमने भी मामा के ही पक्ष को ग्रहण किया, अस्तु. तुम्हारी मर्जी। उत्तरमे अर्ककीर्ति कहने लगा कि, पिताजी ! आपने शपथ डाल दिया, फिर मैं झूठ कैसे बोल सकता हूं। आप को भी सत्य बात को स्वीकार करना चाहिए।

रतिचंद्रा पासमे खडी थी। भरतजीने प्रश्न किया कि रतिचंद्रे ! आज हमारे पुत्रोने अपने मामाके पक्ष को क्यों ग्रहण किया। रतिचंद्राने कहा कि वे मामाकी बेटियोको देखकर प्रसन्न होगये है। इस लिए उन के तरफ देखकर ऐसा बोले होंगे। भरतजीने भी कहा कि बिलकुल ठीक है। परंतु इन को सोचना चाहिए था नमिराज कुछ सीधा साधा उस की कन्याओंको देनेवाला नही है। मेरे मामाकी पुत्री को मुझे देने के लिए उसने कितनी बाते बनाई थी, आप लोग क्या नहीं जानते है ? इसी प्रकार मेरे पुत्रोंको भी कन्या यह सीधा नही दे सकता है। फिर मेरे पुत्रोने व्यर्थ उसके पक्ष का समर्थन क्यों किया। तब नमिराजने कहा कि राजन् ! आप विशेष विचार मत करो। आपके पुत्र जो मेरे भानजे है उन को मैं अपनी कन्याओंको देता हूं। आप कोई संदेह मत करो ! भरतजीने सोचा कि मेरे कार्य की सिद्धि हुई। नमिराज भी क्यों नहीं कन्यावोंको

देगा ? उन पुत्रोंके रूप को देखकर प्रसन्न हुआ। विद्यानैपुण्यने उसे मुग्ध किया। नमिविनमिकी देवियोंको भी यह सुनकर बडी प्रसन्नता हुई। क्यों कि वे सब यही तो चाहती थीं। सम्राट्ने नमिराजसे कहा कि देखा! साक्षात् पिता होते हुए भी मेरे पुत्रोंने मेरे पक्षको ग्रहणकर बात नहीं की। केवल मोक्षमार्ग जो है, उसीको उन्होंने कहा है। इसीसे उनकी सत्यप्रियता जो है वह मालुम हुए बिना नहीं रह सकती। कच्छराजकी बहिनके स्वच्छ गर्भसे उत्पन्न इस भरतके पुत्र स्वेच्छाचार–पूर्वक नहीं बोलेंगे इसप्रकार भरतजीने जोर देकर कहा। देखो वे कितने सुंदर हैं। श्रीभगवान् आदिनाथ स्वामीके पौत्रोंका वर्णन ही क्या करूं। नमिराज! परसों तुमने ही कहा था कि अब अधिक कन्या हम नहीं देना चाहते। आज तुम स्वतः देनेके लिए कबूल कर रहे हो। मेरी इच्छा तृप्त भई। मैं यही चाहता था। नमिराज भी कहने लगा कि मेरी भी इच्छा पूर्ण हुई। गंगादेव सिंधुदेवने भी उन सब पुत्रोंको आशिर्वाद दिया। कहने लगे कि इनके कारणसे आज हमारा आत्मविश्वास दृढ हुआ। उपस्थित सर्व पुत्रोंको व जंवाईयोंको सम्राट्ने उचित सन्मानकर वहांसे भेजा। और इस संबंधमें अपनी बहिनोंका क्या अभिप्राय है यह पूछा। बहिनोंने कहा कि यह हमें पसंद तो है। परंतु पुत्रियोंके प्रति हमारा बडा ही प्रेम है। उनके वियोग को हम कैसे सहन करसकती हैं! तब भरतजीने कहा कि तुम्हारी पुत्रियोंसे हमारे पुत्रोंका विवाह होगा तो मेरी पुत्रियोंका तुम्हारे पुत्रों के साथ विवाह कर देंगे। फिर तो संतोष होगा। चक्रवर्तिसे कन्या मांगनेके लिए संकोच होरहा था। इस बहानेसे भरतके मुखसे ही स्वीकार करा लिया। सबको हर्ष हुआ। फिर उन देवियोंने कहा कि जैसे भाई की इच्छा हो वैसा करें। हमें तो कबूल है। सब जगह विवाहमंगलकी जय जयकार होने लगी।

सबका यथायोग्य सत्कार कर सम्राट्ने उनको उस दिन अपने २ स्थानों में भेजा, दूसरे दिन की बात है।

सेनास्थानमें विवाहमंगलकी तैयारी होनेलगी। जहां देखो वहां आनंद ही आनंद होरहा है। चक्रवर्तिके पुत्रोंका विवाह! वह किस वैभवके साथ हुआ, इसके वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं। भरतजीने किसी बातकी कमी नहीं रक्खी। नमिराजने अपने नगरमें जब भरतकी ओरसे मंत्री आदि गये थे उस समय १६ दिन पर्यंत जो सत्कार वैभव किया था उससे दुगुना चौगुना वैभव सम्राट्ने इस विवाह मंगलके समय किया।

जिनेंद्रपूजा, समस्त सेनाको मिष्टान्न भोजन, द्विजदान, वसंतोत्सव आदि से सर्व नरनारी तृप्त हुए। सभी पुत्रोंका विवाह संस्कार विधिके अनुसार बहुत वैभवके साथ संपन्न हुए।

कंजाजी नामक कन्याका विवाह अर्ककीर्ति कुमारके साथ, गुणमंजरीका आदिराजके साथ, कुंजरवतीका विवाह वृषभराजके साथ हुआ। इसीप्रकार गमनाजीका संबंध हंसराजके साथ, मनोरमाका रत्नराजके साथ, योग्य गुण और रूपको देखकर विवाह हुआ। भरतजीके बारह सौ पुत्र थे, उनमे दो सौ पुत्र तो अभी वयसे विवाह योग्य नहीं थे। इसलिए उन दो सौ पुत्रोंको छोडकर बाकीके हजार पुत्रोंका विवाह हुआ। पुत्रियोंमें कुछ नमिकी थीं और कुछ विनमिकी थीं। कुल मिलकर १००० पुत्रों का १००० कन्यावोंके साथ संबंध हुआ। इसीप्रकार भरतजीने अपनी ५०० पुत्रियोंका भी विवाह उसीसमय किया। कनकराजके साथ कनकावतीका, कांतराजके साथ मनुदेवीका, शांतराजके साथ कनकपद्मिनीका विवाह हुआ। इसी प्रकार नलिनावती, कुमुदावती, रत्नावली, मुक्तावली, आदि लेकर पांचसौ कन्यावोंका विवाह हुआ। सिर्फ एक मधुराजी नामक एक छोटी कन्या रहगई जिसके प्रति भरतजीका असीम प्रेम था। चार सौ कन्याओंका विवाह नमि विनमि

के पुत्रोंके साथ व सौ कन्याओं का विवाह प्रतिष्ठित विद्याधर राजपुत्रों के साथ हुआ।

इस प्रकार सम्राट् भरतने अपने हजार पुत्रोंका ५०० पुत्रियोंका विवाह बहुत वैभव के साथ किया।

लोकमे देखा जाता है कि किसी सज्जनको १ पुत्र या पुत्री हो तो वह मनुष्य विवाह का समय आनेपर चिंताग्रस्त हो जाता है। परतु पाठकोंको यह देखकर आश्चर्य हुआ होगा कि भरतजीके पुत्र हजारो पुत्रियोंका विवाह इच्छा करने मात्रसे योग्यरूपसे बहुत शीघ्र संपन्न हुआ। पुण्यात्माओंकी बात ही निराली है। वे जो कुछ सोचते है, उसके लिए अनुकूलता ही मिल जाती है। इसके लिए अनेक जन्मोपार्जित पुण्यकी आवश्यकता होती है। भरतजी सदा उस प्रकार की भावना अपने अंतःकरणमें करते हैं।

उनकी भावना रहती है कि—

"हे परमात्मन्! जो सदाकाल शुद्धभावसे तुम्हारी भावना करते रहते हैं, उनको तुम सौख्य परंपराओंको ही प्रदान करते हो। इसलिए हे देव! तुम मेरे अंतरंग में बने रहो!

हे सिद्धात्मन्! तुम नित्य मंगलस्वरूप हो! नित्य शृंगार-गौरव से युक्त हो, तुम्हारे अंतरग में सदा अनंत आनद के तरंग उमडते रहते हैं। सदा वैभवशाली हो, तुम सौख्यसाहित्य हो! अतः स्वामिन्! मुझे सन्मति प्रदान कीजिए!

इसी भावना का फल है कि उन्हे नित्य नये ऐसे मंगल प्रसंगोंके आनंद मिलते जाते है।

इति पुत्रविवाहसंधि.

——=——

अथ जिनदर्शनसंधिः

अपने पुत्र व पुत्रियोंका विवाह बहुत संभ्रमके साथ करके भरतजी बहुत आनंदसे अपना समय व्यतीत कर रहे हैं ।

एक दिनकी बात है। बुद्धिसागर मंत्रीने दरबारमें उपस्थित होकर सम्राट्के सामने भेंट रखकर कुछ निवेदन करना चाहा । भरतजीको आश्चर्य हुआ, वे पूछने लगे कि मंत्री ! आज क्या कोई विशेष बात है? उत्तरमें बुद्धिसागरने निवेदन किया कि स्वामिन् ! मेरी प्रार्थना को सुनें। तीन समुद्रोंके बीच हिमवान् पर्वत तकके षट्खंडोंको आपने वीरतासे वशमें किया। वृषभाद्रि पर अंकमालाको अंकित किया। चौदह रत्न सिद्ध हुए, पुत्रोंका विवाह हुआ। अब कोई विशेष कार्य नहीं है । बहुतकाल व्यतीत हुए । यद्यपि हम लोगोंको आपके साथ रहनेमें कोई भी चिंताकी बात नहीं है । तथापि अयोध्या नगरकी प्रजा आपके दर्शनोंकी अभिलाषासे आपकी प्रतीक्षा करती हैं । श्रीपूज्य माताजी रोज दिनगणना करती हैं। आपके भाई आपको देखने की इच्छा करते है । इसलिए नमि विनमिकी यहांसे विदाई कर अपनेको नगरकी ओर प्रस्थान करना चाहिये ।

उत्तरमें भरतजीने कहा कि मंत्री ! तुमने अच्छा स्मरण दिलाया। प्रजा व मेरे भाईयों को मुझे देखनेकी इच्छा है, मै उसे जानता हूं । परंतु मातुश्रीकी इच्छा अति प्रबल है । मै उसे भूल गया था । अब चलनेकी तैयारी करेंगे ।

मंत्रीको उचित सन्मान कर सम्राट्ने नमिविनमिको बुलाकर कहा कि बंधुवर ! आजतक आप लोगोंके साथ हमारा बंधुत्वका व्यवहार चला आरहा था । अब अपने पुत्रों का भी संबंध हुआ । यह बहुत हर्षकी बात है ।

तदनंतर नमिराज व विनमिराजको उत्तमोत्तम वस्त्राभरणों से सन्मान किया। इसी प्रकार अपने दामादों को हाथी, घोडा, रत्न, वस्त्रादिसे सत्कार किया। सुमतिसागर मंत्री आदि का भी सत्कार किया गया। अपनी पुत्रियोंकी भी विदाई करते समय उनके साथ अनेक दासियोंको भी रवाना किया। उन प्रिय पुत्रियोंको विदा करते समय भरतजी को भी मनमें थोडा दुःख हुआ। भरतजी की राणिया तो आसू बहाती हुई पुत्रियोंके पास ही खडी थी। भरतजी ने उस दृश्यको देखकर कहा कि देवियो! आप लोगोने पुत्रियोको क्यों प्रसन्न किया है। पुत्रोको क्यों नहीं? नहीं तो यह परिस्थिति उपस्थित नहीं होती। पुत्रियोंकी आखोंस भी आसू बह रही थी। उनको सात्वना देते हुए सम्राट्ने कहा कि पुत्रियो! आप लोग अभी जावें। मैं जल्दी ही आप लोगोंको लिवा लाऊंगा। चिंता न करें।

इस प्रकार उनको विदा करते हुए भरतजी को दुःख हुआ। जहां ममकार है, वहां दुःख है, यह तात्विक विषय उस समय प्रत्यक्ष हुआ। नमिविनमि अपने परिवारके साथ दुःखको भी लेकर वहासे निकल गए।

तदनंतर सम्राट्ने गंगादेव व सिंधुदेवका भी यथेष्ट सन्मान किया। इसी प्रकार अपनी बहिन गंगादेवी व सिंधुदेवी का भी सत्कार करते हुए कहा कि बहिन् आप लोग अब जावें। हमें आगे प्रस्थान करना है।

सुरशिल्पिको आज्ञा देकर बहिनोंके लिए सुंदर व उत्तम रत्न के द्वारा महलको निर्माण कराया। साथमें मध्यमखंडके २४ करोड उत्तम ग्रामोंको चुन चुनकर दिया व उनके अधिपतियोंको आज्ञा दीगई कि सदा इनकी सेवामें रहे। कौनसी बडी बात है। भरतजीके अधीनस्थ एक एक राजाके पास एक एक करोड ग्राम हैं। इस प्रकार

एक करोड ग्रामोंके अधिपति ऐसे ३२ हजार राजा उनके आधीन है। पुत्रोंके विवाहके समय जिस समय इन बहिनोने द्वाररोधन किया था, उस समय इन ग्रामोंको देनेके लिए सम्राट्ने वचन दिया था। स्वतःके विवाहके समय, पुत्रियोंके विवाह के समय जितने भी ग्रामोंको इनाममें देनेके लिए सम्राट्ने वचन दिये थे, उन सबका हिसाब करनेपर वह मध्यखंडके दस हिस्सा करनेपर १ हिस्सा हुआ। बाकीके नौ हिस्से तो रह गये।

गंगादेवी व सिंधुदेवीने भी भाईको मंगल तिलक लगाया व अपने पतियोंके साथ वहांसे विदा हुई। उसीसमय मेघेश्वर व विश्वकर्मा दाखल हुए। उनको आगेके मार्गको साफ करनेकेलिए आज्ञा दी गई। खाईया भर दी गई। पुल बांधे गये। माकालको पत्र लिखनेकी आज्ञा हुई। दोनों मातावों को उत्तमोत्तम उपहारों को भेजनेके लिए हुकुम दिया गया। पौदनापुर व अयोध्याको दो विश्वस्त दूतोंको भेजने के लिए आज्ञा की गई।

वह दिन इसी प्रकारकी व्यवस्थामें व्यतीत हुआ। दूसरे दिन प्रस्थानकी भेरी बजा दी गई। भरतजी की सेनाने बहुत वैभवके साथ वहांसे प्रस्थान किया। ध्वजपताका, विमान, गाजेबाजे के द्वारा उसमें विशेष शोभा आगई थी। षट्खंडको जीतकर, अपने धवल यशको तीन लोकमे फैलाते हुए भरतजी जारहे है।

जिस समय दिग्विजयके लिए भरतजी निकले थे उस समय उन की एक सेना व दूसरी अर्ककीर्ति की सेना इस प्रकार दो ही सेना थी, परंतु अब लौटते समय तीन सेना होगई है। जिन पुत्रों का विवाह हुआ है, ऐसे हजार पुत्रोंको एक साथ व्यंतरोंके साथ करके भरतजीने उन को गमन कराया। उस का नाम अर्ककीर्तिसेना है। वह सबसे आगे से जा रही है। उस के पीछे से छोटे पुत्रोंकी सेना जा रही है।

स्वतः भरतजी उन गुफाओंको पार करते समय विमान पर चढकर जा सकते थे। परंतु हाथी, घोडा, रथ वगैरे को छोडकर वे अकेले ही जाना नहीं चाहते थे। अतः सबके हित की दृष्टिसे उनके साथ ही जा रहे थे। जिस प्रकार खंडतमिस्र गुफाको उस दिन पार किया था उसी प्रकार आज खंडप्रपात गुफाको पार कर दक्षिण भूमिका अवलोकन सम्राटने किया। नाट्यमालने पहिलेसे चक्रवर्तिके स्वागतके लिए स्थान २ पर तोरण वगैरे बांधकर शोभा की थी। उसको बुलवाकर भरतजीने उसका सन्मान किया। योग्य स्थानको जानकर उस पर्वत के पासमें ही गंगा के तटपर सेना का मुक्काम कराया।

विजयार्धगिरी को पार करते ही सेना के समस्त सैनिकोंको देखकर आनंद हुआ। आर्यखंडको देखकर उन आर्यवीरोंको हर्ष हुआ। अभीतक युद्धकेलिए प्रयाण था। परंतु अब तो घरकेलिए प्रयाण है अतः सबका हृदय उत्साहसे भरा हुआ था। जाते समय सेनापति जहां कहता सबके सब झट मुक्काम करते। अब आतेसमय मुक्काम करने के लिए कहें तो भी 'थोडी दूर और जावें' ऐसा कहते थे। सबके मनमें घर जानेकी उत्कंठा लगी थी।

इसी प्रकार कुछ मुक्कामोंको तय करते हुए वे दक्षिणकी ओर आये तब अपनी बांये तरफ उन्होंने कैलास पर्वतको देखा। सेनापतिको वहीं पर सेनाका मुक्काम करानेके लिए आज्ञा हुई। स्वयं भरतजी सब परिवार को वहींपर छोडकर कैलास की ओर निकले। मागधामर, मंत्री आदि को सूचना दी गई कि वे सेनापरिवार की तरफ नजर रखें। अपने साथ अपने बारह सौ पुत्रोंको लेकर वे निकले। विमानके द्वारा पवनवेग से कैलास पर पहुंचे। समवसरण के बाहरके दरवाजेपर द्वारपालक खडा था। उससे भरतजीने प्रश्न किया कि हम अंदर जा सकते हैं? आज्ञा है या नहीं? द्वारपालकदेव ने अपने मस्तक को झुकाकर कहा कि आप जा सकते हैं, आ सकते हैं। ऊर्ध्व, मध्य व अधोलोक के

स्वामी आदिप्रभु के ज्येष्ठ पुत्रको कौन रोक सकता है ? आप कल मोक्ष साम्राज्य के अधिपति होंगे। आप जाईयेगा।

भरतजीने पहिले परकोटेके अंदर प्रविष्ट होकर मानस्तंभके पास रखे हुए सुवर्णकुंड के जलसे पैर धो लिए। तदनंतर पुनः विनयके साथ अंदर चले गए। भरतके पुत्र मनमें सोच रहे है कि आज पिताजी अपने पिताके पास जिस विनय व भक्ति से जा रहे है, उससे आगेके लिए वे सिखाते है कि हमें अपने पिताके पास किस प्रकार जाना चाहिये।

तदनंतर दो सुवर्णप्राकार, बाद एक रत्नप्राकार, तदनंतर तीन सुवर्णके, तदनंतर दो स्फटिकके इस प्रकार आठ परकोटोंकी शोभा को देखते हुए आगे बढे। आठ द्वारोंपर द्वारपालक है। परंतु नवमें द्वारमें कोई द्वारपालक नहीं है। आठ द्वारपालकों से अनुमति लेकर भरतजी अन्दर प्रवेश कर रहे है। अंदर प्रविष्ट होनेके बाद वहांपर व्यवस्थापक देवोंके शब्द सुननेमें आये। कोई कहता है कि धरणेंद्र ! ठहरो, देवेंद्र ! आप पहिले वंदना करें। दिक्पालक लोग बैठ जावें; योगिजन बैठनेकी कृपा करें। गरुड जातिके देव यहां बैठें, यक्षगणोंका यह स्थान है, सिद्ध और गंधर्व यहां बैठ सकते हैं। यह रंभाका नृत्य हो रहा है, ऊर्वशीका खेल है, मेनकीका नृत्य भी सुंदर है, इत्यादि शब्द भरतजी वहां सुनरहे हैं। भगवान्के ऊपर देवोंद्वारा पुष्पवृष्टि होरही है। मोतीका छत्र देवोंने लगाया है। ६४ चामर ढोल रहे है, पास ही अशोकवृक्ष है, भामंडलका प्रकाश सर्वत्र फैल रहा है। असंख्यात देवगण जयजयकार कर रहे हैं। हजार दलके कमलके ऊपर जो सिंहासन है उसे चार अंगुल छोडकर प्रभु विराजमान हैं। उनका शरीर करोडों सूर्य व चंद्रोंको भी तिरस्कृत कर रहा है।

समवसरणस्थित देवगणोंने दूरसे ही देख लिया। उनको आश्चर्य

हुआ कि यह महापुरुष कौन है ? इस प्रकारके सौंदर्यको धारण करने-वाले सज्जनको हमने पहिले कैलासमें कभी नहीं देखा था । तीन लोकके रूपको सब अपनेमें व अपने पुत्रोंमें एकत्रितकर यहांपर दिखानेकेलिए आया है मालुम होता है । इत्यादि कई तरहकी बातचीत करते हुए अपने आश्चर्यको व्यक्त कर रहे थे । पासमें आनेपर " यह भरतेश है, देवोत्तमका पुत्र है । ठीक है । यह वैभव और किसको मिल सकता है ? धन्य है, " इस प्रकार मनमें विचार करने लगे ।

भरतजीने हर्षके साथ अंदर प्रवेश किया । वेत्रधारियोंने कहा कि हे देवदेव ! पुरुनाथ ! जरा आप देखें ! भरतेश आरहे हैं । शरीरपर रत्नाभरणों को धारणकर, आत्मामें गुणाभरणोंको धारण कर अत्यंत सुंदर श्रृंगारयोगि आगये हैं । जरा देखियें तो सही । देवकुमारोंसे भी सुंदर सनिमिष नेत्रधारी अपने हजारों पुत्रोंको लेकर भरतजी आये हैं, हे कोटि सूर्यचंद्रप्रकाश ! सर्वेश ! जरा अवधारण करें । इत्यादि प्रकारसे देवगण भगवान्‌से प्रार्थना करने लगे ।

तीन लोकके अंदर के व बाहर के पदार्थोंके प्रत्येक द्रव्य गुण-पर्यायको प्रतिसमय युगपत् जाननेवाले श्रीप्रभु को भरतके आगमनको किसीके बतानेकी आवश्यकता है ? नहीं ! नहीं ! यह तो केवल देवों की भक्तिका एक नमूना है ।

भरतजीने आदिप्रभुके चरणपर रत्नांजलि को समर्पण कर साष्टांग नमस्कार किया । पिता जिस समय साष्टांग नमस्कार कर रहे थे उस समय पुत्र भी साष्टांग नमस्कार कर रहें हैं । पिता जिस समय उठे वे भी उठते हैं । पिता जिस समय हाथ जोडे उस समय वे भी हाथ जोडते हैं । इस प्रकार उस समयकी शोभा ऐसी मालूम हो रही थी कि जैसे एक सूत्रमें बंधे हुए अनेक खिलौने एक साथ अपने सुंदर खेल दिखा रहे हों ।

तीन बार साष्टांग नमस्कार कर भरतजी बहुत भक्तिसे भगवान् की स्तुति करने लगे। करतल कंपित हो रहे थे। आनंदाश्रुधारा बह रही थी। मंदस्मित होकर बहुत सुस्वरके साथ वे स्तुति कर रहे थे। निम्न लिखित स्तोत्रपाठ था।

कांचनभूभृद्दुदंचितगौरवाकुंचितभद्रस्वरूप !
पंचबाणानेकजित ! पुरुषाकार ! प्रांचित ! जय जय !
सुत्रामशतमुकुटानर्घ्यरत्नांशुचित्रितचरणाब्जयुगल !
छत्रमुक्तांशुगंगाधृतबहुजटासूत्रित जय जय !
संग निस्संग सुरांग चिदंग मतंगजरिपुविष्टराढ्य !
सांगिकसुरकुसुमासारधूलिभस्मांगित जय जय !
पिंजरितोग्रकर्मारण्यदावधनंजय सुज्ञानभानु !
भंजितजातिजरामयदुःखमृत्युंजय जय जय !
कंजकिंजल्कपुंजितमंजुळालिस्वरंजितमंजुघोषाढ्य !
रंजितगीतपुष्पांजलिपूज्य परंज्योति जय जय !
श्राव्यदिव्यालापकाव्यसंसेव्य सद्भव्य निर्व्यक्तचिद्द्रव्य !
अव्ययसिद्धिसुसंव्यक्तहितकव्याढ्य जय जय !
सुज्ञानदर्शनसुखशक्तिकांतिमनोज्ञ श्रीअमलादिवस्तु !
प्राज्ञ जनार्चित ! जय जय स्वामि ! सर्वज्ञ सदाशिवोदेव !
भरतनप्पाजि शक्रनस्वामि कलिकालपरिचित रत्नाकरना !
पिरियय्य जय जय यंदेरगिद नर सुररेल्ल जयजय येनल्लु !

इस प्रकार बहुत भक्तिसे सम्राट् ने भगवंत की स्तुति की।

रत्नाकरने अपने पिताके स्थान मे श्रीमंदर स्वामीको व बडे बापके स्थानपर श्री आदिप्रभु का उल्लेख किया है। इस प्रकार का भाग्य

हर एकको कहां मिल सकता है ? इसके बाद भरतजीने सुरकृत जलसे स्नान किया। अपने शरीर का शृंगार किया। अनेक उत्तमोत्तम द्रव्यों से जिनेंद्र की पूजा की। भरतजी को किस बातकी कमी है ? चिंतामणि रत्नने चिंतित पदार्थोंको लाकर दिया। तीर्थांबु, मलयज-चंदन, अक्षत, पुष्प, चरु, दीप, धूप, फल, अर्घ्य इस प्रकार अष्ट-द्रव्योंके साथ तीर्थेश्वरकी पूजा की। उस समय भरतकी भक्तिको देख कर भगवान् के समवसरणस्थित समस्तभव्य जयजयकार कर रहे थे। पूजासे निवृत्त होकर भगवान् की तीन प्रदक्षिणा भरतजीने दी। तद-नतर बहुत भक्तिसे साष्टांगनमस्कार किया। बाद में मुनियोंकी वंदना की। देवेंद्रादियोंके साथ बातचीत की। गणधर की आज्ञा पाकर ग्यारहवें कोष्टमें वे विराजमान हुए। आज समवसरणमें एक नई बात होगई है। समवसरणस्थित सभी भव्य भरतजी के आगमनसे हर्षित हो रहे हैं। भरतजी दिव्यवाणी की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

भरत का जीवन धन्य है। जहां जाते है वहां परममंगल प्रसंगो का ही अनुभव उनको होता है। दिग्विजयकर लौटते समय भगवान् त्रिलोकीनाथ का दर्शन, यह कोई कमभाग्य की बात नहीं है। ऐसे पुण्यशाली विरले ही होते है।

जिन्होने पूर्वजन्मसेही आत्मभावनाके साथ अनेक पुण्यकार्योंको किये हों उन्हीका इस प्रकारके अवसर मिला करते हैं। भरतजी उन्ही महात्माओंमेंसे है, जो रातदिन इस प्रकारकी भावना करते हैं कि—

"हे परमात्मन् ! तुम्हारे अंदर वह सामर्थ्य है कि तुम अपने भक्तोंको सदा परममंगल स्थानोंमें लेजाते हो। इसलिए हे आनंद-

मल्ल ! चिद्वर पुरुष ! तुम मेरे हृदयमें ही रहो ! कहीं अन्यत्र नहीं जाना, यही मेरी प्रार्थना है।

हे सिद्धात्मन् ! गर्वगजासुरको आप मर्दन करनेवाले हो, दुष्कर्मरूपी पर्वत के लिए वज्रके समान हो, नरसुर नाग आदियोंके द्वारा वंद्य हो, अतएव हमें निर्विघ्न मतिको प्रदान कीजिए"

इसी भावनाका यह फल है।

इति जिनदर्शनसंधिः
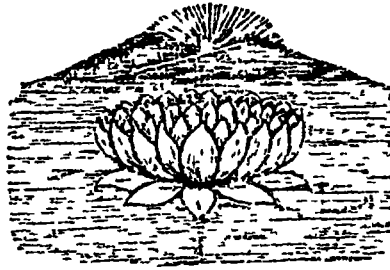
अथ तीर्थागमन संधिः

भरतजी हाथ जोडकर बैठे हैं। उनको दिव्यध्वनि कब खिरेगी इस बातकी उत्कंठा लगी हुई है। भरतके पुत्र भी भगवंतके प्रति भक्तिसे देखते हैं। हंसते है। हाथ जोडते है। अर्ककीर्ति अपने छोटेभाई पुरुराज, माणिक्यराज, वृषभराज, गुरुराज व आदिराजसे कहने लगा कि आपलोग बडे भाग्यशाली हो। क्योंकि आपलोगोंने भगवान् आदि-प्रभुके नामको पाये हैं। उत्तरमें वे भाई कहने लगे कि भाई! ऐसा क्यों कहते हो, दुनियामें जितने भी पवित्रनाम हैं वे सब श्री आदि-प्रभुके हैं। उनमेंसे आपका अर्ककीर्ति नामभी तो है। इत्यादि प्रकारसे वार्तालाप होरहा था इतनेमें भरतजीने उनको इस विनोदगोष्ठीको बंद करनेके लिए इशारा किया। उन्होने हाथ जोडकर मनमें कुछ सोचा। इतनेमें दिव्यध्वनिका उदय हुआ।

गंभीर, मृदु, मधुरध्वनिसे युक्त सबके चित्त व कर्णको आनंदित करती हुई वह दिव्यवाणी खिर रही है। समुद्रघोष के समान उसकी घोषणा है। उस दिव्यध्वनिमें १८ प्रकारकी महाभाषायें, व ७०० लघुभाषायें अंतर्भूत है।

सबसे पहिले इस लोकाकाशमे व्याप्त तीन वातवलयों का वर्णन उस दिव्यध्वनिमे हुआ। बादमें उस आकाश प्रदेशमें स्थित ऊर्ध्व, मध्य व अधोलोकका चित्रण हुआ। तदनंतर उस लोकमें स्थित षट्-द्रव्य सप्ततत्व, पंचास्तिकाय व नवपदार्थोका वर्णन हुआ। भरतजीको बडा ही आनंद हो रहा था। इसी प्रकार जब भगवंतने व्यवहार-रत्नत्रय निश्चयरत्नत्रय, भेदभक्ति व अभेदभक्तिका वर्णन किया उस समय भरतजीको रोमांच हुआ। हंसतत्व, (परमात्म तत्व) हंसतत्व-का सामर्थ्य, व हंसमे ही जिनसिद्धकी स्थितिको जिस समय भरतजीने सुना उस समय वे आनंदसे फूले न समाये। उनके सारे शरीरमें रोमांच हुआ।

भरतजी ने स्वतः को कब केवलज्ञान होगा यह पहिले ही आदि-भगवन्तसे पूछ लिया था। परंतु उनकी इच्छा अबकी अपने पुत्रों के संबंध में पूछने की थी। सो उन्होंने प्रश्न कर ही दिया। हे भगवन् ! ये हमारे एक हजार दो सौ पुत्र हैं, इसी जन्मसे मुक्त होंगे या भावी जन्म में मुक्त होंगे ? कृपया कहियेगा। तब उत्तर मिला कि ये सब इसी भवसे मुक्तिधाम को प्राप्त करेंगे। भरतजी को संतोष हुआ। साथ में यह भी कहा कि इन में से दो पुत्रों को तो बाल्यकालमें ही वैराग्य उत्पन्न हो जायगा। परन्तु समझाने के बाद वे रह जायेंगे। और फिर भोगों को भोगकर वृद्धावस्था में वे दीक्षित होंगे। भरतजी ने निश्चय किया कि इस जिनवाक्य में कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। मैं इन पुत्रों के साथ वृद्धाप्य कालतक राज्यभोग को भोग कर दीक्षित होऊंगा। भगवान् को नमस्कार कर उठा। उनके पुत्र भी साथमें ही उठे, वे आपसमें बातचीत कर रहे थे कि ये भगवंत हमारे दादा हैं, कोई कह रहे थे प्रपिता हैं। इस प्रकार मोह से कई तरहसे बात कर रहे थे, जहां मोह है वहां ऐसी बात हुआ करती है। जिस भगवंत के समस्त मोहनीयका अभाव हो चुका है, उनके हृदय में ऐसी कोई भी बात नहीं है। इस लिए इनके हृदय में मोह रहने पर भी उन के हृदय में कोई ममत्व नहीं है। अतएव वे वीतरागी कहलाते हैं।

वृषभसेन गणधर ने सम्राट् से कहा कि भरत ! सब को रास्ते में छोड़ कर आये हो ! इस लिए अब देरी मत करो ! चले जाओ।

भरत ने उत्तरमें कहा कि स्वामिन् ! यहां पर रहनेके लिए न कह कर जानेके लिए क्यों बोल रहे हैं ? आप को तो यहां रहनेके लिए आदेश करना चाहिये।

वृषभसेनस्वामी ने कहा कि भरत ! हम जानते हैं। तुम कहीं भी रहो। तुम्हारी आत्मा यहां पर रहती है। इस लिए जाओ। तब

भरतने " अगर ऐसा है तो मैं आप की आज्ञा का उल्लंघन क्योंकर करूं ! मैं जाता हूं " ऐसा कहते हुये अपने पुत्रों के साथ वहां से प्रस्थान किया । वहां से निकलते समय एक दफे पुनः आदि प्रभुका दर्शन " भूयात्पुनर्दर्शनं " मंत्रके साथ किया । तदनंतर वृषभसेनाचार्य, अनंतवीर्य, विजय, वीर, सुवीर, अच्युतार्य, इस प्रकार छह गणधरों की वंदना की । तदनंतर कच्छयोगी, महाकच्छयोगी को नमस्कार किया, बाद में बाकी के मुनिसमुदाय को नमस्कार किया । देवेंद्र के साथ प्रेमवार्तालाप किया । देवेंद्र कहने लगा कि भरत ! कौनसे पुण्य के फल से तुमने इन सुन्दर पुत्रों को प्राप्त किया है? देवलोक में भी इस प्रकार के सौंदर्य को धारण करनेवाले नहीं है । तुम्हारी संपत्ति अद्भुत है । एक दो पुत्र नहीं सभी तुम्हारे समान ही परमसुन्दर हैं । तुम्हारे भाग्यकी बराबरी लोकमें कौन कर सकता है ? उत्तर में भरतजी लघुता बतलाते हुए कहने लगे कि ये क्या सुंदर है? स्वर्गके देव इनसे हजारों गुण अधिक सुंदर रहते है । तब देवेंद्र कहने लगे कि आप लोग आदि प्रभुके वंशज है,इसलिए विनयगुण भी आपमे अत्यधिक रूपसे विद्यमान है । आपकी निरहंकारवृत्ति प्रसंशनीय है ।

इस प्रकार देवेंद्र के साथ वार्तालाप कर नागेंद्र आदियोंके साथ भी बोलते हुए चक्रवर्ति बाहर निकले । जाते समय द्वारपालकोंको उन्होने रत्नहारादिकको इनाममें दिये समवसरणसे बाहर निकलकर विमानोंपर चढकर सेनास्थान की ओर जाने लगे । एक विमान में स्वयं सम्राट् व दूसरे विमान में एक हजार प्रौढ पुत्र, व तीसरे विमान में दो सौ छोटे पुत्र बैठे हुए जारहे हैं । सोलह हजार गणबद्ध देव भी साथमें हैं । सभी पुत्रोंके मुखमें इस समय समवसरणकी चर्चा है । आदिप्रभुके अपूर्व दर्शनके संबंधमें अनेक प्रकारसे हर्ष व्यक्त करते हुए सभी पुत्र जा रहे हैं । कभी पिताके साथ समवसरणके विषयमें बोल रहे हैं । भरतके कहने पर आनंद से सुनते हैं । हंसते हैं । लोक-

विस्मय करनेवाली तीर्थंकरप्रभुकी महिमा को देखकर मन मन में फूल रहे हैं।

इस प्रकार सब लोग जिस समय बहुत आनंदके साथ जा रहे थे उस समय उन छोटे पुत्रों में दो पुत्र मौन के साथ जा रहे है। उन का नाम जिनराज और मुनिराज है। उन्होंने जबसे तीर्थंकरपरमेष्ठी का दर्शन किया है तबसे उनके चित्त में दीक्षा लेने की भावना हो गई है। परंतु पितासे बोलने के लिए डर लग रही है। इस लिए बडे विचार-से मौन से जा रहे हैं। मन मे विचार कर रहे हैं कि अब कल ही हमारे भाईयोंके समान ही हमारा विवाह पिताजी करेंगे। इसलिए इस झंझट मे पडने के बजाय बाल्यकाल ही दीक्षा लेना उचित है। हमें दीक्षा प्रदान करो इस प्रकार हमारे दादा श्री आदिप्रभुके चरणोंमें हम प्रार्थना करते। परंतु हमारे पिताजी व भाई लोग नहीं छोडते। अब क्या उपाय करना चाहिए। धन्य है! पुण्यजीवियोंका विचार बाल्यकाल मे ही परिपुष्ट रहता है।

अभी प्रयत्न करने पर किसी भी तरह ये लोग हमें भेज नहीं सकते हैं। इस लिए इन के साथ चुप चाप के अभी जावें। बाद में जब घर पर पहुंचेंगे तब किसी तरह इन को नही कह कर चले आयेंगे, फिर दीक्षित होंगे। इस विचार से दोनों पुत्र उनके साथ मौन से जा रहे हैं।

सभी लोग सेनास्थान की ओर देखते हुए जा रहे है। परंतु ये दोनों पुत्र कैलासकी ओर देखते हुए जा रहे हैं।

भरतजीने देखा! उनको दोनों पुत्रों का अंतरंग मालुम हुआ कि दीक्षा लेने की भावना से ये लोग इस प्रकार विकल हो रहे हैं। तथापि उसे छिपाकर कहने लगे कि बेटा जिनराज! मुनिराज! आप लोगोंको क्या हुआ? सब लोग बहुत आनंद के साथ जा रहे है। आप लोग क्यों मौन धारण करके बैठे हो। इस का कारण

क्या ? क्या माता का स्मरण हुआ ? या कैलास पर चढने से कुछ शरीर मे दर्दवर्द होगई ? क्या बात है ? आप लोग मौन से क्या विचार कर रहे हैं। बोलो तो सही।

तब उन पुत्रोंने कहा कि पिताजी ! आपके साथ होते हुए माताजी की याद क्यों कर हो सकती है ? क्या मातुःश्री आपसे भी अधिक है। क्या जिनेंद्रके समवसरण मे जाने पर शरीर मे आलस्य आ सकता है ? कभी नहीं। आप और भाई वगैरे बोलते है। उसे हम सुनते जा रहे है। इतनी ही बात है। और कुछ नहीं।

पुनः भरतजी कहने लगे कि फिर आप लोग आगे नहीं देखकर पीछेकी ओर देखते हुए क्यों जा रहे है। तब वे कहने लगे कि हम लोग इस कैलास की शोभा को देख रहे है। और मन में सोच रहे है कि इस पुण्यशैल का दर्शन फिर कब होगा ? जरा इस पर्वत की शोभा को देखियेगा। उस के ऊपर समवसरण के सौंदर्य को देखियेगा। स्वामिन् ! यह तीन लोकके लिए अद्भुत है। आप देखियेगा।

भरतजी को भी पुत्रों की भक्तिपर प्रसन्नता हुई। अब वे प्रकट रूप से कहने लगे कि बेटा ! मुझ से क्यों छिपा रहे हो। आप लोगों के मनके विषय को मै समझ गया हूं।

अभीसे दीक्षा लेने की बात क्यों सोच रहे है। हम और तुम सब मिल कर दीक्षा लेंगे। इस मे गडबड क्या है ? कुछ दिन भोगमें रहकर बाद में आप लोग दीक्षा लेवें। अभी गडबड न करें। इतना कहने पर पुत्रों को मालूम हुआ कि पिताजी को मालुम हुआ है। हम लोग पिता से बोलनेके लिए डर रहे थे। अब पिताजीने ही हमें संकोचसे दूर किया। हमने सोचा था कि इन लोगोंको धोका देकर भाग आयेंगे। परंतु अब उस तरह आना सहज नहीं है। इसलिए अब स्पष्ट बोलकर ही जाना चाहिए।

दोनों पुत्रोंने भरतेशके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! हमारी तीव्र इच्छा है कि इस बाल्यकालमें ही दीक्षित होकर मुक्तिसाम्राज्यके अधिपति बनें। इसलिये आप कृपाकर अनुमति दीजिये। इस बात को सुनकर भरतजीका हृदय कंपित हुआ। आंखोंमें पानी भरकर आया।

" बेटा! मुझसे रहा नहीं जायगा। आप लोग इस प्रकारका विचार बिलकुल न करें। मेरी रक्षा करें" इत्यादि रूपसे कहते हुए भरतजीने उन दोनो पुत्रोंको आलिंगन दिया। पुनश्च कहने लगे कि बेटा! आप लोग यदि नहीं हों तो मेरी संपत्ति किस कामकी? मुझे कष्ट पहुंचाना क्या आप लोगोंका धर्म है। इतनी गडबडी क्या है? हम तुम सब मिलकर दीक्षा लेंगे। इस समय ठहर जावो।

उत्तरमें दोनों पुत्रोंने कहा कि स्वामिन्! आपको क्या पुत्रोंकी कमी है? हजारों पुत्रोंमेंसे हम दोनोंने यदि दीक्षा लेकर यमको परास्त किया तो क्या वह कीर्ति आपके लिए ही नहीं होगी?

भरत—बेटा! मुझे उस कीर्तिकी आवश्यकता नहीं। यह कीर्ति ही पर्याप्त है। तुम हम सुखसे चार दिन रहें यही मै चाहता हूं।

पुत्र—पिताजी उस दुष्ट यमके बीचमें रहनेसे क्या प्रयोजन? हम लोगोंको आप आज्ञा दीजियेगा।

भरत—बेटा! वह यम अपनेको क्या कर सकता है? आप लोग इसी भवसे मुक्तिधाम को प्राप्त करनेवाले हैं। भगवान् आदि प्रभुके उपदेशको इतना शीघ्र भूल गये। यदि तुम लोग तद्भव मुक्तिगामी नहीं होते तो तुम्हारे कार्यको मै नहीं रोकता। परंतु इसी भवसे मुक्ति जाना जरूरी है। फिर चार दिन आनंदसे संसारके भोगोंको भोगकर फिर जावे। बेटा! जरा विचार तो करो। तुम लोगोंने अभी हमारे नगरको भी नहीं देखा। हमारी मातुश्रीने तुम्हारे विनोदपूर्ण व्यवहारको

भी नहीं देखा। ऐसी हालत में तुम्हारा जाना क्या उचित है ? तुम्हारे काकाओंने अभी तुमको देखा ही नहीं है। सबकी इच्छाको पूर्ति कर बादमें जाईयेगा। मैं तुम लोगोंको बहुत सन्मान के साथ भेज दूंगा। चिंता क्यों करते हो। कुछ दिन रह जावो।

पुत्र—स्वामिन् ! दीक्षा लेनेकी इच्छा क्या बार बार होती है ? संसारकी संपत्ति मे फसनेके बाद मनुष्यके चित्त की परिणति क्या होती है कौन कह सकते हैं ? इसलिए हमारी प्रार्थना है कि हमे किसी भी प्रकार रोकना नहीं चाहिए। आप अनुमति दीजिये। पिताजी ! हमारी दादी, नगरी, काका वगैरह को इस चर्मदृष्टि से देखनेके लिए क्यों कहते हैं ? हम तपश्चर्याके बलसे अनंत ज्ञानको प्राप्त कर उनको ज्ञानदृष्टि से एक साथ देखेंगे। इसलिए हमें अवश्य जानेकी अनुमति दीजियेगा।

भरत—बेटा ! पुनः पुनः उसी बातको कहकर मुझे दुःखित करना तुम्हारा धर्म नहीं है। अतः इस विषयको छोडो। तपस्याकी बात ही मत करो।

पुत्र—पिताजी ! आपको इस प्रकार दुःखित होनेकी क्या आवश्यकता है ? क्या हम लोगोंने कोई दुष्ट कार्यका विचार किया है ? कोई नीच काम करनेका संकल्प किया है ? फिर आप क्यों दुःखी होते हैं व हमें क्यों रोक रहे हैं ? आपको तो उलटा कहना चाहिये कि बेटा ! आप लोगोंने अच्छा विचार किया, प्रशस्त है। जावो तुम लोगों जयकी मिले ! परंतु आप तो हमें रोक रहे हैं। हमारी प्रार्थना है कि आप इस प्रकार हमें नहीं रोकें। हमें जानेकी अनुमति प्रदान करें।

भरतजीने देखा कि अब ये माननेवाले नहीं हैं। अब किसी न किसी उपायसे इनको मनाना चाहिये, इस विचार से वे कहने लगे।

बेटा ! क्या आपलोग दीक्षाकेलिए जाना ही चाहते हैं? कोई हर्ज नहीं। जासकते हैं। परंतु आपलोग एक एक चीज देकर जावें।

उत्तरमें उन पुत्रोने कहा कि पिताजी ! हमारे पास ऐसी कौनसी चीज है जो हम आपको देसकते है ?

भरतजीने कहा कि सिर्फ देंगे ऐसा कहो, मै फिर कहूंगा।

तब उन पुत्रोने कहा कि जब कि हम समस्त परिग्रहको छोडकर दीक्षाके लिए उद्यत हुए है फिर हमें किस बातका मोह है। आप बोलिए। हम देनेके लिए तैयार है। भरतजीने उनके सामने हाथ पसारकर कहा कि लावो, एक तो इस हाथपर कपूरको रक्खो, दूसरा उसपर तैल डालो। फिर खुशीसे दोनों जावें जिनेन्द्र भगवंतकी शपथ है, मैं नहीं रोकूंगा। बोलते हुए भरतजी की आंखोंसे आंसू बहरहा था।

दोनो पुत्रोंके हृदय कंपने लगा। सभी पुत्र कंपित होने लगे। अर्ककीर्तिने कहा कि आप लोगोके जीवनके लिए धिक्कार हो। पिताजीने हाथ पसारकर विषकी याचना की, इससे अधिक दुःखकी और क्या बात होसकती है ? हम लोगोने ऐसे अशुभ वचनको सुने। हा ! जिन ! जिन ! गुरुहंसनाथ ! (कानमे उंगुली डालते हुए अर्ककीर्तिने कहा)

दोनों पुत्रोंको मनमें भय उत्पन्न हुआ। एक दफे पिताके मुखकी ओर देखते हैं और दूसरी दफे भाईके मुख की ओर देखते है। आंखोंके पानीको निगलते हुए उनके चरणोपर मस्तक रखकर कहा कि अब हम दीक्षाका नाम नहीं लेंगे। भरतजीसे निवेदन करने लगे कि पिताजी ! हम लोगोने अज्ञानसे बचपनके विचारके समान यह विचार किया था। उसे आप भूलजावे। आपको जो कष्ट हुआ उसके लिए क्षमा करे।

भरतजीने दोनो पुत्रोंको संतोषके साथ आलिंगन दिया। क्यों कि संतानका मोह वहुत प्रवल हुआ करता है।

भरतजीको वहुत संतोष हुआ, दोनों पुत्रोनें क्षमा याचना की। पिताजी! आपको कष्ट पहुंचाया। क्षमा करें। " बेटा! ऐसा क्यों कहते हो। मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ, उलटा इस समय मुझे आनंद आया " कहते हुए भरतजीने उन बालकोंको समाधान किया।

इतनेमे अर्ककीर्ति कुमार अपने विमान से उतरकर पिताके पास आया और उसने भरतजीके धारण किये हुए वस्त्राभरणोंको निकलवाकर नवीन धारण कराये। और गुलाबजलसे मुख धुलवाया। चंदनका लेपन शरीरको कराया। इसी प्रकार अनेक प्रकार से शीतोपचार कर पिताकी सेवा की।

भरतजीने उन दोनों पुत्रोंसे प्रश्न किया कि जिनराज! मुनिराज! अब जो हुआ सो हुआ, घर जानेके बाद मुझे न कहकर तुमलोग गये तो क्या? बोलो।

उत्तरमे पुत्रोनें कहा कि पिताजी! हम आपसे पूछे विना अब हरगिज नहीं जायेंगे,

' मै विश्वास नहीं करसकता " भरतजीने कहा। तव पुत्रोनें कहा कि आपके पदकमलोंकी शपथ है, हम नहीं जायेंगे। पुनः भरतजीने कहा कि इससे भी मुझे संतोष नहीं होता है। कुछ न कुछ जामीन के रूपमें देना चाहिये। नहीं तो मुझे विश्वास नहीं होसकता है।

पुत्रोंने विनयसे कहा कि पिताजी! जब आपके चरणकमलोंकी शपथपूर्वक हमने प्रतिज्ञा की है, फिर उससे अधिक जामीन क्या होसकती है? लोकमे आपसे अधिक और कौन है? इसलिए हमपर विश्वास कीजिए।

भरतजीने कहा कि मैं इस प्रकार विश्वास नहीं कर सकता। अपने बडे भाई अर्ककीर्ति व आदिराजकी जामीन देकर हमें निश्चय करावे। कि आप लोग अब नहीं जावोगे।

अर्ककीर्तिने कहा कि जामीन की क्या आवश्यकता है? आपके पादकमलोंसे अधिक और क्या जामीनकी कीमत होसकती है?

"नहीं! अवश्य जरूरत है, इस तरह वचनबद्ध व जामीन पत्रबद्ध होनेसे फिर ये बिलकुल नहीं जासकेंगे। इसलिए अवश्य जामीन पत्र होना चाहिए" भरतजीने कहा 'इतनेमें आदिराजने कहा कि व्यर्थ विवाद क्यों? पिताजीकी जैसी इच्छा हो वैसा करें। अच्छा! हम दोनों भाई इन दोनोंके लिए जामीन है। हम इनको जाने नहीं देंगे। और ये नहीं जायेंगे, इस प्रकार लिखकर दोनोंनें हस्ताक्षर किया। जिनराज और मुनिराजने दोनों भाईयोंके चरणोमें नमस्कार कर कहा कि भाई! आप लोग विश्वास रखें कि हम कभी विना कहे नहीं जायेंगे। आपलोग विश्वास रखें।

"पिताजी के चरणस्पर्श ही पर्याप्त है" ऐसा कहते हुए दोनों भाईयोंने उनका हाथ हटाया। जिनराज मुनिराजने विनयसे कहा कि पिताजी आपकेलिए स्वामी है, हमारे लिए तो आपही स्वामी है। इसी प्रकार अन्य हजारों पुत्रोंनें कहा कि भाई! आप दोनों तो इनकेलिए जामीन है। परंतु हम लोग सब पहरेदार हैं। फिर ये कैसे जाते है देखेंगे। मोक्षपथमें संलग्न उन पुत्रोका विनोदव्यवहार कुछ विचित्र ही है। वह आनंद सबको कैसे मिलसकता है।

सम्राट्को संतोष हुआ, सभी पुत्र अपने २ विमानपर चढकर सेनास्थानकी ओर आने लगे। अर्ककीर्तिनें भरतजीसे कहा कि पिताजी! आदिप्रभुने जो अपनी दिव्यवाणीमे कहा था कि दो पुत्रोंको बाल्य

कालमें वैराग्य उत्पन्न होजायगा। उससे थोडा-सबको दुःख होगा। प्रभुका वचन अन्यथा नहीं होसकता है।

भरतजीने कहा कि बेटा! अभी तुमसे यही बात कहना चाहता था। परंतु तुमने उसीको कहा।

"पिताजी! आपने जब इनका नामकरण संस्कार किया था, उससमय इनका नाम बहुत सोच समझकर रक्खा मालुम होता है। जिनराज मुनिराजके नामसे ये जिनमुनि होंगे ऐसा शायद आपको उस समय मालुम हुआ होगा। आश्चर्य है"। अर्ककीर्तिने कहा।

भरतजीने कहा कि बेटा! जानेदो, मुझे चढावो मत! तुम्हारे भाईयोंने जिसप्रकार मुझे फसानेकेलिए सोचा था, उसे विचार करनेपर मुझे हसी आती है। देखो तो सही।

किस उपायसे हम लोगोंको धोका देरहे थे? हमने पूछा था कि आप लोग मौनसे क्यों आरहे है? उत्तर देते है कि आप लोगोंकी बातको हम सुनते हुए आरहे हैं। पीछेकी तरफ देखनेका कारण पूछनेपर कैलास पर्वतके पुण्यातिशयका वर्णन करने लगे। अर्ककीर्ति! देखो, तुम्हारे भाईयोंके चातुर्यको। इस बातको सुनकर सब लोग हसे।

उन पुत्रोंमें सबसे छोटे माणिक्यराज व मन्मथराजके नामके थे। उनका नाम जैसा था उसी प्रकार वे सुंदर थे। उन्होंने आगे आकर निवेदन किया कि पिताजी अब आपके सहोदर वृषभसेनाचार्य आदि छह भाईयोंने दीक्षा ली उस समय आपने उनको क्यों नहीं रोका? उस समय आपने कुछ भी न बोलकर मौन धारण किया सो इस कार्य के लिए यह लोक प्रसन्न हो सकता है? इस प्रकार निर्भीड होकर कहने लगे।

भरतजीने कहा कि ठीक है। उस समय मैं क्या करता? उत्तर में उन पुत्रोंने कहा कि आप कुछ दिनके लिए उनको रोकते जैसा हमारे भाईयोंको रोका।

भरतजी—क्या मेरे रोकनेसे वे रुक सकते हैं ?

पुत्र—पिताजी ! आप ऐसा क्यों कहते है ? बडे भाईकी बातका वे कभी उल्लंघन नहीं करते । आपने उनको रोका नहीं ।

भरतजी—रहनेदो जी, तुम्हारे भाईयोंने अभी हम लोगोंको फंसाकर जानेका विचार कैसे किया था । यह तुम नहीं जानते । जब कि मेरे पुत्रोंने मुझे धोका देनेका विचार किया तो मेरे भाईयोंकी तो बात ही क्या है ? वे मेरी बातको कैसे सुनेंगे । बेटा ! तुम लोग अभी छोटे हो, इसलिए पिताजी, पिताजी कहकर मुझे पुकारते हो । परंतु कब मुझे फंसाकर चल दोगे यह मै कह नहीं सकता । तुम लोगोंपर भी विश्वास करना कठिण है । गर्भमें आते ही हम लोगोंको पुत्र उत्पन्न होगा, इस विचारसे हम हर्षित होते है व उस भाग्यके दिनकी प्रतीक्षा करते है । परंतु आप लोग हमे निर्भाग्य कर चले जाते हो यह मात्र आश्चर्यकी बात है । "पुत्रसंतान होना चाहिये" इस प्रकार तुम्हारी मातावोंकी अभिलाषा है । उसकी पूर्ति तुम्हारे जन्मसे होजाती है । परंतु तुम लोग बडे होकर दीक्षा लेकर भाग जाते हो । हम लोगोंकी रक्षा बुढापेमें तुम करोगे इस विचारसे अच्छे २ पदार्थोंको खिला-पिलाकर हम तुम्हारा पालन-पोषण करते हैं । परंतु तुम लोग बिलकुल उसके प्रति ध्यान नहीं देते हो । लुच्चे हो । कदाचित् हमसे कहनेसे हम जाने नहीं देंगे इस विचारसे विना कहे ही तपश्चर्याके लिए निकल जाते हो । परंतु ऐसा न कहकर जानेसे बाल्यकालसे पालन किया हुआ ऋण तुमसे कैसे छूट सकता है । देखो मेरे पिताजीने मुझे राज्य में स्थापित कर जो काम मुझे सोपा है उसे मैं कर रहा हूं । मैंने अपनी माताके स्तनके दूधको पीया है, अतएव उनकी आज्ञानुसार सर्व कार्य करता हूं । किसीका कर्जा लेकर उसे बाकी रखना यह महापाप है । माता-पितावोंके ऋणको बाकी रखकर जाना यह सत्पुत्रों

का कर्तव्य नहीं है । उसको तो मुक्ति भी नहीं मिल सकती है । तुम्हारे भाई और तुम इस बातपर विचार नही करते । तुह्मारी मातुश्री व हमको दु:खमे डालकर जाना चाहते हो । परंतु क्या तुह्मारे लिए उचित है ! इस प्रकार पुत्रोंको भरतजीने अच्छी तरह डराया ।

भरतजी यद्यपि जानते थे, सर्वज्ञने यह आदेश दिया है कि दो पुत्रोंको छोडकर बाकीके पुत्र तो भोगोको भोगकर वृद्धावस्थामें ही दीक्षित होंगे। तथापि विनोदके लिए ही उपर्युक्त प्रकार संभाषण किया।

पुन: वे दोनो पुत्र कहने लगे कि पिताजी ! हमारे भाई दीक्षाके लिए जाना चहते थे। आपसे आज्ञा उन्होंने जानेके लिए मागी, परंतु आपने आज्ञा नहीं दी, वे रह गए । फिर आपने उसी प्रकार उन छह भाईयोको नहीं जाने देते तो वे रह जाते ।

भरतजी उत्तरमें कहने लगे कि बेटा ! जब मेरे खास पुत्रोंको रोकनेके लिए मुझे इतना साहस व श्रम करना पडा, तब उन भाईयोंको रोकनेके लिए क्या करना पडता ? मेरी बातको वे कैसे मान सकते थे।

पुन: वे पुत्र कहने लगे कि पिताजी ! आप ऐसा क्यों कहते हैं? क्या आज हम लोग छोटे भैया आदिराज व बडे भैया अर्ककीर्तिके वचनको उल्लघन करते है ? नहीं, हम तो उनके वचनको शिरसा धारण करते हैं । इसी प्रकार वे भी आपकी आज्ञाका अवश्य पालन करते । परतु मालुम होता है कि आपनेही इसप्रकार प्रयत्न नहीं किया ।

भरतजीने अर्ककीर्तिकी ओर लक्ष्यकर कहा कि देखो बडे भैया ! तुम्हारे भाईयोंकी बात तो सुनो ये किस प्रकार बोल रहे हैं । तब अर्ककीर्ति कहने लगा कि पिताजी ! वे ठीक बोल रहे हैं। शायद आप अपने भाईयोंको रोकनेका प्रयत्न किसी कारणसे उस दिन नहीं किया होगा ।

भरतजीने उत्तरमें अर्ककीर्तिसे कहा कि बेटा ! तुमने भी तुम्हारे भाईयोंने जो कहा उसे ही समर्थन किया। क्या उस दिन मैंने अपने भाईयोंको रोका नहीं होगा ! परंतु यह बात नहीं है। बेटा ! आज तुम्हारे जितने भी सहोदर है वे तुम्हे देखते ही मेरे समान ही विनय करते है। परंतु मेरे भाईयोंकी वह दशा नहीं है। क्यों कि तुम्हारे सदृश पुण्यको मैंने नहीं पाया है।

अर्ककीर्ति—परमात्मन् ! यह आपने क्या कहा ! आप ही लोकमें पुण्यशाली है। मै अधिक पुण्यशाली कैसे होसकता हूं !

भरतजी—लोकमें भले ही मुझे बडा कहें, पुण्यशाली कहें, परंतु सहोदरोंकी भक्ति पानेमें तुम लोकमें सबसे बडे हो। देखो तो सही, तुम्हारे भाईयोंको यह भी ख्याल नही है कि हम सब सौतेली माके पुत्र है। सबके सब प्रेमसे तुम्हारे साथ रहते है। परंतु एक गर्भज होनेपर भी मेरे भाई तो मेरे साथ नहीं रहते। एक हजार दो सौ भाई तुम्हारी आज्ञाको शिरोधार्य करके तुम्हारे साथ रहते हैं। परंतु मेरे तो सौ भाई होनेपर भी मेरे साथ प्रेमसे वर्ताव नहीं करते। मै तो उनकी हितकामना ही करता हूं। परंतु मेरे साथ उनकी भलाईका व्यवहार नहीं है। तथापि मै उस ओर उपेक्षा करके चलता हूं। जिन छह भाइयोने दीक्षा ली वे तो अत्यंत विनयी थे। और मुझपर उनकी अतिशय भक्ति थी। मैने उनको अनेक प्रकारसे रोकनेके लिए प्रयत्न किया। परंतु मुझे स्वपरोपकारकी अनेक बाते कह कर वे आदि प्रभुके साथ दीक्षित हो ही गये। क्या करें। उनको नमोस्तु अर्पण करता हूं। परंतु अब बाकी जो रहे हुए भाई है उनके अंतरंगका क्या वर्णन करूं ? वे महागर्वी है। मुझे अनुकूल नहीं रहना चाहते है। इन बातोंको बाहर कहीं नहीं बोलना। आप लोगोंके मनमें ही रखकर समझ लेना। इत्यादि अनेक प्रकारसे बच्चोंको समझाया।

उत्तरमें अर्ककीर्ति कहने लगा कि अरहंत ! क्या आपके और काकावोंके मनमें अनुकूलवृत्ति नहीं है यह बडे दुःखकी बात है । इत्यादि प्रकारसे वार्तालाप करते हुए सेनाकी ओर आरहे थे । सेनास्थान अब बिल्कुल पासमें है । सेनामें सभी सम्राट्की प्रतीक्षा कर रहे थे । तीर्थगमनसे लौटे हुए चक्रवर्तिका मंत्री, सेनापति, मागध, हिमवंत देव, विजयार्ध देव, आदि प्रमुखोंने असंख्यात सेना के साथ स्वागत किया । सर्वत्र जय जयकार होने लगा । सर्वत्र शृंगार कराया गया था । समस्त सेनावोंके ऊपर जिनपादगंधोदकको क्षेपण कर भरतजीने यह भाव व्यक्त किया कि मेरे आश्रित समस्त प्राणी मेरे समान ही सुखी होवें । सभी प्रजावोंने सम्राट्की प्रशंसा की । सेना का उत्साह, विनय, भक्ति आदि को देखते हुए सम्राट् महलमें प्रवेश कर गये । वहांपर राणियोंका उत्साह और ही था । वे स्वागतके लिए आरती दर्पण वगैरे लेकर खडी थीं । उन्होंने बहुत भक्तिसे भरतजीकी आरती उतारी । समवसरणकी पवित्रभूमिसे स्पृष्ट पवित्र चरणकमलोंको राणियोंने स्पर्श किया । पुत्रोंने भी मातावोंके चरणोंमें ढोक देकर समवसरणगमन, जिनपूजन आदि सर्व वृत्तांतको कहनेके लिए प्रारंभ किया । सब लोग इच्छामि, इच्छामि कहते हुए सम्मति देरहे थे । जिस समय मातावोंके चरणोंमें वे पुत्र नमस्कार कर रहे थे, उस समय वे मातायें कह रही थीं कि आप लोग आज हमें नमस्कार न करें । क्यों कि आज आप लोग हमारे पुत्र नहीं हैं । तीर्थ पथिक हैं । इसलिए तुमलोगोंको हमें नमस्कार करना चाहिये । इत्यादि कहते हुए रोक रही थी । तथापि वे पुत्र नमस्कार कर रहे थे । भरतजीको यह दृश्य देख कर आनंद आरहा था ।

पुत्रवधुवोंने भी आकर भरतजीके चरणोंको नमस्कार किया । सबके ऊपर गंधोदक सेचनकर भरतजीने आशिर्वाद दिया । इस प्रकार बहुत आनंद के साथ मिलकर नित्यक्रियासे निवृत्त होकर सबके साथ भोजन किया व संतोषसे वह दिन व्यतीत किया ।

भरतजीका भाग्य ही भाग्य है। षट्खंडविजयी होकर आते ही त्रिलोकी नाथ तीर्थकर प्रभुका दर्शन हुआ। समवसरणमें पहुंचकर वंदना की पूजा की, स्तोत्र किया। इस तरहका भाग्य सहज कैसे प्राप्त होता है भरतजीकी रात्रिंदिन इस प्रकारकी भावना रहती है। वे सतत परमात्मासे प्रार्थना करते है कि:—

" हे परमात्मन्! तुम सदा पापको धोनेवाले परमपवित्र तीर्थ हो, परमविश्रांत हो! इसलिए तुम मुझसे अभिन्न होकर सदा मेरे हृदयमें ही बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! तुम ज्योतिस्वरूप हो! तेजस्वरूपहो, लोकविख्यात हो, तुम्हारी जय हो, मुझे नूतनमतिको प्रदान करो।

इसी भावनाका फल है कि उनको तीर्थकर परमेष्टिका दर्शन हुआ।

इति तीर्थागमनसंधिः

—+—

अंत्रिकादर्शनसंधिः

भरतजीकी आज्ञा पाकर सेनाने दूसरे दिन आगे प्रस्थान किया। स्थान स्थानपर मुक्काम करते हुए बहुत विनोद विलासके साथ अयोध्याकी ओर सेनाका प्रयाण होरहा है।

पोदनापुरमें समाचार मिला कि सम्राट् अब दिग्विजयसे लौट रहे हैं। पुत्रके द्वारा प्रेषित वस्त्राभूषणोंको माता यशस्वतीने व उनकी बहिन सुनंदादेवीने बहुत संतोषके साथ धारण किया, व पुत्रको देखनेकी इच्छा यशस्वती माताके हृदय मे हुई। अब ८-१० रोजमें भरतजी अयोध्यापरीमें पहुंच जायेंगे, तथापि तबतक ठहरनेकी दम नही है। आज ही जाकर पुत्रको आख भरकर देखूं, यह इच्छा यशस्वतीके मन में हुई। बहिन सुनंदादेवीने कहा कि जीजी! अभी गडबड क्या है? जब अयोध्यानगरमें सब लोग आजावें, तब अपन सब मिलनेके लिए जावेंगे! आज जानेकी क्या जरूरत है। उत्तरमें यशस्वतीने कहा कि बहिन्! मेरा भरत जहा रहता है वही मेरे लिए अयोध्यापुर है। इसलिए मै तो आज जाती हूं। आपलोग अयोध्यापुरमें पहुचनेके बाद आवें। बाहुबलिने आकर मातासे कहा कि मै आज दूतोंको आगे भेजकर समाचार कहला देता हूं। आप कल जावें। यशस्वतीने उत्तरमें कहा कि नहीं, समाचार भेजनेकी आवश्यकता नहीं, मै गुप्तरूपसे जाना चाहती हूं। एकाएक अकस्मात् जानेसे भरतको व उसकी राणियोंको आश्चर्य होना चाहिये। पहिलेसे समाचार भेजनेमें वह सेनाके साथ स्वागतके लिए आयगा, यह मैं नहीं चाहती हूं। साथमें विमानपर चढकर जावूंगी। पल्लकिसे जानेमें देरी लगेगी इत्यादि प्रकारसे बाहुबलिको समझाकर कुछ सेवक, विश्वासपात्र आदिको लेकर आकाश मार्गसे गमन कर गई। अब सेनास्थान सन्निकट है।

आकाश प्रदेशसे ही भरतकी उस विशालसेनाको देखकर यशस्वतीके मनमें अतिहर्ष होरहा है ।

आकाश प्रदेशमें आते हुए विमानको देखकर समस्त सेनाको भी आश्चर्य होने लगा । हम लोग दक्षिणकी ओर जारहे है । दक्षिणकी ओरसे ये कौन आरहे हैं ! बाजा नहीं, कोई खास निशान नहीं, केवल विमान ही आरहा है, इत्यादि प्रकारसे जब अश्चर्यचकित होकर विचार कर रहे थे तब पासमें आनेके बाद साथ के वीरोंने कहा कि सम्राट्की माता आरहीं हैं । एकदम सेनाके समस्त वाद्य बजने लगे । सब लोग हर्षसे जय जयकार करने लगे । कोई हाथीपर चढकर, कोई घोडे पर चढकर, कोई रथपर और कोई विमानपर चढकर माताके स्वागतके लिए गये । कोई आकाशमें नमस्कार कर रहे हैं तो कोई जमीन पर । इस तरह सारी सेनामें एकदम खलबली मचगई । साडेतीन करोड प्रकारके बाजे एकदम बजने लगे ।

भरतजीको अकस्मात् उपस्थित इस घटनासे आश्चर्य हुआ । पासमें खडे हुए सिपाहीको तलाश करने के लिए इशारा किया । वह मुख्य दरवाजेपर जाकर देखता है तो सेना में एकदम खलबली मची हुई है । वहां कोई एक दूसरेका इस समय सुननेको भी तैयार नहीं है । दूतने आकर उत्तर दिया कि स्वामिन् ! सेना आपेसे बाहर होगई है । कोई भी उत्तर नहीं देरहा है । सब लोग गडबडीमें पडगये है । तब भरतजीने विचार किया कि हम लोग दिग्विजयसे दर्पित होनेसे बेफिकर होकर जारहे थे । कदाचित कोई शत्रु इस मौके को साधन कर हमला करनेके लिए तो नहीं आये हैं । अपनी राणियोंको अभय प्रदानकर सम्राट्ने सौनंदक नामक खड्ग को हाथमें लिया । उस एक खड्गको लेकर भरतजी बाहर आये । एक दफे उस खड्गको

जोरसे फिराकर देखा तो एकदम प्रलयकालकी अग्निने जीभ बाहर निकाली हो ऐसा मालुम हुआ। भूकंप हुआ। समुद्र उमडगया। करोडों भूत चिल्लाने लगे। लोकमे भय छागया। भरतजी जिस ढंगसे आरहे थे उससे अनुमान किया जाता है कि शायद उस समय वे मनमें विचार कर रहे होंगे कि यदि कोई राक्षस भी इस समय मेरे सामने आवे तो उसको मै पाक्षिके समान भगावूंगा। अर्थात् इतनी वीरतासे आरहे थे।

इस प्रकार जगदेकवीर सम्राट् महलके मुख्यदरवाजेपर जब पहुंचे तब अर्ककीर्ति आदि पुत्रोने आकर नमस्कार किया। तदनंतर गण-बद्धदेवोने आकर नमस्कार किया। उसके बाद अनेक शूरवीर आये। मालुम हुआ कि मातुश्री आगई है।

भरतजीके आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा! हा! मेरी माताजी इस प्रकार आगई! इस प्रकार कहकर हसते हुए खड्गको सेवकके हाथमें देकर उन शूरवीरोंका उचित सत्कार किया। इतनेमें विमानने आकर महलके अंगणमे प्रवेश किया। उससे देवांगनाके समान यश-स्वती देवी उतरगई। भरतजीने जाकर साष्टांग नमस्कार किया। माताने रोका। परंतु भरतजीने कहा कि ऐसा नहीं होसकता है, मै नमस्कार करूंगा। यशस्वतीने कहा कि तथापि इस रास्तेमें क्यों? महलमें चलो। इस वादकी बीचमे ही अर्ककीर्तिने एक कपडा वहापर बिछादिया व कहा कि पिताजी! अब नमस्कार करो। भरतजीने भक्तिभरसे नम-स्कार किया। भरतजीको हाथसे उठाकर माताने आशिर्वाद दिया कि बेटा! चढती हुई जवानी न उतरे, एक भी बाल सफेद न हो, सुखसे बहुत दिनतक षट्खंडको अखडरूपसे पालन करते हुए चिरकालतक रहो, बादमे क्षणमात्रमें मुक्तिलक्ष्मीको प्राप्त करो। उस समय दोनोंको रोमांच हुआ। आनंदाश्रु बहने लगा। मातापुत्रका मोह अद्भुत है।

यशस्वती देवीने कहा कि बेटा ! तेरा वियोग होकर साठ हजार वर्ष हुए। आज मुझे संतोष हुआ, आज मिले ।

अरहंत ! माता ! क्या साठ हजार वर्ष हुए ? भरतजीने आश्चर्यसे पूछा। उत्तरमें यशस्वतीने कहा कि बेटा ! हां ! बराबर है । मै प्रतिदिन गिनती थी ।

तदनंतर अर्ककीर्तिने आकर दादीके चरणोमें नमस्कार किया, उसी प्रकार बाकीके पुत्रोंने भी आकर नमस्कार किया । भरतजीने कहा कि माताजी ! जब दिग्विजयके लिए नगरसे निकले तब इसी अर्ककीर्तिका पालणा हमारे साथ था। यह उससमय बच्चा था । ये सब बादमें उत्पन्न हुए उसके सहोदर है । तब माताने अर्ककीर्ति व अन्य पुत्रोंको आशिर्वाद देते हुए कहा कि बेटा ! तुम सरीखे भाग्यशाली लोकमे कौन है ? ये सब नरलोकके नहीं है, ये सुंदर पुत्र सुरलोकके मालुम होते है । सुरलोकसे तो नहीं लाये हो न ? बोलो तो सही ।

भरतजीने उत्तरमें कहा कि माताजी ! पुत्रोंकी बात जाने दीजिए, आज आप विना सूचना दिए ही एकाएक कैसे आई ? इस प्रकार आना क्या उचित है ? सेनास्थान का श्रृंगार नहीं किया, नृत्यवाद्य की कोई व्यवस्था नहीं की गई, आप के स्वागत के लिए मै नहीं आ सका । बडे २ राजा सजधजकर नहीं आ सके, मै चाहता था कि आप के स्वागत के लिए असंख्यात रथ व पल्लकियों को लेकर आवूं। स्थान स्थान पर अनेक दृश्यपात्रों की व्यवस्था नहीं हो सकी । क्या कहूं ? मुझे आप की सेवा करने का भाग्य नहीं है । हमारी सेना इस सेवाके लिए योग्य नहीं है । यह गीत पात्र भी योग्य नहीं है । बडा दुःख होता है । मैं अनेक प्रकार से सेवा करने की भावना कर रहा था, परंतु उसे देखने की आकांक्षा

आपके हृदयमें नहीं है। फिर आपने मुझे जन्म क्यों दिया ? षट्खंडको पालनेके लिए दूध क्यों पिलाया ? कहिए माताजी !

माता यशस्वतीने उत्तर में कहा कि बेटा ! इस प्रकार दुःख मत करो, मुझे यह सब लोकांत व्यवहार पसंद नहीं है, इसलिए एकांतमें आकर तुमसे मिलना चाहती थी, उसी में मुझे संतोष है। जब मैं इस प्रकार आरही थी, तुम्हारी सेनाके वीर बडे धूर्त मालुम होते हैं। उन्होंने एकदम हल्ला मचाया। साथमें मेरे साथ आये हुए तुम्हारे विश्वासपात्रोंने भी उनके साथ हल्ला मचाया। ये भी धूर्त हैं।

तब उन वीरोंने कहा कि स्वामिन् ! छोटे मालिकने (बाहुबलि) वहीं पर कहा था कि पहिलेसे हम समाचार भेजते हैं, आप बादमें जावें। परंतु माताजीने माना नहीं। इसलिए हम लोगोंने सिर्फ कहा कि सम्राट्की माता आगई है। इतनेमें सेना एकदम उमडगई। हम क्या करें ?

सम्राट्ने उनसे प्रसन्न होकर कहा कि तुमलोगोंने अच्छा किया। नहीं तो माताजी गुप्तरूपसे ही आती। बादमें सम्राट्ने उनको अनेक उत्तमोत्तम पदार्थों को इनाममें दिये। माताजी ! आप तो एकांतमें आना चाहती थी, परंतु आपका विचार लोकको मालुम नहीं था इसलिए उसने अपनी इच्छानुसार प्रकट कर ही दिया। हसते हुए भरतजीने कहा।

लोकमें सर्वश्रेष्ठ आप जिससमय एक गरीब स्त्रीके समान आरही थी, इस विपरीतवर्तनसे भूकंप हुआ, सेनामें एकदम खलभली मच गई। विशेष क्या ? मैं स्वयं खड्ग लेकर यहांतक आया। भरतजीने पुनः कहा।

उत्तरमें यशस्वती माताने भरतकी पीठपर हाथ फेरते हुए कहा कि बेटा ! बस ! तुम्हारे तेजको छिपाकर मेरी ही प्रशंसा करते जारहे हो।

तदनंतर भरतने हाथका सहारा देकर बाहरके आंगन से अंदरके आगनमें मातुश्रीको पधराया। साथ ही जाते समय छोटी मा (सुनंदा) व छोटेभाई (बाहुबलि) का कुशल वृत्तांत भी पूछ लिया। आगे जाकर वीचका जो दिवान खाना आया वहापर एक उत्तम आसनपर मातुश्रीको बैठाल दिया। और दोनों ओरसे अपने पुत्रोंको खडाकर भरतजी माताकी भक्ति करने लगे।

इतनेमें भरतजीकी राणिया माताके दर्शनके लिए बहुत उत्साहके साथ आई।

बहुवोंको मालुम हुआ कि सासु आई है। सब लोग बहुत हर्ष के साथ मंगल द्रव्योंको अपने हाथमें लेकर सासुके दर्शनके लिए आई। यशस्वती महादेवीको भी अपनी हजारों बहुवोंको देखकर बडा ही हर्ष हुआ। मुखमें आनंदकी हंसी, शरीरमे रोमांच व आखोमें आनंदाश्रुको धारण करते हुए उन राणियोंने बहुत भक्तिसे सासुके चरणोंको नमस्कार किया। सबको यशस्वतीने आशिर्वाद दिया। वंदना व कुशलपृच्छना होनेके बाद उन राणियोंने प्रार्थना की कि हम लोगोंने उस दिन दिग्विजय प्रस्थानके समय पुनः आपके चरणोंके दर्शन होनेतक जो नियम लिए थे वे सब आज पूर्ण हुए। आज हम उन नियमोंको छोड देती है। यशस्वतीने तथास्तु कहकर अनुमति दी। उन बहुवोंने पुनः कहा कि देखा माताजी ! आपसे हम लोगोंने व्रत ग्रहण किए थे उसके फलसे हम सब लोग कोई प्रकारके कष्टके विना सुरक्षित आई हैं। कभी शिरदर्दकी भी शिकायत नहीं रही। बहुत आनंदके साथ हम लोग लौट आई है।

भरतजीने पूछा कि माताजी ! इन्होंने क्या व्रत लिए थे ? तब

यशस्वतीने कहा कि किसीने फलमें, किसीने वस्त्रमें और किसीने खाने-पीनेके पदार्थोंमें नियम लिए थे। मैंने उसी समय इन लोगोंको इनकार किया था। परंतु इन्होंने माना नहीं। वत ले ही लिए। भरतजीने कहा कि ओहो! माताजी इनकी भक्ति अद्भुत है, मेरे हृदयमें इन सरीखी भक्ति नहीं है। मैंने कोई नियम ही नहीं लिया था। मैं कितना पापी हूं? तब उत्तरमें यशस्वतीने कहा कि बेटा! दुःख मत करो। इनकी भक्ति और तुम्हारी भक्ति कोई अलग २ नहीं है, इनकी भक्ति ही तुम्हारी भक्ति है।

राणियोंके नमस्कार करनेके बाद चक्रवर्तिके पुत्रवधुवोंने आकर नमस्कार किया। विनोदसे उनका परिचय कराते हुए सम्राट्ने कहा कि माताजी! आपकी बहुवोंको आपने उस दिन आशिर्वाद दिया था तो वे उसके फलसे बहुत आनंदके साथ समय व्यतीत कर रही हैं। अब आप इन मेरी बहुवोंको भी आशिर्वाद देवें ताकि वे भी सुखी होवें। तब यशस्वती हंसती हुई कहने लगी कि बेटा! अच्छी बात, मेरी बहुवोंके समान ही तुह्मारी बहुएं भी सुखसे समयको व्यतीत करें। सब लोग खिलखिलाकर हंसे।

सब राणिया आगई। परंतु पट्टरानी सुभद्रा देवी अभीतक क्यों नहीं आई, इस बातकी प्रतीक्षा सब लोग कर रहीं थी। इतनेमें अनेक परिवार स्त्रियोंके साथ युक्त होकर सुभद्रादेवी आगई। भरजवानीसे युक्त प्राकृतिक सौंदर्य, उसमें भी दिव्य आभरणोंका लावण्य, आदिसे वह बहुत ही सुंदर मालुम होरही थी। सासुने आंख भरकर बहुको देखा। परिवार स्त्रिया बिरुदावली बोल रही थी। कच्छेंद्रपुत्री, सुभद्रादेवी, गुणरत्नगुच्छसे शोभित स्त्रीरत्न आरही है। सावधान हो।

सभी राणियोंने पूछा कि जीजी! आपने देरी क्यों लगाई? जल्दी क्यों नहीं आई। उत्तरमें सुभद्रादेवीने कहा कि मैं अंतमें आई हुई हूं। ऐसी अवस्थामें तुम लोगोंके बाद ही मेरा आना उचित है। सुभद्रादेवीने

अपने पिताकी सहोदरी यशस्वतीके चरणोंमें बहुत भक्तिसे नमस्कार किया। यशस्वतीको देखनेपर पिताको देखनेके समान उसे हर्ष हुआ। यशस्वतीको सुभद्रादेवीको देखनेपर अपने भाईको देखनेके समान हर्ष हुआ। बहुत हर्षसे सुभद्रादेवीको आलिंगन देकर आशिर्वाद दिया। देवी, तुमको मैंने बचपनमें देखा था। फिर बादमें अपन दूर हुई। अब जवानीमें फिरसे तुम्हे देखनेका योग मिला, मेरे भाईको देखनेके समान होगया। दोनोंके आखोंसे आनंदाश्रु पडने लगा। इतनेमें घंटानाद हुआ। सूचना थी कि अब भोजनका समय होगया है। सब लोगोंको उससमय यशस्वती माताके आनेसे महलमें महापर्व के समान आनंद होने लगा। सब स्त्रियां वहांसे जाकर स्नान देवपूजा वगैरेसे निवृत्त हुई व महाविभवके साथ भोजनगृहमें प्रविष्ट हुई।

भोजनशालामे झूलेके ऊपर निर्मित एक सुंदर आसनपर सब वहुवोंकी प्रतीक्षामे यशस्वती महादेवी बैठी है। भरतजीकी इच्छा हुई कि माताजीकी पूजा करे। इसलिए पासमें ही एक सिंहासन रखवाकर मातासे कहा कि आप इसपर विराजमान होजावें। यशस्वतीने कहा कि उस दिन पर्वोपवासके बहानेसे पूजाके लिए स्वीकृति दी थी। आज मै नहीं स्वीकार करूंगी। मेरी पूजाकी क्या जरूरत ? भरतजीने कहा कि माताजी ! एकदफे मेरी इच्छाकी पूर्ति और कीजिए। मुझे पूजा करने दीजिए। माताने इनकार किया व वहींपर बैठी रही। तब सम्राट्ने अर्ककीर्तिसे पूछा कि बडे भैया ! तुम बोलो ! अब क्या उपाय करना चाहिये ? उत्तरमें अर्ककीर्तिने कहा कि पिताजी ! आज्ञा दीजिए। मै उस आसनसहित दादीको उठा ले आता हूं। भरतजीने आदिराजसे पूछा तो उसने कहा कि पिताजी ! अपनको पूजा [illegible] है, दादीको वहीं बैठे रहने दीजिए। अपन वहींपर सामने बैठकर [illegible] करेंगे। इसप्रकार भरतजीके कानमें कहा। अन्य पुत्रोंको भी [illegible] पूछा तो उन्होंने कहा कि हमारे बडे भाईयोंने जो उपाय कहा [illegible]

अधिक हम क्या कह सकते हैं ? भरतजीने अर्ककीर्ति व आदिराज से कहा कि बेटा ! तुम लोगोंने जो तंत्र कहा है वह ठीक तो है। परंतु उस तंत्रसे भी बढकर मंत्र है। उसका भी प्रभाव जरा देखें। तंत्रोंके प्रयोगके लिए सारे शरीरका उपयोग करना पडता है। परंतु मंत्रके प्रयोगके लिए केवल ओठको हिलानेसे काम चल सकता है। मंत्रके रहते हुए तंत्रके झगडेमें पडना ठीक नहीं है। इसलिए आप लोग मंत्र के सामर्थ्यको देखें।

माताजी ! आप पूजाके लिए उठें व इस सिंहासनपर विराजमान होजावे। माताने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता।

" ओं महा हंसनाथाय नमः स्वाहा, माताजी ! उठें, यदि नहीं उठे तो भवदीय भरत भय्याकी शपथ है स्वाहा " भरतजीने मंत्र पठन किया। माता एकदम उठकर खडी होगई।

" ओ परमहंसनाथाय नमः स्वाहा, माताजी, धीरे धीरे चलें, यदि नहीं चलें तो भवदीय चक्राधिपतिकी शपथ है स्वाहा " (दूसरा मंत्र) माता धीरे धीरे चलने लगी, सभी स्त्रिया हंसने लगी।

'आपके भरतकी शपथ है, इस आसनपर चढ जाईये स्वाहा' स्त्रियां हंसती हुई हाथ जोड रही थी, यशस्वती उस आसनपर चढकर बैठ गई।

" माताजी ! भवदीय बडे बेटेकी शपथ है, भरतके बडे बेटेकी शपथ है, मेरे छोटे बेटेकी शपथ है, आपके छोटे बेटेकी शपथ है आप स्वस्थ बैठी रहे, ठ ठ स्वाहा "।

ऊपरके शब्दोंको पुत्र व भाईयोंको बुलाते समय प्रेमसे भरतजी प्रयोग करते थे।

भरतजीके मंत्रको देखकर एकदम सब लोग हंस गए, यशस्वती भी हंसती हुई कहने लगी कि बेटा ! बहुत अच्छा मंत्र सीखे हो ! अब किसीकी शपथ नहीं रही क्या ?

भरतजीने कहा कि नहीं ! नहीं ! अब आप विराजे रहें। अर्क-

कीर्तिसे कहा कि बेटा! देखा! मंत्रके सामर्थ्यको? सब पुत्रोंने हंसते हुए कहा कि पिताजी! आपके मंत्रको हमने देखा, सचमुचमें आश्चर्य की बात है। अर्ककीर्तिने अपने दुपट्टेको भरतजीके चरणोंमें रखकर इस प्रसंगमें नमस्कार किया। आदिराजको आदि लेकर बाकीके सभी पुत्रोंने अपने उत्तरीयवस्त्रोंको चरणोंमें रखकर नमस्कार किया। अपने बडे भाईयोंको देखकर गुणराज नामक छोटे बालकने अपने पहने हुए शर्टको निकाल कर वहां रखकर नमस्कार किया। गुरुराज नामक बालकके शरीर पर शर्ट भी नहीं था। उसने अपने दासीके हाथसे एक हाथरुमालको छीनकर उसे रखकर नमस्कार किया। सबको आश्चर्य हुआ। इतनेमें सखराज नामक छोटा बच्चा आया। उसने हाथमे लिए हुए गिल्ली-डंडेको वहां रखकर नमस्कार किया। सब लोग हंसने लगे। सुखराज नामक बालकने उसके आधे खाए हुए केलेको रखकर नमस्कार किया।

इस प्रकार सभी पुत्रोंके नमस्कार करनेपर राणियोंसे भरतजीने प्रश्न किया कि इस प्रकार पुत्रोंके नमस्कार करनेका क्या कारण है? तब देवियोंने कहा कि हम नहीं जानती है। "क्या सचमुचमें आप लोग नहीं जानती है?। तुह्मारी सासूके चरणोकी शपथ?" भरतजीने कहा। "इसमें शपथकी क्या जरूरत है? पिताके चरणोंमें नमस्कार करना क्या पुत्रोंका कर्तव्य नहीं है? इसमें आश्चर्यकी क्या बात है?" राणियोंने कहा। "तब इन छोटे बच्चोंने क्या समझकर नमस्कार किया होगा?" भरतजीने पुनः पूछा। बडे भाईने नमस्कार किया, इसलिए सब लोगोंने नमस्कार किया। यह सब बडे भाई अर्ककीर्तिकी महिमा है। राणियोंने कहा। यह गलत बात है। आपलोग अपने बडे बेटेकी प्रशंसा करती है। बस! और कोई बात नहीं, इसप्रकार भरतजीने कहा।

यशस्वतीने बीचमें ही कहा कि बेटा! तुम विवेकी हो, इसलिए

तुम्हारे पुत्र भी तुम्हारे ही समान हैं । और कोई बात नहीं ।

माताजी ! उन्होंने अपने बडे बेटेकी प्रशंसा की तो आपने अपने बडे बेटेकी प्रशंसा की, यह मुझे पसंद नहीं आई । यह सब भरतेशकी माता की महिमा है, और कोई बात नही है । भरतजीने कहा

इसबातको वहा उपस्थित सर्व राणियोने, पुत्रोने स्वीकार किया, सभी पुत्रोको एक २ दुपट्टा मगाकर दिये ।

यशस्वतीने कहा कि बेटा ! तुम यह सब क्या कर रहे हो ? बचपन अभी तुम्हारी गई नहीं है । यह एकांत अभी नहीं रहा । लोकांत हुआ । इसलिए अभी यह कार्य मत करो ।

माताजी ! आपके सामने मै बच्चा ही हूं, राजा नहीं हूं । यदि यहापर बच्चोंकासा व्यवहार न करूं तो और कहां करूं ? बाकी स्थानमें गौरवसे रहना चाहिये इस बातको मैं जानता हूं । भरतजीने कहा ।

फिर मंत्रके बहानेसे मुझे फसाया क्यों ? क्या यही मंत्र था ? माताने कहा ।

क्या मेरे पास मंत्र सामर्थ्य नहीं है ? देखियेगा । अच्छा ! सौ औरतें एक पंक्तिमें खडी होजाये । इस प्रकार कहते हुए सौ दासियोंको एक पंक्तिमें खडा कर दिया । भरतजीने अपनी थोडीसी जीभ हिलाई तो वे सबके सब ऊपरकी महलमें जाकर बैठ गईं । फिरसे मंत्र किया पुनः नीचे आकर बैठ गईं । सब स्त्रियोंको आश्चर्य हुआ ।

माताजी ! इस भूमंडलको इधरसे उधर करनेका मंत्र मेरे पास है । क्यों कि मैं गुरु हंसनाथार्थि हूं । परंतु वे सब मंत्र आपके पास नहीं आ सकते । इसलिए मैने शपथमंत्रका प्रयोग किया । भरतजीने कहा देखो, ये दासिया मेरे विनोदको देखकर हस रही हैं । अच्छा ! इनके मुखको टेढा कर देता हूं, इस प्रकार कहते हुए मंत्र किया तो उन सौ दासियोंके मुख टेढे हुए । पुनः दया कर मंत्र किया तो सीधे

हुए। इसमें आश्चर्यकी क्या बात है ? लोकके सभी व्यंतर उनके सेवक हैं। फिर वे ध्यानविज्ञानी क्या नहीं कर सकते।

पुनः कुछ सोचकर उन्होंने मंत्र किया तो पासमें खडी हुई मधुवाणीका मुख एकदम टेढा हो गया। सबके सामने लज्जासे आकर मधुवाणीने भरतजीके चरणोंमें नमस्कार किया। भरतजीने उसे मंत्रसे सीधा कर दिया। कहने लगे कि मधुवाणी ! भूल गई, जिस समय मेरा विवाह होरहा था उस समय तुम कितनी टेढी बोली थी। उसीके फलसे आज तुह्मारा मुख टेढा होगया। मधुवाणीने लज्जासे कहा कि राजन्! पहिले टेढी बोली तो क्या हुआ। जब आप सासुसे मिलनेके लिए गये तब आपकी खूब प्रशंसा की थी। तथापि आपने सबके सामने मेरा इस प्रकार अपमान कर ही दिया।

भरतजीने उत्तरमें कहा कि पहिले टेढी बातोंको बोली उसके फलसे मुख टेढा हुआ। बादमे प्रशंसा की। उसके फलसे सीधा हुआ। अब चिंता क्यों करती है ?

राजन् ! आपने मुझ गरीब दासीपर मंत्र चलाया। आपके ऊपर भी मंत्र चलानेवाली देवता मेरे पास है। समय आनेपर देखा जायगा। अभी रहने दीजिए। इस प्रकार मधुवाणीने कहा।

भरतजीने उसे अनेक रत्न व वस्त्रोंको देते हुए कहा कि अच्छा! रोवो मत ! खुश रहो।

इसप्रकार विनोदके बाद सर्व चिंतावोंको छोडकर बहुत भक्तिसे माताकी पूजा की। राणियोंने बहुत भक्तिसे आरती उतारी। अपने पुत्रोंके साथ जलगंधाक्षतपुष्पान्नदीपगुग्गुलफल समूहसे माताकी पूजाकर वंदना की। कुलपुत्रोंकी रीत कुछ और होती है। पश्चात् सब लोगोंने मंगलासनोंपर बैठकर भोजन किया, इससे और क्या वर्णन करे ? भरतचक्रवर्तिके भवनका भोजन सुरलोकके अमृतभोजनके समान है। उसे वर्णन करनेमें देरी लगेगी।

उस अमृतान्नको सेवनकर तृप्त हुए, इतना कहनेसे सभी विषयोंका अंतर्भाव होजाता है।

विनोदसे सबको तृप्ति हुई थी, पूजनमें तृप्ति हुई, भोजनमें भी तृप्ति हुई, सबने हाथ धोलिया, यह सब माताके आगमन की खुशी है। क्या ही विचित्रता है ? प्रतिसमय आनंद ही आनंद भरतजीके भवनमें छाया हुआ रहता है। दिन दिनमें, समय समयमें नूतन आनंदमय भावोंको वे धारण करते हैं। इसका कारण क्या है ? माताका दर्शन उन्हे अचिंतित रूपसे हुआ। कितनी भक्ति ? कितना आनंद ? वे सदा उसी प्रकारकी भावना करते रहते हैं।

हे परमात्मन् ! तुम बात बातमें, क्षणक्षणमें, नव्य व नूतन आनदके भावोंको उत्पन्न करते हो, सचमुचमें तुम सातिशय स्वरूप हो, अमृतनिकेतन हो ! इसलिए मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन् ! तुम मंगलाचार्य हो ! मंदरधैर्य हो, भव्यांतरंगैकगम्य हो ! सुसौम्य हो, संगीतरसिक हो, चिद्घनलिंग हो, हे निरंजनसिद्ध ! मुझे सन्मति प्रदान करो "।

इसी भावना का फल है कि भरतजीके हृदयमें समय समयमें
नव्य व दिव्यसुखके तरंग उठते रहते हैं।

इति अंबिकादर्शनसंधिः

कालदेवास्थान † संधिः ।

माताके दर्शन कर भरतजी परम संतुष्ट हुए । दूसरे दिन प्रस्थान भेरी बजाई गई । सेनाने आगे बहुत वैभवके साथ प्रस्थान किया । सेनाके आगे चंद्रध्वज सूर्यध्वज आदिके साथ में चक्ररत्न जा रहा था। देखते समय ऐसा मालुम हो रहा है कि साक्षात सूर्य ही चल रहा हो।

आठ दस मुक्काम को तय करते हुए पौदनपुर के पाससे जिस समय चक्रवर्तिकी सेना जा रही थी एकदम वह चक्ररत्न रुक गया । उस चक्ररत्न का नियम है कि जिस राज्य में चक्रवर्ति के भक्तराजा है वहां तो आगे बढता है, और जहांका राजा चक्रवर्ति के लिए अनुकूल नहीं है वहां वह आगे बढ नहीं सकता है । चक्रके एकदम रुकनेसे सब को आश्चर्य हुआ ।

भरतजीने मंत्री को बुलाकर पूछा कि मंत्री ! चक्ररत्न एकदम क्यों रुक गया ? उत्तर में मंत्रीने कहा कि आपके छोटे भाई बाहुबलि आदिके आकर नमस्कार करनेकी जरूरत है। इसलिए वह रुक गया है ।

सेना को वहींपर मुक्काम करनेके लिए आदेश दिया। बाद में बाहुबलि को छोडकर बाकीके भाईयोंको भरतजीने विजयपत्र भेजा व सूचित किया कि आप लोग आकर मुझे मिले व मेरी आधीनता को स्वीकार करें । उन भाईयोंको पत्र देखकर दुःख हुआ । राज्यके लोभ का उन्होंने परित्याग किया । उन के मन में विचार आया कि जब हमारे पिताके द्वारा दिये हुए राज्य हमारे पास है तो फिर हमे दूसरोंके आधीन होकर रहनेकी क्या आवश्यकता है । उत्तरमें कुछ न बोलकर सीधा कैलास-पर्वतकी ओर गए । वहांपर पूज्य पिता श्री आदिप्रभुके चरणोंमें दीक्षित हुए ।

९२ सहोदरोंने एकदम दीक्षा ली यह सुनकर भरतजी को मनमे दुःख हुआ, साथ ही उनके स्वाभिमान व वीरता पर गर्व भी हुआ । अब बाहुबलिको बुलानेका विचार कर रहे है । सबके पत्रमें यह लिखा

† आस्थान नाम दरबारका है।

था कि आप लोग आकर मेरी आधीनताको स्वीकार करें । इसलिए वे दीक्षित होकर चले गए । अब बाहुबलि को उस तरह लिखना उचित नहीं होगा । बहुत ऊहापोहके बाद यह निश्चय हुआ कि सर्व कार्यमें कुशल दक्षिणाक को वहांपर भेजा जाय । सम्राट्ने दक्षिणाकको बुलाकर आज्ञा दी कि तुम पोदनपुरमे जाकर किसी उपाय से बाहुबलिको यहा लेकर आओ । दक्षिणाकने भी तथास्तु कहकर पोदनपुरके अंदर प्रवेश किया । साथमें अनेक गाजेबाजे परिवारको लेकर गया । बहुत वैभवके साथ आरहा है । उसकी जो स्तुति कर रहे हैं उनको अनेक प्रकारसे इनाम देते हुए, सबको संतुष्ट करते हुए आगे बढ रहा है । उसे किस बातकी कमी है । चक्रवर्तिके खास मित्रोंमेंसे वह दाक्षिण है ।

गाजेबाजे के शब्दोंको बंदकर कामदेवके नगरकी शोभाको देखते हुए दक्षिणाक महलकी ओर जारहा है । नगरमें जहा देखो वहा भोगाग ही दिख रहे है । वहाके नगरवासी भोगमें मग्न है । उनकी वृत्तिको देखने पर मालुम होता है कि भोगके सिवाय अन्य पाठ ही उनको मिला नहीं है ।

कहीं गुलाबजलके कोटे भरे रक्खे है तो कहीं कपूरकी राशि दीखरही है । कहीं कस्तूरीके पहाड ही दिखरहे है । कहीं फल है तो कहीं भक्ष्य भोज्य दीखरहे हैं । कोई आपसमें बोलते हैं तो भी भोगकी ही बात । वही चर्चा । स्त्रियोंका ही विचार । साराश यह है कि नगरमें सर्वत्र भोगाग ही नजर आरहा था । योगाग नहीं । सर्वत्र अनुराग ही दृष्टिगोचर होता था वैराग्य नहीं । क्यों कि वह कामदेवकी ही तो राजधानी थी ।

इसप्रकार अनेक मोहलीलाओंको देखते हुए दक्षिणाक आदि कामदेव बाहुबलिकी राजमहलकी ओर आया । आपने साथके सेवक व परिवारोंको रोककर वह अकेला ही राजमहलके द्वारपर पहुंचा । मोतीसे निर्मित दरवाजा था । द्वारपालकको सूचना दी कि अंदर जाकर बाहुबली राजाको खबर दो । वह चलागया । बाहुबलिकी दरबारमें उस समय अनेक सुंदर स्त्रिया जारही थीं । उनके हावभावोंको देखते हुए दक्षिणाक वहांपर खडा था ।

कोई स्त्री कामदेवके लिए पुष्पमाला लेकर जारही थी । कोई जाईकी माला तो कोई मल्लिकाकी माला । कोई कुंकुमचूर्णको तो कोई गुलाबजलको लिए हुई थी । कोई चंदनको लेजारही है, कोई केतकी पुष्पको लेजारही है, कोई हाथमें वीणाको लेकर जारही है, साथमें उसके स्वरको ठीक करती हुई जारही है । उसका ध्यान इधर उधर बिलकुल नहीं है । किसी स्त्रीके हाथमें किन्नरि है । कोई यंत्र वाद्यको ली हुई है । इस प्रकार तरह तरहके भोगसामग्रियोंको लेकर वे स्त्रियां जा रही हैं, तरह तरह के वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित होकर अनेक अलंकारोंसे लोकको मोहित करती हुई अनेक स्त्रियां ऐठसे जा रही है । कोई स्त्री उस की चेष्टासे कह रही है कि मै यदि अपने हाथ से एक दफे प्रियंगुवृक्ष को स्पर्श करूं तो वह एकदम फल और फूल को छोडता है, फिर इतर विट पुरुषोंकी बात ही क्या है ? दूसरी कहती है कि मेरे आलिं-गन देनेपर कुरवक वृक्ष एकदम पल्लवित होता है, फिर पुरुषोको रो-मांच हो इस में आश्चर्य की बात ही क्या है ? तीसरी कहती है कि चित् तत्व के अनुभवसे शून्य तपस्वी तो मेरे पैरके आभूषण है । बाकीके लोगोंकी बात ही क्या है ? अंदर आत्मसुख और बाहर स्त्री सुख, इसे छोडकर बाकीकी कोई भी चीज संसारमें नहीं है । इस प्रकार बाहुबलि का तत्व है । इस का वर्णन उनमें से कोई स्त्री कर रही थी । इन सब बातों देखते हुए दक्षिणांक बहुत देरसे उसी दरवाजेपर खडा है ।

इतनेमें वह द्वारपालक आया । दक्षिणाक ! दरबारके समयसे पहिले ही तुम आगये । इसलिए थोडीसी देरी हुई । कदाचित् तुम्हारी उपेक्षा की ऐसा मत समझो । स्वामी दरबारमें विराजे हैं । तुम्हारे आगमन समाचार को सुनकर उन्हे बडी प्रसन्नता हुई । उन्होंने तुम को अंदर ले आनेकी आज्ञा दी है । यह कहते हुए वह शिपाही दक्षिणाकको अंदर ले गया । सोनेसे निर्मित दरवाजे, सोने की भींत, माणिक रत्न से निर्मित खंभे, कस्तूरिका लेपन, आदियोंको देखते हुए दक्षिणाक अंदर आरहा है। कहीं२ पिंजरेमें तोते लटके हुए दक्षिणांकको देखकर बोल रहे थे

" कौन है ? दक्षिणांक ! पंचशरके दर्शनके लिए आया है ? भरतेश कहां है ? यह क्यों आया है ? " इस प्रकार वे तोते बोल रहे थे।

दूसरी जाति के पक्षी बोल रहे थे कि शायद भरतका मित्र होनेसे गर्व होगा। परंतु यह कामदेवका दरबार है, जरा झुककर विनयसे आवो।

बाणपक्षी बोल रहा है कि कोई कवि वगैरेको न भेजकर भरतने चतुर दक्षिणांकको भेजा है, भरतेश सचमुचमें बुद्धिमान है।

एक कबूतर बिल्कुल दक्षिणांकके मुखपर ही आकर बैठ रहा था। दक्षिणांकने गडबडीसे हाथसे उसे भगाया. तब वे स्त्रियां एकदम खिलखिलाकर हंस पडी।

इस प्रकार कामदेवके आस्थानकी सभी शोभावोंको देखते हुए आगे बढरहा था, इतनेमें सिंहासनपर विराजमान बाहुबलिको देखा। उसके पीछेसे परदेके अंदर आठ हजार उस की स्त्रियां बैठी हुई है, सामनेसे मंत्री, सेनापति आदि बैठे हैं और बाकीके परिवार है। बाहुबलि अपने सौंदर्यसे सबको मोहित कर रहा था। स्वाभाविक सौंदर्य, भरजवानी, अनेक अलंकार आदियोंसे तीन लोकमें अपने वैशिष्ट्यको सूचित कर रहा था। उसके रूपको देखते ही वह चाहे स्त्री हो या पुरुष, रोमांच होना ही चाहिये। आठ स्त्रिया इधर उधरसे खडी होकर चामर ढाल रही है। बाकीकी स्त्रिया पंखेसे हवा कर रही हैं। कोई तांबूल लेकर खडी है तो कोई जल लेकर खडी है। उस दरबारमें किसी स्त्रीके हाथमें कोयल है तो किसीके हाथमें तोते है। ऐसी वेश्या स्त्रियोंसे वह दरबार एकदम भर गया था।

गायनको सुनते हुए अपने मित्रों के साथ विनोद व्यवहारको करते हुए बाहुबलि आनंदसे सिंहासनपर विराजमान है।

दक्षिणांकको देखकर वेत्रधरने जोरसे उच्चारण करते हुए बाहुबलिको सूचना दी कि हे कामदेव ! नरसुर नागलोकको उन्माद करनेवाले राजन् ! चिन्मार्गचक्रवर्तिका मित्र आरहा है, दाक्षिण्यपर है, क्षत्रिय है, अनेककलावोंमें दक्ष है, स्वामिकार्यमें हितकांक्षण करनेवाला है, यह दक्षिणांक आरहा है, स्वामिन् ! जरा इधर देखें।

बाहुबलि अब दक्षिणांकके आगमनको देखते हुए गंभीरतासे बैठ-गये। दक्षिणांकने पासमें आकर बाहुबलिके चरणोंमें एक कमल पुष्पको रखकर साष्टांग नमस्कार किया।

"चक्रेशानुज ! नरसुरनागभूचक्रमोहनमूलकर्ता! चक्रवाकध्वज! ते नमो नमः" कहते हुए उठ खडा हुआ। साथ ही नागर आदि अपने मित्रोंकी और बुद्धिसागर मंत्रीकी भेंटको भी समर्पण कर नमस्कार किया। बाहुबलिने हसते हुए उसे पासमें ही एक आसन दिलाया। वह उसपर हर्षसे बैठगया। दरबारमें एकदम निस्तब्धता छागई। सबलोग इस प्रतीक्षामे थे कि दक्षिणांक क्या समाचार लेकर आया है।

उस निस्तब्धताको भंग करते हुए बाहुबलिने प्रश्न किया कि दक्षि-णाक! कहांसे आये? और तुम्हारे स्वामीको कहां कहां फिराकर ले आये?

राजन्! मै कहांसे आया हूं? आपके दर्शन करनेका पुण्य जहांसे ले आया वहांसे आया हूं। स्वामीको फिरानेका सामर्थ्य किसके हाथमें? जो जगत्को ही अपनी चारों ओरसे फिराता है ऐसे कामदेवके अग्रज को इधर उधर लेजानेका सामर्थ्य किसके पास है?

दक्षिणाक! तुम, नागर, सेनापति व मंत्री आदि मिलकर तुम्हारे राजाको क्या कर रहे हैं? एक जगह उसे रहने नहीं देते। तुम्हारे राजाने जो कुछ भी किया, चाहे वह अच्छा हो या बुरा उसे प्रशंसा करते हो। सब दुनिया मे उसे फिराके लाये। शाहबास! इस प्रकार बाहुबलिने कहा।

राजन्! आप यह क्या कहते हैं? हम लोगोंने प्रशंसा की तो क्या आपके भाई फूलने वाले हैं? उत्तर में दक्षिणांक कह रहा था, बीचमें ही बात काटकर बाहुबलिने कहा कि जाने दो! इस बातको मैने यों ही विनोदसे कहा! बुरा मत मानो। फिर आगे हसते हुए कहने लगे।

दक्षिण! जगह जगह में जाकर गरीबोंसे हाथी घोडा, रत्न आदि लूट लेकर आये न? बेचारोंको खूब तंग किया न?

उत्तरमें दक्षिणने कहा कि राजन! गरीब कौन हैं? वे ...ंसार

और विद्याधर गरीब हैं ? म्लेच्छोंके पास किस बात की कमी है ? समुद्रमें, पर्वतोंमें, गंगा और सिंधु की शक्तिको पाकर वे बहुत समर्थ हो चुके हैं । उनके पास कौन मागने गये थे । भेरीके शब्दको सुनकर वे स्वतः घबराकर आये । और भक्ति से भेंट समर्पण किया था । उन्होंने जो कुछ भी भेंट में दिया उससे दुगुना चौगुना तुम्हारे भाईने उन को दिया है । जिसके हाथमें चिंतामणि रत्न मौजूद है वह क्या किसी वस्तुकी अपेक्षासे दिग्विजयके लिए जाता है ? दुष्ट राजाओंको शिक्षा देकर निग्रह करने के लिए एवं शिष्टोंकी रक्षा कर अनुग्रह करने के लिए गये । वस्तुओंकी बात ही क्या ? अपने स्वतःकी अनेक उत्तम कन्याओंको लाकर हमारे राजाके साथ उन लोगोंने विवाह किया । सबसे उत्तम वस्तुको ही प्रदान किया । बाकीकी चीजोंका क्या कहना । उनका भी भाग्य बडा है । कन्यावोंको देनेके निमित्तसे हमारे सम्राट्की महलको जाने योग्य तो बन गए ? यह सबको कहासे नसीब हो सकती है ? हमारे राजाको देखकर कितने ही चतुर हुए, कितने ही व्रती हुए, गतिमति-शून्य व्यक्ति गतिमतिको पाकर सुखी हुए, उसके शृंगार, उसके साहित्य, संगीत आदिका कहातक वर्णन करें ? सम्राट्को देखने पर जगलके प्राणियोंके समान वे घबरा कर चलते हैं । बहुतसे बुद्धिमान् होकर उनके साथ ही रहते हैं । कितने ही लोग चले गए । इस प्रकार कामदेवके अग्रजका कहातक वर्णन करूं ।

बाहुबलि बीचमें ही कहने लगे कि क्या यह कहना कोई बडे भारी सामर्थ्य है कि दूसरे उसे देखकर चतुर बन गए । दूसरोंको चातुर्य सिखाना कोई शक्तिका काम है ?

दक्षिणाक कहने लगा कि स्वामिन् ! मैंने उनके मृदुगुणोंका वर्णन किया । अब उनके सामर्थ्यकी बात सुनिये । सामनेकी सेनाके ऊपर अधिक शस्त्रास्त्र चलानेकी उनको आवश्यकता ही नहीं पडी । एक ही बाणपर पूर्वसमुद्रके अधिपति महान् प्रभावशाली मागधामरको

बुलाया। विजयार्ध पर्वतके वज्रकपाटको फोडनेके लिए एक ही मार काफी होगई थी, दूसरी बार हाथ भी लगाना नहीं पडा। एकदम फट गया। अग्नि एकदम भडक उठी। घोडेने १२ कोस तक छलांग मारा। सम्राट् जरा भी विचलित नहीं हुए। देवोंने पुष्पवृष्टि नहीं की। एक ही प्रहारसे विजयार्ध कंपित हुआ। सब लोग घबराकर चिल्लाये। म्लेच्छोंने व विद्याधरोंने अपने आप लाकर भेंट दिया। घोर वृष्टि बरसाकर दो भूतोंने कष्ट देना चाहा। परंतु सम्राट्के सेवकोंने ही उनको मार भगाया। अंकमालाको लिखानेके लिए पहिलेके एक लेखको उडाते समय कुछ भूतोंने उपद्रव मचाना चाहा, परंतु अपने सेवकोंसे उनके दांत गिराये। वे भाग गए।

राजन् ! विशेष क्या ? हमारे राजा हिमवान् पर्वत की उस ओर भी राज्य साधन के लिए जा रहे थे, हम लोगोंने समझाकर रहित किया। उसके साहस को लोकमें सामना कौन कर सकते है ? यम, दैत्य, असुर कोई भी समर्थ नहीं है। लीलामात्र से इस भूमिको वश मे कर लाया। आश्चर्य है ! पुष्पबाणसे तीन लोकको वश करनेवाला छोटे भाई, अपनी वीरतासे व सेवकोंसे राजाओंके मदको दूर करनेवाला बडे भाई, आप दोनोकी बराबरी करनेवाले लोकमें कौन है ? आप लोग सर्व श्रेष्ठ हैं यह कहने की क्या जरूरत है, आप लोगोंकी सेवा करनेवाले हम लोग भी उसी वजह से लोकमें बडे कहलाते है। मै क्या गलत कह रहा हूं ? चक्रवर्ति व उसके भाई कामदेवकी बराबरी करनेवाले कौन है ? आप लोगोंकी चरणसेवासे हम लोग धन्य हुए। वहां बैठे हुए सभी लोगोंने कहा कि बिलकुल ठीक बात है। बाहुबलि ने प्रणयचंद्र मंत्रीसे कहा कि मंत्री ! दक्षिणांकके चातुर्यको देखा ? किस प्रकार वर्णन कर रहा है।

मंत्रीने उत्तर दिया कि स्वामिन् ! उसने ठीक तो कहा। आप लोगोंमें जो गुण है, उसीका उसने वर्णन किया है। तुम बहुत दक्ष हो, उसी प्रकार तुम्हारे बडे भाई भी श्रेष्ठ गुणोंसे युक्त हैं, इसमें उपचारकी क्या बात हुई ? तुम दोनोका वर्णन सूर्य चंद्रके वर्णनके समान

है। चक्रवर्तिके मंत्री, व मित्रोंनें भी तुम्हे आदर के साथ भेंट भेजा है। इसीसे उनके सद्गुणोंका पता लगता है।

आजका दरबार बरखास्त करें। और दक्षिणांकको आज विश्रांति लेने दीजिये। कल उसके आनेके कार्यको विचार करेंगे। इस प्रकार मंत्रीने कहा। बाहुबलिने भी दक्षिणांकको रहनेकेलिए स्वतंत्रव्यवस्था व भोजन वगैरे के लिए आराम करानेकी आज्ञा दी। तब वे मंत्री मित्र आदि कहने लगे कि जब हमारे घर हैं तब स्वतंत्र अलग व्यवस्था की क्या जरूरत है? भरतेश आये तो आपकी महलमें उतरते। उनके मित्र आते हैं तो उनको हमारे यहां ही उतरना चाहिये। ये कब आनेवाले हैं? हमें इनका सत्कार करने दीजिये। इत्यादि उन मंत्री मित्रोंने कहा। दक्षिणको सत्कारकर, उसके परिवारको भी सत्कार करनेके लिए मंत्रीको आज्ञा देकर बाहुबलि दरबारसे महलकी ओर रवाना हुए। दरबारसे सभी चले गए। दक्षिणने पोदनपुरके मंत्रीके आतिथ्यको स्वीकार किया। वह विवेकी विचार कर रहा था कि ये मंत्री मित्र वगैरे मेरी तरफ है, परंतु भुजबलि मात्र भिन्न विचार का है। देखें क्या होता है?

भरतजीके वीर योगमें थोडीसी बाधा उपस्थित होनेपर भी उनकी आत्मामें अधीरताका संचार नहीं हुआ है। वे अपनी आत्मामें अविचल होकर वस्तुस्थितिको देखते हैं। वे विचार करते हैं कि—

" हे परमात्मन्! तुम अखिल वीरानुयोगको देखते हो, परंतु उससे तुम भिन्न हो, निर्मलस्वरूप हो, मोक्ष जानेतक दृष्टि व मन भरकर मैं तुमको देख लूं, तुम मुझे छोडकर अन्यत्र नहीं जाना। यही हार्दिक इच्छा है।

हे सिद्धात्मन्! तुम्हे न माता है, न पिता है, न कोई भाई है, न बंधु है। आदि भी नहीं है, अंत भी नहीं है, कोई भी कष्ट तुम्हें नहीं है, जन्म भी नहीं, मरण भी नहीं है. हे निरघ! निर्माय! निरंजनसिद्ध! सन्मति प्रदान कीजिए "

इति कामदेवास्थान संधिः

—*—

अथ संधानभंगसंधिः

बाहुबलिके मंत्री व मित्रोंको अपने आनेके कारणको कहकर एवं उनको अपने अनुकूल बनाकर दक्षिणांक बाहुबलिसे बोलने के लिए दरबारमें पहुंचा ।

बाहुबलिने दक्षिणांकको देखकर प्रश्न किया कि दक्षिण ! तुम किस कार्यसे आये हो ! बोलो । उत्तरमें हाथ जोडकर दक्षिणांकने बडी नम्रताके साथ निम्नलिखित प्रकार निवेदन किया ।

" स्वामिन् ! मेरे बडे स्वामीके अनुज ! मेरे छोटेस्वामी ! सौदर्य-शालिन् ! मेरे निवेदनको कृपया सुनें। सम्राट्को जब समस्त पृथ्वी साध्य हुई तब मार्गमें उन्होने श्रीपिताजी का दर्शन किया, तदनंतर भाग्यसे माताका भी दर्शन हुआ, फिर उनको अपने छोटेभाईको देखनेकी इच्छा हुई । हमें उन्होने गुप्तरूपसे पूछा था कि मेरे भाईको देखनेको क्या उपाय है, तब हमलोगोनें कहा कि राजन् ! जैसे तुम्हारे मनमे छोटे भाईको देखनेकी इच्छा हुई है, उसी प्रकार तुम्हारे छोटे भाईके मनमें भी तुम्हे देखनेकी इच्छा हुई होगी । तब सम्राट्ने कहा कि उसे सुखसे रहने दो, वह सुखसे पला है, पिताजीने भी उसे बहुत प्रेमसे पाला पोसा है, मेरी काकीको वह एकाकी बेटा है, इसलिए उसे कष्ट क्यों देना, सुखसे रहने दो । अपन जब अयोध्यापुरमें पहुंचेंगे तब माताजी काकी को बुलवायेंगे, तब बाहुबलि भी आ जायगा। तभी काकीको व उसे देखलेंगे ।

तब हमलोगोने उनसे प्रार्थना की कि " स्वामिन् ! अयोध्यापुरमे आयेंगे तो आपलोग महलमे बातचीत करेंगे, इसलिए हमलोगोको सुननेमें नहीं आयगी । यदि इसप्रकार बहिरंग मे आयेंगे तो हम लोग भी आप दोनोंको देखकर संतुष्ट हो सकते हैं । इसलिए पौदनपुरके पाससे जाते समय उनको बुलवावें। हम लोग छोटे

व बडे स्वामीका दर्शन एक साथ कर संतुष्ट होंगे। तब भरतजीने उसे सम्मति दी। अब वह स्थान दूर नहीं है । पौदनपुरके बाहिर ही आपके बडे भाई हैं। वहातक आप पधारकर हम लोगोंकी आखोको तृप्त करे " इस प्रकार कहते हुए दक्षिणांकने साष्टांग नमस्कार किया।

बाहुबलि—दक्षिण ! उठो ! उठो ! बैठकर बात करो । आप लोग निश्चित होकर अपने नगरकी ओर जावे। मै कल ही आकर अयोध्यामें मेरे भाईसे मिलूंगा।

दक्षिण—स्वामिन्! उससे आप दोनोको संतोष होगा यह निश्चय है। तथापि सबकी इच्छाकी पूर्तिके लिए सम्राट्ने सेनाका मुकाम कराया। इसलिए अब हम लोगोंकी प्रार्थना का स्वीकार होना चाहिये। सम्राट् मेरुपर्वतके समान खडे हैं। आप यदि वहा पहुंचे तो दो मेरु एकत्रित होते है, उससे दोनोंका गौरव है। नहीं तो राजगंभीरतामें कुछ न्यूनता हो सकती है। व्यंतर, विद्याधर व राजालोग बहुत आशा से आप दोनोंका एकत्र दर्शन करनेकी आतुरतामें खडे है। जब उनको मालूम होगा कि आप नहीं आरहे हैं तब वे खिन्न नहीं होगे? इसलिये हे कामदेव! आप लोकानंद करनेवाले है । इसलिए इस कार्यमे भी आप लोकके लिए आकुलता उत्पन्न न करें। अवश्य पधारें!

बाहुबलि—दक्षिण! मै आनेके लिए तैयार हूं । परंतु मुझे यहापर कोई आवश्यक कार्य है, इसलिये अभी आना नहीं हो सकेगा। इसलिये कोई उपायसे भाईको तुम अयोध्याकी तरफ ले जावो । मैं पुरुषतसे उधर आता हूं।

दक्षिण—नहीं ! स्वामिन् ! नहीं ! ऐसा नहीं कीजियेगा। आप के बडे भाईको देखकर, आप दोनोंके विनोद विलासको जिन सेनाओंने आजतक नहीं देखा है उनके मनको संतुष्ट कीजियेगा। विरस उत्पन्न

करना क्या उचित है ? भरतजी सदृश बडे भाईको देखनेसे बढकर और महत्वका कार्य क्या होसकता है, इसलिए हाथ जोडकर मेरी विनती है कि आप इसमें कोई बहानाबाजी न करे ।

बाहुबलि—दक्षिण ! तुम तो किसी उपायसे अपने आये हुए कार्यको साधन करना चाहते हो, परंतु मै तो अपने कार्यके महत्वको देखता हूं ।

दक्षिण—स्वामिन् ! आपके कार्यमे हानि पहुंचानेकी बात मै कैसे कर सकता हूं । क्या मैं कोई परकीय हूं? आपकी सेवा करना मेरा कार्य है । इसलिये आप अवश्य पधारे ।

बाहुबलि—मै जानता हूं कि तुम बडे चतुर हो, इसलिए बोलने में मुझे मत फसाओ, मैं अभी नहीं आ सकता हूं, जाओ ।

दक्षिण—राजन् ! क्या बडे भाईके पास जानेके लिए इस प्रकार कोई निषेध कर सकते है ? ऐसा नहीं कीजियेगा ।

बाहुबलि—वह अभी हमारे लिए बडे भाई नहीं है । वह हमारा स्वामी है, तुम मात्र इस प्रकार रंग चढानेकी कोशिस मत करो, मै सब जानता हूं । सेनाके साथ खडे होकर एक नौकरको बुलानेके समान बाहुबलिको बुलानेवाला वह भाई है, या मालिक है ?। तुम ही सत्य बोलो !

दक्षिण—परमात्मन् ! आप ऐसा बोल रहे है ? । सभी राजाओंने प्रार्थनाकर सम्राट्को ठहराया । चक्रवर्ति स्वयं ठहनेकेलिए तैयार नहीं थे । सचमुचमें हमलोग भाग्यहीन है । सर्वश्रेष्ठ चक्रवर्तिको हमने ठहराया । सर्वश्रेष्ठ कामदेवका दर्शन सभी परिवारको करानेकी भावना हमने की । परंतु हमपर आपको दया नहीं आती । क्या करें ? हमारा दुर्भाग्य है ।

बाहुबलि--दक्षिण ! मनमें एक रखकर वचन में एक बोलना यह मेरे व मेरी सेनाके लिए शक्य है । तुम और तुम्हारे स्वामी ऐसा कभी नहीं कर सकते । झूठे विनयको क्यों बतलाते हो, रहने दो !

दक्षिण ! --स्वामिन् ! मैने झूठी बात क्या की ? ।

बाहुबलि--कहूं । दक्षिण--कहियेगा ।

बाहुबलि--हाय ! तुमलोग आत्मचिंतामें मग्न अध्यात्मप्रेमी लोग झूठ कैसे बोल सकते हो, मै ही भूलगया । जाने दो, उसका विचार मतकरो ।

दक्षिण--आपसे भी गलती नहीं होसकती है, हमसे भी नहीं होसकती है । झूठा व्यवहार क्या है । वह कहियेगा ।

बाहुबलि--जाने दो, व्यर्थ किसीको कष्ट पहुंचाना अच्छा नहीं है ।

दक्षिण--आपसे किसीको दुःख हो सकता है ? कहियेगा ।

बाहुबलि--पौदनपुरके बाहर चक्र एकदम रुक गया । इसलिए मुझे आधीन करनेके इरादेसे भरतने सेनाका मुक्काम कराया तो तुम आकर मुझपर दूसरी तरहसे रग चढा रहे हो. आश्चर्य है । तुमने मुझे नहीं कहा, साथमे तुम्हारी बातोंमें आकर मेरे मंत्रीमित्रोंनें भी नहीं कहा । परंतु एक हितैषीने आकर मुझे सभी बातें कह दी, अब उसे छिपानेसे क्या प्रयोजन ? इसालिये अधिक बोलनेकी जरूरत नहीं है ।

दक्षिण--स्वामिन् ! आप दोनोंका एकत्र सम्मिलन देखनेकी इच्छासे ही चक्ररत्न भी रुक गया । जब कि आप दोनोंको एकत्र देखनेकी इच्छा सभी दुनियाको हुई तो क्या चक्ररत्नको नहीं होगी ? इसीसे वह भी रुक गया ।

वाहुबलि—दक्षिण ! अंदरकी वात नहीं जाननेवालों के पास चातुर्यको दिखाना चाहिये । हमारे पास यह तुम्हारी होशियारी नहीं चलसकती है, चुप रहो, वोलनेके लिए सीखे हो, इसलिए बोलरहे हो क्या? तुम्हारे राजाको इतना अहंकार क्यों ? समस्त पृथ्वीके राजावोंनें उसको नमस्कार किया, उससे तृप्त न होकर समस्त सेनावोंके सामने मुझसे नमस्कार करानेकी लालसा उसके मनमें हुई है, क्या मै इस कार्यकेलिए आवूं ? खेचर तो प्रेत हैं, भूचर व व्यंतर तो भूत हैं । भूतप्रेतोंने यदि डरकर उसको नमस्कार किया तो क्या यह कामदेव नमस्कार कर सकता है ?

उसको आकर मै नमस्कार क्यों करूं ? मुझे किस वातकी कमी है ? पिताजीने मुझे जो राज्य दिया है उसको भोगते हुए मै स्वस्थ हूं । इसे देखकर उसे ईर्षा होती है ? वडे २ राज्य तो पिताजीने उसे देकर छोटासा राज्य मुझे दिया है, तो भी मेरे भाईको संतोष नहीं होता है आश्चर्यकी वात है ।

दक्षिण—राज्यकी क्या बात है ? राजन् ! सम्राट अपने समृद्ध राज्योंमेंसे अर्धराज्यको अपने छोटे भाईको देनेके लिए कभी कभी कहते है । आप ऐसा कहते हैं ।

बाहुबलि—रहने दो ! तुच्छ हृदयवालोंको बोलनेके समान मुझे मत बोलो ।

दक्षिण—स्वामिन् ! क्रोधित नहीं हूजियेगा । आपके बडे भाई के गुणोंका श्रेय आपको ही है ।

वाहुबलि—रहने दो, मुझे राज्यके लोभको दिखाकर उपायसे तुम्हारे स्वामीको नमस्कार करानेको सोचते हो । क्या मै इतना छोटे हृदयका हूं ? । गुणको मै नमस्कार करसकता हूं । परंतु बडे भाईके नाते अहंकारसे बुलावें तो क्या मै नमस्कार कर सकाता हूं ? । देखो

तो सही ! तुमको भेजकर बातें बनाकर मुझे लेजाना चाहता है। मेरे भोले जो छोटे भाई थे वे पत्र पाते ही तपश्चर्या करने के लिए भाग गये। मेरे साथ वे यदि मिलते तो मैं फिर बडे कार्यको करके बतलाता। पिताजीके द्वारा दिये हुए राज्योंमें बने रहनेके लिए मेरे सहोदरोंको बडे भाई बोलता है, साथमें उन्हें अपनी आधीनताको स्वीकार करनेके लिए भी कहता है। शाहबास ! भाई शाहबास !

उत्तमराणीके पुत्रको एक सामान्य व्यक्तिकी दृष्टिसे देखरहा है। इसलिए मुझे जबर्दस्तीसे बुलारहा है, सचमुचमें भाग्यशाली भाई है। मेरे पिताजीको मेरी मा व बडी मा दोनों ही राणिया थी। कोई दासी नहीं थी। परंतु मुझे नौकरचाकरोंके पुत्रके समान बुलारहा है।

दक्षिण—स्वामिन् ! जब मैं यहा आया था सम्राट्के मंत्री मित्रोंने आपकी सेवामें अनेक प्रकारके भेंट भेजी थी। फिर आप ऐसी बात क्यों करते हैं ? राजन् ! मैं बोलनेके लिए डरता हूं। हमारे स्वामी अपने मंत्री मित्रोंको सामान्य व्यक्तियोंके पास नहीं भेजा करते हैं। हमारे छोटे स्वामीके पास भेजा है, इसलिए आया।

बाहुबलि—ठीक ! इसलिये तुम लोगोंने मुझे फसाकर लेजाना चाहा, परंतु यह कामदेव तुम्हारी बातोंमें आकर तुम्हारे स्वामीको नमस्कार नहीं कर सकता। अनेक प्रकारके पत्रोंको भेजकर छोटे भाईयोंको जंगलमें तपश्चर्याके लिए भेजा। परतु मुझे देखकर अपने मित्रको मेरे पास मुझे फंसानेके लिए भेजा, मैं अच्छी तरह जानता हूं। हाय ! झूठे विनयको दिखाकर मुझे डराते हुए फसानेके व्यवहारको देखकर क्या मेरा हृदय गरम नहीं होगा ? शीतल चंदनवृक्षको भी घर्षण करनेपर उमसे अग्नि नहीं निकलेगी ? अवश्य निकलेगी। दक्षिण ! क्षणक्षणमें जब तुम अपने स्वामीकी ही तारीफ कर रहे हो

उसे देखकर मेरे हृदयमे क्रोध बढता जारहा है, कोपाग्नि प्रज्वलित हो रही है। व्यर्थ ही मेरे क्रोधका उद्रेक मत करो। बस! यहांसे चले जाओ।

दक्षिणांककी आंखोंमें आंसू भर गया। उसने फिरसे नमस्कार कर कहा कि स्वामिन्! क्षमा करो, व्यर्थ ही मैंने तुम्हारे मनको दुखाया, मैं अनिक्रूर हूं। हमलोग दोनों स्वामियोंको एकत्र देखनेकी इच्छा करते थे। हमलोग अतिपापी है। पापियोंकी इच्छायें कभी सफल होती है? इस प्रकार कहते हुए रोने लगा। स्वामिन्! मै कितना दुष्ट हूं, तीन लोकको अमृत जहांसे मिलता है उस मनमें मैने अग्निज्वालाको पैदा करदी, दूध जहांसे निकलता है वहा रक्तको उत्पन्न किया। मुझसे अधिक अधम व पापी लोकमें कौन होंगे?

बाहुबलि उसकी सांत्वना करते हुए कहने लगे कि दक्षिण उठो! तुम पापी नहीं हो, जावो। तब दक्षिणांकने उठकर हाथ जोडा व जाता हूं कहकर जानेलगा। तब पास खडा हुआ मंत्री ने यह कहकर रोका कि दक्षिण! जावो मत ठहरो।

मंत्रीने बहुत विनयके साथ बाहुबलिसे निवेदन किया कि स्वामिन्! आपके सामने मै बोलनेके लिए डरता हूं। आपके क्रोधके सामने कौन बोल सकता है? हे कामदेव! आप जो आज्ञा देंगे उससे हम बाहर नहीं है, इसलिए मेरी विनतीको सुनियेगा।

आप दोनों भगवान् आदिप्रभुके पुत्र हैं, यदि आप लोग ही विरस वर्ताव करें तो लोकमें अन्य लोग सरल व्यवहार किस प्रकार करेंगे। अपने बडे भाईके पास आप न आकर अपनी आंख लाल करें तो लोकमे अन्य भाई भाई तो डंडा लेकर खडे हो जायेंगे। जो लोग संसारमें मार्ग छोडकर चलते हैं उनको मार्ग बतलानेका कार्य आप

लोग करते हैं। यदि आप लोग ही मार्ग छोडकर व्यवहार करें तो आपको बतलानेवाले कौन ? स्वामिन् ! विचार कीजिये, गुरूको शिष्य, पिताको पुत्र, अपने पतिको स्त्री, और बडे भाईको छोटे भाईने यदि नमस्कार नहीं किया तो लोकमें वर्षात सस्यादिकी वृद्धि किस प्रकार हो सकेगी। इसके अलावा स्वामिन् ! तुम सोचो कि तुम और तुम्हारे बडे भाई लोकके अन्य सामान्य राजाओके समान नहीं है। देवलोकको भी अपने गुणोंसे आप लोग मुग्ध करते हो। इसलिये आप लोगोंके इस प्रकार का विचार युक्त नहीं है। मेरे मनमें जो आई उसे निर्व्याज वृत्तिसे मैंने कहा है। अब आप ही विचार करें। यहा जो मित्र है वे क्या नहीं जानते है ? तब वहा बैठे हुए बाहुबलि के मित्रोंने एक साथ कहा कि राजन् ! प्रणयचंद्र मंत्रीने बहुत उचित कहा। हमारे स्वामीको भी प्रसन्नता होगी। विवेकी स्वामिन् ! लोकमें आप नहीं जानते है ऐसी एक भी कला नहीं है, ऐसी अवस्था में बडे भाईको नमस्कार करनेके लिए इन्कार करना क्या उचित है, आप ही विचार कर देखें। आपको लोग मृदुचित्तके नामसे कहते है। आपके साथ बोलने चालनेवाले हम लोगो को चतुर कहते है। जब आप इसप्रकार विचार करते है तो क्या अपनी सत्कीर्ति होसकती है ? क्या आपके बडे भाई लोकके सामान्य भाईयोंके समान है ? और छोटे भाई आप भी सामान्य नहीं हैं। आप दोनों लोकमें अग्रगण्य है, आप दोनों मिलकर प्रेमसे रहें तो जगत्का भाग्य और हमे आनंद है। इसलिए हमारी प्रार्थनाको स्वीकार करो " यह कहते हुए सभी मंत्री मित्रोंनें बाहुबलिके चरणोमें साष्टाग नमस्कार किया। तब बाहुबलिने उन्हे उठनेकेलिए कहा। तब उन लोगोंने कहा कि हमें वचन मिला तो हम उठेंगे। उत्तरमें बाहुबलिने यह कहा कि मेरी एक दो बातको तो सुनो। तब वे उठे।

बाहुबलि:—मंत्री व मित्रो ! तुम लोगोंको मै अपना हितैषी समझता था, परंतु तुम लोगोंने भी मेरे मनकी इच्छाके विरुद्ध ही बात की । तुम लोगोंका कर्तव्य तो यह था कि तुम मेरी बातका ही समर्थन करते । देखो तो सही, चक्रवर्तीका मित्र यहांपर आकर चक्रवर्तीकी इच्छानुसार ही बोला । इसको देखकर तो कमसे कम तुम लोगोंको मेरी तरफसे बोलना चाहिये था । परंतु आप लोग तो मेरे विरुद्ध ही बोले, ऐसा करना क्या आप लोगोंको उचित है ?

इतनेमें वहां उपस्थित कुछ स्त्रियोंने आकर प्रार्थना की कि स्वामिन् ! सबकी इच्छाका पालन करना चाहिये । बाहुबलिको क्रोध पहिले से चढा हुआ था, परंतु उस क्रोधका उपयोग मंत्री मित्रोंके प्रति वे कर नहीं सकते थे । अब वे स्त्रियां उनके क्रोधके बलि बन गईं । आवेशपूर्ण वचनोंसे उन्होंने कहा कि चुपचापके अपने काम करना छोडकर मुझे ही उपदेश देने आई है । कलकंठ ! इन लोगोंकी जरा मरम्मत करो । इस प्रकार आज्ञा मिलनेकी ही देरी थी, कलकंठ आदियोंने उन स्त्रियोंको पकड पकडकर मारा, पीटा । मलयमारुत व मंदमारुत नामक दो फैलवानोंने खूब उन स्त्रियोकी खबर ली । घूंसा मारा, चोटी धरकर पटका । सारांश यह है उनकी खूब दुर्दशा की गई है । उन लोगोंने दीनतासे प्रार्थना की कि हमपर दया दिखा दी जाय, आगे हम कभी ऐसा न करेंगी । फैलवानोंने जो उनको मारा, उससे उनको श्वास चढ गया, आंखे गिरने लगी, पसीना निकल आया । सब लोगोंनें बाहुबलिके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रार्थना की कि स्वामिन् ! भूलसे हम बोल गईं । क्षमा कीजिए । तब बाहुबलिने उनको छोडनेके लिए कहा, फिर भी क्रोध तो उनके हृदयमें बना रहा । उसीसे वे कहने लगे कि इन स्त्रियोंको ऐसा कहनेकी क्या जरूरत थी ? क्या हमारे नगरमे भोगियोकी कमी है ? भरतेशके नौकरोंके प्रति इनकी दृष्टि गई दिखती है । मदोन्मत्त विटोंके साथ

क्रीडा करके इनको भी मद चढ गया। अब किसी बूढोंके साथ इनको करदेना चाहिये। रसिकोंके साथ क्रीडाकर ये फूल गई हैं। अब इन्हें जडवित पुरुषोंके साथ कर देना चाहिये। सभी स्त्रिया जिसप्रकार चुप थी उसप्रकार चुप न रहकर मुझे ही उपदेश देने आई हैं। हाय! यह कामदेव इतना मूर्ख है ?। घर वरमें सब अकलमद हुए और मुझे विवेक सुझाने आये, मै तो बिलकुल मूर्ख ही ठहरा, हाय! कामदेवका कर्म विचित्र है! जिमसिद्ध! हंसनाथ! आप ही देखें। मैं अविवेकसे चल रहा हूं। ये सब विवेककी शिक्षा दे रहे हैं। इत्यादि प्रकारसे क्रोध भरे शब्दोंसे कह रहा था। उन स्त्रियोंके प्रति क्रोधित होनेपर मत्री मित्र आदि भी उस समय उनसे कुछ बोलनेकेलिए डर गये। सचमुचमें मंत्री मित्र आदिके ऊपर बाहुबलिको क्रोध चढगया था उसका फल उन स्त्रियोको भोगना पडा। इस प्रकार उस समय उस सभामें सब जगह निस्तब्धता छा गई थी। सेनापति गुणवसंतक भी सभी बातोंको सुनते हुए दूर बैठा था। बाहुबलिने उसकी ओर देखते हुए कहा कि गुणवसंतक! इधर मेरे पास आवो। दूर क्यों बैठे हो? मेरी बातें नीतिपूर्ण हैं ? या बेकार है? बोलो तुम्हारा हृदय क्या कहता है? उत्तरमें गुणवसंतकने कहा कि स्वामिन्! हाय! आपके वचनोंके संबंधमें कौन बोलसकता है ?। वह बिलकुल निर्दोष है। राजांगको व्यक्त करते हुए ही आप बोले, उसमे व्याजांगका लेश भी नहीं था। स्वाभि-मानी व्यक्ति दूसरोंके शरणमें क्योंकर जासकता है? मारको सर्वश्रेष्ठ (महाराय) कहते हैं। यदि उसने दूसरोंकी आधीनताको स्वीकारकर लिया तो उसे महाराय कौन कहसकते हैं। आपने बिलकुल ठीक कहा कि गुणके आधीन मै होसकता हूं, किसीने पराक्रम दिखाया तो उसे मै नमस्कार नहीं करसकता। गुणिजन इसे अवश्य स्वीकार करेंगे।

गुणवसंतकके वचनोंको सुनकर बाहुबलि प्रसन्न हुए। उन्होंने

उसे पास बुलाकर एक रत्नके पदकको इनाममें दिया। और कहा कि तुमपर मेरा भरोसा है, जावो।

समयको जानकर कलकंठ, मंदमारुत, मलयमारुत, मत्तकोकिल आदियोंनें भी कहा कि स्वामिन् ! आपके कार्यकी बराबरी कौन कर सकते है। आप लोकमें सर्वश्रेष्ठ हैं। उनको भी इनाम मिलगया।

बाहुबलिने दरबारको बरखास्त करनेका संकेत किया। सब लोग उठकर चले गये। कुछ भी नहीं बोलते हुए दक्षिणांक, मंत्रि, मित्र, आदि वहासे चलते बने। बाकीके सभी लोग व स्त्रियां, नौकर चाकर वगैरे सबके सब नमस्कार कर वहांसे चले गये।

अब बाहुबलिके पास गुणवसंतक आदि पाच सज्जन थे। बाकीके चले गये थे। कलकंठको आज्ञा दी कि उस दक्षिणाक को बुलावो। कलकंठने दौडकर बाहरके दरवाजेसे उसे बुलाया। दक्षिणांक वापिस लौटते हुए सोच रहा था कि शायद फिरसे बाहुबलिने सोचा होगा। मनमें थोडी पुनः शांति हुई होगी। उसने आकर नमस्कार किया।

बाहुबलिः—" दक्षिण ! सुनो ! मैंने समझ लिया है कि तुम्हारा स्वामी अब मुझपर आक्रमण किये बिना नहीं जायगा। परंतु युद्ध यहापर नहीं हो, मै ही जहापर आपलोग ठहरे है वहांपर आ जावूंगा। तुम्हारे स्वामीको षट्खड को जीतनेका गर्व है, उसे इस कामदेवके साथ दिखाना चाहता है। गरीबोंको जैसा फसाया वैसी बात यहा नहीं है। यहां तो भुजबलिराजासे सामना करना है। इसलिए सेनाके साथ होशियारीसे रहनेके लिए कह देना। जावो ! यह समाचार तुम्हारे स्वामीको सुनावो।" दक्षिणांक हाथ जोडकर चला गया। मनमें सोचरहा था कि कर्मगति विचित्र है, मोक्षगामी पुरुषोंको भी वह कष्ट दे रहा है।

बाहुबलिने गुणवसंतक आदिको आज्ञा दी कि चक्रवर्तिके मनु-

घ्योंको मेरे नगरमें प्रवेश नहीं करने देना। और स्वयं महलमें प्रवेश कर गया।

दक्षिणाकको वापिस बुलानेके बाद बाहुबलिका क्रोध शांत हुआ होगा, और उसकी ओरसे कुछ आश्वासन मिलेगा इस आशासे बाहुबलिके मंत्री मित्र आदि दक्षिणाककी प्रतीक्षा करते हुए बाहरके दरवाजेपर खडे थे। दक्षिणने आकर समाचार सुनाया तो उन लोगोंने एक दीर्घनिश्वास छोडा। इतनेमें गुणवसंतक भी वहां आया व कहने लगा कि मित्रो! स्वामीके प्रज्वलितकोपाग्नि देखकर उनकी इच्छानुसार मैं बोला, आपलोग ख्याल न करें। तब सबने कहा कि तुमने बहुत अच्छा किया। तब मत्तकोकिलादियोंने कहा कि मूकोंके समान रहनेसे राजा क्रोधित होंगे, यह समझकर हम बोले और कोई बात नहीं थी। परंतु हम लोगोंकी सम्मति तो तुम्हारे साथ ही है। लोकमें अन्न खानेवाले ऐसे कौन व्यक्ति होंगे जो बडे भाईको नमस्कार करनेकेलिए नहीं कहेंगे। सभी लोग यही कहेंगे कि छोटे भाईका बडे भाईको नमस्कार करना आवश्यक है। फिर बहुत खेदके साथ सब लोग कहने लगे कि दक्षिण! हमलोग चाहते थे ये दोनों भाई एकसाथ मिलकर हमको संतुष्ट करें। हमलोगोंको उन्हे एकत्र देखनेका भाग्य नहीं है। तुमको बहुत कष्ट हुआ, अब जावो। तुमने जो उपाय किया, मधुर वचनोंका प्रयोग किया उससे पत्थर भी पानी होता, परंतु कामदेवका मन नहीं पिघला, तुम्हारा इसमें दोष नहीं है, दुःख मतकरो! अब मातुश्री सुनंदादेवी बाहुबलिको समझायेंगी, और क्रोधशांत होनेपर हमलोग भी समझानेकी कोशिष करेंगे। यदि कोई अनुकूल वातावरण हुआ तो तुमको पत्र लिखकर सूचित करेंगे। नहीं तो मौनसे रहेंगे। अब तुम जावो, हमें बहुत इच्छा है कि तुम्हारे सदृश मित्रोंका आदर करें। परंतु अब हम कुछ नहीं कर सकते। क्यों कि तुम्हारा कुछ भी आदर हम लोगोंने किया तो बाहुबलि हमपर क्रुद्ध होंगे।

इसलिए अब तुम यहांसे चले जावो। दक्षिणांक दुःखके साथ वहांसे चला गया।

पाठकोंको आश्चर्य होगा कि कर्म मोक्षगामी पुरुषोंको भी नहीं छोडता है। जिस समय वह उदयमें आता है उस समय वस्तुस्थितिको विचार करने नहीं देता। कषायवासना बहुत बुरी चीज है। वह मनुष्यको अधःपतन कर देता है। ऐसे समयमें मनुष्यको विचार करना चाहिये।

"हे परमात्मन्! पुद्गल बोलता है, सुनता है पुद्गल, राग और द्वेष भी पुद्गल है। पुद्गलके लिए मनुष्य दूसरोंसे प्रेम व द्वेष करता है। इसलिए मेरे हृदयमें तुम सदा बने रहो ताकि मैं वस्तुस्थितिका विचार कर सकूं।

हे सिद्धात्मन्! तुम सदा दूसरोंको निर्मल उपायको बतलाने वाले हो। आपने अनंतज्ञानसाम्राज्यको पाया है, अतएव निराकुलता बसी हुई है। आप ज्योतिर्मय तीव्रप्रकाशके रूपमें है। इसलिए मुझे सदा सुबुद्धि दीजिएगा ताकि मुझे संसारमें प्रत्येक कार्यमें विवेककी प्राप्ति हो।"

इति संधानभंगसंधिः

कटकविनोदसंधिः

बाहुबलिके मंत्रि मित्रोंसे विदा होकर दक्षिणांक पौदनापुरके नगरसे होते हुए सेनाकी ओर जाने लगा। स्वयं वह जिस कार्यके लिए वह आया था वह कार्य बिगडनेके उपलक्ष्यमें उसे बहुत दुःख हुआ। इसलिए मनमें खिन्न होते हुए मौनसे जारहा है। मुख उसका फीका पडगया है । उसे देखकर लोग तरह तरहकी बातें कर रहे थे।

" कल यह आया उस समय बहुत हर्षके साथ आया था, अब वापिस लौटते समय बडी चिंतासे युक्त होकर जा रहा है। सचमुचमें राजावोंकी सेवा करना बडा कठिन कार्य है "

" इसने तो उचित बात कही थी, परंतु हमारे राजा क्रुद्ध हुए, तथापि यह शिष्ट बहुत शांतिके साथ अपने स्वामीके पास जारहा है। परसेवा करना कष्ट है "

" यदि किसी कार्यमें सफलता मिली तो अपने राजाके पुण्यसे सफलता मिली ऐसा कहते है। यदि कार्य बिगड गया तो जो उस कामके लिए गये उनको दोष देते हैं। परसेवाके लिए धिक्कार हो "

" भरत बडे भाई है, षट्खण्डमें वह एक ही श्रेष्ठ राजा है। उसके साथमें इस प्रकार व्यवहार क्या बाहुबलिको शोभा देता है। "

इत्यादि अनेक प्रकारसे पुरजन बात कर रहे थे। उन सबको सुनते हुए दक्षिणांक इधर उधर नहीं देखते हुए जा रहा था। सेवकोंने इधर उधरसे आकर दक्षिणांककी सेवा करना चाही। परंतु आखोंके इशारेसे उनको दूर जानेके लिए कहा । कोई स्तुतिपाठक दक्षिणांककी स्तुति कर रहे थे। उनको मुह बंद करनेके लिए कहा। कोई सेवक चमर ढाल रहे थे, कोई तांबूल दे रहे थे, उनको उसने रोका। कोई सेवकोंने आकर पालकीपर आरूढ होनेके लिए प्रार्थना

की, उसके लिए भी इनकार किया। हाथीको सामने लाये तो भी उसे दूर करनेके लिए कहा। घोडा दिखाने लगे, परंतु यह उस तरफ नहीं देखकर मौनसे ही जा रहा था। गुरुसेवा करनेमें च्युत शिष्यके समान, राजाकी सेवामें गलती खाये हुए सेवकके समान बहुत चिंताके साथ वह जारहा था। किसी तरह वह पौदनपुरके बाहरके दरवाजे पर पहुंचा। वहांपर फिरसे सेवकोनें प्रार्थना की कि इस तरह पैदल जानेसे स्वामिकार्यमें ही देरी होगी। इसलिए कोई वाहनपर चढकर जाना चाहिये। दक्षिणांक को भी उनका कहना ठीक मालुम हुआ। उसी समय एक वेगपूर्ण घोडेको मंगानेके लिए आदेश दिया। घोडेपर चढनेके बाद नौकरोनें उसपर छत्र चढानेकी कोशिष की, उसके लिए उसने इनकार किया। वाद्यघोष करने लगे तो इसने बडे क्रोधसे उन्हें रोका। वेशर्मो ! स्वामीके कार्यमें जीत होनेपर हम लोगोंको महान् आनंदके साथ जाना चाहिये। कन्या तो नहीं है। पाणिग्रहणका केवल मंत्रोच्चारणसे क्या प्रयोजन ? साथ ही दक्षिणांकने यह भी कहा कि मैं जल्दी ही जाकर स्वामीको देखता हूं। आप लोग सर्वपरिवार को लेकर पीछेसे आवें। अपने साथ कुछ विश्वस्त व्यक्तियोंको लेकर दक्षिणांक आगे बढा। और बहुत वेगके साथ सेनास्थान पर पहुंचा। अब वह दक्षिणांक बहुत ठाठवाटके साथ नहीं है। अकला ही खिन्न होकर आरहा है। सेनास्थानमें पहुंचने के बाद अपने साथियोंको अपने मुक्काममें जानेकी आज्ञा दी।

उस दिन रात्रिका दरबार था। भरतजीने आदेश दिया कि दरबारमें सबको बुलावो। इतनेमें एक दूतने आकर दक्षिणांक के आनेका समाचार सुनाते हुए कहा कि स्वामिन् ! वह अपने परिवारसे रहित हंसके समान, अथवा पत्तोंसे रहित आमके पेडके समान आरहा है। परिवार नहीं, वाद्य नहीं, और कोई शोभा नहीं। ८-१० अपने विश्वस्त साथियोके साथ आया था, उनको डेरेमें भेजकर वह अकेला ही आपके

दर्शन के लिए आरहा है। भरतजी समझगये, उन्होंने उसी समय दूतको आदेश दिया कि अब इस समय दरबारमे किसीको भी न आनेकी खबर करदो। इतनेमें वहांपर पहिले से बैठे हुए मागध, मेघेश्वर आदि उठकर जानेलगे। तब सम्राट्ने कहा कि आपलोग क्यों जाते हैं? यहीं पर रहें। आपलोगों को छोडकर मुझे एकांत नही है। मेरे आठ मित्र, मंत्री व सेनापति ये तो मेरे खास राज्यके अंग हैं। कार्य बिगड गया। बाहुबलिके अंतरंगको मै पहिलेसे जानता था। उसे एक पत्र लिखकर भेज देते तो ठीक रहता। व्यर्थ ही मित्रको भेजकर उसे कष्ट दिया।

इतनेमें दक्षिणाक आया। आते समय वह अन्यमनस्क व खिन्नमनस्क होकर आरहा है। किसी बच्चेकी कोई खास चीज खोनेपर वह जिसप्रकार दुःखसे अपने पिताके पास आता है। उसी प्रकार उसकी उस समय हालत थी। मुख कुद था, शरीरमें भी कोई उत्साह नहीं, इधर उधर देखनेके लिए लज्जा मालुम होती है। ऐसी हालतमे उसे धीरज बधाते हुए सम्राट्ने कहा कि दक्षिण! घबरावो मत! चिंता मत करो, आनद के साथ आवो। मै अपने भाईकी हालत पहिलेसे जानता था। उसके पास दूसरोको न भेजकर तुमको ही मैने भेजा, यह मेरी ही गलती हुई। तुम्हारा कोई दोष नहीं है, चिंता मत करो। आवो!

दक्षिणांकने आकर भरतजी के चरणो में साष्टांग नमस्कार कर प्रार्थना की कि स्वामिन्! मैं कुछ भी बोल नहीं सकता हूं। मुझसे ही कार्य बिगडगया। और किसीको भेजते तो कार्य होजाता, मुझसे काम बिगडगया। आपके भाईमें कोई कमी नहीं है। भरतजीने कहा कि ठीक है, उठो, बैठकर शांतिसे बोलो, तब दक्षिणाक उठकर खडा हुआ।

उतनेमें दक्षिण उठकर खडा हुआ । भरतजीने कहा कि शांतिसे सर्व हकीकत कहो । तब दक्षिणांकने कहा, स्वामिन् ! आपके भाई कामदेव है, पुष्पबाण है, वह कठोर वचनको कैसे बोल सकता है ? उसने कहा कि बडे भाईको अपनी सेनाके साथ अयोध्याकी ओर जाने दो । मैं बादमें आऊंगा । भरतजी मनमें विचार कर रहे थे कि देखो मेरे नगर में जानेके लिए क्या इसकी आज्ञाकी जरूरत है ? उसके अभिमानकी मात्राको तो देखो । फिर प्रकटरूपसे कहने लगे कि दक्षिणांक ! निस्संकोच होकर कहो कि आखीर उसने क्या कहा ? एक ही बात कहो । युद्धके लिए तैयारी दिखाई ?

नहीं ! नहीं ! युद्धके लिए नहीं, अपने भाईके साथ कसरत करने के लिए आऊंगा । ऐसा उन्होने कहा । बचपनमें अनेक वार मै अपने भाईके साथ कुस्ती खेल चुका हूं । अब सेनाके सामने एक दफे कुस्ती खेलूंगा । ऐसा भाईने कहा । स्वामिन् ! मै क्या कहूं । बहुत विनयतंत्रसे मैने उनको बुलानेकी चेष्टा की । अनेक मंत्री मित्रोंने भी उनको प्रेरणा की । अनेक स्त्रियोने भी कहा । परंतु उसके मनमें ये बातें नहीं जंची ! विशेष क्या ? आपके देखनेपर जिस प्रकार भक्ति करनी चाहिये उसी प्रकार उनके प्रति मैंने भक्ति की । भेदबुद्धिरहित वचनोंको ही बोले । मंत्री मित्रोंको मेरे वचनोंसे प्रसन्नता हुई । उसे पसंद नहीं आई । मै जिस समय वापिस आरहा था नगरवासी जन आपसमें बात चीत कर रहे थे कि भरतजीके साथ इसने विरस विचार किया है सो दुनियामें इसे कोई भी पसंद नहीं करेगा ।

भरतजीको उपर्युक्त सर्व समाचार सुनकर दुःख व संताप हुआ, वे विचार करने लगे कि देखो उसका अभिमान ! मेरे साथ युद्ध करने की तैयारी की । अपने नाश की उसे परवाह नहीं है । बहिरात्मावोंको अपने पुष्पबाणसे कष्ट पहुंचा सकता है । परंतु मुझ सरीखे सहजात्म-रसिकोंको वह क्या कर सकता है ? उसके बाण दूसरोंको भले ही

बाधा पहुंचा सकते हैं। परंतु आत्मतत्परोंको वे कुछ भी नहीं कर सकते। आत्मतत्पर पुरुष यदि उन बाणोंको रहनेके लिए कहें तो रहते हैं, नहीं तो जाते हैं। इस बातको बाहुबलि नहीं जानता है। यदि उसने पुष्पबाणका प्रयोग किया तो हंसनाथ (परमात्मा) को स्मरण कर उस पुष्पबाणको विध्वंस करूंगा। यदि हिंसाकी भी परवाह न कर खड्ग लेकर आया तो उसे छीनकर उसे धक्का देकर रवाना करूंगा। जरा डाटकर कहूंगा कि बाहुबलि ! जावो। नहीं गया तो हाथसे धक्का देकर भेजूंगा। फिर भी नहीं माना तो उसके हाथ पैर बांधकर शिबिकामें रखकर, छोटी माके पास रवाना करूंगा। यदि मुझे क्रोध आया तो उसे गेंदके समान पकडकर समुद्रमें फेंक सकता हूं। इतनी शक्ति मुझमें है। परतु छोटे भाईके साथ शक्तिको बतलाना क्या धर्म है ? दुनिया इसे अच्छी नजरसे देखेगी ? कभी नहीं। इस लिए ऐसा करना उचित नहीं होगा।

दूसरे कोई आकर मेरे सामने इस प्रकार खडे होते केवल इशारेसे उनके दांत गिराता। परंतु मेरे सहोदरके हृदयको क्या दुखा सकता हूं। यदि मैं ऐसा करूं तो लोक मेरे लिए क्या कहेगा ?। लोग तो यही कहेंगे कि हजार बात होने पर भी भरत बडे भाई हैं, बाहुबलि छोटा भाई है, इसलिये विचार करना चाहिये सो उसे अब किस उपाय से जीतना चाहिये ?

फिर दक्षिणांककी ओर देखकर भरतजीने कहा कि जाने दो ! उसे किसी प्रकार जीतेंगे। तुम शामके भोजन वगैरेसे निवृत्त होकर आये न ? तुम्हे बहुत कष्ट हुआ, बैठो ! दक्षिणांक बैठ गया। तदनंतर दक्षिणांकको गुलाबजल व तांबूलको दिलाकर कहा कि दक्षिण ! व्यर्थ ही खिन्न नहीं होना। मैं जानता हूं कि तुमसे कार्य बिगड नहीं सकता है। मेरा शपथ है तुम मनमें खेदित नहीं होना। उत्तरमें दक्षिणांकने कहा कि स्वामिन् ! मुझे कोई दुःख नहीं है, आपके चरणोंके

दर्शन करते ही वह दुःख दूर होगया । पहिले मनमें जरूर कुछ खिन्नता आई थी । परन्तु अब बिलकुल नहीं है । इतनेमें सुविट आदि मित्रोने मंत्री आदि प्रधानोने एवं मागधामर आदि व्यंतरोंने कहा कि स्वामिन् ! सूर्यके पास बरफ, तुम्हारे पास दुःख कभी अधिक समयतक टिक सकता है ? कभी नहीं । भरतजी कहने लगे कि अंदर मेरी स्त्रियां, बाहर मेरे पुत्र व आप मित्रोंको यदि कोई दुःख हुआ तो क्या मेरा कोई भाग्य है ? इसलिए आप लोग बिलकुल निश्चित रहें । मैं हर तरहके उपायसे इस कार्यमें विजय प्राप्त करूंगा । वह मेरे भाई है, शत्रु नहीं है । अज्ञानसे अभिमान कर रहा है । आप लोगोंके सामने उपायसे उसे जीत लूंगा । आप लोग देखते जावें ।

बुद्धिसागर मंत्रीने निवेदन किया कि स्वामिन् ! मै एक दफे जाकर देखूं ? तब भरतजीने कहा कि उसे लोगोंकी कीमत नहीं है । इसलिए व्यर्थ ही किसीके जानेसे क्या प्रयोजन ? क्या दक्षिणांक अविवेकी है ? उसे जरा देखो, तुम लोग अब उसकी तरफ जानेके विचारको छोडो । तुम और मुझमें अंतर क्या है ? उस अहंकारीको समझाना कठिन है । इसलिए अब जो भी होगा सो मैं देखलूंगा ।

मंत्री मित्रोने विचार किया कि बाहुबलीके मंत्री मित्र वगैरे सभी भरतजीके साथ है । इसलिए एक आदमी भेजकर देखें कि क्या बाहुबलिके विचारमें कुछ परिवर्तन होता है या नहीं ।

तदनंतर भरतजीने दक्षिणांकको बुलाकर उसे अनेक उत्तमोत्तम रत्न व वस्त्राभूषणोंको भेंट देना चाहा । परंतु दक्षिणने कहा कि स्वामिन् ! मैने बडी सेवा की ! वाह ! मुझे जरूर भेंट मिलना चाहिये जाने दीजिये ! मै नहीं लूंगा ।

भरतजीने कहा कि वह नहीं आया तो इसमें तुम्हारा क्या दोष है ? तुम्हारे प्रयत्नमें क्या कमी हुई । इसलिए तुम्हारे विवेकका आदर करना मेरा कर्तव्य है । आवो ! रात्रिंदिन अपन आनंदसे व्यतीत करे ।

दक्षिणाकने स्वीकार नहीं किया। फिर भरतजीने वहां उपस्थित अन्य मंत्री मित्रोंको बुलाकर भेंट दिये। बादमें दक्षिणाकको बुलाकर कहा अब तो लो। तब निरुपाय होकर दक्षिणांकने ले लिया। भरतजीने उसकी पीठ ठोककर कहा तुमसे मुझे कोई अप्रसन्नता नहीं है। तुम दुःख मत करो। तब दक्षिणांकने कहा कि स्वामिन् मुझे स्वप्नमें भी दुःख नहीं है, आपके चरणोंके शरणको पाकर किसे दुःख हो सकता है?

चक्रवर्ति सबको बिदाकर स्वयं महलकी ओर चले गये। इधर मंत्री व मित्रोंने विचार किया कि सभी राजा व मंत्री सेनापति वगैरे बाहुबलिके पास जाकर भेंट वगैरे समर्पण कर उसे इधर ले आयेंगे। उस विचारसे उन्होंने बाहुबलिके पास एक दूतको भेजा, वह दूत जब पौदनपुरके दरवाजेपर पहुंचा उस समय दरबानने उसे रोका। भरतके किसी भी मनुष्यको अंदर जानेकी आज्ञा नहीं है। वह दूत वहींसे लौटकर आया। जब वह समाचार मिला तो मंत्री आदिको बडी निराशा हुई। सम्राट्को जब यह मालुम हुआ वे हसे। सचमुचमें बाहुबलिको मद चढ गया है, इस समाचारसे अप्रसन्नता व्यक्त करते हुए सूर्य भी अस्ताचलपर चला गया। सर्वत्र अंधकार छागया, शय्या-गृहमें सुख निद्राके बाद रात्रिके ३ रे प्रहरमें भरतजी उठकर परमात्म योगमें लीन थे। इतनेमें एक सरस घटना हुई।

सर्वत्र निस्तब्धता छाई हुई है। वृक्षका एक पत्ता भी हिल नहीं रहा है। तरंगरहित समुद्रके समान विशाल सेनाकी हालत हो रही है। सबके सब निद्रादेवीकी गोदमें विश्राति ले रहे थे। तब सेनाके किसी कोनेमें दो व्यक्ति आपसमें बातचीत कर रहे थे, वे दोनों साले बहनोई थे! उनको किसी कारणसे नींद नहीं आ रही थी। अत एव वे उठकर आपसमें रात्रिको टालनेके लिए बातचीत करनेको प्रारंभ किया। उनमें निम्न लिखित प्रकार बातचीत हुई।

१ ला—एक एक बूंद मिलकर बडा सरोवर बनता है, एक एक

डोरा मिलकर बडी रस्सी बनती है, इसी प्रकार चक्रवर्तिकी भी महिमा बढ गई। यदि सेना नहीं हो तो यह भी एक सामान्य मनुष्य ही हैं।

२ रा—बिलकुल ठीक है, हाथी घोडा आदि सेनावोंके संग्रहसे दुनियाको डराया। वस्तुतः शक्तिको देखनेपर इसमें क्या है? हमारे समान ही एक मनुष्य है।

इस प्रकार सेनाके आखेरके उत्तर कोनेपर उपर्युक्त प्रकार दो विद्याधर बातचीत कर रहे थे उसे भरतजीने सुन लिया। भरतजीकी कान बहुत तेज है। सूर्यविमानमें स्थित जिनबिंबका दर्शन जो अपनी महलकी छतसे खडे होकर करते है, अर्थात् जिनके चक्षुरिंद्रियकी इतनी दूरगति है तो उनके कर्णेंद्रियके संबंधमें क्या कहना। भरतजीने उस बातचीतको सुनकर मनमें विचार किया कि प्रातःकाल होनेके बाद इसका उत्तर दूसरे रूपसे देना चाहिए।

नित्यविधिसे निवृत्त होकर भरतजी दरबारमें आकर विराजमान हुए। दरबारमे उस समय मंत्री, मित्र, राजा व प्रजावर्ग आदि सबके सब यथास्थान बैठे हुए थे। भरतजीका मुख आज उदास दिख रहा है। बुद्धिसागर मंत्रीने विचार किया कि शायद भरतजी बाहुबलिके वर्तावसे चिंतित है। निवेदन किया कि स्वामिन्! आपने हम लोगोंको कहा था कि इस संबंधमें चिंता मत करो, परंतु आप चिंता क्यों कर रहे है? तब उत्तरमे भरतजीने कहा कि मैं बाहुबलिके सम्बन्धमें विचार नहीं कर रहा हूं। आज एकाएक उंगलीके नस अकडकर यह हाथकी उंगली सीधी नहीं हो रही है। यह कहते हुए अपने हाथकी छोटी उंगलीको झुकाकर मंत्रीको बतलाया। लोकमें सबके शरीरमें, व्यवहारमें टेढापना हो सकता है। परंतु भरतके किसी भी व्यवहारमें एवं शरीरमें भी टेढापना नहीं है। फिर आज यह उंगली टेढी क्यों हुई है। सबको आश्चर्य हुआ। मंत्री मित्र आदि चिंतामें

पडे। उन्होंने आकर हाथ लगाया तो भरतजीने बडी वेदना हो रही हो इस प्रकारकी चेष्टा की। पुत्रोंने हाथ लगाया तो बडी दर्दभरी आवाज करने लगे।

मंत्रीने राजवैद्योंको उसी समय बुलाया, सैकडों राजवैद्य एकत्रित हुए। उन्होंने अनेक जडीबूटियोंके औषधसे उसे ठीक करनेके लिए कहा। अनेक मंत्रवादी आये। बडे २ यंत्रवादी आये। फैलवान लोग आये। निमित्त शास्त्री आये। खास सम्राट् के अंगवैद्य आये। सबने अपनी विद्याके बल से उंगलीको सीधी करने की बात कही। लोकमें देखा जाता है कि गरीबको बडे भारी रोगके आकर चिल्लाते रहने पर भी उसके पास कोई नहीं आते। परंतु श्रीमंतको बिलकुल छोटीसी दर्द आनेपर विना बुलाये वहांपर लोग इकट्ठा होते हैं। यह स्वाभाविक है।

मंत्रीने पूछा कि स्वामिन्! इनमेंसे आप कौनसे प्रयोगको पसंद करते हैं। उत्तरमें भरतजीने कहा कि औषध वगैरहकी आवश्यकता नहीं, उपायसे ही इसे सीधी करनी चाहिये।

बुलावो, फैलवानोंको बुलावो, भरतजीने कहा। तत्क्षण फैलवान् लोग आकर सामने उपस्थित हुए। उनसे कहा कि तुम लोग इस उंगलीको पकडकर खींचकर सीधी करो। कई फैलवानोने मिलकर खींचा तो भी सीधी नहीं हुई। भरतजीने कहा कि डरो मत, जोरसे खींचो। वे फैलवान जोरसे उस उंगलीको खींचने लगे। तथापि वे उसे सीधी नहीं कर सके। भरतजीने जरासी उंगलीको ऊपर उठाया तो वे सबके सब चमगीदडके समान उंगलीमें झूलने लगे। सम्राट्ने कहा कि और एक उपाय है। एक सांखल डालकर खींचो, वैसे ही उन लोगोंने किया, उससे भी कोई उपयोग नहीं हुआ। भरतजीने विश्वकर्माकी ओर देखकर कहा कि एक सांखल ऐसी निर्माण करो जो सारी सेनामें पहुंचे। वहा देरी क्या थी? उसी समय विश्वकर्माने उसका निर्माण

किया। आज्ञा हुई कि सेनाके समस्त योद्धा इस सांखलको पकडकर सारी शक्ति लगाकर खींचे। कोई उपयोग नहीं हुआ। फिर कहा गया कि हाथी, घोडा आदि सबके सब लगाकर इस सांखलको खींचे। सम्राट्के पुत्र व मित्रोंनें भी उसे हाथ लगाना चाहा, परंतु भरतजीने इशारेसे उनको रोका। भरतजीके हाथका स्पर्श होते ही वह लोहेकी सांखल सोनेकी बन गई। सारी सेना अपनी सारी शक्ति लगाकर उस सांखलको खींचने लगी। परंतु भरतजी अपने स्थानसे जरा भी नहीं हिले, छोटी उंगली भी सीधी नहीं हुई। जिस समय जोर लगा-कर वे खींच रहे थे अपने हाथको जरा ढीला कर दिया तो वे सबके सब चित होकर गिर पडे, भरतजी गंभीरतासे बैठे थे। मंत्रीसे कहा कि ये गिरे क्यो ? सबको उठनेके लिए कहो। तब वे उठे। भरतजीने कहा कि और एक उपाय करें, सारी सेनाकी शक्ति लगानेपर भी उंगली सीधी नहीं होती है। आप लोग सबके सब जोरसे खींचके धरो, मैं इस तरफ खींचता हूं, तब क्या होता है देखें। भरतजीने अपनी ओर जरा झटका देकर खींचा तो सबके सब मुंह नीचे कर गिरे। मालुम हो रहा था शायद वे सम्राटको साष्टांग नमस्कार ही कर रहे है। ४८ कोसमें सारी सेनाने शक्ति लगाई तो भी छोटीसी उंगली सीधी नहीं हुई। जब छोटी उंगलीमें इतनी शक्ति है तो फिर अंगूठेमें कितनी शक्ति होगी, मुष्टीमें कितनी होगी और सारे शरीरमें कितनी होगी। सम्राट्की शक्ति अवर्णनीय है।

भरतजी मुसकराये, मंत्री मित्रोंने समझ लिया कि वस्तुतः सम्राट्की उंगलीमें कोई रोग नहीं है। यह तो बनावटी रोग है। तब उन लोगोने कहा स्वामिन्! दूसरोंसे यह रोग दूर नहीं हो सकता है। आप ही अब करें। तब उंगलीकी सांखलको हटाकर "गुरु हंसनाथाय स्वाहा" कहते हुए उंगलीको सीधी कर दी। सब

लोगोंने हर्षसे भरतजीको नमस्कार किया। देवोंने पुष्पवृष्टि की। साडे तीन करोड बाजे एकदम बजे। सर्वत्र हर्ष ही हर्ष मच गया है।

मंत्रीने निवेदन किया कि स्वामिन्! आपने यह क्यों किया। तब उत्तरमे भरतजीने कहा रात्रिके तीसरे प्रहरमें उत्तर दिशाकी तरफ दो विद्याधरोने आपसमें बातचीत की थी। उसके फल स्वरूप मुझे बतलाना पडा कि मेरी छोटी उंगलीमें कितनी शक्ति है। इतनेमें दो विद्याधरोने आकर साष्टाग नमस्कार किया। कहने लगे कि स्वामिन्! हम अज्ञानवश बोल गये। हमें क्षमा करें। सब लोगोंको आश्चर्य हुआ। उन दोनों विद्याधरोंके प्रति तिरस्कार उत्पन्न हुआ। मंत्रीने कहा कि जब पुत्रोंको साखल खींचनेसे रोका, तभी मैं समझ गया कि यह बनावटी रोग है। व्यंतरोंने कहा कि हम लोग भूल गये, नहीं तो अवधि-ज्ञानको लगाकर देखते तो पहिले ही मालुम हो जाता। इस प्रकार वहां तरह तरहकी बात-चीत चल रही थी।

भरतजीने कहा कि मंत्री! सिर्फ दो व्यक्तियोंके आपसमें बोलनेसे इन सारी प्रजाओंको दुःख हुआ। अब जरा गडबड बंद करो, सबको इस सुवर्णकी सांखलको टुकडाकर बाट दो। मंत्रीने उसी प्रकार किया, रोनेवाले बच्चोंको जिस प्रकार गन्नेको टुकडाकर बाट दिया जाता है उसी प्रकार थकी हुई सेनाको सोनेकी साखलको टुकडाकर बाट दिया गया। सब लोग प्रसन्न हुए। सब लोग गठडी बाध २ कर सोनेको ले गये। सबको यथोचित सत्कारके साथ रवाना कर स्वतः सम्राट् महलकी ओर चले गये।

महलमें राणियां आनंदसागरमें मग्न हुई हैं। उनके हर्षको हम वर्णन नहीं कर सकते। आनंदकी सूचना देनेके लिए हाथमें आरती लेकर भरतजीका स्वागत करने लगी, व अनेक भेंट चरणोंमें रखकर नमस्कार किया। पट्टरानीने नमस्कार करते हुए कहा कि स्वामिन्! झूटे ही रोगसे हमारी सारी सेनाको आपने हैरान कर दिया। धन्य है!

अपनी स्त्रियोंको साथमें लेकर भरतजी अपनी मातुश्रीके पास आये व उनके चरणोंमें मस्तक रक्खा। माताने आशीर्वाद देते हुए कहा कि मेरे बेटेको मायाका रोग उत्पन्न हुआ। बेटा तुम्हे कभी रोग न आवे, इतना ही नहीं, तुम्हे जो याद करते है उनको भी कभी रोग न आवे। इस प्रकार आशीर्वाद देकर माताने मोतीके तिलकको लगाया। भरतजीने भी भक्तिसे नमस्कार कर तथास्तु कहा। तदनंतर सबके सब आनंदसे भोजनके लिए चले गये।

पाठकोंको आश्चर्य होगा कि भरतजीकी छोटीसी उंगलीमें इस प्रकारकी शक्ति कहांसे आई। असंख्यसेना भी उनकी एक उंगलीके बराबर नहीं है। तब उनके शरीरमें कितना सामर्थ्य होगा? इसका क्या कारण है? यह सब उनके पूर्वोपार्जित पुण्यका ही फल है। वे उस परमात्माका सदा स्मरण करते हैं जो अनंतशक्तिसे संयुक्त है। फिर उनको इस प्रकारकी शक्ति प्राप्त हो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है। उनका सदा चिंतवन है:—

हे परमात्मन्! तीन लोकको इधर उधर हिलानेका सामर्थ्य तुममें मौजूद है। वह वास्तविक व अनंत सामर्थ्य है। तुम अजरामर रूप हो, आनंदध्वज हो, इसलिए मेरे हृदयमें सदा बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! तुम बुद्धिमानोंके नाथ हो, विवेकियोंके स्वामी हो, प्रौढोंके प्राणवल्लभ हो, वाक्पुष्पबाण हो, इसलिए मोतीके समान सुंदर व शुभ्र वचनोंको प्रदान करो। एवं मुझे सन्मति प्रदान करो।

इसी भावनाका फल है कि भरतजीको लोकातिशायी सामर्थ्यकी प्राप्ति हुई है।

इति कटकविनोदसंधिः॥

—=×=—

मदनसन्नाह संधिः

सेनाके समाचार को सुनकर बाहुबलि के मनमें कुछ विचार तो हुआ, फिर भी गर्वके कारण युद्धकी ही तैयारीमें लगा। भरतजी की छोटीसी उंगलीकी शक्तिको सुनकर ही बाहुबलिको समझना चाहिये था, एवं बडे भाईको आकर नमस्कार करना चाहिये था, परंतु विधि विचित्र है, कर्म कैसे छोड सकता है। आगे इसी निमित्तसे दीक्षा ग्रहण करने की भावीकी कैसे पूर्ति होगी? भरतके षट्खंडविजयी होकर लौटनेपर आपसमें बाहुबलि और भरतका युद्ध होना चाहिये। बाहुबलिको वैराग्य उत्पन्न होना चाहिये। वैभवयुक्त भोगको छोडकर जंगलमें जाना चाहिये इस विधिविलासको कौन उल्लंघन कर सकता है? यह कर्मतंत्र है। बाहुबलिने गुणवसंतक नामक सेनापतिको बुलाया व कहा कि जाओ! सब तैयारी करो। सेना, परिवार वगैरे की सिद्धता कर युद्धसन्नद्ध रहो। चक्रवर्तिने अपने नगरके पास पडाव डाल रक्खा है, यह अपने लिए अपमान की बात है। इसे अपन कैसे सहन कर सकते हैं?। मैं अभी महलमें जाकर आता हूं, तुम तैयार रहो।

सुनंदादेवीको मालुम होते ही उसने पुत्रको बुलवाया, बाहुबलिने भी संतोष व विनयके साथ मातुश्रीके चरणोंमें नमस्कार किया। सुनंदादेवीने आशीर्वाद देते हुए कहा कि भुजबलि! बडे भाई भरतके साथ युद्धकी तैयारी कर रहे हो ऐसा मालुम हुआ है। इसे कौन सज्जन पुरुष पसंद करेंगे? तुम्हारे दुर्मार्गके लिए धिक्कार हो। भरत सरीखे बडे भाईको पानेका भाग्य लोकमें किसे मिल सकता है? संतोष व प्रेमसे तुम उसके साथ रहना नहीं जानते, जाओ, अभागे हो। छोटे भाईका कर्तव्य है कि जो लोग बडे भाईके साथ विरोध करते हैं उनको पकड कर लावें व बडे भाईके अधीन कर देवें। परंतु तुम तो उसके साथ ही विरोध करते हो। क्या यह बुद्धिमत्ता है? छोटे भाई बडे भाई को

नमस्कार करें, यह लोक की रीत है। वह चक्रवर्ति है, तुम कामदेव हो, यदि तुम उसे उल्लंघन न कर चलोगे तो शुक्र बृहस्पति भी तुम्हारी प्रशंसा करेंगे। तुम विरोध करोगे तो तुम्हारी निंदा करेंगे। विशेष क्या? तुम्हारे इस व्यवहारसे हमें व हमारे सभी बांधवोंको अत्यंत दुःख होगा। कुमारने जवान होकर कुटुंबके हृदयको दुखाया, यह अविवेक तुम्हारे लिए योग्य है? भाई के साथ युद्ध करने के लिए मैंने तुम्हें घी-दूधसे पालन-पोषण किया था? इसलिए हमारे हृदय को संतुष्ट करना तुम्हारा कर्तव्य है। तुम अकेले नहीं, तुम्हारे सहोदर सबके सब भरत को नमस्कार न कर भाग गए। हमारे बेटेने इन सबका क्या बिगाड किया था। क्या बडे भाईको नमस्कार करनेका कार्य हीन है? बडे भाई पितृतुल्य है, समझ कर उसकी भक्ति सत्पुरुष करते हैं। परंतु धूर्त लोग उसके साथ विवाद करते हैं। सबके सब दीक्षा लेकर चले गये, तुम तो कम से कम मेरी इच्छा की पूर्ति करो, इस प्रकार भाई के साथ विरोध मत करो। बहुत प्रेमसे सुनंदादेवीने कहा।

बाहुबलिने सोचा कि युद्ध के नाम लेने से माता को दुःख होगा। इसलिए माता को किसी तरह संतुष्ट कर देना चाहिए, इस विचार से कहने लगा कि माता! नहीं! युद्ध नहीं करूंगा। पहिले सोचा जरूर था। परंतु सब लोग जब मनाई कर रहे हैं तब विचार को छोडना पडा। दूसरोंने जिस काम के लिए निषेध किया है उसे मै कैसे कर सकता हूं?। आप चिंता न करें, मैं बडे भय्या को नमस्कार कर आवूंगा। इस प्रकार मुख से माता को प्रसन्न करने के लिए कहने पर भी मन में क्रोध उद्रिक्त हो रहा था। कामदेव के लिए मायाचार रहना स्वाभाविक है। सुनंदादेवीको संतोष हुआ। उसने आशीर्वाद देकर कहा कि

बेटा ! जाओ ! ऐसा ही करो। वह भोली उसके अंतरंगको क्या जाने ?।

वहांसे निकलकर वह बाहुबलि अपने श्रृंगारगृहमें चला गया। वहांपर सबसे पहिले अपने शरीरका अच्छीतरह श्रृंगार किया। वह कामदेव स्वभावतः ही सुंदर है। फिर ऊपरके श्रृंगारको पाकर सबके मन व नेत्रको अपहरण कर रहा था। इतनेमें उनकी स्त्रियां वहांपर आई। अनेक स्त्रियोंके साथ पट्टरानी इच्छामहादेवीने नमस्कार किया। व प्रार्थना की कि स्वामिन् ! आज आपने वीरांगश्रृंगार किया है। किसपर इतना क्रोध ? क्या स्त्रियोंपर अथवा नौकरोंपर। स्वामिन् ! लोकमें जितनी स्त्रिया है वे सब मेरे पक्षकी हैं। और पुरुष सब तुम्हारे पक्षके है। फिर आप क्रोध किनपर कर सकते है। उत्तरमें बाहुबलिने कहा कि देवी ! तुम्हारे पक्षके ऊपर मैं चढाई नहीं करूंगा। जो चक्रवर्ति मेरे सामना करनेके लिए खडा है उसके प्रति मैं चढाई करूंगा। उस भरतको परमात्मयोगका सामर्थ्य है, इसलिए वह पुष्पबाणसे डरनेवाला नहीं है। उसकी सेनाके साथ लोहायुधसे काम लेकर उनको भगाकर आवूंगा। उत्तरमें इच्छा महादेवीने कहा कि देव ! आपने यह अच्छा विचार नहीं किया। क्यों कि उसे लोकमें कोई भी पसंद नहीं करेंगे। बडे भाईके साथ युद्ध करना क्या उचित है ?। इस विचारको स्वामिन् ! छोडदीजिये। बडे भाईके साथ अपने सामर्थ्यको बतलाना क्या उचित है ! आपका बाण वक्र हो तो क्या हुआ। आपको वक्र नहीं होना चाहिये। लोगोंके साथ युद्ध करना कदाचित् उचित हो सकता है, परंतु बडे भाईके साथ युद्ध करना कभी ठीक नहीं है, यह तो चंदन में हाथ जलनेके समान है।

देव ! आप विचार कीजिए, मेरी बडी बहिन वहांपर भरतजीके

पास है, मैं यहांपर हूं, ऐसी अवस्थामें आप इस प्रकार विचार करते हैं क्या यह उचित है ? एक घर की कन्यावोंको लाकर साडू साडू प्रेमसे रहते हैं। परंतु आज आप अपने व्यवहारसे मेरी बहिन से मुझे अलग करा रहे है । स्वामिन् ! नमिराज विनमिराजकी ओर जरा देखिए, वे आपसमें कितने प्रेमसे रहते हैं। आप लोग इस प्रकार रीत छोडकर आपस में झगडा करें तो वे हसेंगे। वे तो छोटे बडे भाईके पुत्र है। आप दोनों तो एक ही पिताके पुत्र है । ऐसी अवस्थामें शत्रु वोंके समान आप लोग युद्ध करें, यह क्या अच्छा मालुम होगा ? ऐसी अवस्थामें नमि, विनमि क्या कहेंगे। संपत्तिमें आप लोग बडे हैं, वे गरीब हैं। परंतु आप व उनके माता-पितावोंका संबंध हुआ है। इसलिए समान है। वे अवश्य बोलेंगे ही।

जीजाजी (भरतजी) के उत्तम गुणोंको हम सुनती है तो आपके इस विरोध के लिए कोई कारण नहीं है। इसलिए हमारी प्रार्थना को स्वीकार करना चाहिये। इस प्रकार इच्छा महादेवीने कहा।

बाहुबलि ने उत्तर में कहा कि देवी! तुम्हारे भावाजी (भरतजी) में ऐसे कौनसे गुण हैं ? तुम्हारे भाईको उसने नमिराज कहकर पुकारा, इस बातको सब लोग वर्णन करते है। इसलिए तुम तेलको भी घी कहने लगी। उत्तर मे पट्टरानी ने कहा कि स्वामिन् ! ऐसी बात नहीं, भरतजी राजाग्रगण्य है। वे दूसरोंको राजा कहकर नहीं बुला सकते । मेरे भाईको ही उन्होंने राजाके नामसे बुलाया। इस प्रकार का भाग्य किसने प्राप्त किया है । यही क्यों ? उनके दरबारमें पहुंचते ही सिंहासन से उठकर मेरे भाईका स्वागत किया, आलिंगन दिया, एवं उच्च आसन दिया। क्या यह कम भाग्य है? विशेष क्या ? हमारे भाई उनके मामा के बेटे कहलाते हैं, यही हम लोगोंके लिए बडे भाग्यकी बात है, इसलिए आप बहुत प्रेमसे उनसे मिले व हमें संतुष्ट करें।

इतनेमें चित्रावती राणी कहने लगी कि जीजी! तुम ठहरो, मैं भी थोडासा निवेदन करती हूं। बाहुबलि की ओर देखकर स्वामिन्! आप सुखी है, अतः लोकमें आप सबके लिए सुख ही उत्पन्न करते हैं। इसलिए आप सुखियोंमें श्रेष्ठ है। आप अपने भाईको भी सुख ही देवें। जब आप उनके साथ युद्ध के लिए खडे हो जायेंगे, उस समय ९६ हजार राणियोंका चित्त नहीं दुखेगा? हम आठ हजार स्त्रियोंका हृदय दहल नहीं उठेगा? इन बातोंको जरा आप विचार करें। आप और उनमें प्रेम रहा तो वे हमारी बहिनें कभी यहा आसकती है, हम कभी वहा जा सकती हैं। हम में कोई भेद नहीं है। परंतु हमारे इस प्रेममें आप अंतर ला रहे हैं, जरा आप विचार करें। दूसरोंके घरमें जाना उचित नहीं, परंतु आपके बडे भाईके घरपर जाकर हमारी बहिनोंके साथ प्रेमसे न रहें, इस प्रकार आप हमें कैदमें क्यों डाल रहे हैं? बडे भाईके साथ इस प्रकार विरोध करना उचित नहीं है। हमारी इच्छाकी पूर्ति करनी ही चाहिये। इस प्रकार चित्रावती हाथ जोडकर कहने लगी।

इतनेमें रतिदेवी नामक राणी कहने लगी कि चित्रावती! तुम ठहरो, मुझे इस समय क्रोधका उद्रेक होरहा है। मैं जरा कहकर देखूंगी।

वह रतिदेवी बुद्धिमती है, चंचल नेत्रवाली है, निश्चलमतिवाली है, पतिभक्ता है, धीर है श्रृंगार है, रतिकलामें कुशल है, इच्छामहादेवी की वह बहिन है व बाहुबलि के लिए वह अधिक प्रीतिपात्रा है। इस लिए बिलकुल परवाह न कर बोलने लगी।

कहने लगी, " ठीक है, बिलकुल ठीक है, अपने सामर्थ्यका प्रयोग अपने ही लोगोंपर करके देखना चाहिए, और कहां उसे दिखा सकते हैं। कामबाणको धारण करनेका अभिमान अपने बडे भाईके

साथ ही दिखाना चाहिये। शाहबास! नाथ! शाहबास! भावाजी [भरतजी] की स्त्रियोंको व हम सबको दुःख पहुंचानेवाले तुम को लोग भ्रांति से काम कहते हैं। सचमुच में तुमको यम कहना चाहिये। आपका यह बर्ताव किसी को भी मीठा नहीं लग रहा है। परंतु आप इक्षुचाप (कामदेव) कहलाते है। क्या वह इक्षुचाप है या बांबूका बाण है? आप मृदुहृदयसे अपने भाईके पास नहीं जाना चाहते, अपितु पत्थरका हृदय बनाकर जा रहे हैं। ऐसी अवस्थामे आपको पुष्पबाण कैसे कह सकते हैं, वह पुष्पबाण नहीं होगा, लोहबाण होगा। जरा विचार तो कीजिये। क्या आपके व्यवहारसे वहापर सुभद्रादेवीको दुःख नहीं होगा? यहांपर हम लोगोंको संताप न होगा? जानते हुए भी सबको दुःख पहुंचानेवाले आप पागल हैं, जाईये। जाईये। न करने योग्य कार्यको करनेके लिए आप उतरे हैं। न बोलने योग्य बातको मैं बोल रही हूं। यंह अंतिम समय हैं, तुम नष्ट होते हो, जावो! मैं घास लेकर प्रतिज्ञा कर बोलती हूं, जाईये नाथ! जाईये! आखेरका समय आगया है।" इस प्रकार अत्याधिक बेपरवाहीसे रतिदेवी बोल रही थी। परंतु पट्टरानीको यह बात पसंद नहीं आई। कहने लगी कि हे धूर्ता! चुप रहो! पतिदेवके हृदयको इस प्रकार दुखाना ठीक नहीं। उत्तरमें रतिदेवी कहने लगी कि जब उन्होंने मार्गको छोडा तो हमारे मुखकी इच्छा जो होगी सो बोलेगा।

इसी प्रकार अन्य स्त्रियोने भी अनेक प्रकारसे पतिको समझानेकी कोशिश की। बाहुबलि मौनसे सुन रहे हैं। मनमें विचार कर रहे हैं कि चक्रवर्तिका पुण्य तेज है, इसलिए मेरी स्त्रियां भी उसी

की स्तुति कर रही है। कोई हर्ज नहीं। इनको भी बातोमें फंसाकर जाना चाहिये। प्रकट होकर बोले कि देवियों! आप लोग बोली सो अच्छा हुआ। तुम लोगोंकी इच्छाको पूर्ण करूंगा। आप लोगोंको कभी दुःख नहीं पहुंचावूंगा। पहिले मेरे हृदयमें क्रोध जरूर था, परंतु आपलोगोंकी बातें सुनकर अब क्रोध नहीं रहा, अब वह शांत हुआ है। मै बहुत नम्रतासे भाईको नमस्कार कर आवूंगा। रति! तुम बहुत अच्छी बोली, मेरे हितके लिए कठोर वचनको बोली, बहुत अच्छा हुआ। उत्तरमें रतिदेवी कहने लगी कि सचमुचमें आप बुद्धिमान् हैं, नहीं तो ऐसी बातों को अपने हितके लिए समझने वाले कौन हैं? इस प्रकार सर्वस्त्रियों को बाहुबलीकी बात सुनकर हर्ष हुआ। सबने हर्षातिरेकसे अक्षत लगाया। बाहुबलि वहासे निकलकर अपनी महल की ओर आये। दरवाजेपर सेवक परिवार वगैरे तैयार खडे हैं। सबने जयजयकार किया। माकंद नामक सुंदर हाथीका शृंगार पहिले से कर रक्खा था, बाहुबलि उस पर चढ गये। उनके ऊपर श्वेतछात्र शोभित हो रहा है। अनेक प्रकार के गाजे बाजे के साथ बाहुबलि आगे बढे। पौदनपुरवासी उस समय अपने २ घर की छतपर चढ कर इस शोभाको देख रहे हैं। बाहुबलि का प्राकृतिक सौंदर्य, शृंगार आदि सबके चित्त को अपहरण कर रहे थे। सब लोग आख भरकर कामदेव को उस समय देख रहे थे। देखने दो, आज ही उन का अंतिम देखना है, आगे वे देख नहीं सकते है।

इस प्रकार बहुत वैभव के साथ बाहुबलि पौदनपुर के राजमार्गोंसे होकर जा रहे हैं।

जिस समय बाहुबलि पौदनपुरके राजमार्गमें होकर जारहे थे उस समय अनेक प्रकार से अपशकुन होरहे थे। दाहिने ओरसे छिपकली बोलरही थी। एवं कौआ दाहिने ओरसे बांये ओर उडगया। बाहुबलिने उसको देखनेपर भी नहीं देखनेके समान कर दिया। परंतु मित्रोंने उसे खासकर देखा। और बाहुबलिका ध्यान उस ओर आकर्षित किया। बाहुबलिने उत्तर दिया कि कौआ नहीं उडेगा तो कौन उडेगा। छिपकली वगैरेके मुंहको अपन बंद कैसे करसकते हैं ? आगे बढनेपर एक मनुष्य अपने आभरण व कपडों को उतारते हुए पाया, शायद यह शकुन बाहुबलिके आगेके तपोवन के प्रयाण को सूचित कर रहा था। मंत्रीने आकर प्रार्थना की कि स्वामिन् ! आजके प्रस्थानको स्थगितकर कल या परसों प्रयाण करना चाहिये। आज लौट जाईयेगा। परंतु बाहुबलिने उस ओर ध्यान ही नहीं दिया। कहा कि चलो ! आज महाउत्तम लग्न है। आओ। इस प्रकार अनेक शुकुनों को देखते हुए वादकपाठक व गायकोंके शब्दोंको सुनते हुए पौदनपुरके राजद्वारसे बाहर आये।

गुणवसंतककी सेना तैयार थी। सुंदर मदोन्मत्त हाथी, घोडे, व श्रृंगार किये हुए रथ आदिसे उस समय चतुरंगसेना अत्यंत शोभाको प्राप्त होरही थी। उसे बाहुबलिने देखा। बाहिरसे चतुरंगसेना व अंदरसे कामदेव की नारीसेना, इस प्रकार उभय सेनासे युक्त होकर बाहुबलिने वहांसे प्रस्थान किया। चलते समय गुणवसंतक को प्रसन्न होकर इनाम दिया। बाहुबलि सेनाकी शोभाको देखते हुए जारहे हैं। कलकंठ आदि अनेक प्रकार से उनकी जयजयकार कर रहे थे।

बाहुबलिका एक पुत्र महाबल कुमार १० वर्षका है। वह उसके पीछेसे ही सहकार नामक हाथीपर चढकर आरहा है। उसके पीछे ही उसका छोटे भाई रत्नबलकुमार चूतांक नामक हाथीपर चढकर आरहा

है। उस समय कामदेव की शोभा देखनेलायक थी। एक तरफ स्त्रियों का समूह! एक तरफ सुंदर बालक, एक तरफ चतुरंगसेना। इन सब बातोंको देखते हुए सचमुचमें मालुम होरहा था कि तीन लोकमें कोई भी शक्ति उसके सामना करनेवाली उस समय नहीं है। इस प्रकार बहुत वैभवके साथ बाहुबलि भरतसेनास्थानके पास पहुंचे। सेना बाहुबलिके सौंदर्यको बहुत ही चावसे देख रही थी। क्यों कि वह कामदेव ही तो है।

भरतजी अनेक मित्रोंके साथ बाहरके दरबारमें बैठे है। गायन चल रहा है, बत्तीस चामर डुल रहे है। इतनेमें किसी दूतने आकर समाचार दिया कि बाहुबलि युद्धसन्नद्ध होकर आये है।

अर्ककीर्ति आदि बालकोंको यह समाचार सुनकर बडा दुःख हुआ। पिताको न कहकर उन सबने विचार किया कि अपन ही काकाके पास जावे। हम लोगोंके पहुंचनेपर तो कमसे कम वे इस विचारको छोड देंगे। इस प्रकार विचार कर अर्ककीर्ति अपने सहोदरों को साथमें ले वहांपर गया। प्रणयचंद्रम मंत्रीको सूचना दी गई व बाहुबलि के लिए अनेक भेटोंको समर्पण कर बाहुबलिको नमस्कार किया। मंत्रीसे बाहुबलिने पूछा कि ये सुंदर बालक कौन है? उत्तर में मंत्रीने कहा कि आपके पुत्र हैं। काकाको देखने के लिए बहुत आदरसे भेंट वगैरे लेकर आये हैं। बाहुबलिने क्रोधभरी आवाज से कहा कि " इनको वापिस जानेके लिए कहो। मेरे पास आनेकी जरूरत नहीं। इनके पिता मेरे लिए राजा है! ये मेरे लिए पुत्र कैसे हो सकते है। मुझे फसानेके लिए आये हैं. वापिस जानेदो इनको " सचमुचमें कर्मगति विचित्र है।

कलकंठने अर्ककीर्ति आदि कुमारोंसे प्रार्थना की कि आपलोग अभी चले जांय। क्यों कि यह समय अच्छा नहीं है। सो अर्ककीर्ति

आदि बहुत दुःखके साथ वहांसे लौटे । इन सब बातोंको हाथीपर बैठा हुआ महाबल कुमार देखरहा था, उसे बडा दुःख हुआ। हा! मेरे बडे भाईयोंसे भी पिताने इतना तिरस्कार भाव दिखाया । अब हमारी भी रक्षा यह नहीं करसकता है । हमलोग भी बडे बापके पास जावें । इस विचार से वह हाथीसे उतरकर सीधा भरतकी ओर गया। महाबल कुमार बहुत सुंदर है, क्यों कि वह कामदेवका पुत्र है ।

दक्षिणांकने चक्रवर्तिसे कहा कि श्री महाबलकुमार जो कि बाहुबलिका पुत्र है, आरहा है । महाबलकुमारने चरणोंमें भेंट रखकर नमस्कार किया, भरतने उसे हाथसे उठाकर गोद पर रखलिया । बेटा ! उदास क्यों हो ? इतनी गंभीरतासे व गुप्तरूपसे आनेका क्या कारण है, किसीके साथ तुम्हारा झगडा हुआ ? । महाबलकुमार कुछ भी नहीं बोला । तब पासके सेवकोंने कहा कि स्वामिन् ! आपके पुत्र काकाको देखनेके लिए गये थे, उनको वापिस लौटाया । उसे देखकर दुःखसे यह आपके पास आया है ।

भरतजीको बहुत दुःख हुआ । दीर्घश्वासको छोडते हुए उन्होंने कहा कि बाहुबलिके हृदयको परमात्मा ही जाने, उसके हृदयमें क्या यह विध्वंसभाव ! मुझसे यदि कोप हो तो क्या मेरे पुत्र भी उसे वैरी है ! कर्म बहुत विचित्र है । बुलावो । अर्ककीर्ति कहां है ? अर्ककीर्ति आकर हाथ जोडकर खडा हुआ । भरतजीने जरा क्रोधसे कहा कि बेटा ! सब देश फिर कर आये हो, इसलिए पित्तोद्रेक हुआ मालुम होता है। शायद इसीलिए उसके पास गये मालुम होता है । एकदफे यम बिगड गया तो भी उसे परास्त करने का सामर्थ्य मुझमें है, तुम लोगोंको इसकी चिंता क्यों ! वह इक्षुबाण मीठा है समझकर गये होगे । मीठा ही निकला न ! जावो ! जावो ! "। अर्ककीर्ति मौनसे खडा है। भरतजीने पुनः महाबल कुमारकी ओर देखकर कहा कि बेटा !

अब अनेक दुःखोंको तुम्हें देखकर भूलूंगा। तुम बहुत आनंदसे यहां रहो। मेरे हृदय मे बिलकुल कलुषता नहीं है। तब मंत्रीमित्रो ने कहा कि स्वामिन्! विधिवश यह कुमार आपके पास आनंदसे आया है। बाहुबलि भी अब अयगा, उसके लिए यह साक्षी है।

अपने पिताके व्यवहारसे असंतुष्ट होकर यह बालक आज आया है। अब जवान होगा तो यह कितना बुद्धिमान् होगा? इस प्रकार वहा बातचीत कर रहे थे। भरतजीने पुनः महाबल कुमारसे कहा कि बेटा! जो प्रसंग आया है उसे मै जीतलूंगा। तब तक तुम अपने बडे भाईके साथ रहो। उतनेमें अर्ककीर्ति आकर उसे लेगया।

इस प्रकार भरतजी अपने दरबारमें अपने मंत्री मित्रोंके साथमें थे। बाहुबलि अभीतक युद्धकी–प्रतीक्षासे हाथीपर ही अभिमानसे बैठा हुआ है। आगे युद्ध होगा।

पाठकोंको बाहुबलिके परिणामके वैचित्र्यको देखकर आश्चर्य होता होगा। कितना कठोर हृदय है वह! माताके उपदेशका प्रभाव नहीं हुआ, माताकी हार्दिक इच्छाकी परवाह नहीं। अपनी ८ हजार राणियोंकी प्रार्थना पर पानी फेर दिया। मंत्री मित्रोंकी प्रार्थनाको ठुकराया। अर्ककीर्ति कुमार आदि आये तो उनके प्रति भी भयकर तिरस्कारभाव! सचमुचमें उसका कर्म प्रबल है। इतना होनेपर भी भरतजी बहुत गंभीर हैं। उनके हृदयमें द्वेषाग्नि भडक नहीं उठी है, यह उससे भी अधिक आश्चर्यकी बात है। सचमुचमें ऐसे समयमें परिणामको सम्हाल रखनेके लिए विशिष्ट शक्तिकी आवश्यकता है। कषाय उत्पन्न होनेके लिए प्रबल कारणके उपस्थित होनेपर भी अपने परिणाममें क्षोभ उत्पन्न नहीं होने देना यही महापुरुषोंका खास लक्षण है। भरतजी सदा परमात्मध्यान में इस प्रकार विचार करते हैं—

हे परमात्मन् ! कठोरसे कठोर कार्यको भी मृदुभावसे जीतनेका सामर्थ्य तुममें है, तुम इस कार्यमें अधिक चतुर हो, अनंत शक्तिके धारक हो, इसलिए ही सज्जनजनोंके द्वारा पूज्य हो ! हे अमृतवारिधि ! मेरे हृदयमें सदा बने रहो ।

निरंजनसिद्ध ! नाममोहनासिद्ध ! रूपमोहनासिद्ध ! स्वामित्वमोहनसिद्ध ! कोमलवाक्यमोहनसिद्ध ! जयकलाग्राम ! हे सिद्धात्मन् ! मेरे हृदयमें सदा बने रहो !

इसी भावनाका फल है कि उनको कैसी भी अजेय शक्तिको
जीतनेका धैर्य रहता है। इसलिए वे हमेशा
गंभीर रहते है ।

इति मदनसन्नाहसंधिः ।
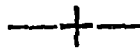
अब हमारा संरक्षण नहीं हो सकेगा, यह निश्चय है । आप दोनों वज्रदेही जिस समय युद्धरंगमें प्रविष्ट होंगे तो कांचकी चूडियोंकी दुकानमें दो मदोन्मत्त हाथियोंके प्रवेशके समान हो जायगा ।

" तब आप लोग क्या कहते है " भरतजीने पूछा ।

उत्तर में उन लोगोंने कहा कि हमने एक उपाय सोचा है, परतु कहनेके लिए भय मालुम होता है ।

"डरनेकी कोई जरूरत नहीं । आप लोग बोलो " भरतजीने कहा ।

स्वामिन् ! धर्मयुद्ध की स्वीकारता दीजिये । दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध और मल्लयुद्ध आप लोग दोनों करें । इसके सिवाय कोई युद्ध नहीं करना चाहिये । यही हम सबकी अभिलाषा है ।

उत्तरमे भरतजीने कहा कि ,आप लोग मुझे कुछ भी नहीं पूछें । बाहुबलि जैसा कहता हो वैसा ही सुननेके लिए मै तैयार हू । उससे जाकर पूछें । उसकी इच्छानुसार व्यवस्था करें " ।

सब लोग वहासे संतोषके साथ बाहुबलि के पास गए । हाथ जोडकर खडे हुए । बाहुबलिने कहा कि क्या बात है ? उत्तरमें कहा कि स्वामिन् ! आपसे कुछ प्रार्थना करना चाहते है । परंतु भय मालुम होता है । तब बाहुबलिने कहा कि मै समझ गया । आप लोग युद्ध रुकवाना चाहते है । और क्या ? उत्तरमें उन लोगोंने कहा कि स्वामिन् ! युद्ध तो होना चाहिये । बाहुबलिने कहा कि अच्छा तो आगे बोलो, डरो मत । तब उन मंत्री मित्रोंने प्रार्थना की कि स्वामिन ! युद्ध होने दो, परंतु खड्ग युद्धकी आवश्यकता नहीं, उससे भी बडे मृदुलय युद्धको आप दोनो अपने भुजबलसे करें, सेनाके नाशकी जरूरत नहीं ।

बीचमें ही बात काटकर बाहुबलि ने कहा कि मै यह सोच ही रहा था कि सामने की सेना अधिक संख्या में है । मेरी सेना बहुत थोडी है । ऐसी अवस्था में आपलोगोने जो मार्ग निकाला सो यह मेरा पुण्य है, चलो अच्छा हुआ,आगे बोलो !

अथ राजेंद्रगुणवाक्यसंधिः

भरत और बाहुबली युद्धके सन्मुख है, परंतु उन दोनोंके मंत्री, मित्र व प्रमुख राजावोंने आपसमें मिलकर प्रसंगको टालनेके संबंधमें परामर्श किया।

वे विचार करने लगे कि बाहुबलिको बहुत से लोगोंने समझाया, तथापि उसका कोई उपयोग नहीं हुआ। इसलिए अब युद्ध तो होगा ही, अब कौन क्या कर सकते है। जब चक्रवर्ति और कामदेव युद्धके लिए खडे है तो यह सामान्य युद्ध नहीं होगा। एक दूसरेके प्रति झुक नहीं सकते। यह कामदेव दूसरोंको भले ही जीत सकता है, परंतु आत्मनिरीक्षण करनेवाले भरत को कभी जीत नहीं सकता है। हम इस बातको अच्छीतरह जानते हैं। अच्छा! कुसुमास्त्रसे युद्ध होगा या खड्गसे होगा? बाहुबलिने क्या विचार किया है? बाहुबलिके मंत्री मित्रोंने कहा कि कुसुमास्त्रको परमात्मयोगसे हरायेंगे इस विचारसे लोहास्त्रसे ही युद्ध करनेका निश्चय किया है। तब तो दोनों वज्रकाय है, उनको तो कुछ भी कष्ट नहीं होगा। परंतु दोनों पर्वतोंके घर्षणसे जिस प्रकार बीचके पदार्थ चूर्णित होते है, उसी प्रकार सर्व सेनाकी हालत होगी। इसलिए समस्त सेनाको मारनेकी आवश्यकता नहीं। हाथमें खड्ग लेकर युद्ध करनेकी जरूरत नहीं, व्यर्थ ही निरपराध सेनाकी हत्या होगी। इसलिए दोनोंको धर्मयुद्ध करनेके लिए प्रार्थना करें। सब लोगोंको यह बात पसंद आई। सम्राट्के पास सब पहुंचे व प्रार्थना की कि स्वामिन्! युवराजने लोहास्त्रसे युद्ध करनेकी ठानी है, पुष्पवाणसे वह काम नहीं लेगा। अब तो निश्चय समझिये कि यह सेना पुरप्रवेश नहीं कर सकेगी अपितु यमपुरमें प्रवेश करेगी। आप दोनों पराक्रमी है। जब आपलोग लोहास्त्र को लेकर युद्ध करेंगे तो प्रलयकाल ही आजायगा।

स्वामिन् ! पहिला दृष्टियुद्ध होगा । उसमें एक दूसरेके मुखको अनिमिषनेत्रसे देखना चाहिये । जिनके नेत्र पहिले बंद हो जायेंगे उस समय हार मानी जायगी ।

दूसरा युद्ध जलयुद्ध होगा । एक दूसरे हाथसे एक दूसरेके मुखपर पानी फेके । जो मुखको हटायेंगे वे हारगये ऐसा समझना चाहिये। इतनेसे युद्धकी समाप्ति नहीं होगी ।

तीसरा युद्ध मल्लयुद्ध होगा । इस युद्ध में आपसमें कुस्ती होगी । किसीको एक हाथसे उठालेंगे तो फिर युद्ध बंद कर देना चाहिये । फिर कोई युद्ध नहीं होना चाहिये । स्वामिन् ! आप पुष्पबाणसे समस्त लोकको वशमें करते है, ऐसी अवस्थामें आपने कठिन खड्ग लेकर युद्ध किया तो लोक इसे अच्छी नजरसे नहीं देख सकता । इसलिए हम लोगोंने इस मृदुयुद्धका विचार किया है । आपका बाण, धनुष्य कोमल है, आप कोमल हैं, आपकी सेना कोमल है, फिर पत्थरके समान कठिनताकी क्या आवश्यकता है ? इसलिए हम लोगोंने यह कोमल विचार किया है । बाहुबलिने उत्तरमें कहा कि मैं समझ गया कि आप लोग मेरे हितैषी हैं, जाइये मुझे मंजूर है । शीघ्र युद्धरंगमें भरतको उतरनेके लिए कहियेगा ।

बहुत संतोषके साथ सब वहांसे सम्राट् के पास गए व सर्व वृत्तात निवेदन किया । साथमें यह भी प्रार्थना की कि तीन धर्मयुद्धोंके सिवाय आगे कोई भी युद्ध नहीं हो सकेगा । इस बातका वचन मिलना चाहिये। पहिले भरतसे व बादमें बाहुबलिसे इस बातका वचन लिया गया । एवं यह भी निर्णय हुआ कि यदि कामदेव हार गया तो वह भरतके चरणोंमें नमस्कार करें । यदि भरतकी हार हुई तो बाहुबलि भरतको नमस्कार न कर वैसा ही पौदनपुरमें जाकर राज्य करें ।

सेनास्थालमें डिंडोरा पीटा गया कि युद्ध दोनों राजाओंमें वैयक्तिक होगा । सेना युद्ध में भाग नहीं लेगी ।

सब लोग युद्धको देखने के लिए खडे हैं, आकाश प्रदेशमें व्यंतर देवगण विद्याधर वगैरे खडे हैं। कामदेवके पक्षके राजा महाराजा, कवि विद्वान् वेश्या ब्राह्मण वगैरे सब एक तरफ खडे हैं। मंत्री मित्रोंने जाकर प्रार्थना की कि स्वामिन्! युद्धकी तैयारी हो चुकी है, अब चलियेगा। बाहुबलि उस समय हाथीसे उतरकर नीचे आया, वह दृश्य सूचित कर रहा था कि शायद बाहुबलि यह कह रहा है कि हाथी घोडा आदि संपत्ति की अब मुझे जरूरत नहीं, मैं दीक्षा लेनेके लिए जाता हूं। गर्भगिरिसे उतरनेके समान उस गजरूपी पर्वतसे उतरकर वह कामदेव युद्धभूमिके बीचमें खडा हुआ। मालुम होरहा था कि एक पर्वत ही खडा है। छत्र चामर आदि बाह्य वैभव व अपने शरीरके भी कुछ वस्त्र आभूषणोंको उतार कर युद्धसन्नद्ध होकर खडा हुआ। उस समय वह बहुत ही सुंदर मालुम होरहा था।

भरतसे आकर मंत्री मित्रोने प्रार्थना की कि स्वामिन्! बाहुबलि आकर रणांगणमें खडा है। आगे क्या होना चाहिये। आज्ञा दीजिये। उत्तरमें भरतजीने कहा कि मैं ही आकर सब कहूंगा। आप लोग निश्चिंत रहें। स्वतः मौन धारण कर भरत विचार करने लगे कि इस के साथ धर्मयुद्ध भी क्यों करूं। इसके हाथ पैर बांधकर छोटी मांके पास रवा-ना करदेता हूं। (पुनःविचार कर) नहीं! नहीं! ऐसा करना उचित नहीं होगा।

इतनी सेनाके सामने अपने अपमानका अनुभव कर फिर वह घर में नहीं ठहरेगा। दीक्षा लेकर चला जायगा, इसका मुझे भय है। कोमल युद्धोंमें भी वह हार जायगा तो वह दीक्षा लेकर चला जायगा। मुझे पहिलेके सहोदरोंके समान इसे भी खोना पडेगा। इसलिए कोई न कोई उपायसे काम लेना चाहिये। अपने सामर्थ्यको दिखानेके लिए आज तक मेरे सामने कोई भी खडे नहीं हुए। परंतु मेरा भाई ही खडा हुआ, ऐसी अवस्थामें इसे मारना भी उचित नहीं है। अहितोंको जीतना भी

उचित नहीं है । साहसियों को कष्ट देना चाहिये, परंतु अपने कुटुंबियोंके साथ द्रोह करना ठीक नहीं है । इस बाहुबलि की मूर्खताके लिए मैं क्या करूं ? इस प्रकार तरह तरहसे भरतजी विचार कर रहे थे । परमात्मन् ! इसके लिए योग्य उपाय तुम ही कर सकते हो । (एक दम हसकर) गुरूकी कृपा है, समझगया । ठीक है चलो ।

उसी समय पल्लकी लानेकी आज्ञा हुई, प्रस्थानभेरी बजाई गई, पल्लकी पर चढकर भरतजी रवाना हुए । भरतजीने उस समय युद्ध के लिए उपयुक्त वेषभूषाको धारण नहीं किया था । मालुम होरहा था कि उस समय वे विवाहके लिए जारहे है । मंत्री मित्रोंने प्रार्थना की कि स्वामिन् ! इस प्रकार जाना उचित नहीं है । बाहुबलि तो युद्धके लिए लंगोटी कसकर खडा है, परंतु आप तो इस प्रकार जा रहे हैं । हम जानते हैं कि आपमें शक्ति है । परंतु शक्ति होनेपर भी युद्धके समय में युक्तिको भी नहीं भूलना चाहिये । मोरको पकडना हो तो शेरको पकडनेकी तैयारी करनी चाहिये । तभी दूसरोंपर प्रभाव पडता है । तब उत्तरमें भरतजीने कहा कि आप लोग बिलकुल ठीक कहते हैं । परंतु मुझे आज परमात्माने दूसरी ही बुद्धी दी है । इसलिए मैं इस प्रकार जारहा हूं । आपलोग कोई चिंता न करें । मैं किस उपायसे आज उसे जीतता हूं । देखियेगा ।

मंत्री मित्रोंनें कहा कि हम अच्छीतरह जानते हैं कि आप जीतेंगे ही, तथापि हमने प्रार्थना इतनी ही की कि युद्धसन्नद्ध होकर जाना अच्छा है । अब आपने जो विचार किया है वह ठीक है । इस प्रकार बातचीत करते हुए आगे बढ रहे थे । स्तुतिपाठकगण जगदेकमल्ल, जाड्योद्धूत. मनुवंशगगनमार्तंड, उद्दंड, कामदेवाग्रज, विक्रांतनाथ, विश्वंभराभूपणचक्रेश, चक्रवाकध्वजाग्रज, आपकी जय हो, इत्यादि प्रकारसे स्तुति कर रहे थे।

सम्राट्को बाहुबलिने १००-२०० गज दूरसे देखा, बाहुबलिने विचारकर अपने मंत्री मित्रों से कहा कि भरत आ रहा है। जब युद्धकी भेरी बजाई जायगी तब मैं उसका मुख देखूंगा। तबतक मुझे उसका मुख भी देखनेका नहीं है। इसलिए वह पीछेकी ओर फिरकर खडा होगया। भरतजीने इसे देख लिया, हंसकर कहने लगे कि भाईका मुख मुझे देखते ही टेढा होगया, भुजबल कम हुआ। किसने उसे छीन लिया? मनमें ही वे पुनः कह रहे थे कि त्रिलोकाधिपति के गर्भमें जन्म लेकर लोकके सामने इस प्रकार के अल्प कार्यके लिए प्रवृत्त हुआ! खेद है! इस प्रकार विचार करते हुए भरतजी बाहुबलिसे ८-१० गज दूर पर जाकर खडे हुए।

दोनों दीर्घदेही है, मालुम होता था कि दो पर्वत ही आकर खडे हों। भरतका देह ५०० गज प्रमाण है। परंतु बाहुबलि का ५२५ गज प्रमाण है। देह प्रमाण ही सूचित कर रहा था कि यह बडे भाई को उल्लंघन कर जानेवाला है। कलियुगके लोगोंके हाथसे पांच सौ गज प्रमाण उनका शरीर था। परंतु कृतयुगके पुरुषोंके हाथसे एक ही गज प्रमाण वह शरीर था। वैसे तो क्रमसे सबका शरीर पांच सौ धनुष प्रमाण है। परंतु बाहुबलि का शरीरप्रमाण २५ धनुष प्रमाण अधिक था, यह आश्चर्यकी बात है। उस समय चक्रवर्तिका सौंदर्य व कामदेवका सौंदर्य लोग बारीकीसे देख रहे थे। सबके मुखसे यही उद्गार निकलता था कि भरत से बाहुबलि सुंदर है, बाहुबलि से भरत सुंदर है। सौंदर्यमें कामदेव प्रसिद्ध हैं, सब चक्रवर्ति कामदेवके समान सुंदर नहीं होते हैं। परंतु आत्मभावक भरत मात्र कामदेव से भी बढकर सुंदर थे। क्यों कि ध्यानका सामर्थ्य सामान्य नहीं हुआ करता है। इस प्रकार दोनों अतुलशक्ति के धारक वहांपर खडे हैं। सेनागण उनके सौंदर्यको देख रहा था, और देखें अब, शक्ति में कौन जीतेंगे, कौन हारेंगे, देखना चाहिये। इस प्रतीक्षा में सब लोग खडे थे।

गाजे बाजेका शब्द बंद हुआ। भरतजीने कहा कि युद्धकी भेरी अभी बजानेकी जरूरत नहीं। मै अपने भाईसे दो चार बातें पहिले कर लूंगा। उसे वैसे ही वक्ररूपसे खडे होकर ही सुनने दो, मैं गंभीर अर्थको ही कहूंगा। तब मत्री मित्रोने कहा कि बहुत अच्छा ! जरूर कहना चाहिये। तब सम्राट्ने निम्न लिखित प्रकार बाहुबलिसे कहा।

भाई ! बाहुबलि ! आज तुम और मुझ में दुर्भावसे युद्ध होरहा है इसके लिए कारण क्या है ? क्यों कि निष्कारण कोई राजा आपसमें युद्ध नहीं किया करते। तुम्हारी कोई संपत्ति मैंने छीन नहीं ली है, मेरी संपत्तिको तुमने नहीं छीनी है, पहिलेसे पिताजीने जिस प्रकार राजा व युवराज बनाया है, उसी प्रकार अपन रहते हैं। अच्छा ! कोई बात नहीं ! भाई भाईयोमें भी द्वेष होता है। परंतु उसके लिए भी कुछ न कुछ कारण होता है। क्या तुमसे कर वसूल करनेके लिए मैने अपने दूतोंको तुम्हारे पास भेजा है ? तुम्हारे नगरको मेरे मनुष्य नहीं आ सकते हैं ? तुम्हारी प्रजावोंको मेरे नगरमें आनेपर मैने अन्य जनोंके समान कभी भावना की थी ? प्रजा परिवारोमे इस प्रकार भिन्नविचार क्यों ? मैंने बोलते हुए कभी तुम्हारे लिए अल्पशब्दोंका प्रयोग किया ? मेरी प्रजावोमें किसीने उस प्रकार का व्यवहार किया ? कभी नहीं ! केवल मेरे भाई को देखनेकी इच्छासे उसे बुलाया तो इतना क्रोध क्यों? तुम मेरे लिए क्या शत्रु है ? मै क्या तुम्हारे लिए शत्रु हूं ? हम दोनों आदिप्रभुके पुत्र होकर इस प्रकार विचार करें तो आगे सब सामान्य लोगोंके लिए द्रोहशासनको लिखदेनेके समान होगया !

कदाचित् तुम मनमें कहोगे कि यह युद्धसे डरकर अब यहा बातें करने लगा है। परंतु ऐसी बात नहीं है। युद्ध तो करूंगा ही। पहिले अपने मनकी बात कहकर दोषको टाल रहा हूं। दूसरे कोई मेरे सामने युद्धके लिए खडे होते तो उनको लात मारकर भगाता। परंतु

भाई ! सोचो, सहोदरोंके युद्धको लोक पसंद नहीं करेगा। मैं तुमसे थोडा बडा हूं, इसलिए मैंने तुमको अपनी सेना की तरफ बुलाया, तुम मुझसे बडे होते तो मै तुम्हारे पास आता। बडे भाईके पास छोटे भाई का जाना लोकमें रीत है। इसमे भाई ! तुम्हारा अपमान क्या है ? उस-दिन तुम्हे पिताजीने क्या उपदेश दिया है ?। भाई ! विशेष क्या ? तुम और मैं दोनों खिलाडी है। ये सब सेनागण, राजा, मंत्री, मित्र आदि सबके सब तमाशा देखनेवाले दर्शक है।

लोकमें राजावोंको खिलाकर अपन लोगोंको तमाशा देखना चाहिए। परंतु अपन ही तमाशा दूसरोंको दिखाते हैं। मुझे तुम जीतोगे तो तुम्हे कीर्ति मिल जायगी ? तुम्हे मैं जीतूं तो मुझे यश मिल सकेगा ? पन्नगनरसुरलोकके उत्तम पुरुष अपने व्यवहारको देख-कर थू छी कहे विना नहीं रह सकते। विशेष क्या ? तुम युद्धके लिए आये हो न ? युद्धमें जय होनेकी अभिलाषा सबकी रहती है। सामान्य लोगोंके समान लडनेकी क्या जरूरत है ! तुम जीत गए मै हार गया, जावो।

भरतजीके वचनको सुनकर मंत्री, मित्र, राजा, महाराजा आदियोंने कानमें उंगली देकर कहा कि यह क्या कहते हैं ? आपको कभी हार है ? भरतजीने उत्तरमें कहा कि आप लोग क्या बोलते हैं ! कामदेवसे कौन नहीं हारते हैं ! क्या हमने स्त्रियोंको छोडा है ?। मेरे भाईकी जो जीत है, वह मेरी ही जीत है। दूसरा कोई सामने आता तो बाएं पैरसे उसे लात देता, आप लोग सब मेरे अंतरंग को जानते ही है। बाहुबलि की ओर फिरकर फिर कहा कि भाई ! उपचारके लिए तुम्हारी जीत है ऐसा मै नहीं कह रहा हूं। अच्छीतरह सुनो तुम्हारे सामर्थ्यको मैं अच्छीतरह जानता हूं। सर्व सेना सुनें उस तरह मैं कहता हूं सुनो।

दृष्टियुद्ध में तुम्हारी जीत है। क्यों कि तुम मुझसे २५ धनुष प्रमाण अधिक हो। इसलिए तुम मुझे सरलतासे देखसकते हो, परंतु मुझे ऊर्ध्वदृष्टिकर तुम्हे देखना पडेगा, इसलिए मुझे कष्ट होगा मेरी। आंखे दुखेगी।

भरतजीके इस कथनको सुनकर मंत्री मित्रोने मनमें कहा कि सूर्य बिंबके अंदर स्थित जिन प्रतिमावोंके दर्शनको अपनी महल से बैठे २ जो सम्राट् करता है, उस समय तो उसकी आंखें नहीं दुखती है तो २५ धनुप प्रमाणकी क्या कीमत है ?। यह केवल भाईको समझाने के लिए कह रहा है। सूर्यकिरण तो आखोंको चुबते हैं, तथापि आंखोंको वे बंद नहीं करते। ऐसी अवस्थामें अत्यंत सुंदर शरीरको देखकर आंखोंको कष्ट किस प्रकार हो सकता है ? यह भाईको खुश करनेकी बात है। अस्तु.

भरतजीने पुनः कहा कि भाई ! जलयुद्ध मे भी तुम्हारि जीत है, क्यों कि तुम ऊंचे हो, मै तुम्हारी छातीतक पानी फेंक सकता हूं, मुझे तुम डुबा सकते हो, ऐसी अवस्थामें मेरी हार उसमें भी हो ही जायगी। समझें ?।

मंत्री मित्रोंने विचार किया कि भरतजी यह क्या बोल रहे है ? अनेक इच्छित रूपोंको धारण कर आकाशपर भी पानी फेंकनेकी शक्ति भरतजीमें है। २५ धनुषकी बात ही क्या है ? यह केवल उपचारके लिए कह रहे है।

भरतजीने बाहुबलि से पुनः कहा कि भाई ! मल्लयुद्धकी तो जरूरत ही क्या है ? पिताजीने तुम्हारा नाम ही भुजबली रक्खा है। वह असत्य किस प्रकार हो सकता है ? भुजबलमें तुम प्रबल हो, मुझे सहज उठा सकते हो। पिताजीने मेरा नाम भरत रक्खा है, मैं भरतभूमिका अधिपति हुआ। तुम्हारा नाम भुजबलि रक्खा है, तो भुजबल से मुझे तुम उठाओगे ही।

मंत्री मित्रोंने विचार किया कि भरतजी भाईको समझानेको कह रहे है। भुजबलिका अर्थ चक्रवर्तिको जीतनेवाला है ? कदापि नहीं। केवल सुजनचिंतामणि सम्राट् अपने सहोदरको समझाने के लिए कह रहे है। वैसे वीर, सुवीर, अनंतवीर्य, मेरु, सुमेरु, महाबाहु आदि अनेक नामोंसे अलंकृत आदिप्रभुके पुत्र है। क्या उन सबका अर्थ भरतजीको जीतनेवाले हैं। छोटीसी उंगलीसे परसो सारी सेनाको जिसने उठाया, बडे २ पर्वतोंको सूखे पत्तेके समान जो उठा सकता है, उसके लिए इस कामदेवको उठानेकी क्या बडी बात है ? सारी सेनाने मिलकर इनकी छोटीसी उंगलीको सीधी करनेके लिए अपनी सारी शक्ति को लगाकर खींचा, परंतु ये तो अपने सिंहासनसे जरा हिले तक भी नहीं। सरकनेकी बात तो दूर। ऐसी अवस्थामें क्या यह कामदेवको नहीं उठा सकता है ? यह कैसी बात ? लाख स्त्रियों को तृप्त करनेका सामर्थ्य चक्रवर्तिको है, कामदेवको केवल आठ हजार स्त्रियोंको तृप्त करनेका सामर्थ्य है। इसीसे स्पष्ट है, तथापि छोटे भाईको प्रसन्न करनेके लिए सम्राट् इस प्रकार कह रहे है। विशेष क्या ? भरतजी जो बत्तीस ग्रास आहार लेते हैं उससे एक ग्रास प्रमाण पट्टरानी लेती है, पट्टरानी जो एक ग्रास लेती है उसे सारी सेना मिलकर लेवें तो भी पचा नहीं सकती है। फिर यह कामदेव उसे क्या ले सकता है ? वह आहार पर्वतप्राय नहीं है, दिव्यान्न है, उसमें दिव्यशक्ति है। ऐसी अवस्थामें भी उपर्युक्त बातें सम्राट्ने इसे समझानेके लिए कहा।

इस प्रकार सर्वसेनामें सब लोग आपसमें विचार कर रहे थे। भरतजीने कहा कि भाई ! जब अपने मुखसे मैने कहा कि मै हार गया, तुम जीत गये, फिर अब क्रोधकी क्या आवश्यकता है ? भाई ! हृदयको शांत करो।

इस प्रकार भरतजीने जब अपनी हार बताई दशों दिशाओंमें एकदम अंधकार छा गया। आगके बिना धूम निकला। क्यों नहीं, मनुरत्न सम्राट्को जब दुःख हुआ, ऐसा क्यों नहीं होगा। सेना घबरा गई। बाहुबलिने मनमें विचार किया कि सचमुचमें मैंने यह अच्छा विचार नहीं किया है, भाईके प्रति इस प्रकार द्रोहविचार नहीं करना चाहिये था। बाहुबलिने अभीतक सन्मुखमुख होकर भरतको नहीं देखा था, भरतजीने पुनः बाहुबलिको प्रसन्न करनेके लिए कहाः—

भाई ! सुनो, मैंने इस चक्ररत्नकी अभिलाषा नहीं की थी, आयुधशालामें वह अपने आप उत्पन्न होकर उसने मुझे सारे देशमें भ्रमण कराया व आप लोगोंके हृदयको दुखाया। मैं इन सब संपत्तियोंको पुण्य कर्मके फल जानकर उदासीन भावसे देख रहा हूं, मुझे बिलकुल लोभ नहीं। तुम इनको स्वीकार करो। तुम ही राजा हो। तुम राजा होकर अपने राज्य में रहे, मै तुम्हारे अधीनस्थ राजा होकर तुम्हारे लिए दिग्विजयके लिए गया। और समस्त षट्खंडको वशमें करके आया हू, लो, यह सब राज्य, सेना वगैरे तुम्हारे ही है। ये सब राजा तुम्हारे है। तुमको मैं भाई हू इसका विचार नहीं, परंतु तम मेरे भाई हो इसका विचार मुझे हैं, इसलिए भाईके भाग्यको आखभरके देखकर मैं संतुष्ट होऊंगा। इस राज्यपदको स्वीकार करो। अयोध्यामें तुम सुखसे राज्य करो, मुझे एक छोटासा राज्य देकर सुखसे अलग रक्खो। यह मैं दुःखके साथ नहीं बोल रहा हूं, पुरुपरमेशके चरणकी शपथ है। मुझे अगणित सेवकोंकी जरूरत नहीं। मेरे कामके लायक परिवार व सेवकोंकी व्यवस्था कर मुझे अलग रक्खो। तुम्हारे मनको प्रसन्न करने के लिए यह मैं नहीं बोल रहा हूं, इसके लिए निरंजन सिद्ध ही साक्ष है। कंजाक्ष ! भाई, इससे अधिक बोलनेकी मेरी इच्छा नहीं है। स्वीकार करो इस राज्यको।

" बाहुबलि ! क्रोधका परित्याग करो, " भरतजी भाईको शांत करनेके लिए कह रहे थे । बाहुबलि भी मनमें ही लज्जित होने लगा । अब सीधा खडे होकर भरतकी ओर देखनेके लिए भी उसे संकोच हो रहा था । पुनः भरतजीने उस चक्ररत्नको बुलाकर कहा कि चक्र-रत्न ! जावो, अब तुम्हारी मुझे जरूरत नहीं, तुम्हारा अधिपति यह बाहुबलि है, उसके पास जावो । इस प्रकार भरतजीके कहनेपर भी वह आगे नहीं बढा, क्यों कि उसे धारण करनेका पुण्य बाहुबलिको नहीं था । भरतजीको छोडकर जानेतक भरतजी भी हीनपुण्य नहीं थे । अत एव वह बढते ही भरतजीके सामने आकर खडा हुआ । आगे नहीं गया । भरतजी को पुनः सहन नहीं हुआ । फिर भी क्रोधसे कहने लगे कि अरे चक्रपिशाच ! मैं अपने भाईके पास जानेके लिए बोलता हूं, तो भी नहीं जाता है, यह बडे आश्चर्य की बात है । जावो, मेरे पास मत रहो, इस प्रकार कहते हुए उसे धक्का देकर आगे सरकाया । तथापि भरतजीका पुण्य तो क्षीण नहीं हुआ था, और चक्ररत्नको पाने योग्य सातिशय पुण्य बाहुबलिने भी नहीं पाया । अत एव वह आगे नहीं बढा, परंतु सम्राट्ने जबर्दस्तीसे उसे धक्का दिया, इसलिए सरककर थोडी दूरपर बाहुबलिके पास जाकर खडा हुआ । चक्ररत्न सदृश पुण्य पदार्थका अपमान हुआ । भूकंप हुआ, धूमकेतु अकालमें दृष्टिगोचर हुआ । सूर्यबिंब भी मंदकांतिसे संयुक्त हुआ । आठों दिशावोंमें दुःखपूर्ण शब्द हुआ । सातिशय पुण्यशालीने अल्पपुण्यशाली की सेवाके लिए चक्रको भेजा, इसलिए यह सब हुआ । महान् पुण्यशाली सम्राट्के पुण्यो-दयसे षट्खंड वश में हुआ । यदि उस पूर्वपुण्योपार्जित साम्राज्यको जब हीनपुण्यवाले को वह देवे तो सत्पथका विनाश होकर कापथकी उत्पत्ति होती है । फिर इस प्रकार का महोत्पात हो तो आश्चर्यकी क्या बात है ? अनहोने कार्यको होने योग्य समझकर महापुरुष प्रवृत्ति करें

तो लोक में अद्भुत बातें क्यों नहीं होंगी। बाहुबलि भी मनमें विचार कर रहे थे कि छी! मैंने बहुत बुरा किया।

गरुडमंत्रसे विष जिस प्रकार उतरता है, उसी प्रकार भरतजी के मृदुवचनोंको सुनकर बाहुबलिका क्रोधविष उतर गया। हृदय शांत हुआ। चढाये हुए फणाको जिस प्रकार सर्प नीचे उतारता है, उसी प्रकार पहिलेका गर्व उतर गया। चित्त शांत हुआ। हा! भाईके साथ विरोध कर बडे भारी अपयशको प्राप्त किया। इस प्रकार विचार करते हुए बाहुबलि सीधा मुखकर खडे हुए। तथापि भाईकी तरफ देखनेके लिए संकोच हो रहा था। नीचे मुख करके खडा है। नाकपर उंगली रखकर विचार करने लगा कि मैं बहुत ही अपहास्यके लिए पात्र बना। मेरे बडे भाईके साथ बहुत द्रोह किया, बुरा किया।

जिस समय बाहुबलि सीधा होकर खडा हुआ तब सब लोगोंको इतना संतोष हुआ कि शायद अपने ऊपर का एक भार ही कम हुआ। उनको निश्चय हुआ कि अब युद्ध नहीं होगा। दोनों पितावोंके युद्धको देखनेका पाप हमें प्राप्त हुआ है, इस परितापसे खडे हुए अर्ककीर्ति महाबलकुमार आदिके मुख भी कांतिमान् हुए। मल्लयुद्धके सिवाय इन लोगोंका गर्वगलित नहीं होगा, इस बातकी प्रतीक्षा करनेवाले मंत्री मित्रोंको भी केवल बातोंमें ही जीतनेवाले चक्रवर्तिके चातुर्यको देखकर आश्चर्य हुआ। उन लोगोंने भी सम्राट्की बुद्धिमत्ताकी प्रशंसा की।

बाहुबलिकी उग्रता कहां? शांतिसे आकर मृदुवचनोंसे उसके क्रोधको शांत करनेकी बुद्धिमत्ता कहां? किसी भी तरह भरतकी बराबरी कोई भी नहीं कर सकते। बोलनेकी गंभीरता, उपदेश देनेकी कला, सहोदरप्रेम, और वात्सल्यपूर्ण बातों से जीतने का विवेक, सचमुच में असदृश है। सारी सेनाने मुक्तकंठसे भरतजी की प्रशंसा की।

युद्धभेरी बजानेके लिए सन्नद्ध होकर भेरिकार खडे थे। वे अलग हट गये। एक आसन वहांपर रक्खा गया। भरतजी उसपर विराजमान हुए। मोतीका छत्र रक्खा गया। बाहुबलि धूपमें खडा है, यह भरतजीको सहन नहीं हुआ, भरतजीने आज्ञा की कि उसके ऊपर एक छत्र धरा जाय, उसी प्रकार सेवकोंने किया। भरतजीका भ्रातृप्रेम सचमुचमें अद्भुत है। उस समय महाबलकुमारने रत्नबलराजको इशारेसे बुलाया। रत्नबलराज भी दौडकर बडे भाईके पास आगया। रत्नबलकुमारसे भरतजीके चरणोंमें नमस्कार कराकर महाबलराजने निवेदन किया कि स्वामिन्! यह मेरा छोटे भाई है। भरतजीने उसे बहुत प्रेमसे लेकर गोदमें रख लिया। उसे अनेक प्रकार के उत्तम पदार्थोंको देकर यह कहा कि बेटा! जब तक यह कार्य पूर्ण न हो तबतक तू अपने भाईयोंके पासमें रहो।

नाकके अग्रभागपर उंगलीको रखकर बाहुबलि अपनी दुर्वासना व दुश्चरित्रपर मन मनमें ही खिन्न होने लगा। क्यों कि वह आसन्न-मोक्षक है। बाहुबलि मनमें पश्चात्ताप करते हुए विचार करने लगा कि हाय! मैं पापी हूं। बडे भाईके साथ विरोध कर कुलके लिए लोकापवादको उपस्थित किया। सचमुचमें कषाय बहुत बुरा है, वह सबको बिगाड देता है। क्या मेरे भाई मेरे लिए शत्रु है? हाय! दुष्ट कर्मने मेरे साथ धोका किया। उग्रभावमें मेरे साथ खडे होकर इस प्रकार लोकापवादके लिए पात्र बनाया मेरे दुराग्रहके लिए धिक्कार हो। दिव्य आत्मानुभवी मेरे भाईके भ्रातृवात्सल्यको जरा देखो, व्यर्थ ही मैंने अन्यथा विचार किया। हा! मैने लोकके लिए असम्मत कार्यको विचार किया। मुझे समझमें नहीं आता कि पिताजीने मेरा नाम उन्मत्त न रखकर मन्मथ क्यों रक्खा? पिताजीने सोच-समझकर मेरा नाम मन्मथ रक्खा है। पृथु (स्थूल) कषायको मैने धारण किया है। उससे मेरे मनमें विशिष्ट व्यथा हुई। उस दुःखपूर्ण मनको मैने इस समय मथन

किया है। अत एव मुझे मन्मथके नामसे कहनेमें कोई हर्ज नहीं है। देखो कर्मकी गति विचित्र है। कहां तो मैं बहुत उग्रतासे युद्धके लिए तैयारीसे आया, और कहां युद्धरंग में आकर खडा हुआ। और भाई के मृदु वचनोंको सुनकर क्षणमें शांत हुआ। सचमुच में कर्मकी दशा क्षण क्षणमें बदलती है। मंत्री व मित्रोने कितने विनय व अनुनय से मुझे समझाया, मातुश्रीने कितने प्रेमसे उपदेश दिया। मेरी समस्त राणियोंने कितने प्रेमसे कहा, परंतु किसीका न सुनकर सबको फसाकर चला आया। जिन! जिन! मैं बहुत बडा दुष्ट हूं, यह भी जाने दो! मेरे भाई के पुत्र मुझे देखने के लिए आये। तब भी मेरा हृदय नहीं पिघला। मैंने उन का तिरस्कार किया. सचमुच में मैं मदन नहीं हूं, मेरा हृदय पत्थरका है। अर्हन्! मेरे लिए धिक्कार हो। सब लोगोंने, नीति के उपदेशको देते हुए तुम्हारे भाई है, अग्रज है, इत्यादि शब्द से भरतको कहा, परंतु मैंने तो वह है, यह है, राजा है, चक्रवर्ति है आदि व्यंग्य शब्दोंसे ही उसका संकेत किया, भाई के नाम से नहीं कहा, कितना कठोर हृदय है मेरा! लोकके सामने बडे भाईने अपनी हार बताई। चक्ररत्न को धक्का दिया गया, त्रिलोकमें विशिष्ट चक्ररत्नका अपमान हुआ। यह सब मेरे कारण से हुआ, सचमुच में यह मेरे लिए लज्जाकी बात है। अपयश रूपी कलंक मुझे लग गया। अब इस कलंकको घरपर रहकर धो नहीं सकता। तपश्चर्यासे ही इसे धोना चाहिए, इस प्रकार बाहुबलिने विचार किया। मोहनीय कर्मका उपशम होनेपर इस प्रकारका परिणाम हो इसमें आश्चर्यकी क्या बात है?

पुनः विचार करने लगा कि मैं पत्थरके समान भाईके सामने खडे होकर पुनः राज्य न करूं तो दूसरे राजावोंके ऊपर क्या प्रभाव पडेगा, और वे क्या विचार करेंगे। इस सभामें जिन राजावोंने मुझे देखा है वे मुझे बहुत ही तिरस्कृत दृष्टिसे देखेंगे।

इसलिए अब दीक्षाके लिए जाना ही अच्छा है। इस प्रकार विचार कर बाहुबलिने भाईकी ओर न देखकर एकदफे शांत नेत्रोंसे समस्त सेनाको देखा। आकाश और भूतलपर व्याप्त उस विशाल सेनाको जब बाहुबलिने देखा तो सेनाने नमस्कार किया, बाहुबलि लज्जित हुए। उन्होंने विचार किया कि मुझे ये नमस्कार क्यों कर रहे हैं? उन्होंने दूसरी ओर देखा, उधरसे विजयार्धदेव, हिमवंतदेवने बहुत भक्तिसे बाहुबलिको नमस्कार किया, पुनः बाहुबलिको बहुत बुरा मालुम हुआ। उन्होने दूसरी ओर मुख फेरा। उधरसे मागधामर, नाट्यमाल, प्रभासेंद्र आदि व्यंतरमुख्योंने नमस्कार किया। बाहुबलि लज्जासे इधर उधर देखने लगे। दोनों ओरके राजा, मंत्री मित्रोंने एवं पुत्रोंने बाहुबलिको नमस्कार किया तो बाहुबलिने विचार किया कि हाय! अपयशका पर्वत ही आकर खडा होगया। क्या करूं?

अब सेनाकी ओर देखना बंद करके नीचे मुंहकर खडे होगये। मनमें विचार करने लगे कि अब भैयासे अपने मनकी बात साफ साफ कह देना चाहिए।

पाठकोंको इस प्रकरणको देखकर कर्मकी विचित्र गतिपर आश्चर्य हुए विना नहीं रह सकता है। होनहार प्रबल है, उसे कौन टाल सकता है। भरतजीने कितने ही प्रकारसे प्रयत्न किया कि भाईके चित्तमें कोई क्षोभ न होकर अपना कार्य होजाय। वे पहिलेसे चाहते थे कि दूसरे सहोदर जिस प्रकार गये उस प्रकार यह भी नहीं चला जावे। अत एव सर्व कार्योंमें कुशल चतुर दक्षिणांकको ही उस कार्यके लिए भेजा। उसने खूब प्रयत्न किया, वह व्यर्थ गया। मंत्री मित्रोंने हरतरह विनय व अनुनयसे प्रार्थना की। वह भी ठुकरा दी गई। माताने बहुत ही हृदयंगम उपदेश दिया। उनको भी धोका दिया। ८ हजार स्त्रियों की प्रार्थना व्यर्थ गई। अर्ककीर्ति आदि पुत्रोंको दर्शन भी नहीं मिले

सका। अनेक अपशकुन होनेपर भी अवहेलना की गई । मानकषाय बडा प्रबल है। वह बडे बडे मोक्षगामियोंको भी तत्वविचारसे विमुख कर देता है। उस गर्वपर्वतपर चढनेके बाद अपना सगा भाई भी शत्रुके रूपमें दीखने लगता है। हितैषी माता भी अहित करनेवाले के समान दीखती है। कषाय बहुत बुरा है । उसने भाईके साथ युद्ध सन्नद्ध कर खडा कर दिया।

युद्धका निश्चय हुआ। उसमें भी तीन धर्मयुद्धका निश्चय हुआ। युद्ध प्रत्यक्ष न होने पर भी भरतजीने अपने सहोदरके मनको शांत करने के लिए अपनी हार बताई। और चक्ररत्न को बाहुबलिकी सेवामें जाने के लिए धक्का दिया। यह प्रसंग ग्रंथांतरों के कथन से व्यत्यस्त होने पर भी ग्रंथकारने इसे बडी खूबी के साथ वर्णन किया है। समन्वयदृष्टिसे विचार करने पर यह भेद विरुद्ध नहीं दीखेगा। कदाचित् स्थूलदृष्टिसे विरोध दीखे तो भी ग्रंथकारके हृदयमें स्थित भरतराजर्षि की भक्ति ही इस कथनके लिये कारण है, और कुछ नहीं। एक तरफ बाहुबलिका इतना कठोर व्यवहार ! दुसरी ओर भरतजीकी मर्यादातीत कोमलनीति ! यह दोनो बातें देखने व विचार करने लायक हैं।

भरतजीने अपने व्यवहारसे सिद्ध कर दिया कि कठिनसे कठिन हृदयको भी मृदुवचनोंके द्वारा पानी बना सकते हैं । अभिमानपर्वतपर चढे हुए मनुष्यको भी शांत व विनयपूर्ण हृदयसे नीचे उतार सकते हैं । अभिमानी को देखकर मानीका मान चढता है। निरभिमानी मंदकषायीको देखकर वह किस प्रकार चढ सकता है? आत्मभाक्कपुरुषोंका हृदय, काय, व्यवहार, वचन, वृत्ति व प्रवृत्ति आदि सर्व बातें निराली ही रहती हैं। उनका प्रभाव किस समय किस आकारर क्या व किस प्रकार होता है, यह पहिलेसे कहनेमें नहीं आ सकता है। वह अचिंत्य है।

भरतजी को इन बातों का विशिष्ट अभ्यास है । अत एव अजेय शक्तिको भी जीतनेका धैर्य उनमें है । वे सदा इस प्रकार की भावना करते हैं कि—

हे परमात्मन् ! तुम अपनी वोली, अपनी दृष्टि व खेलसे पाप-रूपी पर्वतको चकनाचूर करके लोकाधिपत्यको प्राप्त करते हो, अत एव हे चिदंबरपुरुष ! मेरे अंतरंग में अविरत होकर निवास करो, यही मेरी प्रार्थना है ।

हे सिद्धात्मन् ! यह शरीर भिन्न है, आत्मा भिन्न है, इस प्रकारके तत्वार्थ को वार वार कहकर संपूर्ण प्राणियों के हृदय के अविवेक को आप दूर करते हैं । हे जगन्नाथ ! मुझे सदा विवेकपूर्ण वचनों को वोलने का सामर्थ्य प्रदान करो ।

इसी भावनाका फल है कि भरतजी सदा सर्वविजयी होते हैं ।

इति राजेंद्रगुणवाक्यसंधिः

चित्तजनिर्वेगसंधिः ।

भरतजीने विचार किया था कि यदि युद्धमें भाईका भंग करूं तो वह दीक्षा लेकर चला जायगा, अतः प्रत्यक्ष युद्ध न करके, इस प्रकारके वचनोंसे उसके हृदयको शांत किया जाय। परंतु कुछ लोग साक्षात् युद्ध किया, इस प्रकार वर्णन करते हैं। जलयुद्ध, दृष्टियुद्ध, व मल्ल-युद्धमें अपने छोटे भाईकी जीत बताकर भरतजीने अपनी हार बताई, परंतु अन्यत्र वर्णन मिलता है कि साक्षात् युद्ध करके ही बाहुबलिने भरतको हराया। परंतु विचार करनेकी बात है कि क्या कामदेव चक्र-वर्तिको जीत सकता है ? ।

कामदेवमें जगत्को मोहित करनेका सामर्थ्य है । फिर क्या, षट्खंडाधिपतिको जीतनेका सामर्थ्य है ? चांदनीमें उज्वल प्रकाश हो सकता है, तो क्या वह सूर्यकिरणोंको भी फीका कर सकती है? कभी नहीं। अत एव कामदेवकी शक्ति व सार्वभौम सम्राट्‌की शक्ति कभी समान नहीं हो सकती है। कामसेवन, भोजन, पृथ्वी व पर्वतस्थित सर्व सेनावोंके पालनमें कामदेव चक्रवर्तिकी समानता नहीं कर सकता है।

चक्रवर्तिने सर्वसेनावोंके सामने अपनी अपजयको स्वीकार किया, चक्ररत्नको बाहुबलिके पासमें जानेके लिए धक्का दिया । स्वतः छोटे भाई ही बडे भाईके लिए वक्री बन गया। यही कालचक्रका दोष है। चक्रको जिस समय भरतजीने धक्का दिया, वह जाकर थोडी दूरपर ठहर गया, क्यों कि उसे धारण करनेका पुण्य बाहुबलिको नहीं था, और उसे खोलने की पुण्यहीन अवस्था भरतजी को नहीं आई थी। परंतु कल्पना की जाती है कि वह चक्ररत्न काम देवकी सेवामें जाकर खडा हुआ। लोकमें नियम है कि अर्धचक्रवर्ति जिस समय अपने शत्रुके प्रति चक्र का प्रयोग करता है, वह शत्रु के वश में होकर अर्ध चक्रवर्तिको ही मार डालता है । परंतु सकलचक्रवर्ति का चक्र सामने के राजासे हार कभी खा सकता है ? कभी नहीं।

जब सम्राट्ने तीन मृदुयुद्धोंके लिए मंजूरी दी थी फिर वह चक्ररत्नके द्वारा भाई पर आक्रमण कैसे करसकते हैं, क्या भरतसदृश भव्यात्मा अपने भाईके प्राणघातकी भावना करसकते है? । युद्धमे भाईका भंग न हो, एवं उसके चित्तमें दुःख होकर वह दीक्षाके लिए नहीं चले जावें इसलिये भरतजीने सद्गुणपूर्ण वचनोंसे ही उसे जीत लिया । दीक्षा लेने के बाद कुछ क्षणोंमें ही मुक्ति पानेवाले मंद कषायीके हृदयमें क्रूर गुण कैसे हो सकते हैं।

बाहुबलिके चित्त बराबर व्यथित हो रहा है । उसे बहुत अधिक पश्चात्ताप हुआ । उसने भरतकी ओर शांत हृदयसे देखा व कहने लगा कि भाई, मुझे क्षमा करो ! मेरे सर्व अपराधोंको भूल जावो । उत्तरमें भरतजीने कहा कि भाई ! तुह्मारा कोई भी अपराध नहीं है । तुह्मारी किसी भी वृत्तिपर मुझे असंतोष नहीं है । मेरे हृदयमें बिलकुल तुह्मारे लिये अन्यथाभाव नहीं है ।

बाहुबलि—भाई ! मैने तुह्मारे प्रति दूषण-व्यवहारको किया, तो भी आपने तो मेरे प्रति भूषण-व्यवहार किया । दोष मेरे हृदयमें थे । इसलिए वे मुझे ही दुःखी बना रहे है । आपके हृदयमें दोष न होनेसे परमसंतोष हो रहा है ।

भरतजी—कामदेव भाई ! ऐसा मत बोलो ! तुम और मैं कोई अलग नहीं है । इस प्रकार दुःखी मत होवो, मुझे बिलकुल भी तुमसे कष्ट नहीं हुआ है ।

बाहुबलि—मुझे किसी भी बातकी चिंता नहीं है । परंतु मेरी एक ही इच्छा है, उसे स्वकार करना चाहिये ।

भरतजी—भाई ! बोलो, तुम क्या चाहते हो । मैं तुह्मारी सर्व इच्छावोंकी पूर्ति करूंगा ।

बाहुबलि—भैया ! मुझे दीक्षा लेनेके लिए अनुमति मिलनी चाहिये । मैं तपोवनको जावूंगा ।

सम्राट् भरत इसे सुनकर अपने आसनसे एकदम उठे. बाहुबलिको आलिंगन देकर कहने लगे कि भाई ! इस एक बातको भूलकर दूसरी कोई बात हो तो बोलो । आज दीक्षाके लिए, जानेका क्या कारण है ? युद्धमें भंग हुआ ? या क्या तुमपर आक्षेप करते हुए मैं बोला हूं ? मोक्षकार्यको अपन बादमें विचार करेंगे । आज इस क्षोभकी जरूरत नहीं है ।

बाहुबलि—भग तो कुछ भी नहीं हुआ । परंतु युद्धरंग में आपके प्रति विरोध दिखाने तककी क्षुद्रताको मैंने दिखाया। क्षणभंगुर कर्मके वशीभूत होकर मुझे ऐसा करना पडा जिससे मुझे दुःख हुआ । इसलिए मेरे अंतरंगमें पूर्ण ग्लानि हुई है । अतः मै जावूंगा ।

भरतजी—मेरा सहोदर यदि मेरे सामने युद्धक्षेत्रमें खडा होजाय तो क्या बिगडा ? वह तो मेरे लिए एक विनोद की बात है ! परंतु विचार करनेकी जरूरत क्या है ? युद्धके इशारेकी भेरी तो नहीं बजी थी ।

बाहुबलि—भैया ! शुष्क चर्मकी भेरीका शब्द नहीं हुआ तो क्या हुआ ? परंतु निष्करुण वृत्तिसे मैंने जो दुष्कराचरण किया उसे तो लोककी मुखभेरी किंकिदके समान बोल रही है । यह क्या कम है ? भैया ! तुह्मारे मुखसे जो बोलनेके लिए योग्य नहीं है ऐसे लघुवाक्योंको मैंने बुलवाये । मेरी निष्टुरतासे चक्ररत्न भी कांतिहीन होकर एकतरफ जाकर खडा रहगया । इसमे अधिक भंगकी क्या जरूरत है ! । हद होगई, बस ! बस !

भरतजी—भाई ! इसमें तुह्मारा क्या अपराध है ? हुण्डाव सर्पिणीके दोष से मेरे लिए इस प्रकार भग होगा, इस बातको

पिताजीने पहिलेसे मुझे कहा है । इसलिए तुम अन्यथा विचार मत करो ।

बाहुबलि—भैया ! कालदोषसे घटनेवाली दुर्घटना मेरे द्वारा प्रकट होगई, इस बातको लोक अब नहीं भूल सकता है । अब इस कलंकको कैलास में जाकर ही धो सकता हूं, अब देरी न कर मेरी प्रार्थनाको स्वीकार करो ।

भरतजी—भाई ! इस बातको मत बोलो, मेरे मनको प्रसन्न करना तुम्हारा कर्तव्य है । मुझे प्रसन्न करनेके बाद तुम जा सकते हो । इस प्रकार भरतजीने बाहुबलिसे बहुत प्रेमके साथ कहा ।

बाहुबलि—भैया ! मैं दीक्षा लेकर मोक्षमंदिरमें तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगा । आज पिताजीके पास जाता हूं । स्वीकार करो । अब संसार सुखकी लालसा मेरे चित्तमें नहीं रही, आप लोगोंके साथ जो ममत्व परिणति थी वह भी चित्तसे हटगई । जो मन मुडगया उसे अब तेज कैसे करसकता हूं ? इसलिए तुम मुझे प्रेमसे जानेके लिए कह दो । यही मैं तुमसे चाहता हूं । जिस देहने बडे भाईके विरोधमें खडे होनेके लिए सहायता दी उस देहको तपश्चर्याके द्वारा मट्टीमें मिलावूंगा, जिस कर्मनें मुझे धोका दिया, और जिसने मुझे जलाया उस कर्मको अनुभव न करके जलावूंगा । और मोक्षसाम्राज्य का अधिपति बनूंगा तुम देखो तो सही ! भैया ! दिनपर दिन शक्ति बढती नहीं । विरक्ति हम चाहे जब आ सकती है ? इसलिए आज मुक्तिके लिए उपयुक्त साधनकी प्राप्ति हुई है । अतः इस समय आत्मसाधन करलेना महायुक्ति है । इसलिए मुझे रोको मत, भेज दो ।

भरतजी—भाई ! ऐसा नहीं हो सकता । तुम और मै कुछ दिन राज्य सुखको भोगकर फिर दीक्षा लेकर जायेंगे । मैं तुमारे भरोसेपर ही हूं । परंतु तुम मुझे छोडकर जा रहे हो, यह ठीक नहीं है

भाई ! विचार करो मेरे छह भाई तो पिताजीके साथ ही चलेगये। ९३ भाई के कल ही दीक्षा लेकर चले गये । यदि तुम भी चले जावोगे तो मेरा भाग्य नहीं फुटेगा ? इसलिए मेरी बातको स्वीकार करो, जानेका विचार छोड दो ।

बाहुबलि—भैया ! आप को कौन रहकर क्या कर सकते है। अपने कुमार तो हैं, वे सब योग्य है । सब बातोंकी समृद्धि है, इसलिए मुझे भेजना ही चाहिए । भैया ! अब विशेष आग्रह मत करो, भगवान् आदिनाथ स्वामीका शपथ है, आपके चरणोंका शपथ है । मेरे गुरु श्री हंसनाथ (परमात्मा) ही इसके लिए साक्षी हैं । मै अब नहीं रह सकता, मै अवश्य दीक्षाके लिए जावूंगा । संतोषके साथ भेजो, अब मुझे मत रोको ।

इस प्रकार कहते हुए भरत के चरणोंमें बाहुबलिने अपना मस्तक रक्खा ।

भरतजीके आंखोंसे धाराप्रवाह रूप से अश्रुधारा बह गई ! कहने लगे कि भाई ! उठो, तुम जो चाहते हो सो करो ।

इसे सुनते ही हर्ष के साथ बाहुबलि उठा, और अपने बडे पुत्र महाबल कुमार को उठाकर भरतके चरणोंमें रक्खा ।

भरतजी रो रहे है । परंतु बाहुबलि हस रहा है, बंधनबद्ध हाथी को छोडने पर जिस प्रकार वह प्रसन्नतासे जंगल को जाता है, उसी प्रकार बाहुबलिने प्रसन्नतासे सबको हाथ जोडा व वहासे समस्त संग को छोडकर जा रहा है । सेना आश्चर्यके साथ उसे देख रही है ।

इतने मे एक बडी दुर्घटना हुई । भरतके बडे भक्त कुटिलनायक शठनायक दो मित्रोंको बाहुबलि भरत के विरुद्ध होकर खडा हुआ, इस बातका बहुत दुःख हुआ था । सेनाके समस्त सज्जनोंकी दृष्टिमें भरत व बाहुबलि दोनों स्वामी है । परंतु कुटिलनायक शठनायकको सम्राट्के

प्रति अत्यधिक भक्ति है। इसलिए दूसरोंकी उन्हे परवाह नहीं है। वे समझ रहे हैं कि हमारे स्वामी भरत के लिए अनुकूल होता तो यह बाहुबलि हमारे लिए स्वामी हैं, जब हमारे स्वामीके साथ इसने विरुद्ध व्यवहार किया तो यह हमारे स्वामी कैसे हो सकता है ? इसलिए कुछ दूर वे दोनों बाहुबलि के पीछे गये व बोले।

हे भागफूटा बाहुबलि ! सुनो, भरतजीको नमस्कार कर सुखसे तुम नहीं रह सके, जावो, अब भिक्षाके लिए तो भरत के राज्य में ही आना पडेगा न ?

सोने के लिए, खाने के लिए, तपश्चर्या करने के लिए तुम्हे भरत के राज्य को छोडकर अन्य स्थान तुम्हारे लिए कहां है ? जावो ! बाह्यविवेकियोंके राजा ! जावो !

राज्यमें रहकर आरामसे सुखभोगनेका भाग्य तुम्हे नहीं है, अब फिरकर खानेका समय आगया है, भाईके द्रोहके कर्मफलको इसी भवमें अनुभव करो, पधारो, पधारो ! राजन् ! भीख मांगकर भोजन करो, घांसकांटोंसे भरे जंगल में सोवो। यह तुम्हारी दशा होगई है।

इस प्रकार बाहुबलिको चिढाते हुए हस हसकर ताली पीट कर बोल रहे थे।

हृदयमें शांतिको धारण करते हुए बाहुबलि जारहा था। परंतु इनके क्रोधोत्पादक वचनों को सुनकर जरा पीछे फिरकर कोपदृष्टिसे देखा। फिर मनमें विचार आया कि तपश्चर्याके लिए मैं निकला हूं। अतः गम खाना मेरा कर्तव्य है।

बाहुबलिके मित्र, मंत्री व सेनापतिने भी भरतजी से प्रार्थना की कि हमें भी दीक्षा लेनेके लिए अनुमति दीजियेगा. भरतजीने बहुत रोकनेके लिए प्रयत्न किया परंतु वे राजी नहीं हुए। वे बाहुबलिको छोडकर कैसे रहसकते हैं, क्यों कि बाहुबलिके वे हितैषी हैं। फिर

भरतजीने मंत्री व सेनापतिसे कहा कि छोटी माको बाहुबलिके जानेसे बडा दुःख होगा। इसलिए उनके दुःखको शांत करना अपना धर्म है, तबतक आप लोग रुक जावें। बादमें दीक्षा लेवें। इस प्रकार मंत्री व सेनापतिको रोककर बाकीके मित्रोंको अनुमति दे दी। उन मित्रोंने अपने पुत्रोंको भरतजीके चरणोमें छोडकर दो विमान लेकर बाहुबलिके पास पहुंचे। बाहुबलिको कहा कि आप एक विमानपर चढ जावें। बाहुबलिने कहा कि मेरे लिए स्वतंत्र विमानकी क्या जरूरत है। अब सबलोग एक ही विमान पर चढकर जावे। तब उनलोगोंने प्रार्थना की कि कैलास पर्वत पर्यंत आपको राजतेजमें ही जाना चाहिये, हम लोग एक विमान पर बैठेंगे।

इस प्रकार दो विमानोंपर चढकर बाहुबलि व उनके मित्र कैलास पर्वतपर पहुचे व भगवान् आदिप्रभु के दर्शन कर उनसे योगिरूप को धारण कर लिया इससे अधिक क्या कहें।

इधर सम्राट् अश्रुपात करते हुए बाहुबलि के दोनों पुत्रोंके हाथ धरकर राजमंदिरकी ओर बडे दुःखके साथ गये।

बाहुबलि दीक्षा लेकर चले गये यह समाचार सुनते ही यशस्वती महादेवी को बडा दुःख हुआ। वह मूर्छित होगई, शैत्योपचारसे उसे जागृत किया तो फिर भी अनेक प्रकारसे विलाप कर रही है। हा! छोटे भैया! दीक्षा लेकर चला गया! हा! मेरा छोटा हाथी मदोन्मत्त होकर चला गया?। क्या उसे रोकनेवाले कोई नहीं मिले? सारे अंतःपुरमें ही रोना मचा हुआ है। भरतजी दोनों पुत्रोंको माताके चरणोंमें रखकर दुःखके साथ बैठे हैं।

इतने में रात्रि पड गई। वह रात्रि दुःखजागरण में ही बीत गई। प्रातःकाल में झंझानिल नामक दूतने पौदनपुरमे जाकर समाचार दिया।

यह समाचार सुनते ही सुनंदा देवी मूर्च्छित होकर गिर पडी। अनेक प्रकार से उपचार किया गया। जागृत होकर पूछती है कि झंझानिल कामदेव मेरा बेटा किधर चलागया ? क्या पागल होकर दीक्षा लेकर हमलोगोंको छोडकर चला गया ? उसे दीक्षा ही पसंद आई ? क्या सचमुचमें गया !

झंझानिल कहने लगा कि माता ! इसमें संदेह नहीं। मैं स्वतः कटकमें देखकर आया हूं। वह अपने मित्रोंके साथ पिताजीके पास चला गया है। वहांपर दीक्षा लेगा। सुनंदादेवी पुनः विलाप करती हुई कहने लगी कि कैसा निष्ठुर हृदय है वह ! मै बडे भाईको देखकर आता हूं ऐसा कहकर चलागया ! क्या वहां जानेपर वैराग्यकी उत्पत्ति हुई !। नहीं होसकता, झंझानिल ! बोलो क्या हुआ !

झंझानिल—माता ! आपका कहना ठीक है। यहांपर यही कहकर गये थे कि मै बडे भैयाको देखनेके लिए जावूंगा। परंतु वहां जानेपर युद्ध करनेका ही हठ किया। बादमें मित्रोंने मल्ल, जल व नेत्र युद्धका निर्णय किया। इन युद्धोंमें भी भाईका हृदय दुखेगा इस विचारसे भरतजीने प्रत्यक्ष युद्ध नहीं किया। स्पष्ट सब सेना सुनें इस रूपसे कहा कि 'भाई तुम्हारी जीत होगई, मै हारगया। इतना ही क्यों ! भरतजीने स्पष्ट कहा कि "बाहुबलि षट्खंड राज्यका पालन तुम करो मुझे एक छोटासा राज्य दे दो, मैं आनंदसे रहूंगा। " इस से भी अधिक उन्होंने चक्ररत्न को बाहुबलि की सेवामे जाने के लिए कहा, जब वह नहीं गया तब धक्का देकर बाहुबलिके पास भेजा। इन बातोंसे स्वतः लज्जित होकर बाहुबलि दीक्षाके लिए चले गये।

इन बातोंको सुनकर पुनः सुनंदा देवीको दुःख होरहा है। पुनः पुनः मूर्च्छित होती है व जागृत होकर विलाप करती है। बेटा ! तुमने मुझे मारा, तुम्हें अपनी स्त्रियोंका ध्यान नहीं रहा, अपने छोटे पुत्रोंका

भी विचार नहीं रहा। इस उमरमें दीक्षा लेना क्या उचित है ? बेटा ! बडे भैयाके विरोधमें खडे होकर रणभूमिमें वैराग्य उत्पन्न हो, एवं जवानीमें दीक्षा लो, इस प्रकार भूलकर भी मैंने कभी आशिर्वाद नहीं दिया था। फिर ऐसा क्यों हुआ ? लोकको मोहित करनेवाला तुम्हारा रूप कहा ? तुम्हारा वैभव कहा ? व यह मुनिवेष कहा ? यह सब स्वप्नके समान मालुम होता है। इस प्रकार बाहुबलिकी माता हर तरहसे दुःख कर रही है।

इधर कामदेवके अंतःपुरमें जब यह समाचार मालुम हुआ, राणियां परवश होकर रोने लगी। उन को मर्यादातीत दुःख हो रहा है। मोक्ष जानेका समाचार होता तो वे सब निराश हो जाती। परंतु दीक्षा लेने का समाचार होनेसे फिरसे पति को देखनेकी इच्छा है। अंतःपुर दुःखमय हो रहा है। विशेष क्या ? बिजली चमककर मेघकी गर्जना होकर अच्छी तरह बरसात जिस प्रकार पडती है उस प्रकार अश्रुजल की वर्षा उस समय हो रहा है। देव ! क्या हमें छोडकर चले गये ? जीते जीते जान से मारा हमें ! तुम्हारे लिए अंगनाओंके संयोग से उपेक्षा होगई ? क्या मुक्त्यंगना के संग की ओर चित्त बढा है ? युद्धस्थानके बहानेसे दैव तुम्हे आगे लेगया, आश्चर्य है ! प्राणकांत ! आपको जो गर्व उद्भव होगया यह हुण्डावसर्पिणीका ही फल है। कामदेव होकर भी जब तुमने स्त्रियोंको मारा तो तुम्हे पुष्पबाण कहना चाहिये या सर्पबाण कहना चाहिये ? देव ! तुम अनेकबार कहते थे कि अपन लोगोंके शरीर दो हैं, आत्मा एक ही है। इस प्रकार कहकर हमारे चित्तको अपहरण किया तो क्या हम अब यहां रह सकती है ? तुम्हारे पीछे ही आती हैं। हे प्रिय तोते ! हम-लोग अब पतिदेवके मार्ग में जाती हैं। हमारा स्मरण तुम अब मत करो।

त्राणपक्षी ! मयूर ! हे झूला व शय्यागृह । सुन ! तुम्हारे भोग की हमें अब जरूरत नहीं है । हम अब योग के लिए जाती हैं । हे लता ! नंदनवन ! शीतलसरोवर ! कमल ! मारुत ! मत्तालि ! आप लोग भी सुनो, हम लोग पति जिस दिशाकी ओर गये है उसी दिशा की ओर जाती है । आप लोग सुखसे रहो ।

इस प्रकार अनेक प्रकारसे विलाप करती हुई सासूके पास आई व सासूके चरणोंमे नमस्कार कर कहा कि माताजी ! आपका पुत्र आगे गये है । हम लोग जाकर उनको समझाकर वापिस लाती है । जाते समय उन्होंने हमसे कहा था कि " मैं युद्धके लिए नहीं जा रहा हूं। बडे भैयाको नमस्कार कर वापिस आवूंगा " इस प्रकार हमें फंसाकर चले गये है, ऐसे धोकेबाज को दीक्षा दी जा सकती है क्या ? हम लोग जाकर मामाजी (आदिप्रभु) से ही इस बातको पूछेंगी, हमें आज्ञा दो । माताजी ! खाया, पीया, मोज किया, असंख्यवैभव का अनुभव किया । अब यहा रहने से क्या प्रयोजन ? पतिदेव जिस दीक्षा के लिए गये है उसी दीक्षा की ओर हम भी जायेंगी, आज्ञा दो । नेत्र व चित्तके लिए आनंद उत्पन्न करनेवाले अत्यंत सुंदरशरीर के प्रति भी तुम्हारे बेटेने उपेक्षा की तो हम लोग इस शरीर को तपश्चर्या में लगाकर दंडित न करें तो जातिक्षत्रियपुत्री हैं ? माता ! देरी क्यों ? हमें भेजो, पति के जाने के बाद सतियां घर पर रहें यह उचित नहीं है । हम लोग कैलास में जाकर ब्राह्मी सुंदरीके पास में रहेंगी, अनुमति दो ।

सुनंदादेवीने कहा कि मैं भी दीक्षा के लिए आती हूं । मेरे लिए अब यहां क्या है ? तथापि भरत व बडी बहिनको कहकर जाना चाहिए । इसलिए मुझे थोडी देरी है, आप लोग आगे बढें । इस प्रकार उनके साथ उन के भाई व विश्वासपात्रोंको साथमें देकर उन राणियोंको रवाना किया ।

जिस समय सुनंदादेवीने बहुवोंको रवाना किया उस समय सुबल राज नामक ३ वर्षके बाहुबलिका पुत्र आकर रोकर आग्रह करने लगा कि पिताजीको बतावो । बाहुबलि अनेकवार अपनी गोदपर रखकर उसे खिलाते थे । परंतु पिताके नहीं दिखनेसे दादीसे पिताको दिखानेके लिए हठ कर रहा है । उस समय सुनंदादेवीने नौकरको बुलाकर कहा कि इसे ले जावो, बडी बहिन यशस्वतीके पास ले जाकर भरतको पिताके स्थानमें दिखानेके लिए कहो । तब बालकको कहा कि बेटा ! जाओ, सेनाके स्थानमें तुझे पिताजीको दिखा देंगे । बालक उनके साथ चला गया । सेनास्थानमें ले जाकर महलमें स्थित भरतजीके पास बालकको लेगये । बालकको देखनेपर भरतजीका गला भर आया । वहापर जाते ही पुनः उस बालकने पूछा कि मेरे पिता कहा हैं ? लोगोने भरतजीको बताया, तो बालक मुंह हिलाकर कहने लगा कि मेरे पिता नहीं है । महाबलकुमार कहने लगा कि भाई,यही हमारे पिता हैं । तथापि बालकको संतोष नहीं हुआ । बालक कहने लगा कि यह मेरे पिता नहीं हैं । मेरे पिता ऐसा है, इस प्रकार अपने हरे वर्णके कपडेको दिखाकर कहने लगा । भरतजीसे रहा नहीं गया । सुबलि ! आवो, मैं तुम्हारे पिताको बताऊंगा, कहते हुए भरतजीने उसे अपनी गोदपर लिया । बच्चेका रोना एकदम बंद होगया । सब लोग आश्चर्य चकित होकर कहने लगे कि न मालुम क्या भरतजीके हाथ में वश्यमोहन विद्या तो नहीं है ?

भरतजी बालक से कहने लगे कि सुबलि ! तुम्हारे पिता हम सब के आनंद को भंगकर चला गया । बेटा ! तू रोवो मत । इस प्रकारके छोटे बच्चों को फेंककर तपश्चर्याको जाने के लिए न मालुम उसका चित्त कैसा हुआ ? बेटा ! पापीके पेटमें तुम लोग आये । इस प्रकार भरतजीने क्रोधके आवेशमें कहा । भरतजी की राणियोंको जब यह मालुम हुआ कि पौदनपुरसे छोटा बच्चा आया है, उसी समय

बाहर समाचार भेजा कि उसे अंदर भेजा जाय, भरतजीने कहा कि सुब्रलि ! जावो, अंदर तुह्मारी दादी है, उसके पास जावो ।

इतनेमें बाहुबलिकी स्त्रियां विमान पर चढकर दीक्षाके लिए आकाशमार्गसे जा रही थी । उसे देखकर चक्रवर्तिकी सेनाको बडा दुःख हुआ । भरतजीकी राणियां राजांगणमें एकत्रित होकर उनके गमनको बडे दुःखके साथ देख रही है । भरतजी आसुवोंसे भरी आंखोंसे देख रहे है और नाक पर उंगली दबाई । इतनेमें एक विश्वस्त दूतने लाकर एक पत्र दिया । पत्रको देखते ही भरतजी महलकी अंदर चले गये । पत्रके समाचारको जाननेके लिए सभी राणियां वहां आगई । उनमेंसे एक स्त्री भरतजीकी अनुमति पाकर उस पत्रको बांचने लगी वह पत्र निम्न लिखित प्रकार था ।

पौदनपुर राजमहल.
मिती...................

श्री सुभद्रादेवी आदि अंतःपुर की समस्त राणियोंको विनय से नमस्कार कर इच्छादेवी आदि सतियां बहुत उल्लासके साथ निम्न लिखित पंक्तियोंको लिखती है ।

बहिनो ! हम लोगोंको अब इस गार्हस्थिक जीवनसे उपेक्षा होगई है, अब हम तापसीयजीवन को अनुभव करना चाहती है । हमारे पतिदेव जिस दिशाकी ओर गये है उसी दिशाकी ओर हम जाना चाहती है । इस के लिए आप लोग मन में बिल्कुल चिंता न करें । भावाजी [भरतजी] से बिल्कुल विरस नहीं हुआ । हमारे पति का दैव ही ऐसा था । वही उन को ले गया । कौन क्या करें ? हम लोग अब ब्राह्मी सुंदरीके पास मे रहकर तपोवनकी क्रीडा करेंगी । हमारे समान आप लोग अर्धभोगी न होकर अपने पतिदेवके साथ चिरकाल

सुख भोगकर बुढापेमें आत्मसिद्धि कर लेवें, यही हम लोगोंकी कामना है। लोक सब सुखी हो, भोगराज्य आपके लिए रहे, योगराज्य हमारे लिए रहे। हम उसे पाकर उस का अनुभव करेंगी, परमेश! ते नमः स्वाहा। इति.

इच्छा महादेवी.

पत्रको बांचनेपर सबको बडा दुःख हुआ। भरतजी को भी बडा दुःख हुआ। इतने में और एक दुःखद घटना हुई भरतजीके ९३ भाई दीक्षा लेकर जो चले गये थे उस समाचारको भरतजीने मातुश्रीको अभी तक नहीं कहा था, उनका विचार था कि अयोध्याको जानेके बाद ही यह समाचार मातुश्रीको कहें। परंतु यह समाचार अपने आप यशस्वती को मालुम हो गया। इसलिए राजमंदिरमे एकदम दुःखका समुद्र ही उमड गया है।

भरतजी शोकनादको सुनकर मनमें व्याकुलतासे कहने लगे कि हा! मेरे लिए यह चक्ररत्न क्यों मिला? यह राज्यपद महान् कष्टदायक है। इस संपत्ति के प्राप्त होनेसे क्या प्रयोजन? संपत्तिके मिलनेपर बंधु बांधवोंको सुख पहुंचाना मनुष्यका धर्म है। अपने कुलके लोगोंको रुलानेकी संपत्तिके लिए धिक्कार हो। अनेक व्यक्तियोंको दुःख देनेवाले राज्यसे गरीब होकर रहना अच्छा है। चित्तमें कलुषताको धारण करनेसे आत्मामें मग्न रहना सबसे अधिक अच्छा है। तब क्या? मंत्रीको कहकर अर्ककीर्तिको पट्टाभिषेक कराकर तपश्चर्याके लिए जावूं? छी! ठीक नहीं। इसे लोक मर्कटवैराग्य कहेगा। समस्त भूमंडलको विजय कर अपने नगरके बाहर उस साम्राज्यपदको फेंककर जावूं तो लोग कहेंगे कि भरतको देशमें भ्रमण कर पित्तोद्रेक हो गया है। मेरे कारण से मेरे सहोदर दीक्षाके लिए गये और मैं भी दीक्षाके लिए जावूं तो लोग कहेंगे कि यह बच्चोंका खेल है। जितनी संपत्ति बढती है उतना अधिक हम रो सकते हैं। यह निश्चय हुआ। मेरे लिए बडा

दुःख हुआ। इसे शांत करने का उपाय क्या है ? इस प्रकार भरतजी विचार करने लगे। पुनः अपने मन में कहते हैं कि संसार में कोई भी दुःख क्यों नहीं आवे, परंतु परमात्माकी भावना उन सब दुःखोंको दूर करती है। इसलिए आत्मभावना करनी चाहिए। इस विचारसे आंख मीचकर आत्मनिरीक्षण करने लगे।

मट्टीमें गढी हुई छाया प्रतिमाके समान आत्मसाक्षात्कार हो रहा है। शांतवातावरण है, आठों कर्मोंकी मट्टी बराबर नीचे गलकर पड रही है। जिस समय अंतरंग में प्रकाश हो रहा है उस समय विशिष्ट सुखका अनुभव हो रहा है। और उसी समय सुज्ञानकी वृद्धि हो रही है। अभिघातज्वर के समान दुष्कर्म कंपित होकर चारों तरफ से पड रही है।

गुरु हंसनाथ परमात्मा ही उस समय सम्राट्की चित्तपरिणतिको जाने। न मालुम उस चित्त में व्याप्त दुःख किधर चला गया ?। उस समय भरतजी दस हजार वर्षके योगीके समान थे। पुत्र, मित्र, कलत्र माता, सेना व राज्यको वे एकदम भूल गये। विशेष क्या ? वे अपने शरीरको भी भूल गये। उस समय उन के चित्त में अणुमात्र भी परचिंता नहीं है। गुणरत्न भरतजी आत्मामें मग्न थे।

न मालुम भरतजीने कितना आत्मसाधन किया होगा ? जब सोचते है तभी परमात्मप्रत्यक्ष होता है। वह राजा घरमें रहने पर भी कालकर्म उस से घबराते हैं।

क्या ही विचित्रता है, महल में सब रोना मचा हुआ है। सब लोग शोकसागरमें मग्न है। परंतु राजयोगी सम्राट् अकंप होकर परमात्मसुखमें मग्न हैं। बार २ उनको परमात्मदर्शन हो रहा है। और दुःख धीरे २ कम होता जा रहा है। इस प्रकार तीन दिन तक ध्यानमें बैठे रहे।

लोग आकर देखकर जाते है कि अभी उठेंगे, फिर उठेंगे, बाहरसे लोग आकर पूछ पूछकर जाते हैं। परंतु भरतजी सुमेरुके समान निश्चल हैं। इस बीचमें कुछ लोगोंने उपवास धारण किया, किसीने एकभुक्त और किसीने फलाहार, इस प्रकार राजमहलमें व सेनामें नियम लेकर सबने तीन दिन तपश्चर्याके साथ व्यतीत किया। अपनी सेनाके साथ तपमें भरतजी मग्न हैं। इस सामर्थ्यसे स्वर्गलोक भी कंपित हुआ। इस समाचारको सुनकर सुनंदादेवी (छोटी मा) भी अपने पुत्रको देखनेके लिए आई। पौदनपुरमें स्वतः तीन उपवासकर विमानारूढ होकर सुनंदादेवी आई है। और महलमें पहुंचकर भरतको देखा। अपनी छोटी माके आनेपर भरतजीने परमात्माको भक्तिसे नमस्कार कर आख खोलली। परंतु आखे आंसुसे भरगई। एकदम उठकर सम्राट्ने छोटी माके चरणोंमें मस्तक रक्खा। माता! अपराधीके पास आप क्यों आई? इस प्रकार दुःखके आवेगसे भरतजीने कहा। उत्तर में सुनंदादेवी कहने लगी कि बेटा! इस प्रकार मत बोलो। तुम अपराधी नहीं। तुमने क्या किया? उसने तुम्हारे साथ थोडा अभिमान किया व चला गया। इसकेलिए तुम क्या कर सकते हो? दोप तो मूर्खों से हो सकता है? बेटा! तुमसे क्यों कर होसकता है?

भरतजी—जननी! मेरी दोनों मातावोंको मैंने कष्ट दिया। बहुवोंको तपश्चर्याके लिए जाती हुई, स्वप्नमें नहीं, प्रत्यक्ष देखा। माता! यह सब मेरे कारणसे हुए न? फिर मेरे लिए दोष क्यों नहीं?

सुनंदादेवी—बेटा! उनका दैव उन्हे लेकर चला गया। हमें भी थोडा दुःख जरूर हुआ। परंतु तीन दिनके बाद वह उपशात हुआ। इसमें तुम्हारा क्या दोप है? भूल जावो, इस दुःखको। मैंने पहिलेसे उसे बहुत समझाया कि तुम युद्ध मत करो, भाईके साथ युद्ध के लिए नही जावो, बेटा! मुझे फसाकर चले आया, मैं भाईको नम-

स्कार करता हूं यह कहकर चला गया। तुमने उसके साथ जो अच्छा व्यवहार किये वह भी मैंने सुन लिये। क्या करें, तुम्हारी बातको भी नहीं सुनकर चला गया। जाने दो, नीतिमार्ग व मर्यादाको उल्लंघन कर जो आते हैं वे अपने आप ही लज्जित होकर जाते हैं। इसमें तुम्हारा क्या दोष है ? व्यर्थ ही दुःखकर शरीरशोषण मत करो, बेटा ! चिंता ही बुढापा है, और संतोष ही जवानी है। इसलिए तुझे मेरा शपथ है; शोक मत करो। सब लोग गये तो क्या हुआ। यदि तू अकेला रहो तो भी हम लोगोंको संतोष होगा, इसलिए क्षमा करो।

भरतजीके चित्तमें थोडीसी शांति आई। उसी समय भरतजी के पुत्र व राणियोने आकर सासूके चरणोमें नमस्कार किया। सबको सुनंदादेवीने आशिर्वाद दिया। तदनंतर भरतजी व सुनंदादेवी यशस्वतीके पास गये। वहां थोडा दुःख व्यवहार होकर फिर शात हुआ। तदनंतर स्नान, देवपूजन आदि होनेके बाद सब लोगोने मिलकर पारणा की, इधर सेनामें शांति स्थापित हुई। उधर बाहुबलिकी राणियोने भगवान् आदिनाथके दर्शनकर अर्जिका की दीक्षा से दीक्षित हुई।

दैवगति विचित्र है। भरतजीने भरसक प्रयत्न किया कि अपने भाई के मनमे कोई क्षोभ उत्पन्न न हो, और वह दीक्षा लेकर न जावें। परंतु कितने ही प्रयत्न करने पर भी वह न रुक सका। भाई बाहुबलि चला गया। उसकी हजारों राणियां भी दीक्षा लेकर चली गईं। इस से सर्वत्र हा हाकार मच गया। भरतजीको भी मन में बडा दुःख हुआ कि इन सब का कारण मैं हूं। राज्य के कारण से मैंने इन सब को रुलाया। इत्यादि कारण से उन्होंने मनमें बहुत ही अधिक दुःखका अनुभव किया। साथ ही विवेकी होने के कारण उस दुःखकी शाति का भी उपाय सोचा। तीन दिनतक उपवास रहकर आत्मनिरीक्षण किया। सर्वत्र उस तपोबल से शांति हुई। परमात्माका दर्शन दुःख-

शमनके लिए अमोघउपाय है, भरतजी सदा इसीका अवलंबन करते हैं। वे भावना करते हैं कि—

"हे परमात्मन्! मेरु पर्वतपर चढकर मेदिनी को देखने के समान ध्यानारूढ होकर लोकको देखनेका सामर्थ्य तुममें है। हे सुखधीर! मेरे हृदय में बने रहो।

हे सिद्धात्मन्! लोक में समस्त जीव कर्म के आधीन होकर वह जैसे नचाता है वैसे नाचते हैं, परंतु निष्कर्म स्वामिन्! आप उन को रागद्वेषरहित दृष्टि से देखते हैं। अतएव निर्मल आनंद का अनुभव करते हैं। इसलिए मुझे भी सन्मति प्रदान कीजिये"

इसी भावना के फल से भरतजी अनेक दुःख संकटके समय से पार होते हैं।

इति चित्तजनिर्वेगसंधिः।

—।—

नगरीप्रवेशसंधि

भरतजीकी छोटी मा सुनंदादेवी दीक्षाके लिए उद्युक्त हुई। तब भरतजीने निवेदन किया कि बाहुबलिके पुत्रोंके बडे होनेतक ठहरना चाहिये। बादमे विचार करेंगे। भरतजीने कहा कि माताजी! क्या बाहुबलि ही आपके लिए बेटा है? मै पुत्र नहीं हूं? इसलिए कुछ समय मेरी सेवाओंको ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार कहते हुए भरतजीने अपनी स्त्रियोंकी ओर देखा तो वे समझ गई। सभी स्त्रियोने सासूके चरणोपर मस्तक रखकर प्रार्थना की कि अभी दीक्षाके लिए नहीं जाना चाहिये।

सुनंदादेवीने कहा कि बेटा! क्या तुम्हारी बातको ही मै मान नहीं सकती? इशारेसे स्त्रियोंसे नमस्कार करानेकी क्या जरूरत है? इस प्रकार कहकर सब स्त्रियोंको उठनेके लिए कहा।

भरतजीने कहा कि माताजी! आप छोटी बडी बहिन एक साथ रहकर हमें व लाख स्त्रियोंको सेवा करनेका अवसर देवें। बाहुबलिकी सर्व संपत्ति उसके पुत्रोंको रहे। और उसकी देखरेखके लिए योग्य मनुष्योंको नियत कर अपन सब अयोध्यापुरमे जावें। सुनंदादेवीने उसे स्वीकार कर लिया। प्रणयचंद्रम मंत्री व गुणवसंतक सेनापतिको बुलाकर सर्व विषय समझा दिया गया। परंतु उन लोगोनें निवेदन किया कि यह बडे संतोषकी बात है। परंतु हम दीक्षाके लिए जायेंगे। उसके लिए अनुमति मिलनी चाहिये।

भरतजीने कहा कि बाहुबलिकी सेवा आप लोगोंने इतने दिन की मैने आप लोगोंका क्या बिगाड किया है? इसलिए इन बच्चोंके बढने तक ठहरना चाहिये। इस दुःखके समय जाना नहीं चाहिये, आप लोग पौदनपुरमें प्रजापरिवारोके सुखकी कामना करते हुए रहें। मंत्री व सेनापति समझ गए। उन्होंने कहा कि राजन्! राजाके विना हम

लोग वहांपर नहीं रह सकते हैं। इसलिए बाहुबलि के बडे पुत्रको राज्याभिषेक कर हमारे साथ भेज दीजिए। हम सब व्यवस्था करेंगे। बुद्धिसागर मंत्रीने भी सम्मति दे दी। उसी समय महाबल कुमारको बुलाकर पौदनपुरका पट्टाभिषेक किया गया। और मंत्री सेनापति का योग्य सत्कार कर भरतजी महलमे चले गए। सुनंदादेवीसे सर्व वृत्तांत कहा गया, उनको भी संतोष हुआ। तीनों पुत्रोंसे कहा कि बेटा! तुम लोगोंके संरक्षणके लिए माताजी तुह्मारे साथ हैं। तथापि मैं भी कभी कभी हितचिंतकोंको भेजकर तुह्मारे विषयको जानता रहूंगा। इस प्रकार बहुत प्रेमसे कहकर, विश्वासपात्र सेवकोंको एवं माताकी दासियोको उचित वस्त्र रत्नादिक वस्तुओंको प्रदान कर एवं बाहुबलिके पुत्र मित्रोंको योग्य सन्मान कर स्वयं अयोध्याकी ओर रवाना हुए।

अयोध्या समीप आते हुए देखकर सेनाको बडा हर्ष हो रहा है। ८-१० कोस दूरसे जिनमंदिर व महल दिखने लगे हैं। नगरके समीप आनेपर भरतजी पट्टगजपर आरूढ हुए। और उनके सर्व सुपुत्र भी छोटे छोटे हाथियोपर आरूढ हुए। करोडों प्रकारके बाजे, छत्र चामर आदि वैभवोंसे संयुक्त होकर भरतजी आ रहे हैं।

अयोध्या नगरकी समस्त प्रजावोंको साथमें लेकर माकाल नामक व्यंतर भरतजीके स्वागतके लिए आया व विनयसे नमस्कार कर कहने लगा कि स्वामिन्! इस नगरको छोडकर आपको साठ हजार वर्ष बीत गये। तबसे हम और पुरवासी आपके दर्शन के लिए जो तपश्चर्या कर रहे हैं, उसका फल हमें आज मिलगया। भरतजी मुसकराये। पुनः माकाल कहने लगा कि स्वामिन्! आपके साथ अनेक देशोंमें भ्रमण करनेवाले इन सेनाजनोंको कोई प्रकार कष्ट नहीं हुआ। परंतु आपके वियोगमें रहनेवाले हम लोगोंको बडा कष्ट हुआ। भरतजी उसकी तरफ हसते हुए देख रहे थे। माकाल व प्रजावोंसे योग्य उपचार वचनोंको

बोलकर सम्राट् अयोध्यानगरके परकोटेके अंदर प्रवेश कर गये । अंतःपुर तो महलकी ओर चला गया। भरतजी अपने पुत्रोंको साथमें लेकर राजमार्गमें होते हुए जिनमंदिरकी ओर आरहे हैं।

पुरजन पुरस्त्रियां इस जुलुसको बडे उत्साहके साथ देख रहे हैं। जिसप्रकार एक गरीबको निधिके मिलनेपर हर्ष होता है उस प्रकार सबको हर्ष हो रहा था। वे आपसमें बातचीत कर रहे थे कि जबसे राजा यहांसे गये हैं तबसे हम लोगोंको मालुम होरहा था कि हमारी एक बडेभारी चीज खोगई है। अब ये आगये हैं। हम लोगोंको बुलाकर बोलनेकी जरूरत नहीं। संपत्तिके देनेकी जरूरत नहीं। हमारे नगरमें रहे तो हुआ। इससे अधिक हम कुछ भी नहीं चाहते हैं।

कोई बोलते हैं कि इसका पुण्य कितना तेज है। इसको देखने मात्रसे वस्त्राभूषणोंको पहननेके समान, विशेष क्या, भोजन करनेके समान सुख मालुम होता है। पापका भी खंडन होता है! पुरजनोंके होते हुए भी जब यह राजा नहीं था यह नगर सूना सूना मालुम हो रहा था। यह परनारी सहोदरके आनेपर आज नगरमें नई शोभा आगई है। कांतिरहित कमल, पतिरहित सति, गुरुरहित तीर्थ एवं राजा से विरहित राज्य कभी शोभाको प्राप्त नहीं हो सकते हैं। उस दिन जाते समय हमारे राजा एक हाथीपर चढकर गए थे, अब आते समय हजारों पुत्रोंको हजारों हाथियोंपर चढाकर लाये हैं। अहोभाग्य है। भरतजीके आनेपर अयोध्यानगरका भाग्य द्विगुणित हुआ।

कोई उस समय कहने लगे कि जबसे स्वामी यहांसे सेना परिवारके साथ गये है अयोध्याकी प्रजायें दुःख कर रही है। अपने नगरको दुःखी बनाकर दुनियाका संरक्षण करना क्या यह राजधर्म है? दूसरा व्यक्ति कहने लगा कि राजन्! लोकविजय के लिए तुम्हारे जाने

की क्या जरूरत थी, तुम अयोध्यामें सुखसे रहकर नौकरोंको भेजते तो वे ही वशमें कर लाते, तुह्मारे घूमनेकी क्या जरूरत थी । एक मनुष्य कहने लगा कि हम लोग जाकर राजावोंसे कहें कि भरतेशका शपथ है, तुम लोगोंको आना होगा, उस हालत में कौन राजा ऐसा है जो तुह्मारी सेवामें नहीं आ सकता था । ऐसी अवस्थामें परिवार क्यों ? एक एक नौकर ही जाकर यह काम कर सकता था । दूसरा बोलता है कि अस्त्र शस्त्रोंकी आवश्यकता नहीं, सेनाकी जरूरत नहीं, राजन् ! राजाओंको केवल तुह्मारे नामको कहकर पकडकर मैं ले आता । एक घासको बेचनेवाला कहता था कि स्वामिन् ! व्यर्थ ही दुनियामें घूमकर क्यों आये ? मुझे अगर भेजते तो मै सब को घासके समान बांधकर ले आता ।

इस प्रकार वहा हर्षातिरेकमें लोग अनेक प्रकारसे बातचीत कर रहे थे । भरतजी उसे सुनते हुए, लोगोंको अनेक प्रकारसे इनाम देते हुए राजमार्गसे जा रहे हैं । अपनी स्तुति करनेवालोंको एवं कनकतोरण रत्नतोरणादिकको देखते हुए भरतजी आगे बढ रहे है । सबसे पहिले वे हाथीसे उतरकर अपने पुत्रोंके साथ जिनमंदिरमें पहुंचे । वहापर भगवान् आदिनाथकी भक्ति व वंदना की व योगियोंकी भी त्रिकरण-योगशुद्धिसे वंदना की । पुनः हाथीपर आरूढ होकर राजमहलकी ओर रवाना हुए । राजमार्गकी शोभा अपूर्व थी । राजमंदिरके पास पहुंचकर सबको यथायोग्य विनयसे उनके लिए नियत स्थानमें भेजा । व स्वयं जय जयकार शब्दकी गुंजारमें राजमहलमें प्रविष्ट होगये । राणियोंनें अंदर जानेपर आरती उतारी, भरतजी परमात्माको स्मरण करते हुए अंदर गये । असंख्यात कमलोंसे भरे हुए सरोवरके समान पुत्रकलत्रोंके समूहसे वह राजमंदिर मालुम हो रहा था । विशेष क्या ? विवाहके घरके समान जहां देखो वहा आनंद ही आनंद होरहा है । षट्खंडकी संपत्ति एक ही नगरमें भरी हुई है ।

आठ दस रोज आनंदसे बीतनेके बाद एक दिन दरबारमें उपस्थित होकर भरतजीने कहा कि युवराज तो दीक्षित हुआ। अब युवराजपदके लिए यहां कौन योग्य है? तब उपस्थित समस्त राजाओंने एवं मंत्री मित्रोंने प्रार्थना की कि स्वामिन्! बाहुबलि यदि दीक्षा लेकर गया तो क्या हुआ। युवराजपदके लिए अर्ककीर्तिकुमार सर्वथा योग्य है। वह नीतिनिष्ठात्म है, आपके समान विवेकी है, यही इस पदके लिए योग्य है।

भरतजीको भी संतोष हुआ। उन्होंने योग्य मुहूर्तमें युवराज पट्टका विधान किया नगरका श्रृंगार किया गया। जिनपूजा बहुत वैभव के साथ की गई। और अर्ककीर्ति कुमारका युवराज पट्टोत्सव हुआ। मेरे बादमे यही इस राज्यका अधिकारी है। इसे सूचित करते हुए भरतजीने अपने कंठहारको निकालकर उसके कंठमे डाल दिया। सिंहासनपर बैठालकर स्वयं भरतजीने कुमारको वीरतिलक किया। भरतजी भाग्यशाली है। अधिराज पिता है, पुत्र युवराज है, इससे अधिक भाग्य और क्या होसकता है। अमृतपान किए हुए अमरोंके समान सभी आनंदित होरहे है। अर्ककीर्तिके सहोदरोंने अधिराज व युवराज के चरणोंमें भेंट रखकर साष्टांग नमस्कार किया। अर्ककीर्तिने कहा कि पिताके समान मुझे साष्टांग नमस्कार करनेकी जरूरत नहीं। तब भरतजीने कहा कि बेटा! रहने दो ठीक है। क्या-तुम भी मेरे सहोदरोंका ही व्यवहार चाहते हो। इसके बाद हिमवान पर्वत तकके समस्त राजावोंने भेंट रखकर नमस्कार किया। इस प्रकार बहुत वैभव के साथ युवराज—पट्टोत्सव हुआ। अर्ककीर्तिने पिताके चरणोंमें मस्तक रखकर, राजागण मंत्री मित्रोंका उचित सन्मान कर राजमहल की ओर रवाना हुआ।

फिर चार आठ दिन बीतनेके बाद मंत्रीने आकर प्रार्थना की कि राजन्! सेनाके साथ आये हुए राजागण अपने २ स्थानपर जाना चाहते

हैं। इसलिए अनुमति मिलनी चाहिये । भरतजीने तथास्तु कहकर सर्व व्यवस्थाके लिए आज्ञा दी । कामवृष्टिको कहकर भरतजीने पहले सबको बहुत आनंदसे स्नान कराया। तदनंतर महलमें सबको दिव्य भोजन कराया। स्वर्गीय सुधारससे भी बढकर वह उत्तम भोजन था इससे अधिक क्या वर्णन करें । व्यंतरोंका भी यथायोग्य सन्मान किया गया । भोजन से तृप्त होनेके बाद सबको हाथी घोडा, वस्त्रआभूषण, रथरत्नादिकको प्रदान करते हुए उनका सन्मान किया, एव कृतज्ञताको व्यक्त करते हुए भरतजीने कहा कि आप राजालोग सब सुनें।

आप सबके सब मेरे हितैषी है। अतएव इतने कष्टोंको सहन कर अनेक स्थानोंमें फिरते हुए मेरे राजमंदिरतक आये। आप लोग सब राजा होते हुए भी मुझपर आपलोगोंका प्रेम है। नहीं तो आपलोग मेरे साथ क्यों आते। कुछ लोगोने कन्याप्रदान किये, कुछने हाथीघोडा रथ आदि भेटमें दिये। यह सब किस लिए? क्षत्रिय कुलके स्वाभिमानसे आपलोगोने मेरा सन्मान किया है। पुण्यमात्र मुझमें थोडा अधिक है। नहीं तो उत्तम क्षत्रियकुलमें प्रसूत आप और हममें क्या अंतर है। व्यंतरोंने भी हमारे प्रति प्रेमसे जो सहयोग दिया, उसका मैं क्या वर्णन करूं? उन्होने मुझे संतुष्ट किया। वे मेरे हितैषी बंधु हैं। आप लोगोंको बडा कष्ट हुआ । इसलिए अब अपने २ नगरमें जावें। मैं जब बुलावू आवें या आपलोगोंकी जब इच्छा हो तब आकर जावें।

इस प्रकार अनन्यबंधुत्वसे सम्राट् जिस समय बोल रहे थे समस्त राजावोंको बडा ही आनंद होरहा था। भक्तिप्रबंधसे उन्होने निम्नप्रकार निवेदन किया।

स्वामिन्! आपके साथ रहना तो हम लोगोंको बडा आनंददायक था, हमें कोई कष्ट नहीं हुआ। अब हम जायेंगे तो हमें बडा कष्ट होगा।

देव ! हम लोग आपको क्या देसकते है। यदि पुजारीने लाकर भगवंतके चरणोंमें एक फूलको अर्पण किया तो क्या वह पुजारीकी मेहरबानी है या भगवंतकी महिमा है ! राजन् ! भंडारी जिसप्रकार आपकी जरूरतको समझकर समयमें आपको कोई पदार्थ देता है, उसी प्रकार हम लोगोंने आपकी चीजको आपको दी, इसमें बडी बात क्या हुई ? सार्वभौम ! कलचर मोती कभी असल मोतीकी बराबरी कर सकती है? । कभी नहीं। क्षत्रियकुलमें उत्पन्न होने मात्रसे हम आपकी बराबरी कैसे कर सकते है। यह सब आपकी दया है। परमात्मवेदी ! आपकी पादसेवा करनेका भाग्य धन्यजनोंको ही मिल सकता है । सबको क्यों कर मिलेगा ? नरलोकमे रहनेपर भी सुरलोकके सुखका हमने अनुभव किया। रोज विवाह, रोज सत्कार, रोज विनोद, सर्वत्र आनंद ही आनंद । जानेके लिए पैर हमारे साथ नहीं देरहा है। तथापि जानेके लिए जो आज्ञा हुई है उसका उल्लंघन कैसे कर सकते है । इसलिए अब हम जाते हैं। " इस प्रकार कहते हुए सब राजाओंने साष्टांग नमस्कार किया व सब वहांसे जाने लगे । उस समय सुकंठ व वज्रकंठ नामक वेत्रधारियोंने खडे होकर सबका परिचय कराया ।

इक्षुचापाग्रज ! बोधेक्षण ! चित्तावधान ! यह दक्षिण समुद्रके अधिपति वरतनु सुरकीर्ति जारहे है देखो ! समुद्रको भी तिरस्कृत करनेवाले गाभीर्यको धारण करनेवाला यह पश्चिमसमुद्रके अधिपति प्रभासेंद्र प्रतिभासके साथ जारहा है। हे विजयलक्ष्मीपति ! यह विजयार्धदेव है। हे समवसरणनाथात्मज ! हिमगिरीके अग्रभागमे रहनेवाला यह हिमवंत देव है। हे कालकर्मारण्यदावानल ! हंसतत्वावलंब ! त्रिभुवनरत्न ! यह तमिस्रगुफाके अधिपति कृतमाल है । स्वामिन् ! खंडप्रपातगुफाके अधिपति नाट्यमालको देखो, उत्तरभागके अनेक राजावोंके साथ मिलकर जानेवाले कलिराजको देखो, पूर्वखंडके राजावों के साथ जानेवाला यह कामराज है। मध्यमखंडके राजसमूहके साथ

जानेवाला यह मानी चिलातराज है, मानवेंद्र है। देखो, दक्षिण खंडके अनेक राजाओंके साथ जानेवाला यह उद्दंड राजा है, पूर्वखंडके राजावों के साथ यह वेतंडराज है। ये सब उत्तरश्रेणीके राजागण हैं। ये दक्षिणश्रेणीक विद्याधर राजा है । आर्यखण्डके समस्त राजा जा रहे हैं देखो।

तिरुलाण्यपति, मागधेंद्र, मालवेंद्र, काश्मीराधिपति, लाट महालाटाधिपति, चित्रकूटपति, भोटाधिपति, महाभोटाधिपति, कर्णाटकराज, चीनाधिपति, महाचीनाधिपति, काशीपति, सिंहलपति, बंगालभूनाथ, तुर्काधिपति, तेलंगाधिपति, करहाटराज, हुरुमुंजिनाथ, अंगदेशाधीश, पल्लवराज, कलिंगेंद्र, काम्भोजपति, वंगपति, हम्मीरनृप, सिंधुनृपति, गौलदेशाधिपति, कोंकणपति, मलेयालाधीश, तुलुराज, चोलराज, मलहाधिपति, कुंतलपालक, गुर्जरभूपति, नेपालेंद्र, पांचालराजा, सौराष्ट्रपति, बर्बरपति, आदि समस्तदेशके राजा सम्राट्‌को नमस्कार कर जा रहे हैं।

सबके जानेके बाद राजकुमारोंको बुलाकर उनके योग्य राज्योंको बढाकर दिया व सेनाके समस्त सेवकोंको भी उचित इनाम वगैरे देकर संतुष्ट किया। वहां किस बातकी कमी है ?

तदनंतर मागधामर ध्रुवगतिका सत्कार हुआ, तदनंतर मेघेश्वर [सेनापति] विजय जयंतको अनेक राज्योंको बढाकर दिया गया, और रत्नादिक दिये गये। बुद्धिसागर मंत्रीकी सलाह से मित्रोंको अनेक राज्य बढाकर दिये गये। सब लोग सम्राट्‌को नमस्कार कर चले गये।

मंत्री बुद्धिसागरसे पूछा गया कि तुम्हें किस चीजकी इच्छा है बोलो, उत्तरमें मंत्रीने कहा कि मुझे आपकी सेवाकी इच्छा है, दूसरा कुछ नहीं सचमुचमें जब षट् खंडको ही भरतने उसके हाथमें सोंपा था फिर उसे और क्या देना है, तथापि मंगलप्रसंगमें अनेक उत्तमोत्तम वस्त्राभूषणोंको देकर उसका आदर किया, तदनंतर सम्राट् महलकी ओर चले गये।

माताके चरणोंमें नमस्कार कर सब वृत्तांत कहा, मातुश्रीको भी संतोष हुआ। तदनंतर परमात्माके स्मरणको करते हुए अंतःपुरकी ओर गए। राणियोंको बडा हर्ष हुआ। पट्टरानीके पास बैठकर सम्राट् आनंदवार्ता कर रहे है। देवी! तुम्हारा जन्म यहींपर हुआ था, परंतु तुम्हारा पालन पोषण विजयार्धपर्वतपर हुआ। तथापि पुण्यने पुनः लाकर इस नगरमें प्रविष्ट कराया। उत्तरमें सुभद्रादेवीने कहा कि स्वामिन्! ठीक है, मेरे दैवका नियोग ही ऐसा था कि मेरा जन्म यहा होना चाहिए, और विवाह उत्तर खंडमें होना चाहिए, उसे कौन उल्लंघन कर सकते हैं? मेरी सहोदरियोंके साथ पहिले पाणिग्रहण होकर अंतमें आपके साथ मेरा विवाह होगया, यह भी दैव है। तब इतर राणियोंने कहा कि जीजी! वैसी बात नहीं है। तुम और तुम्हारे स्वामीके योगसे सर्व दिशाओंको जीतनेके कार्यमें हम लोगोंको आनंद पानेका योग था। स्वामी और तुम यहा उत्पन्न होकर आपकी जन्मभूमिको हमें बुलवाया। बडा आनंद हुआ। तब भरतजीने कहा कि वह पुर क्या? यह पुर क्या? भोगोपभोग में रहने वालोंके लिए सभी स्थान समान है। व्यर्थ ही आप लोग विवाद क्यो कर रही है। इस प्रकार भरतजीने समाधान किया।

अब एक वर्षके बाद भरतजी पिताके पास जायेंगे। वहीं से **योगविजय** का प्रारंभ होता है। भरतजी अपने समस्त सुखांगके साथ विघ्नरहित, दीर्घ राज्यको वशमें करके अयोध्यानगरमें प्रवेशकर अगणित राजाओंको अपने २ राज्योंमें भेजकर अयोध्यामें आनंदमग्न है। उत्तरमें हिमवान् पर्वत व तीनों भागोंसे समुद्रांत स्थित पृथ्वीको अपने आधीन कर सम्राट भरत अपने स्थानपर सुखसे आसीन हैं।

भरतजीका पुण्य प्रबल है। उन्होंने लीला मात्रसे दिग्विजय किया।

उन्हें कोई भी प्रकारका विघ्न नहीं आया। इसका विशिष्ट कारण है। वे सदा भावना करते हैं कि—

हे परमात्मन् ! आप ध्यानचक्र के द्वारा कर्मशत्रुवोंको भगाकर ज्ञानसाम्राज्यके अधिपति बनते हैं। इसलिए आप सुखके दरबार में आसीन होते हैं। अत एव मेरे अंतरंगमें बने रहें।

विख्यातमहिम ! विश्वाराध्य ! विमलपुण्याख्यान ! बोधनिधान ! शिवगुणमुख्य ! सौख्यांग ! हे निरंजनसिद्ध ! मुझे सन्मतिप्रदान कीजिए।

इति नगरीप्रवेशसंधि ॥

दिग्विजय नामक द्वितीयकल्याणं संपूर्णम्.